CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के रक्तरंजित इतिहास की, सुकुमार प्रेम और
षड्यंत्रों की रोमांचकारी कथा

नेपालेश्वर

विराज

51
33

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेखक की अन्य रचनाएं

वनराज के राज में	(वन्य जीवन)
हाथियों का खेदा	(वन्य जीवन)
हाथियों की खोज में	(वन्य जीवन)
जंगल के रहस्य	(वन्य जीवन)
झवरी	(उपन्यास)
मीडिया	(उपन्यास)
सीगफ्रिड	(उपन्यास)
ऐकिलिस	(उपन्यास)
ओडीसियस	(उपन्यास)
ऐनियास	(उपन्यास)
कार्तिकेय	(उपन्यास)
मेघनाद	(उपन्यास)
रतनसेन	(उपन्यास)
शकुन्तला	(उपन्यास)
वसन्त के फूल	(कविता)
अरुणोदय	(कविता)
हम हिन्दू हैं	(कविता)
प्रेमदूती	(कविता)
हर की पैड़ी	(कविता)
असिधारा	(कहानियाँ)
नया आलोक : नई छाया	(कहानियाँ)
सम्राट् विक्रमादित्य	(नाटक)
तिरंगा झंडा	(एकांकी संग्रह)
महान व्यक्तियों की झलक	(लघु जीवनियां)
गाय और बाघ	(लोक-कथा)
मध्यकालीन लोक-कथाएँ	(लोक-कथा)

आत्माराम एण्ड संस
दिल्ली, चण्डीगढ़, जालन्धर, लखनऊ

नेपाल के रक्तरंजित इतिहास की, सुकुमार प्रेम और
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
निर्मम षड्यंत्रों की रोमांचकारी कथा

नेपालेश्वर

विराज

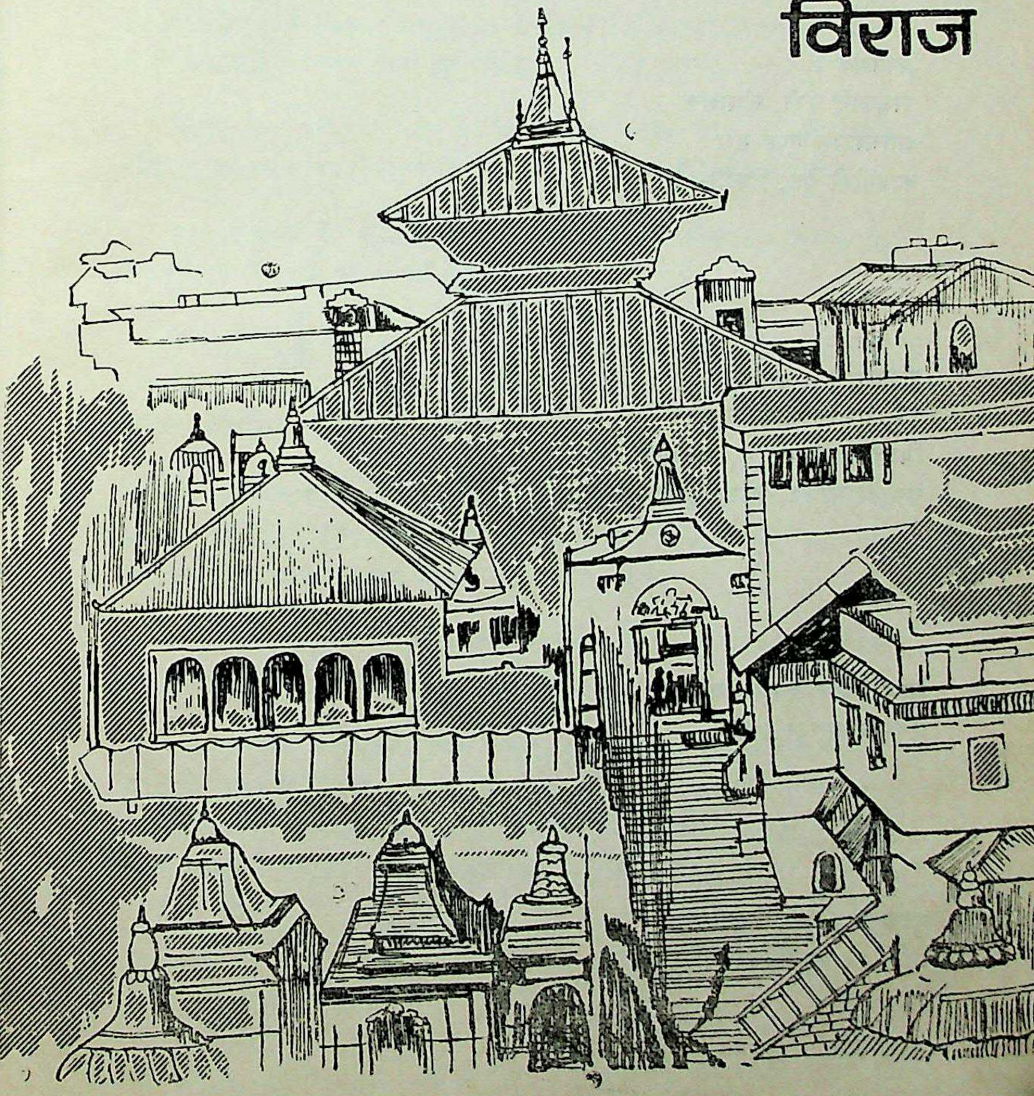

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

NEPALESHWAR (Novel)
by
VIRAJ
Price : Rs. 20.00

© 1973, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-110006

प्रकाशक :
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-110006

State Museum Library Lucknow

शाखाएँ :
17, अशोक मार्ग, लखनऊ
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चंडीगढ़
धमानी मार्केट, चौड़ा रास्ता, जयपुर

4733

मूल्य : बीस रुपये केवल
प्रथम संस्करण 1973

मुद्रक :
आर. के. प्रिंटर्स, दिल्ली-110007

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकाशकीय

नेपाल हमारा पड़ौसी देश है। भूगोल, धर्म, भाषा और संस्कृति के सूत्रों ने इन दोनों देशों को अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध में बाँध रखा है। न जाने कब से भारत के तीर्थयात्री पशुपतिनाथ के दर्शनों के लिए जाते रहे हैं और श्रद्धालु नेपाली भारत में काशी, प्रयाग, हरिद्वार आदि तीर्थों में आते रहे हैं। नेपाल में भारतीयों का और भारत में नेपालियों का अनेक कारणों से आवागमन इतना अधिक और निर्बाध रहा है कि ये दोनों देश केवल राजनीतिक दृष्टि से ही अलग हैं। मानस दोनों का एक है।

नेपाल का इतिहास अत्यन्त रोमांचकारी और रंगीन रहा है। उसी इतिहास पर आधारित 'विराज' का यह उपन्यास प्रस्तुत है—नेपालेश्वर।

सत्य कल्पना से भी अधिक रोचक होता है, यह उक्ति कम से कम इस उपन्यास के विषय में तो यथार्थ ही है।

'विराज' हिन्दी के मंजे हुए लेखक हैं। उन्होंने उपन्यास, नाटक, कहानी, वन्य, जीव, यात्रा आदि अनेक विषयों पर तीस से अधिक पुस्तकें लिखी हैं जो अत्यन्त लोकप्रिय हुई हैं।

इस उपन्यास में लेखक का वर्षों का परिश्रम निहित है। विभिन्न सूत्रों से सामग्री एकत्रित करने के अलावा उसने नेपाल जाकर स्वयं घटना-स्थलों को देखा-भाला है, जिससे वर्णनों में सजीवता आ गई है।

फिर भी इस पुस्तक में प्रस्तुत सब विचार लेखक के अपने हैं और प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

यह उपन्यास पाठकों के केवल मनोरंजन का साधन नहीं है और न यह नेपाल के विषय में भारतीय पाठक की जानकारी बढ़ाने का साधन मात्र ही है, अपितु हमें विश्वास है कि यह नेपाल और भारत की जनता के बीच सौहार्द सम्बन्धों को पुष्ट करने का भी सबल निमित्त बनेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रमुख पात्र

पुरुष पात्र

पृथ्वीनारायणशाह : नेपाल राज्य के प्रथम गोरखा शासक
सिंहप्रतापशाह : पृथ्वीनारायणशाह का पुत्र, राजा
रणबहादुरशाह : सिंहप्रतापशाह का पुत्र, राजा
बहादुरशाह : रणबहादुरशाह का चाचा और प्रधान मन्त्री
गीर्वाणयुद्धविक्रमशाह : रणबहादुरशाह और अनुरागलक्ष्मी का पुत्र, राजा
रणोद्दीपशाह : रणबहादुरशाह और त्रिपुरसुन्दरी का पुत्र
राजेन्द्रवीरविक्रमशाह : गीर्वाणयुद्धविक्रमशाह का पुत्र, राजा
सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह : राजेन्द्रवीरविक्रमशाह का पुत्र, युवराज
भीमसेन थापा : रणबहादुरशाह का प्रधान मन्त्री
दामोदर पांडेय : रणबहादुरशाह का पहला सेनापति और प्रधानमन्त्री
रणजंग पांडेय : दामोदर पांडेय का सम्बन्धी, प्रधान मन्त्री
मातबरसिंह : भीमसेन थापा का भतीजा, प्रधान मन्त्री
गगनसिंह : राजभण्डारी, राज्यलक्ष्मीदेवी का प्रेमपात्र, सेनापति
जंगबहादुर : मातबरसिंह का भानजा, बाद में प्रधान मन्त्री
विजयराज : जंगबहादुर का मित्र एक पण्डित
फतहजंग चौतरिया : राजेन्द्रवीरविक्रमशाह का मित्र भारदार, काज़ी
अंग्रेज़ रैज़ीडैंट : नेपाल में अंग्रेज़ों का प्रतिनिधि
हस्तबहादुर : रणबहादुरशाह का विश्वस्त सेवक
रणोद्दीपसिंह : जंगबहादर का छोटा भाई

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्त्री पात्र

स्वर्णमाया देवी : पृथ्वीनारायणशाह की पत्नी
राजेन्द्रलक्ष्मी देवी : सिंहप्रतापशाह की पत्नी
त्रिपुरसुन्दरी देवी : रणबहादुरशाह की बड़ी रानी
अनुरागलक्ष्मी देवी : रणबहादुरशाह की छोटी प्रिय रानी
साम्राज्यलक्ष्मी देवी : राजेन्द्रवीरविक्रमशाह की बड़ी रानी
राज्यलक्ष्मीदेवी : राजेन्द्रवीरविक्रमशाह की छोटी रानी
कंचन : त्रिपुरसुन्दरी देवी की दासी
मन्दाकिनी : राज्यलक्ष्मी देवी की दासी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पृष्ठभूमिका

नेपाल सुन्दर देश है। संसार के सबसे ऊँचे पर्वत शिखर इसी राज्य में हैं। सरगमाथा, कंचनजंगा, धौलागिरि, अन्नपूर्णा, मकालू, ल्होत्से आदि नाम अपनी गगनस्पर्शी तुंगता के कारण विश्वविख्यात हो गये हैं। पर इनसे कुछ ही कम ऊँचे अन्य सैकड़ों पर्वत शिखर ऐसे हैं, जिनका अभी नामकरण भी नहीं हुआ है। ये शिखर सदा हिम से ढके रहते हैं। मनुष्यों का आवागमन इन शिखरों पर नहीं होता। इसलिए यह मान लिया गया है कि इन पर देवता निवास करते हैं।

हिमालय की इस पर्वतमाला में प्रकृति का रूप जितना भव्य है, उतना ही भयावह भी। प्रभातों और संध्याओं में उदीयमान और अस्तोन्मुख सूर्य की किरणें इन तुंग और विशाल हिमशिखरों को नयनाभिराम रंगों में रँग देती हैं। इन किरणों के कारण कभी ये शिखर विशुद्ध स्वर्ण के रंग में दमक उठते हैं। उस समय पूरा का पूरा पहाड़ सोने का बना प्रतीत होता है। लाल, पीला गुलाबी, जामनी, नीला, कोई रंग ऐसा नहीं है, जो कुछ कम या अधिक देर के लिए इस शुभ्र शीतल हिमराशि पर प्रतिफलित न होता हो।

बहुत बार ये हिमशिखर अपने आस-पास मँडराने वाले मेघों से ढके रहते हैं। ये मेघ इन शिखरों का शृंगार हैं, जैसे रेशमी उत्तरीय सुन्दर युवती के मुख का शृंगार होता है। क्षण-क्षण में नवीन रूप धारण करने वाले इन मेघों से सूर्य की किरणें आते और जाते समय होली सी खेलती हैं। एक ही समय में आकाश के विभिन्न भागों में छाये मेघ इतने विविध और उज्ज्वल रंगों में रँग उठते हैं कि दर्शक मन्त्रमुग्ध सा रह जाता है। वह चाहता है कि ये रंग घण्टों तक इसी रूप में उसकी आंखों के आगे बने रहें। पर इन रंगों की चंचल सुन्दरता का एक रहस्य यह भी है कि ये एक क्षण भी पहले जैसे नहीं रहते। रंगों की झाँइयां प्रति पल बदलती रहती हैं। कभी लगता है कि आकाश में भीषण आग लग गई है और उसकी लपटें तीनों लोकों को व्याप्त करने को फैल रही हैं। कभी ओर-छोर हीन, दमकते पिघले सोने की विशाल नदी सी बहती दिखाई पड़ती है, जो कुछ ही पल में लाल लोहू की नदी का रूप धारण कर लेती है, जिसमें बड़े-बड़े मांस पिण्ड उतराते दिखाई पड़ते हैं। कुछ ही देर में सूर्य किरणें अपना यह इन्द्रजाल समेट लेती हैं और बादल फिर सामान्य बादल रह जाते हैं।

पूर्णमासी की रातों में इन हिमशिखरों और इन मेघों का रूप अलग ही होता है। प्रायः रात्रि के समय दिन भर के थके मेघ विश्राम के लिए पर्वत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की उपत्यकाओं में उतर आते हैं और रात भर वहीं सोते हैं । सूर्योदय होते ही वे जाग कर फिर आकाश में ऊपर उठने लगते हैं । पर कभी-कभी किसी बेचैनी के कारण वे रात भर आकाश में ही मँडराते रहते हैं और चाँदनी में धमाचौकड़ी मचाते हैं ।

ग्रीष्म के अन्त में प्रकृति भयावह रूप धारण करती है । दक्षिण-पूर्व से प्रचंड पवन विशाल मेघ दल को लिये आता है । वे काजल से भी काले मेघ इन शिखरों को सब ओर से ढँक लेते हैं । अनवरत वृष्टि शुरू होती है । हिम पिघलता है । हिम खण्ड टूट कर गिरते हैं । मोटी बूँदों की चोट से गिरि-शिखरों के स्कन्ध ढह कर गिरने लगते हैं । बिजलियाँ कौंधती हैं । मेघ तुमुल गर्जन करते हैं । इस गर्जन की प्रतिध्वनि हिमालय के इन शिखरों में भयभीत खरगोश सी बड़ी देर तक कभी इधर कभी उधर दौड़ती रहती है । एक ही घन गर्जन एक के बाद एक होने वाले दस घन गर्जनों जैसा सुनाई पड़ता है । नदियाँ उफन कर बहने लगती हैं और अपने तटों को काटती, उन पर खड़े वृक्षों और मकानों को बहाती, उन्मत्त अट्टहास सा करती समुद्र की ओर दौड़ पड़ती हैं । चार महीने तक वर्षा का यह तांडव चलता है । उसके बाद जैसे नशा उतर गया हो, इस प्रकार प्रकृति फिर शान्त और सौम्य हो जाती है ।

माघ-पौष में हिमालय का मानों वार्षिक राज्याभिषेक महोत्सव होता है । ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में उसका हिमकिरीट पुराना और जीर्ण शीर्ण हो जाता है । शिशिर के इन महीनों में उसके सिर पर नया स्वच्छ और धवल किरीट रखा जाता है, जिसकी ओर आँख उठा कर देखना भी दुष्कर होता है । इन महीनों में सारी घाटी भीषण शीत से ठिठरती रहती है ।

इन हिमशिखरों और मेघों की छाया में काठमांडौ की घाटी है, जिसे नेपाल की घाटी भी कहा जाता है । भारत के मैदानों से लगभग डेढ़ सौ मील दूर यह घाटी सब ओर ऊँचे पहाड़ों से घिरी है । इस घाटी में खड़े होकर ऐसा अनुभव होता है कि हम एक विशाल प्याले की तली में खड़े हैं और उस प्याले के किनारे सब ओर मीलों दूर हज़ारों फुट ऊँचाई तक उठते चले गये हैं ।

इस घाटी में कुछ छोटी-छोटी बारहमासी नदियाँ बहती हैं, जो न जाने कब से बह रही हैं । इस विशाल प्राकृतिक प्याले को देख कर यह अनुमान होना स्वाभाविक है कि किसी समय इन नदियों का जल धीरे-धीरे संचित होते जाने से यह प्याला भर गया होगा और उसने एक विस्तृत झील का रूप धारण कर लिया होगा । वह झील इतनी बड़ी रही होगी कि उसकी तुलना में मानसरोवर छोटा प्रतीत होता होगा । चालीस-पचास मील लम्बी और बीस-पच्चीस मील चौड़ी उस झील के नील निर्मल जल में अन्नपूर्णा और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सरगमाथा एक दूसरे का प्रतिविम्ब निहारा करते होंगे और मुस्कराया करते होंगे। झील में बड़े-बड़े मत्स्य तथा अन्य जलचर निवास करते होंगे।

यह झील कब बनी और कितनी शताब्दियों तक बनी रही, इसका सही अनुमान करना कठिन है। परन्तु बर्फ़ीली चोटियों से बह कर आने वाले अतिरिक्त जल की धारा धीरे-धीरे झील के दक्षिणी तट पर उपयुक्त स्थान खोज कर बाहर की ओर बहती रही और अपनी सुकोमल देह से पर्वत की कठिन शिला को शनैः-शनैः, किन्तु अनवरत घिसती रही। दिन, रात, सुबह, शाम, प्रतिपल नदी का प्रवाह जारी रहा और प्रतिपल झील के जल को बाँधने वाले पहाड़ का किनारा घिसता रहा। झील के जल का तल प्रतिपल—अलक्ष्य रूप से—नीचा होता रहा। बहुत समय बाद—शायद कई शताब्दियों के बाद—एक दिन ऐसा आया, जब प्रभात का उजाला होने पर सरगमाथा और अन्नपूर्णा को उस झील के दर्पण में एक दूसरे का प्रतिविम्ब दिखाई नहीं पड़ा। जल का चमकीला तल कहीं लुप्त हो गया था। उसका स्थान गीली काली मिट्टी ने ले लिया था, जो उन ऊँचे हिम-शिखरों को प्रतिबिम्बित नहीं कर सकती थी। छोटी-छोटी जलधाराएँ बागमती, विष्णुमती आदि अब भी उस गीली काली मिट्टी में बह रही थीं।

कालान्तर में यह काली मिट्टी बड़ी उपजाऊ सिद्ध हुई। ऊबड़-खाबड़ हिमालय में इतनी बड़ी यह समतल घाटी मनुष्यों के निवास के लिए बहुत सुविधाजनक रही। शीघ्र ही इस घाटी में अनेक गाँव बस गये, जो उदार प्रकृति की कृपा से शीघ्र ही खूब समृद्ध हो गये। इनमें काठमांडौ सबसे अधिक पनपा।

पहले इस बस्ती का नाम क्या था, ठीक मालूम नहीं। पर किसी समय प्रसिद्ध तांत्रिक गुरु गोरखनाथ यहाँ पधारे। उनके सम्मान में यहाँ एक मन्दिर बनाया गया। यह मन्दिर एक विशाल दोमंज़िला भवन है, जो सारा का सारा लकड़ी से बना हुआ है। इसके विषय में ख्याति यह है कि यह समूचा विशाल मन्दिर एक ही विशाल साल वृक्ष की लकड़ी से बनाया गया था। इस बात को सुन कर और इतने बड़े मन्दिर को देख कर मन आश्चर्य से भर उठता है। आखिर वह कितना बड़ा पेड़ होगा, जिससे इतनी लकड़ी निकली! पर असम्भव कुछ नहीं है। यदि वह वृक्ष 200 फट ऊँचा रहा हो और उसके तने का व्यास तीस-पैंतीस फुट रहा हो, तो उसकी शाखा-प्रशाखाओं को मिला कर उसमें इतनी लकड़ी निकल सकी होगी कि उससे यह मन्दिर बना हो। असम्भव न होने पर भी ऐसा विशाल वृक्ष एक अद्भुत चमत्कार अवश्य रहा होगा। कहने वाले तो यहाँ तक कहते हैं कि इस मन्दिर को पूरा बनाने के बाद भी उस वृक्ष की कुछ लकड़ी बच गई थी, जो एक अन्य छोटे से मन्दिर के निर्माण में काम आई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुरु गोरखनाथ का यह मन्दिर, जिसमें कोई प्रतिमा नहीं थी, 'काष्ठमंडप' कहलाया। गुरु गोरखनाथ के माहात्म्य के कारण, या एक ही वृक्ष से निकली लकड़ी से बना होने के कारण यह 'काष्ठमंडप' इतना प्रसिद्ध और लोकप्रिय हुआ कि इस बस्ती का नाम ही 'काष्ठमंडप' पड़ गया, जो बाद में घिस-पिट कर 'काठमांडौ' बन गया। यह काष्ठमंडप बस्ती के बीचोंबीच है, जिससे यह अनुमान होता है कि बस्ती इस मन्दिर के चारों ओर बसती चली गई है।

काठमांडौ में काष्ठमण्डप के अतिरिक्त एकमात्र उल्लेखनीय भवन था हनुमान ढोका दरबार। जिस समय की बात हम कह रहे हैं—विक्रम संवत् 1800 के आसपास—उस समय तक सिंह दरबार नहीं बना था, फिर उसके बाद बनी आधुनिक इमारतों का तो कहना ही क्या? हनुमान ढोका दरबार राजमहल था। इसका यह नाम इसलिए पड़ा था, कि इस राजमहल के सिंह-द्वार के—जो पूरे महल की तुलना में बहुत ही छोटा है—निकट हनुमान जी का एक मन्दिर है। उसी के कारण महल का नाम हनुमान ढोका (हनुमान द्वार) पड़ गया।

हनुमान ढोका दरबार का निर्माण मल्लवंशीय राजाओं ने करवाया था, जिनके काल में नेपाल में सभी प्रकार की कलाएँ खूब पनपी थीं। लकड़ी पर खुदाई की कला नेपाल में विशेष रूप से विकसित हुई। काष्ठमण्डन काठमांडौ की अपनी कला थी। यह छहमंजिला विशाल राजमहल इस कला का उत्कृष्ट नमूना है। यह महल ईंटों से कम और लकड़ी से अधिक बना है और हर खम्भे, हर दरवाज़े, हर खिड़की और हर छज्जे पर तरह-तरह की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। अवश्य ही इसके निर्माण में बहुत समय लगा होगा और अनगिनत शिल्पी सुदीर्घ वर्षों तक धैर्य और लगन के साथ काम में जुटे रहे होंगे।

छह मंज़िलों के ऊपर चार कोनों पर पगोडा शैली में बनी चार बुर्जियाँ हैं, जिनमें पहुँच कर न केवल सारे काठमांडौ नगर का, बल्कि पर्वतों की तलहटी तक फैली सारी काठमांडौ घाटी का दृश्य दिखाई पड़ता है। कहा जाता है कि प्रजावत्सल मल्ल राजा प्रतिदिन संध्या के समय इन बुर्जियों में से किसी एक में आकर सारी नगरी का अवलोकन किया करते थे। पहाड़ों के पीछे डूब रहे सूर्य की आभा आकाश के मेघों से प्रतिफलित होकर पृथ्वी के वन-पर्वतों पर सुनहला पानी-सा फेर देती थी। व्यूह रचना सी करके उड़ते हुए पक्षियों की पंक्तियाँ अपने बसेरों की ओर लौटती दिखाई पड़ती थीं। परन्तु राजा सायंकालीन प्रकृति की शोभा देखने के लिए छह मंज़िल ऊपर चढ़ने का कष्ट नहीं उठाते थे। बुर्जी के ऊपर चढ़ कर वह यह देखते थे कि महल के आस-पास, दूर-दूर तक बने खिलौने जैसे छोटे-छोटे मकानों से छोटी-छोटी धूम रेखाएँ धीरे-धीरे आकाश की ओर उठ रही हैं। घर-घर में भोजन

बनाने के लिए चूल्हे सुलगाये जा रहे हैं। अच्छे राजा के लिए इससे बढ़ कर संतोष की बात क्या हो सकती है ? इसीलिए वह राजा इस बात को बड़े ध्यान से देखते थे कि कहीं कोई घर ऐसा तो नहीं, जिससे धुएँ की हल्की नीली रेखा आकाश की ओर न उठ रही हो। यदि कोई घर ऐसा होता था, तो सरकारी प्यादा उस घर की ओर दौड़ाया जाता था कि पता करके लाये कि उस घर में चूल्हा न जलने का कारण क्या है। रोग या शोक पर तो राजा का बस नहीं था, किन्तु वह यह सहन नहीं कर सकते थे कि किसी घर में इसलिए चूल्हा न जले कि वहाँ खाने के लिए अन्न नहीं है।

यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि हनुमान ढोका दरबार ही काठमांडौ था। न केवल उसने नगर का एक काफ़ी बड़ा भाग घेर रखा था, बल्कि विशालता, भव्यता और समृद्धि की दृष्टि से नगर के अन्य मकान क्षुद्र और नगण्य थे। छोटे-छोटे दोमंज़िले मकान सँकरी गलियों में खड़े थे। पर उनके दरवाज़ों, खिड़कियों और छज्जों पर काष्ठ मण्डन की कला वैसे ही आकर्षक रूप में दिखाई पड़ती थी, जैसी कि वह हनुमान ढोका दरबार में थी। अन्तर केवल परिमाण का था, कोटि का नहीं। वे रहने के लिए बनाये गये थे, किन्तु उन्हें बनवाने वालों की आँख कलालोलुप थी।

हनुमान ढोका दरबार के अलावा काठमांडौ के निवासियों का कलाप्रेम मन्दिरों के निर्माण में भी प्रकट हुआ था। शहर से दो ढाई मील दूर भीड़-भाड़ से अलग बड़े-बड़े मन्दिर बनाये गये थे। बागमती नदी के किनारे पशुपतिनाथ और पंचमुखी महादेव के भव्य मन्दिर बने थे। बिल्कुल पास-पास बने होने पर भी न जाने किसलिए पशुपतिनाथ का माहात्म्य बढ़ता गया और अधिक सुन्दर बना होने पर भी पंचमुखी महादेव का मन्दिर उपेक्षित होता गया। पशुपतिनाथ के मन्दिर में भक्तों की इतनी भीड़ रहने लगी और पूजा का चढ़ावा इतना चढ़ने लगा कि मन्दिर की छत पर सोने का पानी चढ़ाया गया। फर्श बहुमूल्य संगमरमर के बनाये गये। पूजा के पात्र तथा अन्य उपकरण चाँदी के बने और मन्दिर के चारों द्वारों के किवाड़ों पर चाँदी की मोटी पतरियाँ जड़ दी गईं। पशुपतिनाथ धनी और निर्धन, सबकी श्रद्धा के केन्द्र बन गये। जिस प्रकार राजनीतिक शक्ति हनुमान ढोका दरबार में केन्द्रित थी, उसी प्रकार, बल्कि उससे भी कहीं अधिक, धार्मिक भावना पशुपतिनाथ के मन्दिर में केन्द्रित थी। काठमांडौ नगर में ही नहीं, बल्कि सारी काठमांडौ घाटी में यही दो चीज़ें महत्वपूर्ण थीं, बाकी सब चीज़ें नगण्य और महत्वहीन थीं।

पहाड़ी दुर्गम क्षेत्रों में जन साधारण को जीवन की वे सुख सुविधाएं प्राप्त नहीं थीं, जो मैदानी क्षेत्रों में सुलभ होती हैं। उद्योग तथा व्यापार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुविकसित नहीं थे। इसलिए जहाँ उनके कारण होने वाली समृद्धि का अभाव था, वहां उनके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले दैन्य और कष्ट भी दिखाई नहीं पड़ते थे। प्रकृति माता अपनी सरल निश्छल सन्तानों की आर्थिक कमी को दूसरी चीज़ों से पूरा कर देती थी। ऊँचे पहाड़ों और घने वनों में रहने वाले नेपाली लोग कम भोजन से भी, लगता है कि केवल हवा और पानी के ज़ोर से खूब सुपुष्ट और स्वस्थ रहते थे। शरीर में यथेष्ट बल होने के साथ-साथ उनके मन में बड़े से बड़े कष्ट में भी प्रसन्न, हँसते रहने की विलक्षण शक्ति थी। भय और कपट साधारण नेपाली के लिए अनजानी वस्तुएं थीं।

इस देश और इसके निवासियों के इतिहास के एक छोटे से भाग का चित्र है—'नेपालेश्वर'।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परम आदरणीय

श्री रामलाल पुरी को

जिन्होंने

अपने प्रकाशन व्यवसाय से
हिन्दी की तब भी सेवा की,
जब वह राजभाषा नहीं थी
और
जिन्होंने सदा ही
मनुष्यता को व्यवसाय से
उच्चतर आसन प्रदान किया,
श्रद्धा एवं स्नेहपूर्वक
समर्पित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1

पृथ्वीनारायण शाह

बागमती नदी के किनारे बना भगवान पशुपतिनाथ का मन्दिर अत्यन्त प्राचीन है। प्रत्येक नेपाली न केवल अपने जीवन काल में उसके दर्शन अवश्य करता है, बल्कि उसकी एक प्रबल अभिलाषा यह होती है कि वह अपने अन्तिम साँस पशुपतिनाथ के चरणों में ले सके। कितने ही श्रद्धालु लोग जीवन का अन्त निकट आया जान कर मन्दिर के नीचे बागमती नदी के घाटों पर उतरने वाली सीढ़ियों पर जा लेटते हैं और शान्तिपूर्वक उस क्षण की प्रतीक्षा करते हैं, जब उनकी जीवन-ज्योति भगवान की महाज्योति में विलीन हो जायेगी। मृत्यु के पश्चात् मन्दिर के निकट घाट पर ही इनका दाह-संस्कार कर दिया जाता है। श्मशान घाट मन्दिर का ही एक भाग है।

विक्रम संवत् 1832 की ग्रीष्म ऋतु में एक दिन सारा काठमांडौ पशुपतिनाथ के इस मन्दिर की ओर उमड़ पड़ा था। गोरखा राज्य के संस्थापक महाराज पृथ्वीनारायण शाह का शव अंत्येष्टि के लिए मन्दिर के निकट बागमती के तीर की ओर ले जाया जा रहा था। लोगों के मुख शोक से मलिन थे।

पृथ्वीनारायण शाह की इच्छा भी शायद यह रही हो, कि वह पशुपतिनाथ के चरणों में बैठ कर बागमती के जल में पैर डाल कर अपने प्राण त्याग सकें, परन्तु इस वीर विजेता के लिए पशुपतिनाथ ने वीर-मृत्यु की ही व्यवस्था की थी। पृथ्वीनारायण शाह गंडक नदी के किनारे घने जंगलों में बाघ का शिकार खेलने गये थे। मचान पर बैठ कर बन्दूक की गोली से बाघ को मारने वाले शिकारी वह नहीं थे। वह तो अपने शिकार को खा रहे बाघ के पास जाकर तलवार से उसे मारने वाले असली शिकारी थे।

बाघ को आकर्षित करने के लिए कटरा बाँधा गया था। जब बाघ उसे मार गया, तब शिकारी उसकी घात में छिप कर बैठे। जब बाघ दुबारा अपने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिकार को खाने आया, तब शिकारी प्रेतों की तरह निःशब्द उसकी ओर बढ़े। तनिक भी आहट हुई और बाघ हाथ से गया। सबसे पहले शिकार का अधिकार महाराज का था। वस्तुतः उन्हीं के मनोविनोद के लिए यह सारा आयोजन था।

अपने शिकार को खा रहा भूखा बाघ अत्यन्त भयंकर प्राणी होता है। वह किसी का तनिक भी हस्तक्षेप सहन नहीं करता। पृथ्वीनारायण शाह को अपनी ओर बढ़ते देख वह क्रुद्ध होकर गुर्राने लगा। अन्य शिकारियों ने सब ओर फैलकर घेरा-सा डाल दिया, जिससे बाघ बच कर भाग न सके।

पर बाघ बच कर भागने को बेचैन नहीं था। वह तो आक्रमण करने को उद्यत था। जब उसने देखा कि उसकी गुर्राहट की परवाह न करके पृथ्वीनारायण शाह उसकी ओर बढ़ा ही आ रहा है, तब वह खाना छोड़ कर अपने पिछले पाँवों को पेट के नीचे समेट कर बैठ गया और पृथ्वीनारायण शाह के निकट आने की प्रतीक्षा करने लगा। उसकी पूँछ धीरे-धीरे इधर-उधर हिल रही थी।

कुशल शिकारी पृथ्वीनारायण शाह भी बाघ की एक-एक गतिविधि को ध्यान से देख रहा था और पूरे आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ रहा था। यह उसका पहला शिकार नहीं था। उसने कई बाघ इस तरह मारे थे। उसे पता था कि मौका मिलते ही बाघ उछाल मार कर उस पर झपटेगा, और उस भयंकर क्षण में उसका स्वागत करने के लिए उसकी तलवार तैयार थी। वह खूब संभल कर कदम आगे बढ़ा रहा था। ज़रा सी असावधानी से बाघ उसे चकमा देकर भाग जा सकता था।

पृथ्वीनारायण शाह का रोम-रोम आवेश से स्पन्दित हो रहा था। स्वयं बुलाई हुई विपत्ति की प्रतीक्षा और उससे उबर कर विजयी होने की आशा, यही तो शिकार का आनन्द है। खतरा जितना अधिक, आनन्द भी उतना ही तीव्र। तीस फुट दूर अपनी ओर मुँह करके बैठे, उछलने को उद्यत बाघ को देख कर पृथ्वीनारायण शाह को वह आनन्द भरपूर मिल रहा था। उसका मुख और आँखें उल्लास से चमक रही थीं।

वह बाघ असाधारण रूप से बड़ा और पुष्ट था। उसकी नारंगी रंग की खाल खूब चमकीली थी और उस पर काली धारियाँ विषधर नागों जैसी प्रतीत हो रही थीं। उसके खुले हुए मुख में बड़े-बड़े दाँत छोटी-छोटी छुरियों की तरह चमक रहे थे।

लड़ने और मारने में पृथ्वीनारायण शाह को तनिक भी हिचक न थी। उसने पशुओं को ही नहीं, लड़ाइयों में न जाने कितने योद्धाओं को तलवार के घाट उतारा था। प्रतिद्वन्द्वी से संघर्ष करते समय उसके मन में मिथ्या करुणा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की भावना कभी न आती थी। लड़ने का और जीतने का अपना आनन्द है। मरने से भयभीत होकर वीर उसे कभी नहीं छोड़ते। जीतने में तो सुख है ही, मरने के बाद भी कोई दुःख नहीं है। इस समय बाघ और पृथ्वीनारायण शाह दोनों को जीतने का समान अवसर था।

यदि बाघ ने आक्रमण किया और पृथ्वीनारायण शाह की तलवार उसकी छाती में घुस गई, तो बाघ जीता न बचेगा। पर यदि ज़रा भी चूक हो गई और तलवार ठीक ढंग से बाघ के मर्मस्थल तक न पहुंच सकी, तो बाघ के दाँत और नाखून पृथ्वीनारायण शाह का बुरा हाल कर देंगे।

बाघ कब उछला, यह पता ही न चला। पृथ्वीनारायण शाह ने उसे एक क्षण के शतांश तक आकाश में देखा। उसने तलवार को ऐसे कोण पर रखना चाहा कि वह बाघ की छाती में घुस जाये। पर तभी लगभग साढ़े पाँच मन भारी बाघ तोप के गोले के से वेग से उसके ऊपर आ गिरा। छाती से पहले उसके अगले पंजे पृथ्वीनारायण शाह के मुँह पर आकर लगे। जैसे किसी ने लोहे का मोटा और भारी डंडा दे मारा हो, इस प्रकार चोट खाकर पृथ्वीनारायण शाह भूमि पर गिर पड़ा। उसकी तलवार का कोण भी ठीक न रहा और वह बाघ के एक पार्श्व को खरोंचती हुई अपने स्वामी के साथ भूमि पर गिर पड़ी।

चारों ओर से पृथ्वीनारायण शाह के शिकारी एक साथ चिल्ला उठे। पर बाघ ने जैसे उनके कोलाहल को सुना ही नहीं। तलवार की खरोंच से वह उन्मत्त सा हो उठा। क्रोध के भीषण आवेश में उसने अपने पंजों और नाखूनों से पृथ्वीनारायण शाह को बुरी तरह नोंच डाला और अपने मुँह से उसकी गर्दन को पकड़ कर ज़ोर से झटका दिया। इतने में बीसियों शिकारी तलवारें चमकाते, शोर मचाते एकदम बाघ के सिर पर आ पहुँचे। अपने प्राणों की परवाह किसी को न थी।

उन्हें आया देख कर बाघ ने पृथ्वीनारायण शाह को छोड़ दिया और एक अन्य शिकारी पर झपटा। शिकारी ने बाघ पर तलवार से वार किया और स्वयं कूद कर एक ओर हट गया। तलवार बाघ को लगी, किन्तु उसे खरोंचकर ही रह गई। बाघ तीर की तेज़ी से दौड़ता हुआ देखते-देखते जंगल में जा छिपा।

यदि पृथ्वीनारायण शाह के बजाय किसी अन्य शिकारी को बाघ ने इस तरह घायल किया होता, तो शिकार रुकता नहीं। घोड़ों पर चढ़ कर बाघ का पीछा किया जाता और परिणाम जो होता, सो होता। पर अब शिकार को छोड़ कर सबसे पहले पृथ्वीनारायण शाह की ओर ध्यान दिया गया।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह बलिष्ठ और तेजस्वी शरीर, जो कुछ ही देर पूर्व बाघ को मार डालने में समर्थ था, अब भूमि पर ढीला ढाला पड़ा था। बाघ ने झटका देकर उसकी गर्दन तोड़ दी थी। गर्दन में दाँतों के गहरे घाव थे। बाघ के पंजे ने छाती पर वस्त्र समेत मांस को तीन जगह से फाड़ डाला था और आठ-आठ अंगुल लम्बी एक-एक अंगुल गहरी तीन लकीरें खींच दी थीं, जिनमें से निकल कर खून कपड़ों को रंग रहा था।

कुछ देर तक ऐसा लगा जैसे पृथ्वीनारायण शाह के शरीर में चेतना शेष है, पर वह केवल शरीर की गर्मी थी। जीवन समाप्त हो चुका था। सामन्त शिकारियों ने शाह के शरीर को उठाया और शिविर में ले आये।

शिकार-शिविर पर शोक और विषाद का घना बादल उतर आया। जल्दी-जल्दी प्रबन्ध किया गया और शाम तक राजा का शव काठमांडो पहुंचा दिया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2

अन्त्येष्टि

सारी रात हनुमान ढोका दरबार (राजमहल) से नर-नारियों के करुण विलाप की ध्वनि सुनाई पड़ती रही। महल में प्रमुख सरदारों और प्रभावशाली नागरिकों का जमघट लगा रहा। रात भर किसी ने दो पल के लिए झपकी तक नहीं ली !

सवेरा होने पर अन्त्येष्टि की तैयारियाँ शुरू हुईं। शव को स्नान कराया गया। अर्थी पर रख कर उसे बहुमूल्य रेशमी वस्त्रों से ढक दिया गया। उनके ऊपर सुगन्धित फूलमालाएँ रख दी गईं।

नौ बजे अर्थी उठी। महिलाओं के विलाप का स्वर एकाएक तीव्र हो उठा। लोग महल से निकलने शुरू हुए। छह सरदारों ने अर्थी को अपने कन्धों पर उठाया। युवराज सिंहप्रतापशाह अर्थी के ठीक पीछे थे। उनके भाई बहादुरशाह उनके साथ थे। दोनों के मुख शोक से मुरझाये हुए थे। आँखें लाल थीं। सभी सरदार बीच-बीच में बदल-बदल कर अर्थी को कन्धा देते चले।

महल से निकल कर यह शवयात्रा बिना रुके पशुपतिनाथ के मन्दिर की ओर बढ़ी। अर्थी के पीछे विशाल जन समुदाय धीर-गम्भीर स्वर में 'राम नाम सत्य है' बोलता चला। ज्यों-ज्यों यह समूह राजधानी के बाज़ारों में होता हुआ आगे बढ़ा, त्यों-त्यों अधिकाधिक नगरवासी इसमें सम्मिलित होते गये।

एक घण्टे में शवयात्रा पशुपतिनाथ के मन्दिर में जा पहुंची। वहाँ अन्त्येष्टि की सब तैयारियाँ पहले ही हो चुकी थीं। बागमती के तीर पर चन्दन की लकड़ियों की चिता बनाई गई थी। शव को पशुपतिनाथ के दर्शन कराने के बाद बागमती के किनारे ले जाया गया। पवित्रता की दृष्टि से भारत में जो स्थान गंगा का है, नेपाल में वही बागमती का है। बागमती के पवित्र जल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में स्नान कराने के बाद पुरोहित ने मन्त्र पाठ करते हुए शव को चिता पर रखवाया।

एकाएक उस शोकार्त जन समूह में हलचल सी मच गई। शोक का स्थान विस्मय और श्रद्धा ने ले लिया। कानों-कान यह समाचार चारों ओर फैल गया कि महारानी स्वर्णमाया देवी पालकी में बैठ कर आ पहुँची है और वह अपने पति के साथ सती होंगी। सब लोग चिता को भूल कर मन्दिर के उस द्वार की ओर देखने लगे, जिस ओर से महारानी के आने की आशा थी।

सचमुच ही स्वर्णमाया देवी अनेक महिलाओं से घिरी मन्दिर में आ पहुँची थीं। पशुपतिनाथ के सम्मुख भूमि पर मस्तक टिका कर उन्होंने मन ही मन कुछ प्रार्थना की। उसके बाद वह अपनी साथिनों का सहारा लेकर उठीं। बागमती के किनारे उतर कर पत्थर की सीढ़ियों पर बैठ कर उन्होंने हाथ-पाँव धोये। जल की कुछ बूंदें अपने सिर पर छिड़कीं और चिता की ओर बढ़ीं।

युवराज सिंहप्रताप शाह ने सुना, तो वह आगे बढ़ कर अपनी माँ के पास आ पहुंचे। शोक विह्वल होकर वह माँ का हाथ थाम कर बोले : "मां यह क्या सोचा ? पिता जी तो गये। तुम भी चली जाओगी, तो मेरा क्या होगा ?"

स्वर्णमाया देवी ने पुत्र के मुख की ओर देखा। क्षण भर को उसका चित्त विचलित भी हुआ। किन्तु नियति उसे अपने दृढ़ पाश में बाँध कर सुनिश्चित भवितव्य की ओर खींच रही थी। उसकी अपनी इच्छा या अनिच्छा उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं डाल सकती थी। वह बोली : "मेरा स्थान उन्हीं के चरणों में है। मुझे जाना ही होगा।"

यह कहते हुए उसने प्यार से सिंहप्रताप के सिर पर हाथ फेरा। फिर थोड़ा-सा रुक कर धीमे स्वर में कहा : "बहू को दुःखी मत करना। रणबहादुर का ध्यान रखना।" फिर अपने स्वर को थोड़ा सचेत करके सान्त्वना सी देते हुए रानी बोली : "धीरज धरो। अब तुम बड़े हुए। अपने पांवों पर खड़े होने में समर्थ हो। तुम्हारे लिए मुझे चिन्ता नहीं है। उनका साथ देना भी तो मेरे लिए बहुत ज़रूरी है।"

श्रद्धा विगलित जन-समूह जय घोष करने लगा : "सती माता की जय ! महाराज पृथ्वीनारायण शाह की जय !"

सिंहप्रताप को यह जय घोष बहुत बुरा लगा। परन्तु वह कुछ भी कर पाने में असमर्थ थे। यह अवसर रोष या असहमति प्रकट करने का नहीं था। उनकी प्रबल इच्छा थी कि उनकी माता सती न हो। किन्तु वह अपनी इस इच्छा को ज़ोर देकर प्रकट न कर सके। रानी जन-भावना के प्रबल धक्के से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धकेली सी जाती हुई, चिता की ओर बढ़ी। वह यही समझ रही थी कि वह पूर्णतया अपनी इच्छा से पति के साथ जा रही है।

जब रानी चिता पर अपने पति के चरणों के पास बैठ गई, तब जन-समूह एक बार फिर तुमुल जय घोष कर उठा। सिंहप्रताप का धीरज छूट गया और वह अपने हाथों में मुँह छिपा कर रोने लगे। अनुभवी वृद्ध सामन्तों ने उन्हें सान्त्वना देने का यत्न किया।

पिता की चिता में अग्नि पुत्र को ही लगानी होती है। किन्तु जिस चिता पर उनकी जीवित माता बैठी हुई थी, उसमें अग्नि लगाने को सिंहप्रताप शाह किसी तरह तैयार न हुए। वृद्ध दरबारियों का समझाना-बुझाना व्यर्थ रहा। अन्त में कोई उपाय न देख कर पुरोहित ने चिता में आग लगाई। जलते कपूर, अगुरु और गूगल की गन्ध वायु में भर उठी। घी की आहुतियाँ देकर अग्नि को प्रदीप्त किया गया। पण्डितगण उच्च स्वर में अन्त्येष्टि के मन्त्रों का उच्चारण करते रहे। बीच-बीच में जन-समूह 'सती माता की जय' का तुमुल घोष करता रहा।

शीघ्र ही अग्नि की लपटें प्रचंड हो उठीं। धुएँ की शिखा के नीचे वे काल की कराल जिह्वाओं की भाँति कभी इधर और कभी उधर लपकने लगीं। उस धुएँ और आग में स्वर्णमाया देवी शान्त और अचल बैठी रहीं। कष्ट या यंत्रणा का कोई चिह्न उनकी किसी चेष्टा से प्रकट न हुआ। यह पता ही न चला कि कब उनके प्राण शरीर को छोड़ गये। कुछ समय बाद जब उनका निर्जीव देह धधकती हुई चिता में आगे की ओर लुढ़क गया, तब लोगों ने समझ लिया कि वह स्वर्ग लोक को प्रयाण कर गई हैं।

वायुमण्डल में चर्बी और नर-मांस के जलने की दुर्गन्ध भर उठी, जो घी और सामग्री की सुगन्ध के ऊपर हावी हो गई। लपटों की गर्मी के कारण लोग थोड़ा पीछे हट गये। पुरोहित का मन्त्रोच्चार जारी रहा। ओ३म् वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं ँ शरीरम्। ओ३म् क्रतो स्मर, क्लिबे स्मर, कृत ँ स्मर।...

जब चिता तीन-चौथाई जल चुकी, तब एक लम्बे बाँस से कपाल भेदन किया गया। उसके बाद श्मशान में करने को कुछ शेष नहीं रहा। लोग चिता से दूर हट कर बड़े-बड़े पेड़ों के नीचे फैले मैदान में इकट्ठे हो गये।

"बैठ जाइये! बैठ जाइये। अब प्रार्थना होगी।" धीमी दबी-सी आवाज़ें सुनाई पड़ीं। सब लोग हरी घास पर पालती मार कर बैठ गये। वृद्ध पुरोहित दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना करने लगे।

"भगवान पशुपतिनाथ, आपने ही उन्हें लीला करने के लिए इस लोक में भेजा था। इस लोक में उन पर आपकी कृपा दृष्टि रही। आपकी कृपा और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने शौर्य से उस वीर पुरुष ने अपना यश सब ओर फैला दिया। छोटे से गोरखा राज्य से आकर उन्होंने बिखरे हुए छोटे-छोटे राज्यों को जीत कर एक विशाल नेपाल राज्य की स्थापना की। उन्होंने शत्रुओं का दमन किया, मित्रों को बढ़ावा दिया और प्रजा का हित किया। वह जन्म से महान थे; जीवन में उनकी महानता बढ़ी और मृत्यु ने उनकी महानता को अमर कर दिया। उनकी सती सहधर्मिणी साक्षात् देवी थीं।

"भगवान पशुपतिनाथ, आज आपने दो महान् आत्माओं को अपने चरणों में बुला लिया है। अपने सत्कर्मों के कारण उन्हें सद्गति प्राप्त होगी। फिर भी हम सबकी प्रार्थना है कि उनकी आत्माएँ जहां भी हों, सुख और शान्ति में रहें।

"हे प्रभो, इस संसार में सब सुख और दुःख आपके दिये हुए ही आते हैं। उस महान आत्मा के वियोग से उनके पुत्र, बन्धु बान्धव, इष्ट मित्र, प्रजा-जन सभी संतप्त हैं। आप उन सबको शक्ति प्रदान कीजिये कि वे इस व्यथा को धैर्य से सह सकें।

ओ३म् शान्ति, शान्ति, शान्ति !"

प्रार्थना समाप्त हुई। उसके बाद भी लोग कुछ क्षण तक भावमग्न शान्त बैठे रहे। उसके पश्चात् पुरोहित के उठने के साथ-साथ कुछ प्रमुख सरदार उठे और फिर सारा जन-समूह उठ कर बागमती नदी की ओर चल पड़ा।

उस पवित्र नदी में स्नान करने के बाद सब लोग नगर की ओर लौट पड़े।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3

बहादुरशाह

जब पृथ्वीनारायणशाह की मृत्यु के तीन वर्ष बाद ही उसके पौत्र और सिंहप्रतापशाह के पुत्र रणबहादुरशाह का राज्याभिषेक हुआ, तब प्रसन्नता का कम और विषाद का वातावरण अधिक था। पृथ्वीनारायणशाह की मृत्यु भी अकालमृत्यु थी, फिर भी वह वीर-मृत्यु थी। वह तीस बत्तीस वर्ष तक नेपाल पर राज्य कर चुका था। इसलिए उसकी मृत्यु के बाद जब उसके युवा पुत्र सिंहप्रतापशाह का राज्याभिषेक हुआ, तब धूमधाम में कोई कमी नहीं रही। यशस्वी, विजेता पिता सिंह से लड़ते हुए परलोक सिधारा था; प्रतिप्राणा माता उसके साथ ही सती हो गई थी। इसलिए सिंहप्रतापशाह मन में गौरव अनुभव करते थे। वीर पिता के वीर पुत्र पर प्रजा को भी अभिमान था।

सिंहप्रताप नाम रखते हुए उनके माता-पिता के मन में न जाने क्या उमंगें रही होंगी, किन्तु राज्यारोहण के बाद सिंहप्रताप ने अपने जीवन का एक-एक दिन अपने नाम को सार्थक करने में बिताया। जीवन उन्हें लम्बा नहीं मिला। राज्यारोहण के बाद वह लगभग एक सहस्र दिन जीवित रहे होंगे। पर तीन वर्षों की इस छोटी सी अवधि में उन्होंने अपने राज्य विस्तार के लिए पराक्रम दिखाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। नेपाल की पूर्वी सीमा पर मोरंग राज्य था। सिंहप्रतापशाह ने उसे जीतने के लिए उस पर आक्रमण किया। पर मोरंग राज्य भी मिट्टी का खिलौना नहीं था। उसने डट कर लोहा लिया। सिंह प्रतापशाह को विफल लौटना पड़ा। परन्तु उनकी भावना इससे स्पष्ट है कि उन्होंने एक के बाद एक, अठारह बार मोरंग राज्य पर आक्रमण किया और अन्तिम बार उसे जीत ही लिया। पर उसके कुछ ही दिन बाद उनकी मृत्यु हो गई। सारा नेपाल शोक में डूब गया। सिंहप्रतापशाह का पुत्र रणबहादुरशाह उस समय पांच छह वर्ष का बालक ही था। यदि पुत्र छोटा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न होता, तो रानी राजेन्द्रलक्ष्मीदेवी शायद सिंहप्रतापशाह के साथ ही सती हो जाती। परन्तु पुत्र का मुँह देख कर उसे पति का साथ छोड़ना पड़ा।

सिंहप्रताप शाह के भाई बहादुरशाह ने कहा : "भाभी, जन्म-मरण पर तो किसी का वश नहीं है। पता नहीं, भगवान की कब क्या इच्छा होती है। उसे हम समझ नहीं सकते। जो हो गया, सो हो गया। पर तुम किसी बात की चिन्ता मत करो। अब तक तुम रानी थीं ; अब राजमाता बन कर रहो। हर तरह की सेवा और सहायता के लिए मैं उपस्थित हूँ।"

रानी राजेन्द्रलक्ष्मी देवी ने सन्तोष की एक सांस ली—उसे राज्य के लिए अपने देवर से तो विवाद न करना पड़ेगा। बहादुरशाह ने स्वयं बड़े उत्साह से अपने भतीजे रणबहादुरशाह के राज्याभिषेक का आयोजन किया। सब विधियाँ नियमानुसार सम्पन्न की गईं। परन्तु सरदारों और प्रजाजनों के मन पर यह बोझ सा बना रहा कि यमराज के दूतों ने तीन साल के भीतर ही दूसरी बार नेपाल के राजसिंहासन को खाली कर दिया। लोग पृथ्वी-नारायण शाह और सिंहप्रतापशाह का गुणगान करते अघाते नहीं थे ! इसका बड़ा कारण यह था कि उन्हें भविष्य कुछ उज्वल नहीं दीख रहा था। जो राजा गद्दी पर बैठ रहा था, वह कम से कम दस पन्द्रह वर्ष तक अपने विवेक से कार्य करने में समर्थ नहीं होगा। तब तक उसके नाम पर दूसरे लोग ही शासन करेंगे। यह बात किसी को भली नहीं लग रही थी।

रणबहादुरशाह बने राजा और उनके चाचा बहादुरशाह उनके संरक्षक। राजमाता राजेन्द्रलक्ष्मी देवी उन दोनों के ऊपर निरन्तर सतर्क दृष्टि रखने लगीं। वह नीतिकुशल महिला थीं। कुछ ही दिनों में वह राजकाज के सभी मामलों को भली भाँति समझने लगीं।

माता होने के कारण राजेन्द्रलक्ष्मी देवी अपने पुत्र पर और साथ ही उसके राज्य पर अपना अधिकार समझती थीं। पर स्त्री होने के कारण वह शासन के मामलों में उतना दखल नहीं दे सकती थीं, जितना कि वह चाहती थीं। बहादुरशाह इस स्थिति को समझते थे। वह अपनी ओर से सभी महत्वपूर्ण मामलों में राजमाता से परामर्श करके उनकी अनुमति प्राप्त कर लेते थे। फिर भी सब मामलों में राजमाता से परामर्श कर पाना न व्यावहारिक था, न आवश्यक ही। वह भी राजा के संरक्षक थे, बिल्कुल सेवक ही नहीं। पुरुष होने के कारण सारा राजकाज उन्हीं को निपटाना पड़ता था।

प्रभुत्व और अधिकार को लेकर जहाँ खींचातानी शुरू होती है, वहाँ यह निश्चय करना कठिन हो जाता है कि पहल और ज़्यादती किस पक्ष की ओर से हुई है। जब मामला दूर तक बढ़ जाता है, तब यह जानना भी कठिन हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाता है कि कौन न्याय पथ पर है और कौन अन्याय पथ पर । इसीलिए यह ठीक-ठीक कह पाना सम्भव नहीं है कि बहादुरशाह के मन में अपने भतीजे के राज्य को हथियाने की इच्छा उत्पन्न हुई थी, या अत्यधिक सतर्क राजमाता को उन पर व्यर्थ ही सन्देह हो गया था । रणबहादुरशाह के संरक्षक बन कर बहादुरशाह को शासन के सभी अधिकार प्राप्त थे, अतः राज्य हथियाने का कलंक अपने सिर लेने का यत्न शायद उन्होंने न किया हो । राजमाता को अवश्य ऐसा अनुभव हुआ होगा कि बहादुरशाह राजा न होते हुए भी राजा होने का पूरा आनन्द ले रहे हैं । यह बात अखरनी अस्वाभाविक नहीं है । सेना पर, मन्त्रियों पर और भारदारों पर, सभी पर बहादुरशाह का पूरा नियन्त्रण था । अतः राजमाता के मन में यह सन्देह उत्पन्न हो सकता था कि शायद बहादुरशाह आजीवन रणबहादुरशाह के संरक्षक ही बने रहना चाहें ।

एक दिन राजेन्द्रलक्ष्मी ने बहादुरशाह से कहा : "कुँवर जी, आप रणबहादुर पर बहुत रोक-टोक लगाते हैं । बच्चा बेचारा परेशान हो जाता है । अपने मन का कोई भी तो काम वह करने नहीं पाता ।"

"यह सब उसके भले के ही लिए करता हूँ भाभी । बालक को शुरू से ही गढ़ना पड़ता है । अनुशासन में रह कर वह गुणी पुरुष बन जाता है ।"

"अनुशासन भारी बोझ है कुँवर जी ।"

"बोझ कोई बुरी चीज़ नहीं है भाभी । बोझ मनुष्य को सशक्त बनाता है ; उसके पाँव मज़बूत करता है ।"

"बोझ से पीठ झुक जाती है ; आदमी कुबड़ा हो जाता है । मेरे रणबहादुर को सिर ऊँचा करके रहना है । उसे गढ़िये मत, पौधे की तरह पनपने दीजिये और फूल की तरह खिलने दीजिये ।"

"बेरोकटोक फैल कर पौधा झाड़-झंखाड़ बन जाता है भाभी । वह शोभा की वस्तु न रह कर भय का कारण बन जाता है । उससे किसी का कल्याण नहीं है ।"

"राजा को पौधा मान कर उसकी काट-छाँट करने से उसका राजत्व खंडित होता है । फिर यदि उसकी कुछ देख-भाल, रोक-थाम करनी हो, तो उसके लिए मैं बैठी हूँ । मेरा अनुशासन उसे अखरेगा नहीं ; आपका अनुशासन उसे अखरता है ।"

"आप ठहरीं उसकी मां । मां तो लालन करना ही जानती है, शासन या ताड़न नहीं । फिर आपका रणबहादुर कुछ अधिक ही उच्छृंखल है । यदि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप उसे वश में रख सकें, तो वह तो सर्वोत्तम है। फिर मुझे इस विषय में कुछ सोचना ही न पड़ेगा।"

"ठीक है। मैं ही वश में रखूँगी। इससे आप भी उसकी नज़र में बुरे बनने से बच जायेंगे।"

"बुरा बनने से मैं नहीं डरता भाभी, परन्तु आपकी इच्छा का आदर करना मेरा कर्तव्य है। फिर जो काम प्यार से हो जाये, उसके लिए शासन-ताड़न की क्या आवश्यकता है? मेरी तो केवल यह इच्छा है कि हमारा रणबहादुर अपने पिता और दादा के समान गुणी और तेजस्वी बने।"

राजेन्द्रलक्ष्मी ने प्रसन्न होकर कहा : "बनेगा, बनेगा। देखते रहिये। वह अवश्य वैसा ही प्रतापी बनेगा।"

बहादुरशाह के मन में आया कि कहें कि कम से कम उन्हें ऐसी आशा दिखाई नहीं पड़ती, परन्तु ऐसा कह कर उन्होंने राजेन्द्रलक्ष्मी की प्रसन्न मनोदशा में व्याघात डालना उचित नहीं समझा। उस दिन बात यहीं समाप्त हो गई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4

राजेन्द्रलक्ष्मी

दामोदर पांडेय राजमाता राजेन्द्रलक्ष्मीदेवी का मुँहलगा सरदार था। वह सेना में ऊँचा अफसर था। वह उत्साही और कर्तव्यनिष्ठ था। किन्तु उसमें एक असैनिकोचित गुण यह था कि उसे राजनीतिक जोड़-तोड़ में रुचि थी। वह आँख, कान खुले रख कर चलता था और इससे उसे जो जानकारी प्राप्त होती थी, उसे वह अधिकतम लाभदायक स्थान तक पहुँचाने का प्रयत्न करता था। आज इस अपराह्न में वह राजमाता के पास बैठा था।

दामोदर पांडेय राजमाता के पास किसी विशेष प्रयोजन से नहीं आया था। बड़े आदमियों के दर्शन करते रहने से लाभ ही होता है, यही सोच कर वह बीच-बीच में राजमाता के पास हाज़िरी दे जाता था। राजमाता भी ऐसे लोगों को प्रश्रय देती थीं, जो काम की खबरें उन तक पहुँचाते रहें।

इधर-उधर की औपचारिक बातचीत के बाद राजमाता ने पूछा : "और नई खबर क्या है ?"

"नई खबर कोई नहीं है सरकार। वही पुरानी खबर है। सब ओर चैन की बंसी बज रही है। प्रजा जन खूब सुखी हैं।"

"यही तो मैं पूछती हूँ। प्रजा एकाएक इतनी सुखी कैसे हो उठी है ? यह नहीं कि मैं प्रजा को सुखी नहीं देखना चाहती, पर मैं यह अवश्य जानना चाहती हूँ कि ऐसी क्या बात हुई है, जिससे प्रजा पहले सुखी नहीं थी और अब सुखी हो गई।"

"इसमें कोई बड़ा रहस्य नहीं है सरकार। हमारे देश की भूमि इतनी उपजाऊ है कि इसमें एक बरस खेती करने से चार बरस का भोजन मिलता है। पिछले कुछ बरसों में लड़ाई भिड़ाई बहुत होती रही, जिससे खेती-बाड़ी की ओर लोगों का ध्यान कम रहा। सेना पर खर्च अधिक हुआ, खेतों में फसल कम हुई। अब कुछ समय से लड़ाई शान्त है। धरती माता दोनों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हाथों से भोजन परोस रही है। किसानों के खलिहान और कोठार अन्न से भरे हैं। किसान सुखी हैं, तो सब सुखी हैं।"

"बस इतना ही कारण है?" राजमाता ने ऐसा दिखाया कि जैसे यह छोटा सा कारण उन्हें पर्याप्त नहीं लगा।

"एक कारण बड़े सरकार का कठोर शासन भी है। बड़े सरकार बहुत ही कर्मठ पुरुष हैं। उन्हें शासन करने का चाव भी है और शासन करने की योग्यता भी। वह न स्वयं चैन से बैठते हैं और न अपने अधीनस्थ कर्म-चारियों को चैन से बैठने देते हैं। उनका डर इतना है कि सरकारी अफसर गलत काम करते कांपते हैं। वे थोड़े में गुज़ारा करते हैं, पर रिश्वत लेने या लूट खसोट करने की हिम्मत नहीं करते। जनता को इससे बड़ी राहत मिली है। इसीलिए जिसे भी देखो, वही बड़े सरकार के गुण गाता मिलता है।"

दामोदर पांडेय का ध्यान राजमाता के चेहरे पर नहीं था। वह अपनी झोंक में प्रजा के सुख का वर्णन किये जा रहा था। यदि उसका ध्यान होता, तो वह देखता कि प्रजा के इस सुख, और प्रजा द्वारा बड़े सरकार अर्थात् बहादुरशाह के गुणगान की खबर सुन कर राजमाता का मुखमण्डल प्रसन्नता से खिल नहीं उठा है। उल्टे उस पर चिन्ता की कुछ मलिन सी छाया पड़ गई है। राजमाता ने गम्भीर होकर कहा: "यह सब कुंवर जी प्रजा में लोकप्रिय होने के लिए कर रहे हैं। लोग उनके गुण गायें और बाकी सबको भूल जायें।"

दामोदर पांडेय चौंका। वस्तुस्थिति का एक यह भी पक्ष है। उसे पता नहीं था कि उसका उत्साहपूर्वक किया गया सुशासन का वर्णन कहीं कुछ गहरी चोट भी पहुँचा सकता है। वह अब संभला। श्रोता की मनपसन्द बात कहने की विद्या उसे आती थी। उसने कहा: "यह तो है ही सरकार। बड़े सरकार को प्रजा में लोकप्रिय होने की धुन है। इसके लिए उन्हें चाहे कितना ही परिश्रम करना पड़े, कष्ट सहना पड़े, यहाँ तक कि सरकारी अफसरों को कष्ट भी देना पड़े, उससे वे हिचकते नहीं। इसीलिए सरकारी अफसर उनसे खुश नहीं हैं।"

अब राजमाता के चेहरे पर सन्तोष की झलक दिखाई पड़ी। बोली: "क्या कहते हो? सरकारी अफसर रुष्ट हैं?"

"जिनके मुँह का कौर छीना जायेगा, वे रुष्ट नहीं होंगे? वे सदा से नाम मात्र काम करके ठाठ से रहते आये हैं। अब वे चैन से बैठ नहीं सकते। ऊपरी आय तो बिल्कुल समाप्त ही हो गई। वे तो नित्य भगवान से यही मनाते हैं कि किसी तरह बड़े सरकार से पीछा छूटे।"

"यह तो कोई अच्छा शासन नहीं है। ये अफसर ही तो हमारे शासन के आधारस्तम्भ हैं। उन्हें रुष्ट करना राज्य की नींव खोखली करना है। मैं नहीं चाहती कि हमारे अफसर असन्तुष्ट रहें।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अफसर लोग तो आपसे फरियाद करना चाहते हैं। पर वे डरते हैं कि कहीं बड़े सरकार बुरा न मानें। वे लोग यह भी सोचते हैं कि बड़े सरकार जो कुछ करते हैं, आपकी इच्छा और सहमति से ही करते हैं।"

"नहीं नहीं। ऐसी कोई बात नहीं है। मैं तो चाहती हूँ कि यदि किसी व्यक्ति को कोई कष्ट है, तो वह आकर मुझसे कहे।"

दामोदर पांडेय ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा: "सरकार ऐसा चाहेंगी, तो फरियादियों की कमी नहीं रहेगी। उन्हें तो आँख का इशारा भर चाहिए। बड़े सरकार की कठोरता से लोग सचमुच ही बहुत दुखी हैं।"

× × ×

अब राजमाता के पास बड़े सरकार अर्थात् बहादुरशाह की शिकायतों का तांता लग गया। ऐसा अधिकारी कोई हो नहीं सकता, जिसके काम में दोष ढूंढा न जा सके। जिन अधिकारियों के कार्य निर्दोष प्रतीत होते हैं, उनकी विशेषता यह होती है कि उनके विरुद्ध कहीं शिकायत कर पाने की कोई गुंजाइश नहीं होती। शिकायत करने के इच्छुक लोगों को पता होता है कि ऊपर शिकायत को सुनने वाला कोई नहीं है। अतः चुप रहना ही भला है।

पर राजमाता बड़े सरकार के विरुद्ध की जाने वाली शिकायतों को ध्यान से सुनतीं। उनके रुख से अधिकारियों को और नई शिकायतें ले कर आने का प्रोत्साहन मिलता। अधिकारियों का बड़े सरकार के प्रति रुख भी कुछ बदलने लगा।

इस सबकी भनक बहादुरशाह के कानों में भी पड़ी। वह साफ और दबंग आदमी थे। बात को मन में रखने के बजाय सीधा, दो टूक फैसला करने के लिए वह तुरन्त राजमाता के पास जा पहुँचे। बात को घुमा फिरा कर कहने की उनकी आदत नहीं थी, अतः उन्होंने छूटते ही कहा:

"भाभी, यह आपकी ज्यादती है। यदि आप को मुझ पर कुछ संदेह है या मुझसे कोई शिकायत है, तो पहले मुझसे कहिये। उसके बाद भी यदि वह दूर न हो, या आपका समाधान न हो, तो किसी दूसरे से कहने का प्रश्न उठ सकता है। मैं आपका जितना अपना हूँ, उतना और कोई नहीं हो सकता। मैंने आपको हर तरह विश्वास दिलाया, हर प्रकार का वचन दिया, फिर भी आपको शंका लगी ही रहती है। मेरी पीठ पीछे काना-फूसी चलती रहती है। इससे आपकी और मेरी, समूचे राजपरिवार की प्रतिष्ठा नष्ट होती है। लोग समझते हैं, हममें एका नहीं है। उनका ऐसा समझना न मेरे लिए हितकर है, न आपके लिए। फिर आप ऐसा क्यों करती हैं?"

राजमाता शायद इस प्रकार के स्पष्ट और सीधे प्रश्न के लिए तैयार नहीं थीं। इसलिए मन में होते हुए भी मुँह से इसका दो टूक उत्तर नहीं दे

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सकीं। बात को टालने का यत्न करते हुए बोलीं : "किस बात पर इतने नाराज़ हो रहे हो कुंवर जी ? लगता है, किसी ने तुम्हारे उल्टे सीधे कान भर दिये हैं। बताओ तो आखिर हुआ क्या है ?"

बहादुरशाह ने उनकी बात जैसे सुनी ही नहीं। अपने पहले जैसे ही प्रवाह में वह कहते गये : "मैं शासन का काम चलाता हूँ, परन्तु राज्य आपका ही है। मैं उसे हथियाना नहीं चाहता। फिर भी जब तक मैं इस काम को कर रहा हूँ, तब तक राज्य को अपना समझ कर ही करूँगा। आपके राज्य को अपना न समझूँ, तो राज्य के हित का ध्यान कैसे रखूँगा ? आपके राज्य को क्षति पहुँचा कर अपना हित साधन करने की इच्छा मेरे मन में ज़रा भी नहीं है। पर मैं जिन्हें अपना उल्लू सीधा नहीं करने देता, वे आ कर आपके कान भरते हैं। उनका ऐसा करना बिल्कुल स्वाभाविक है। किन्तु आप उनकी बात सुनें, उन्हें बढ़ावा दें, यह राज्य के लिए हितकर नहीं है।"

अब तक राजेन्द्रलक्ष्मी कुछ संभल गई थीं और उन्होंने उत्तर सोच लिया था ; बोली : "उनकी बात न सुनूँ, तो क्या करूँ ? आप तो न मुझसे कुछ पूछते हैं, न बताते हैं।..."

बीच में ही टोक कर बहादुरशाह ने कहा : "ऐसी कौन सी बात हुई, जिसमें आपसे सलाह नहीं ली गई ? मैं तो विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखता हूँ कि हर महत्वपूर्ण मामले में आपसे सलाह ली जाये और आपकी इच्छा के अनुसार ही काम किया जाये।"

"ऐसा होता तो बात ही क्या थी ! पर हो यह रहा है कि कितनी ही बातें ऐसी हैं, जो हो जाने के बाद ही मुझे पता चलती हैं।"

"ऐसी एक भी बात बताइये, जो आपकी इच्छा के प्रतिकूल हुई हो। यदि शासन का हर एक मामला आपके पास लाया जाये, तो उससे आपको व्यर्थ की परेशानी होगी। आप स्वयं इतना झंझट पसन्द नहीं करेंगी। इसलिए आपसे सामान्य नीति निश्चित करवा लेने के बाद छोटे-मोटे मामले मैं ही निपटा देता हूँ। पर हर महत्वपूर्ण विषय आपके सामने अवश्य लाया जाता है।"

राजेन्द्रलक्ष्मी जानती थीं कि बहादुरशाह की यह बात सच है। परन्तु कठोर सत्य यह है कि अधिकार और प्रभुत्व उसी के हाथ में रहता है, जो काम करता है। अधिकार जितनी अधिक देर तक किसी एक व्यक्ति के हाथ में रहता है, उतना ही वह पक्का होता जाता है। उसे छीनना या कम करना कठिन हो जाता है। राज्य वस्तुतः रणबहादुरशाह का है। पर बहादुरशाह अपनी योग्यता और कर्मठता से उस राज्य पर अपना प्रभुत्व पक्का किये जा रहा है। यह ठीक है कि वह बार बार विश्वास दिलाता है कि वह राज्य को अपने भतीजे की धरोहर की तरह संभाले हुए है, पर यदि वह कुछ समय बाद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस धरोहर को लौटाने से इन्कार कर दे, तो क्या होगा ? ऐसी परिस्थिति आने ही क्यों दी जाये ? शासन के अधिकार को एक व्यक्ति के पास इतने दिन तक रहने ही क्यों दिया जाये ? क्यों न थोड़े थोड़े समय बाद अधिकारियों को बदलते रहा जाये ? राजेन्द्रलक्ष्मी मन ही मन यह निश्चय कर चुकी थी, अतः बोली: "यह भी तो होता है कि मैं जिस मामले को महत्वपूर्ण समझती हूँ, उसे आप महत्वपूर्ण नहीं समझते।"

"यही तो मैं पूछ रहा हूँ कि आप ऐसा एक भी उदाहरण बताइये।"

राजेन्द्रलक्ष्मी उदाहरण के झंझट में नहीं पड़ना चाहती थी, अतः उसने कहा : "उदाहरण की बात नहीं । यह सिद्धान्त की बात है । ऐसा हो तो सकता है कि किसी भी विषय के महत्वपूर्ण होने या न होने के बारे में मेरी और आपकी राय भिन्न हो।"

बहादुरशाह का मस्तिष्क दुर्बल नहीं था । बात को तह तक समझ लेने के बाद उन्होंने उसका दो टूक उत्तर दिया : "मैं काम करूँगा, तो इसी तरह करूँगा । परन्तु आपकी बातों से स्पष्ट है कि आप नहीं चाहतीं कि मैं शासन के कार्य को संभालूं । पर आप यह बात मुझ से स्पष्ट कह देतीं । मैं खुशी से इसे छोड़ देता । मेरे विरुद्ध इससे उससे चर्चा करने से आपकी भी शोभा घटी ही है । खैर, जो हो गया, सो हो गया । आप अपना राज्य स्वयं संभालना चाहती हैं, तो संभाल लीजिये, या किसी और को सौंपना चाहें, तो उसे सौंप दीजिये । मेरी ओर से आप कोई रुकावट नहीं पायेंगी।"

राजेन्द्रलक्ष्मी ने इतनी सरलता से इस काम के बन जाने की आशा नहीं की थी । जब बहादुरशाह ने तनिक भी आनाकानी किये बिना स्वेच्छा से शासन का अधिकार लौटा देने की बात कही, तब राजमाता को क्षण भर के लिए लगा कि कहीं उसने गलत संदेह के वशीभूत हो कर अपने निष्कपट हितैषी को तो हाथ से नहीं गंवा दिया । पर यह भाव क्षण भर ही रहा । राज्य के हाथ से निकल जाने का भय उस पर फिर हावी हो गया । फिर भी वह बोली: "मैं यह नहीं कहती कि आप शासन का भार त्याग दें, ..."

बहादुरशाह ने उसे वाक्य पूरा नहीं करने दिया; बीच में ही टोक कर कहा : "नहीं, आपने यही कहा है । केवल शब्द भिन्न हैं । पर मैं शब्दों से परे उनके अर्थ को समझता हूँ आप कहती हैं कि मैं आपकी इच्छा के अनुसार कार्य करूँ । मैं समझता हूँ कि मैं पहले ही भरसक आपकी इच्छा के अनुसार कार्य कर रहा हूँ । इससे अधिक कर पाना मेरे लिए संभव नहीं है । मैं यह भी जानता हूँ कि गांठ कहाँ है, पर वह मेरे शासन भार को त्यागे बिना खुलेगी नहीं । आप शासन संभालिये, किन्तु अपनों को पराया और परायों को अपना मत बनाइये । अपने पराये बन जायेंगे, पराये अपने नहीं बनेंगे।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजेन्द्रलक्ष्मी क्षण भर के लिए फिर दुविधा में पड़ी । अपने को वह पराया बना रही है ; पर क्या पराये अपने बन सकेंगे ? फिर भी राज्य का लोभ प्रबल सिद्ध हुआ । उसने जो दिशा नियत कर ली थी, उसी ओर वह बढ़ी । बोली : "यदि आपने शासन भार त्यागने का निश्चय कर ही लिया है, ..."

बहादुरशाह ने फिर टोका : "मैंने निश्चय नहीं किया है, बल्कि आपने मुझे ऐसा निश्चय करने के लिए विवश कर दिया है । सम्मानपूर्वक रहने के लिए आपने मेरे सामने कोई रास्ता ही नहीं रहने दिया ।"

"वह एक ही बात है । परिणाम तो यही है कि आप अब शासन का भार संभालना नहीं चाहते । आप समझते हैं कि आप मेरी इच्छा के अनुसार काम चलाते रहे हैं और मैं समझती हूँ कि काम मेरी इच्छा के अनुसार नहीं होता रहा । आप उसमें परिवर्तन कर पाना संभव नहीं समझते । ऐसी दशा में मेरी इच्छा हो या न हो, शासन का भार मुझे स्वयं संभालना पड़ेगा और अच्छा, बुरा, जैसे भी हो काम चलाना पड़ेगा ।"

राजमाता के उत्तर से बहादुरशाह को कोई आश्चर्य नहीं हुआ । उन्हें पता था कि राजमाता उनसे शासन भार छीन लेने के लिए कटिबद्ध हैं । इसीलिए वह इस कार्य को कटुता आने दिये बिना शालीनता और शोभा के साथ कर डालना चाहते थे । वह जहाँ तक उनका प्रश्न था, हो गया । अतः अब वह बोले, "मेरे यहाँ रहने से भी शायद आपको कुछ बेचैनी हो, अतः कुछ समय के लिए मैं भारत चला जाऊँगा ।..."

"बेचैनी किस बात की ? आप खुशी से यहाँ रह सकते हैं । आपके रहने से हमें बेचैनी होगी, यह बात आपके मन में आई ही क्यों ?" राजमाता ने आत्मीयता जताते हुए कहा ।

बहादुरशाह ने इस बात का कोई उत्तर न देते हुए कहा: "कुछ दिन भारत घूमूंगा फिरूँगा । जब आपकी नई शासन व्यवस्था ठीक-ठीक जम जायेगी, तब फिर यहां लौट आऊँगा । अच्छा, अब अनुमति दीजिये ।"

बहादुरशाह कुछ उदास होकर चले गये । राजेन्द्रलक्ष्मी बैठी सोचती रही कि यह जो कुछ हुआ, वह भला हुआ या बुरा ? यदि कुंवर जी के मन में खोट नहीं था, तो उनसे शासन का भार छीन लेना अनुचित हुआ । पर यह सोच उसने एक गहरी साँस ली कि आज मन में खोट न भी हो, तो कल आते क्या देर लगती है ? चलो, जो कुछ हुआ, अच्छा हुआ ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5

त्रिपुरसुन्दरी

उन दिनों बाल-विवाह की प्रथा थी। लोगों का आयुष्य काल कम और जीवन रोग-संकटाकीर्ण होता था। माता-पिता अपने वंश को अपनी संतान से आगे भी चलता देखने के लिए लालायित रहते थे। इसलिए सात-आठ बरस की छोटी आयु में ही बालक-बालिकाओं के विवाह कर दिये जाते थे। राजमाता राजेन्द्रलक्ष्मीदेवी ने भी रणबहादुरशाह का विवाह छोटी आयु में ही कर दिया।

राजा के विवाह की खुशी में सारे काठमांडौ को सजाया गया। गरीबों को भरपेट पकवान खिलाये गये। रात भर पूरे शहर में दीपमाला जलाई गई। रंग-बिरंगी आतिशबाज़ी हुई। राजदरबार में सहभोज, मदिरापान, नृत्य और संगीत के शानदार आयोजन हुए—ऐसे, जो बहुत समय तक लोगों की स्मृति में बने रहे।

इस शुभ अवसर पर हुए दरबार में राज्य के प्रतिष्ठित सरदारों ने राजा को भेंटें प्रस्तुत कीं। कुल मिला कर विवाह पर जितना खर्च हुआ था, उससे कुछ अधिक ही आय हो गई।

बहू का नाम था त्रिपुरसुन्दरी। उसे देख कर राजमाता प्रसन्न हो गईं। गोरा चिट्टा रंग, प्रवीण शिल्पी द्वारा गढ़े गये से अंग प्रत्यंग; काली बड़ी बड़ी आँखें, मुख पर बहुत ही भोला भाव। अभी लड़की ही तो थी। बड़ी होगी, तो पूनम की चांदनी की तरह दमक उठेगी। राजमाता को वह जीती-जागती गुड़िया सी लगी।

त्रिपुरसुन्दरी रणबहादुरशाह को भी बहुत अच्छी लगी। विवाह की आयु न होने पर भी उसका साथ उसे बहुत आकर्षक लगता। उसका अधिक समय उसी के साथ हँसने-खेलने में बीतता। राजमाता अपने पुत्र और पुत्रवधू को प्रसन्न देख कर परम सन्तोष अनुभव करती और मन-ही-मन कहती:

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"थोड़ा और बड़े हो जायें, तो अपना राज्य खुद सँभाल लें। मैं निश्चिन्त होकर भगवान का भजन कर सकूं।"

जैसे भूख लगने से पहले ही किसी व्यक्ति के सम्मुख स्वादिष्ट व्यंजन सजा दिये जायें, तो वह उनके साथ पूरा न्याय नहीं कर पाता; वह उन्हें चखता है, स्वादिष्ट भी बताता है, पर भरपूर लालसा के साथ उन्हे खा नहीं पाता; उसे वैसी तृप्ति नहीं होती जैसी तेज़ भूख लगने पर होती; वैसे ही त्रिपुरसुन्दरी रणबहादुरशाह के लिए तीव्र लालसा की वस्तु नहीं बन सकी।

वे दोनों बालक ही थे और बालकों की ही तरह मिल कर खेलते और बहुत बार झगड़ भी पड़ते। झगड़े और खेल दोनों में ही त्रिपुरसुन्दरी रणबहादुरशाह पर भारी पड़ती। माता राजेन्द्रलक्ष्मी को बीच-बचाव करना पड़ता। वह बहू को समझाती कि रणबहादुरशाह उसका पति है; उसे पति की हर आज्ञा माननी चाहिए। कभी उससे झगड़ना नहीं चाहिए; त्रिपुरसुन्दरी शान्तिपूर्वक सब सुन लेती। पर अगले ही दिन पता चलता कि पिछले दिन दिये गये सास जी के उपदेश का उस पर कोई असर नहीं हुआ है।

× × ×

त्रिपुरसुन्दरी ने रणबहादुरशाह से कहा : "चलो, बगीचे में खेलेंगे।"

"मैं नहीं चलता। तुम मारती हो।" रणबहादुरशाह ने साफ मना कर दिया।

त्रिपुरसुन्दरी ने उसका हाथ पकड़ कर मनाते हुए कहा : "अच्छा, अब नहीं मारूँगी।" यह कह कर वह उसका हाथ पकड़ कर खींचने लगी।

रणबहादुरशाह राज़ी नहीं हुआ था, पर वह उसे लगभग ज़बरदस्ती ही पकड़ कर खींचती हुई बगीचे में ले गई। लाचार होकर रणबहादुरशाह को खेलना पड़ा।

× × ×

रणबहादुरशाह ने कहा : "चलो, झूला झूलेंगे।"

"यह कोई झूला झूलने का समय है?" त्रिपुरसुन्दरी ने कहा!

"क्यों, झूला झूलने का भी कोई समय होता है?"

"नहीं होता? इस समय झूला झूलेंगे, तो चक्कर आ जायेंगे। चलो थोड़े से फूल चुन लायें।"

झूला झूलने का कार्यक्रम धरा रह गया। रणबहादुरशाह को फूल चुनने जाना पड़ा।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घुड़सवारी का अभ्यास करते हुए रणबहादुरशाह गिर पड़ा। काफी चोट आई। माता राजेन्द्रलक्ष्मी से भी अधिक सेवा त्रिपुरसुन्दरी ने कीं। अन्य सेवकों को तो उसने हाथ भी नहीं लगाने दिया। सब काम-काज भूल कर वह रणबहादुरशाह के पास ही बनी रहती।

दो-चार दिन में ही रणबहादुरशाह स्वस्थ हो गया। एक दिन राजमाता ने उससे कहा: "बहू तो तुझ पर जान देती है। जिस दिन तुझे चोट लगी, उस रात उसने एक पल के लिए भी आँख नहीं झपकी।"

"वह मुझे अपनी सम्पत्ति जो समझती है" रणबहादुरशाह ने कहा।

"तुझे अपनी सम्पत्ति समझती है ? या वह तेरी सम्पत्ति है ?"

"माँ, यहीं तुम्हारी गणित कुछ गलत हो गई है। जैसे टोपी सिर के ऊपर जम जाती है, उसी तरह वह मेरे ऊपर छा गई है। मेरी कोई बात वह चलने ही नहीं देती। मुझे ही उसकी हर बात मान कर चलना पड़ता है। वह प्यार करती है, पर मुझे कुछ बोझ-बोझ सा मालूम होता है।"

"यह कैसी निराली बात!" राजमाता ने आश्चर्य प्रकट किया।

"ग्रह ठीक नहीं मिले मां। कहीं कुछ कसर रह गई।"

"चल चल। ऐसी बातें नहीं सोचा करते।" राजमाता ने बात को टालने की कोशिश की।

"यदि वह थोड़ी सी कम बुद्धिमती होती ; थोड़ी सी कम बलवती होती ; और थोड़ी सी दुबली पतली होती, तो मुझे लगता है कि अच्छा होता।"

राजमाता हँस पड़ी। बोली, "तेरी तो हर एक बात ही निराली होती है।"

× × ×

यथासमय यौवन ने आ कर त्रिपुरसुन्दरी के रूप को और भी निखार दिया। रणबहादुरशाह का मन भी उमंगों से भर उठा। शारीरिक कामना के आवेश में वह यह भूल ही गये कि त्रिपुरसुन्दरी से उनका मन पूरी तरह नहीं मिलता ; वह कुछ बोझ सी प्रतीत होती है। वह उसके प्रेम में पूरी तरह मग्न हो गये। उसकी उपस्थिति में वह प्रसन्न रहते। कुछ देर भी उससे दूर रहना पड़े, तो उन्हें बेकली होने लगती। उनका मिजाज़ बिगड़ने लगता।

इस तरह भी काफी दिन बीते। त्रिपुरसुन्दरी मां बनी। शिशु का नाम रखा गया रणोद्दीपशाह। स्वाभाविक तो यह था कि इस बच्चे को ले कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पति-पत्नी का प्रेम और प्रगाढ़ होता, परन्तु हुआ यह कि रणबहादुरशाह का जी कुछ उचट सा गया। वह स्वाभाविक और सामान्य से थोड़ा सा भिन्न थे। उनका यौवनोन्मत्त चित्त मधुकर नये-नये फूलों की खोज में भटकने लगा।

त्रिपुरसुन्दरी रणोद्दीपशाह को पा कर खुश थी।

× × ×

अपने पति की मृत्यु के बारह वर्ष बाद संवत् 1847 विक्रमी में राजमाता राजेन्द्रलक्ष्मी का देहावसान हो गया। जब जीवन का कोई प्रयोजन न रहे, तब वह देर तक टिकता नहीं; कोई न कोई बहाना ढूंढ कर समाप्त ही हो जाता है। जब तक पुत्र रणबहादुरशाह अवयस्क और अबोध था, तब तक राजेन्द्रलक्ष्मी के जीवित रहने का महत्वपूर्ण प्रयोजन था। पर जब रण-बहादुरशाह वयस्क और आत्मनिर्भर हो गया, जब उसका ध्यान अपनी पत्नी और बच्चे की ओर केन्द्रित हो गया, तब राजमाता की दशा उस बैसाखी की सी हो गई, जो शरीर की रुग्ण-दुर्बल अवस्था में चलने फिरने का एकमात्र सहारा होती है, पर स्वस्थ, सबल हो जाने पर उठा कर किसी एक कोने में पटक दी जाती है। उसका कोई प्रयोजन नहीं रहता। पता नहीं, वह बैसाखी मन में कैसा अनुभव करती है, किन्तु राजेन्द्रलक्ष्मी को यह लक्ष्य-प्रयोजनहीन स्थिति सहन नहीं हुई। जैसे फल का निर्माण होने के बाद फूल की पंखुरियाँ मुरझा कर झर जाती हैं, उसी प्रकार वह भी चुपचाप निःशब्द झर गई। उसकी आयु भी कुछ नहीं थी—यही कुल चौंतीस-पैंतीस वर्ष।

वस्तुतः राजेन्द्रलक्ष्मी को यह अनुभव कराना कि उसका जीवन निरुद्देश्य और निरर्थक नहीं है, रणबहादुरशाह और उसकी पत्नी त्रिपुरसुन्दरी का कर्तव्य था। परन्तु उनकी जो उम्र थी, उसमें कम ही लोगों को अपने इस कर्तव्य का ध्यान रहता है। रणबहादुरशाह को इस कर्तव्य का ध्यान तब आया, जब ध्यान आने का कोई लाभ नहीं था। अवसर सदा के लिए हाथ से निकल चुका था।

राजेन्द्रलक्ष्मी की मृत्यु से नेपाल राज्य के शासन का संतुलन बिगड़ गया। रणबहादुरशाह में अधिकार और यौवन का मद तो था, किन्तु शासन को संभालने की योग्यता और कर्मठता नहीं थी। परिणाम यह हुआ कि उसके चाचा बहादुरशाह, जो राजेन्द्रलक्ष्मी की इच्छा से नेपाल से बाहर चले गये थे, अपने भतीजे की सहायता करने के लिए फिर काठमांडौ आ पहुंचे। उनके आने से रणबहादुरशाह बड़े असमंजस में पड़े कि उनकी सहायता लें

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

या न लें। अपने अधिकार कम होने के भय से वह उन्हें दूर ही रखना चाहते थे। पर राजकाज में माथापच्ची करना भी उन्हें स्वयं पसन्द नहीं था, इसलिए वह यह भी सोचते थे कि चाचाजी ही उनके अभिभावक बन जायें तो भला है। अन्त में सोच-विचार के बाद रणबहादुरशाह ने पिछला विकल्प ही चुना। बहादुरशाह महाराज के अभिभावक बन कर राज्य के प्रधान मंत्री बने।

राजेन्द्रलक्ष्मी की मृत्यु का एक और परिणाम यह हुआ कि महाराज रणबहादुरशाह पर जो एक स्नेहपूर्ण नियंत्रण था, वह समाप्त हो गया। वह सदा से ही उमंगी जीव थे और मन की मौज में किसी विघ्न बाधा को स्वीकार नहीं करते थे। फिर भी माता के प्रेम का अंकुश उन्हें बहुत कुछ मर्यादा के भीतर रखता था। उस अंकुश के हट जाने से अब वह मस्त हाथी की तरह दुर्धर्ष हो उठे। यह स्थिति स्वयं उनके लिए तथा अन्य सभी सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए कष्टदायक सिद्ध हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

6

अनुरागलक्ष्मी

रणबहादुरशाह ने बर्रों का छत्ता छेड़ दिया। उसने अपने चाचा बहादुरशाह से कहा : "मैं एक विवाह और करना चाहता हूँ।"

बहादुरशाह ने विनोद में कहा: "दो ब्याह तो तुम्हारे हो चुके। एक और करके क्या करोगे?"

रणबहादुरशाह ने विनोदपूर्ण उत्तर की आशा नहीं की थी; इसलिए वह कुछ अप्रतिभ सा हो गया। कुछ क्षण रुक कर उसने कहा: "मैंने निश्चय कर लिया है। आपको सूचना देने आया हूँ।"

बहादुरशाह ने कहा : "यानी जिससे ब्याह होना है, उसे चुन भी लिया है।"

"जी हाँ। मुझे उससे प्रेम है। इसीलिए उससे विवाह करना चाहता हूँ।"

"जिससे विवाह हो जाये, उससे प्रेम करना चाहिए, हम तो यही सुनते आये हैं। जिससे प्रेम हो जाये, उससे विवाह करने की बात तो हमने आज तक नहीं सुनी।"

"मुझे लगता है कि उसके बिना मैं रह नहीं सकता। उसके बिना मेरा जीवन सूना है।"

"तो तुम उसे अपने साथ रख सकते हो। जीवन को सूना रखने की ज़रूरत नहीं। विवाह की बात कहाँ से आ उठी?"

"इसमें उसका असम्मान है। मैं उसे सम्मान से रखना चाहता हूँ।"

"राजा के साथ रहने में असम्मान है, तो और सम्मान कैसे मिलेगा?"

"राजा के साथ रहने में असम्मान नहीं है; रखैल बन कर रहने में असम्मान है। विधिपूर्वक विवाह करके रानी बन कर रहने से सम्मान मिलेगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"कौन है वह ?"

"एक पंडित हैं। उनकी पुत्री है।"

"ब्राह्मण ?"

रणबहादुरशाह ने सिर हिला कर सूचित किया कि हाँ।

"यह कठिन समस्या है। मुझसे कहो, तो मैं 'हाँ' कह भी दूं, पर यह तो सामाजिक परम्परा का प्रश्न है। तुम क्षत्रिय हो कर ब्राह्मण कन्या से विवाह करो, इससे बहुत सी उलझनें पैदा हो जायेंगी।"

रणबहादुरशाह चुप रहा। बहादुरशाह ने कहा: "इस विवाह को ब्राह्मण तो पसन्द करेंगे ही नहीं, क्षत्रिय भी इससे रुष्ट ही होंगे। मेरी सलाह है कि तुम इस विवाह का इरादा छोड़ दो।"

"मैंने पक्का निश्चय कर लिया है।" रणबहादुरशाह ने कहा।

"तुमने निश्चय कर ही लिया है, तो ठीक है। करो। जो परिणाम होगा, देखा जायेगा। पर मैं इस बात को छिपाना नहीं चाहता कि इस विषय में मेरी सहमति बिल्कुल नहीं है।"

× × ×

बात त्रिपुरसुन्दरीदेवी तक भी पहुँच गई। महाराज एक ब्राह्मण कन्या से विवाह करने वाले हैं। यह नया विवाह त्रिपुरसुन्दरीदेवी के लिए कष्ट-दायक था, पर ब्राह्मण-क्षत्रिय का प्रश्न बन कर यह सारे नेपाल दरबार के लिए चिन्ता की वस्तु बन गया। इस विषय में सभी भारदार एकमत थे कि ब्राह्मणकन्या किसी तरह नेपाल की रानी नहीं बन सकती।

तरह-तरह की अफवाहें फैलने लगीं। महाराज न केवल उस ब्राह्मण-कन्या से विवाह करना चाहते हैं, बल्कि यह भी वचन दे बैठे हैं कि उसका पुत्र ही राजसिंहासन का उत्तराधिकारी होगा। महाराज को ऐसा वचन देने का क्या हक है ? राजसिंहासन मनुष्य नहीं, भगवान देता है। राजा का जो भी ज्येष्ठ पुत्र होगा, सिंहासन उसी को मिलेगा। त्रिपुरसुन्दरीदेवी के पुत्र रणोद्दीपशाह का हक महाराज कैसे छीन सकते हैं ?

इन प्रश्नों को ले कर नेपाल दरबार भनभनाने लगा।

× × ×

मैथिल ब्राह्मण कन्या अनुरागलक्ष्मी को देखते ही महाराज रणबहादुर-शाह उस पर रीझ गये थे। यह भी नहीं कहा जा सकता कि यह उनके उन्मत्त यौवन का प्रथम आवेश था, जिसमें टिड्डी भी तितली दिखाई पड़ती है। उनके दो विवाह हो चुके थे और एक पुत्र भी हो चुका था। फिर भी

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रेम के देवता कामदेव ने कोई ऐसा बाण उन पर चलाया था, जिससे वे पूरी तरह विंध गये। अनुरागलक्ष्मी के लिए वे वैसे ही तड़पने लगे, जैसे पानी के लिए मछली तड़पती है। निश्चय ही यह पूरी तरह शारीरिक लालसा नहीं थी, बल्कि मानसिक उत्कंठा थी और इसीलिए अधिक प्रबल थी। कोई भी त्याग इतना महान नहीं था, जो इस कामना को पूर्ण करने के लिए न किया जा सके।

अनुरागलक्ष्मी आकर्षित होने योग्य वस्तु थी। उसकी गोरी छरहरी देह सोने की सलाई जैसी प्रतीत होती थी। काजल जैसे काले, नाग जैसे चमकीले, घुटनों तक लटकने वाले उसके बाल थे। ये काले बाल उसके चम्पई और हल्के गुलाबी गालों के आसपास झूलकर उसके सौन्दर्य को और भी निखार देते थे। चेहरा गोल की अपेक्षा लम्बोतरा अधिक और अंग प्रत्यंगों के विन्यास में भी गोलाई के बजाय तीखापन अधिक था। आँखें बड़ी-बड़ी और मछली की आकृति की थीं। वे खूब चमकीली थीं और हृदय का प्रत्येक भाव अन्य किसी भी भंगिमा से प्रकट होने से पहले उनमें झलक जाता था। ओठ इतने लाल थे कि वसन्त ऋतु में फूटी आम की नई कोपलों को भी लजाते थे। शरीर छरहरा होने पर भी वक्षस्थल खूब उभरा हुआ था और कटि से नीचे का भाग काफी भारी था।

परन्तु उसका असली सौन्दर्य उसके नेत्रों की चंचलता में और क्षण-क्षण में बिजली की तरह कौंध उठने वाली ओठों की मुस्कानों में था। जब वह खिलखिला कर हँसती, तब सचमुच ऐसा लगता था कि चमेली के सैकड़ों सुगन्धित फूल मृदुल डालियों से नीचे झर रहे हैं। उसकी प्रत्येक चेष्टा, प्रत्येक मुद्रा और भंगिमा मोहक थी।

अनुरागलक्ष्मी उसके पिता का दिया हुआ नहीं, अपितु प्रेमी रणबहादुर-शाह दिया हुआ नाम था। उसके पिता विद्याव्यसनी पंडित थे। उन्होंने अपनी इस मेधाविनी कन्या को घर पर ही बड़े यत्न से पढ़ाया-लिखाया था। उस शिक्षा ने अनुरागलक्ष्मी के शारीरिक लावण्य को मानों सान पर चढ़ा दिया।

जब रणबहादुरशाह ने अनुरागलक्ष्मी के पिता से कहलवाया कि वह अपनी पुत्री महाराज को अर्पित कर दें, तब पंडित जी सोच में पड़ गये। यदि पंडित जी अपनी कन्या के लिए वर खोजने निकलते—देर-सवेर में उन्हें निकलना ही पड़ता—तो उन्हें रणबहादुरशाह जैसा सुपात्र कभी न मिलता। पर उनके मन में शंका थी—क्या विद्याव्यसनी ब्राह्मण की कन्या क्षत्रिय राजा के महल में सुखी रह सकेगी ? उन्होंने पुत्री से ही पूछा। उसने कहा : "यदि विधिपूर्वक विवाह करके वह मुझे अपनी रानी बनायेंगे, तो क्यों सुखी नहीं होऊंगी ?"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पंडित जी के अपने मन में भी राजा का श्वसुर बनने का प्रलोभन हो आया। उनके कुटुम्ब से लक्ष्मी काफी समय से रूठी हुई थी। अब वह प्रसन्न हो जायेगी। उन्होंने कहा : "हमें कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु महाराज अनुरागलक्ष्मी से विधिवत् विवाह करें और वचन दें कि अनुरागलक्ष्मी का पुत्र ही राज्य का उत्तराधिकारी बनेगा।"

और प्रेमान्ध रणबहादुरशाह ने बिना सोचे-विचारे ये शर्तें स्वीकार कर लीं। राजेन्द्रलक्ष्मी अब थीं नहीं कि कुछ रोकथाम कर सकतीं। बहादुरशाह तथा बाकी सब भारदारों के विरोध की परवाह न करके रणबहादुरशाह ने अनुरागलक्ष्मी से विवाह कर लिया। इस नई रानी के प्रेम में डूब कर उन्होंने पहली दोनों रानियों की एकदम उपेक्षा ही कर दी।

× × ×

मनुष्य को समाज में रहना होता है और समाज इस प्रकार के उत्पातों को क्षमा नहीं करता।

रानी अनुरागलक्ष्मी पर महाराज रणबहादुरशाह के सिवाय और किसी की अनुराग भरी आँख नहीं पड़ती। खुल कर कोई कुछ नहीं कहता, पर बिना कहे भी हर कोई यह जता देता है कि वह जो कुछ पा रही है, वह उसका प्राप्य नहीं है। वह दूसरे का हक छीन रही है। वह चमड़े का सिक्का है, जो बहुत दिन चलने वाला नहीं है। हर आँख में ईर्ष्या है, उपेक्षा है और है गहरा तिरस्कार। परन्तु किया कुछ नहीं जा सकता, क्योंकि कहीं भी अविनय या विद्रोह नहीं है।

महाराज रणबहादुरशाह का हार्दिक प्रेम सब ओर से बरस रहे इस तिरस्कार से अनुरागलक्ष्मी की रक्षा करता है। उनकी उपस्थिति में वह सुख के सागर में उतराती रहती है और रणबहादुरशाह कम ही समय अनुपस्थित रहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7

ओझा की करतूत

बड़ी रानी त्रिपुरसुन्दरीदेवी को अपनी सौत अनुरागलक्ष्मी से कोई प्रेम नहीं था। न होना स्वाभाविक भी था। यों रणबहादुरशाह की एक और भी रानी थी, पर वह अनुरागलक्ष्मी की तरह रणबहादुरशाह को पूरी तरह अपनी मुट्ठी में नहीं कर सकी थी, इसलिए त्रिपुरसुन्दरी को उससे विशेष शिकायत नहीं थी। पर अनुरागलक्ष्मी ने तो महाराज पर न जाने क्या वशीकरण कर दिया था! फिर वह क्षत्रिय कन्या न होकर ब्राह्मण कन्या थी। अतः त्रिपुरसुन्दरी उसे किसी तरह अपने समकक्ष मानने को तैयार नहीं थी। पर हाल यह था कि जाति और कुल की दृष्टि से घटिया इस युवती ने बड़ी रानी को बिल्कुल ही नीचा दिखा दिया था। महाराज अनुरागलक्ष्मी के सिवाय और किसी की ओर मुँह उठा कर देखते भी नहीं थे।

त्रिपुरसुन्दरी इस दृष्टि से असाधारण स्त्री थी कि वह अपने किसी भी कष्ट या अभाग्य का ढोल पीटना पसन्द नहीं करती थी। मन में वह चाहे कितनी ही व्यथा अनुभव क्यों न करे, किन्तु उसे मुँह से प्रकट कभी नहीं करती थी। इसलिए किसी ने भी उसे कभी महाराज या रानी अनुरागलक्ष्मी की निन्दा में कोई शब्द कहते नहीं सुना।

फिर भी वह अपने छिन गये सौभाग्य और प्रभुत्व को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न में कमी नहीं रखती। वह नियमपूर्वक अपनी कुल देवी तुलजा भवानी की पूजा करती और प्रार्थना करती कि किसी प्रकार महाराज का मन उसकी ओर आकृष्ट हो जाये। इसी प्रार्थना को लेकर वह बहुत बार पशुपतिनाथ के चरणों में भी गई थी। पर मालूम नहीं कि देवी-देवता इस प्रकार की गई अनगिनत प्रार्थनाओं में से किसे सुनते हैं और किसे अनसुना कर देते हैं।

आज उसकी दासी कंचन किसी ओझा को बुला कर लाई थी। उसके विषय में ख्याति थी कि वह मन्त्र, तन्त्र और अनुष्ठानों द्वारा असम्भव बातों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को भी सम्भव कर दिखाता है। कंगाल कुबेर बन गये हैं, वंध्याओं की गोदें भर गई हैं और असफल प्रेमियों ने अपनी प्रियतमाओं को प्राप्त कर लिया है। मन की कोई ऐसी इच्छा नहीं, जिसे उसके अनुष्ठानों द्वारा पूरा न किया जा सकता हो।

सुन कर त्रिपुरसुन्दरी ने कहा : "तू क्यों बुला लाई इसे ? मैंने तो तुझसे नहीं कहा था।"

कंचन ने विनयपूर्वक कहा : "सरकार, एक बार इसे आज़मा कर अवश्य देखिये। बड़ा नाम है इसका। हर समय अभिलाषियों की भीड़ लगी रहती है। बड़े-बड़े काम चुटकियों में सिद्ध हो जाते हैं। क्या पता, इसके मन्त्र-तन्त्र से महाराज का मन फिर पहले जैसा ही हो जाये।"

अन्य कोई होता, तो उसके सामने त्रिपुरसुन्दरी कभी स्वीकार न करती कि उसे कोई क्लेश है, या वह महाराज को फिर अपने प्रति आकर्षित करने के लिए लालायित है, पर कंचन उसकी हर समय साथ रहने वाली दासी थी। उसके सामने ऐसा ढोंग करना उसके बस का न था। अतः अधिक कहे-सुने विना उसने ओझा महोदय को बुलवा लिया।

पतले दुबले; लम्बे बाल और दाढ़ी; माथे पर तिलक, गले में रुद्राक्ष की कई मालाएँ; बगल में एक आयताकार बस्ते जैसी पोटली; आयु पचास से साठ तक कुछ भी हो सकती है, पर ठीक पहचानी नहीं जाती। ओझा जी उपस्थित हुए और विनयपूर्वक रानी को प्रणाम करके खड़े रह गये। कंचन ने एक चौकी लाकर उस पर आसन बिछा दिया। रानी ने उनसे बैठने का अनुरोध किया। उनके बैठ जाने पर रानी स्वयं भी एक चौकी पर बैठ गई।

"कहिये, क्या आज्ञा है ?" ओझा जी ने प्रश्न किया।

उत्तर दिया कंचन ने : "आप ऐसा क्यों पूछते हैं ? आप तो त्रिकालदर्शी हैं। मन की बात जान लेते हैं।"

ओझा जी हँसते हुए बोले : "अच्छा, अच्छा ! तो तुम प्रश्न भी लगवाना चाहती हो ? ठीक है!" फिर रानी की ओर अभिमुख होकर बोले : "सरकार, जो कुछ चाहती हैं, उसका इस समय मन में ध्यान करें।"

रानी की मुख मुद्रा गम्भीर हो गई और वह विचारमग्न प्रतीत हुई। एक मिनट तक रानी के मस्तक की ओर एकाग्र अपलक दृष्टि से ताकते रहने के बाद ओझा जी ने कहा : "प्रेम का प्रश्न है। प्रतिद्वन्द्विनी ने प्रेमी को वश में कर लिया है। आप उसे फिर वापस पाना चाहती हैं।"

रानी की मुख मुद्रा पर विस्मय की रेखाएँ खिंच गईं। ओझा ने उसके मन की बात बिल्कुल ठीक जान ली। ओझा ने पूछा : "ठीक है न ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रानी ने स्वीकृतिसूचक सिर हिलाया।

"प्रेमी को वापस पाने के दो उपाय हैं। उच्चाटन द्वारा प्रतिद्वन्द्विनी का मस्तिष्क विकृत कर दिया जाये। अभिचार क्रिया द्वारा उसका विनाश भी किया जा सकता है। दूसरा यह कि प्रतिद्वन्द्विनी ज्यों की त्यों रहे, और प्रेमी उससे विमुख होकर फिर पहली ही स्थिति में आये।"

त्रिपुरसुन्दरी ने अधीरतापूर्वक कहा : "मैं किसी का अहित नहीं चाहती। प्रतिद्वन्द्विनी का बिगाड़ करके मुझे क्या लेना है ?"

"इसमें एक कठिनाई है। इस समय भी प्रतिद्वन्द्विनी ने वशीकरण तन्त्र के प्रयोग द्वारा ही प्रेमी को वश में किया हुआ है। मेरे प्रयोग से वह वशीकरण टूट जायेगा। प्रेमी फिर पहली अवस्था में लौट आयेगा। पर यह सम्भावना बनी रहेगी कि प्रतिद्वन्द्विनी फिर वशीकरण का नया प्रयोग करके प्रेमी को फिर वश में कर ले। उच्चाटन या अभिचार द्वारा प्रतिद्वन्द्विनी को उन्मत्त बना कर या नष्ट करके इस संकट से सदा के लिए मुक्ति पाई जा सकती है।"

कंचन ने कहा : "तब फिर उच्चाटन या अभिचार का ही अनुष्ठान कीजिये।"

"परन्तु इन दोनों ही अनुष्ठानों में व्यय बहुत है ! कई रात श्मशान में साधना करनी होती है। इक्कीस बकरों की बलि महाकाली और काल-भैरव को देनी पड़ती है..."

त्रिपुरसुन्दरी ने बीच में टोककर कहा : "व्यय का प्रश्न नहीं। उच्चाटन या अभिचार नहीं करना है। मैं प्रतिद्वन्द्विनी को कोई नुकसान पहुंचाना नहीं चाहती। यदि वशीकरण से महाराज का मन बदल सके, तो वशीकरण ही कीजिये।"

ओझा जी कुछ निराश हुए, पर निराशा को उन्होंने प्रकट नहीं होने दिया; कहा : "जैसी सरकार की इच्छा। मैं तीन दिन पश्चात् अभिमन्त्रित विभूति लेकर सेवा में उपस्थित होऊँगा। वह विभूति आपको किसी प्रकार महाराज के तकिये के नीचे रखवा देनी होगी। एक कवच मैं आपको आज दिये जाता हूँ। इसे आप गले में माला की तरह धारण करें। 'ओ३म् मणिपद्मे हुम्' इस तारा मन्त्र का आप प्रातः-सायं ग्यारह बार जाप करें। इष्ट सिद्धि अवश्य होगी।"

कंचन ने कहा : "और तो सब ठीक है। पर उस विभूति को महाराज के तकिये के नीचे किस तरह रखवाया जायेगा ? महाराज आजकल छोटी रानी के शयनकक्ष में सोते हैं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह तो परम आवश्यक है" ओझा जी ने कहा। उनकी मुख मुद्रा से स्पष्ट था कि यह सोचने की ज़िम्मेदारी उनकी नहीं है।

कंचन ने खुद ही पूछा : "इस अभिमन्त्रित विभूति को कितने समय के अन्दर उनके तकिये के नीचे रखवा देना आवश्यक है ?"

"दो-चार या दस दिन; जब भी सुविधा हो। पर तन्त्र उसके बाद ही फलवान् होगा।"

किसी ने कुछ कहा नहीं, किन्तु कंचन के चेहरे से प्रकट था कि तब तो कुछ न कुछ प्रबन्ध हो ही सकता है। उसके बाद ओझा जी ने रानी त्रिपुर-सुन्दरी देवी को चाँदी का बना एक रक्षा कवच दिया। रानी ने कंचन को आँख से संकेत किया। उसने एक रेशमी शाल के ऊपर 101 रुपये रख कर ओझा जी को भेंट किये। ओझा जी ने एक बार फिर दृढ़ विश्वास प्रकट किया कि "इष्ट सिद्धि अवश्य होगी। मेरा किया अनुष्ठान आज तक कभी विफल नहीं रहा।" उन्होंने यह भी कहा : "मैं तो व्याधि ही नहीं, उसके मूल का भी उच्छेद कर सकता हूँ, किन्तु जब सरकार की ही अनुमति नहीं है, तब कुछ भी नहीं किया जा सकता। मन्त्र और मन्त्र की शक्ति कल्पनातीत है।"

इसके बाद भी जब रानी या कंचन की ओर से उन्हें मूल के उच्छेद के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं मिला, तब उन्होंने शाल को अपनी पोटली में लपेटा और रुपयों को यत्नपूर्वक थैली में बाँधा और विनयपूर्वक प्रणाम करके रानी से विदा ली।

रानी और कंचन ने एक दूसरे की आँखों में देखा। दोनों की दृष्टि में एक ही प्रश्न था : "क्या ओझा का तन्त्र प्रयोग सफल होगा ?"

× × ×

यद्यपि कंचन ने काफी सावधानी बरती थी, फिर भी त्रिपुरसुन्दरी के पास ओझा के आने की बात छिपी नहीं रह सकी। उससे अगले ही दिन रानी अनुरागलक्ष्मी ने आधे परिहास और आधी गम्भीरता से महाराज रणबहादुर-शाह से कहा : "यह आपकी ज़्यादती है कि आपने बड़ी रानी की एकदम उपेक्षा कर दी है। वह बहुत क्लेश अनुभव कर रही हैं।"

रणबहादुरशाह ने कुतूहल जताते हुए पूछा : "तुम्हें कैसे मालूम ?"

"मुझे क्या, सारे राजमहल को यह मालूम है। उन्होंने कल ओझा को बुलवाया था।"

"ओझा को ? किसलिए ?"

"ठीक तो पता नहीं, पर अनुमान किया जा सकता है।"

"तुम क्या अनुमान करती हो ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"सरकार के मन को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए कोई उपाय करवाती होंगी।"

क्षण भर के लिए महाराज के मन में कचोट-सी अनुभव हुई—बड़ी रानी को वह कितना प्यार करते थे ! उसका आँखों से ओझल होना ही उन्हें सह्य नहीं होता था। आज वही उनका प्रेम पाने के लिए ओझा की शरण ले रही है। पर यह भाव केवल क्षण भर ही रहा। तीव्र मदिरा की भाँति अनुरागलक्ष्मी उनके सामने थी। उनकी सारी चेतना उसी के वशीभूत थी। उन्होंने हल्का सा मुस्कराते हुए कहा : "तुम्हारे सम्मोहन को तोड़ने का तन्त्र क्या ओझा के पास होगा ?"

कुछ लजा कर अनुरागलक्ष्मी तिरछी आँखों से महाराज की ओर देखती रही, मानो कह रही हो कि जिस प्रेमपाश में मैंने आपको बाँधा है उसे हज़ार ओझाओं के हज़ार अनुष्ठान भी काट पाने में समर्थ नहीं हैं। अभी दो-तीन दिन पहले उसने महाराज को बताया था कि वह पुत्रवती होने वाली है। उसके शरीर पर एक विचित्र कान्ति छा चली थी और महाराज को उसके साथ गहरी एकात्मता अनुभव होने लगी थी। अनुरागलक्ष्मी की सन्तान कितनी प्यारी होगी !

थोड़ा रुक कर अनुरागलक्ष्मी ने कहा : "इन ओझाओं के अनुष्ठान सदा निष्फल नहीं होते। कभी-कभी उनका विकट दुष्परिणाम होता है।" आशंका उसके चेहरे पर स्पष्ट हो उठी—महाराज के लिए, अपने लिए, अपनी भावी सन्तान के लिए।

रणबहादुरशाह ने कहा : "ये ओझा ठग और मूर्ख होते है। इनके किसी मन्त्र तन्त्र में कोई शक्ति नहीं होती। ये दुःखी तथा अज्ञानी लोगों के सहारे जीते हैं। ये भय की नहीं, उपहास की वस्तु हैं।"

परन्तु अनुरागलक्ष्मी अन्धविश्वासों से इतना ऊपर नहीं उठ सकती थी। उसने गम्भीर होकर कहा : "मैंने बहुत से जादू टोनों को फलते देखा है। ये तान्त्रिक लोग अपने रहस्यपूर्ण अनुष्ठानों से लोगों को पागल कर सकते हैं, यहाँ तक कि मार भी सकते हैं। हमारे गाँव में एक ओझा था..."

रणबहादुरशाह ने उसकी कहानी आगे नहीं चलने दी; कहा : "हो सकता है कि किसी ओझा में कोई शक्ति रही हो, पर सब ओझाओं में वैसी शक्ति नहीं होती। ये तो डरे हुए को, दुःखी को कुछ डरा कर, कुछ आशा बंधा कर अपना पेट पालने का उपाय भर करते हैं और कुछ नहीं। इनसे डरना तो केंचुए से डरने जैसा है।"

"ना, ना। बिल्कुल केंचुआ ही नहीं, कहीं-कहीं ये पूरे विषधर नाग सिद्ध होते हैं। केंचुए के धोखे में नाग के प्रति लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आप बड़ी रानी को रुष्ट कर रहे हैं और उसका फल न जाने किस किसको भुगतना पड़ेगा।"

"तुम ठीक कहती हो। आखिर ओझा राजमहल में आये ही क्यों ? मैं मना कर दूंगा। ओझा राजमहल में पैर भी न रखने पायेगा।"

"उससे क्या होगा ? ओझा राजमहल में न आये. तो कोई और चल कर ओझा तक जा सकता है। ओझा कहीं भी दूर बैठ कर तान्त्रिक अनुष्ठान कर सकता है। किस किसको कहाँ-कहाँ जाने से रोका जायेगा ?"

रणबहादुरशाह सोच में पड़ गये। रानी अनुरागलक्ष्मी की बात ठीक थी। ऐसा प्रबन्ध कर पाना कठिन और असुविधाजनक था कि बड़ी रानी या उसका कोई भी अनुचर दिन या रात में किसी भी समय लुक-छिप कर किसी भी ओझा से सम्पर्क स्थापित न कर सके। कुछ सोच न पाकर उन्होंने पूछा : "तो फिर क्या किया जाये ?"

"यही कि बड़ी रानी को रुष्ट होने का अवसर न दिया जाये।"

क्षण भर चुप रह कर रणबहादुरशाह बोले : "मुश्किल है। जिसे रुष्ट होने की आदत पड़ जाती है, वह कोई न कोई बहाना निकाल कर रुष्ट होता ही रहता है। इच्छा न रहने पर अरुचिकर भोजन कभी-कदास किया भी जा सकता है, परन्तु इच्छा न होने पर प्रेम नहीं किया जा सकता।"

"परन्तु बड़ी रानी से तो आपको बहुत प्रेम था !"

"वह बीती बात है। ऊपर की कक्षा में पहुंच जाने पर निचली कक्षाओं की पाठ्य पुस्तकें ताक पर रख दी जाती हैं। मैं भी प्रेम की कक्षाएँ चढ़ रहा हूँ।"

अनुरागलक्ष्मी के मन में आया कि पूछे : "तो मैं प्रेम की ऊँची कक्षा की पाठ्य पुस्तक हूँ। इससे भी ऊँची कक्षा में पहुंच जाने पर मुझे भी ताक में रख दिया जायेगा ?" पर उसने मुँह से कुछ कहा नहीं। केवल मुस्करा दी। रणबहादुरशाह उसके मन का भाव समझ नहीं सके। उस मुस्कराहट पर रीझ कर उन्होंने अनुरागलक्ष्मी के कपोल चूम लिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

8

राजकोप

"पांडेय जी, चाचा जी के वर्ताव से मैं तंग ग्रा गया हूँ। मैंने बहुत सहा है, पर ग्रब ग्रौर सहन कर पाना मेरे बस का नहीं है।" महाराज रणबहादुर-शाह ने दामोदर पांडेय से कहा।

दामोदर पांडेय ग्रब नेपाली सेना का सेनापति था। प्रधानमन्त्री पद पर बहादुरशाह काम कर रहे थे। वह इतने कर्मठ ग्रौर मनस्वी थे कि कार्य में किसी प्रकार की त्रुटि न होने देते थे। उनका शासन कठोर था, जिससे सबल निर्बल को सता नहीं सकते थे। रणबहादुरशाह केवल कहने को ही राजा था। बहादुरशाह का शासन उस पर भी उतना ही चलता था, जितना ग्रन्य प्रजा पर।

रणबहादुरशाह उन ग्रसामान्य व्यक्तियों में से एक था, जो किन्हीं भी नियमों या रीति-नीतियों में बँध कर चलना पसन्द नहीं करते। किसी भी प्रकार का बन्धन ऐसे लोगों को बहुत ग्रखरता है। ऐसे लोग यदि शासित प्रजा होते हैं, तो उनका स्थान बहुधा कारागार में होता है। पर जब कभी ऐसे लोग शासक बन बैठते हैं, तब वे उच्छृंखल ग्रौर निरंकुश शासक होते हैं। भाग्य ने रणबहादुरशाह को राजा बना कर भेजा था।

रणबहादुरशाह के शब्दों में जो क्षोभ ग्रौर उद्विग्नता थी, उसे दामोदर पांडेय ने ग्रनुभव किया। परन्तु उसे उसका ग्रौचित्य समझ न ग्राया। फिर भी शिष्टाचार के नाते उसने कहा : "क्या कोई नई बात हुई है सरकार ?"

"कौन सा दिन ऐसा बीतता है, जिस दिन नई बात नहीं होती ? चाचा जी को बाकी राजकाज की चिन्ता उतनी नहीं है, जितनी कि इस बात की कि मैं क्या करता हूँ ग्रौर क्या नहीं करता। मेरे ऊपर शासन करना ही उन्होंने ग्रपना लक्ष्य बना रखा है। बात यह है कि उन्हें भय लगा रहता है कि यदि उन्होंने मुझ पर शासन न रखा, तो बाकी शासन भी उनके हाथ से छिन जायेगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"सरकार, शासन तो आपका है। राजा तो आप ही हैं। वह तो आपकी ओर से ही आपका काम करते हैं। आप पर शासन करने की बात वह क्यों सोचेंगे ?"

"यही तो मैं कहता हूँ कि ऐसी बात उन्हें सोचनी नहीं चाहिए। इसमें उनका भला नहीं है। राजा मैं हूँ। मेरी आज्ञा सर्वोपरि होनी चाहिए। पर मेरी आज्ञा चलती नहीं। उसे जानबूझ कर टाला जाता है। मुझे आये दिन चाचा जी की ऐसी अनेक आज्ञाएँ माननी पड़ती हैं, जो मेरी इच्छा के प्रतिकूल होती हैं। यह स्थिति समाप्त होनी चाहिए।"

दामोदर पांडेय ने मन ही मन कहा : बेटा, जब तक यह स्थिति है, तभी तक कल्याण है। यदि कल से तुम्हारी आज्ञा सर्वोपरि हो जाये, तो औरों का तो जीना दूभर हो ही जायेगा, स्वयं तुम्हारी दशा भी शोचनीय हो जायेगी। राजकाज तुम जैसे तरंगी लोगों के चलाये नहीं चलते। बूढ़ा आदमी मेहनत से काम कर रहा है, उसे करने दो और तुम चैन की बंसी बजाओ। शासन की मृगतृष्णा के पीछे काहे को दौड़ते हो ? पर अपने इन विचारों को प्रकट न करके उसने केवल इतना कहा : "सरकार, उनका शासन कठोर अवश्य है, किन्तु सारे राज्य में उनकी व्यवस्था की धाक है। बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते हैं।"

इस बात को रणबहादुरशाह भी भलीभाँति अनुभव करता था। विशेष रूप से इसलिए कि स्वयं बाघ होने के कारण बकरियों के साथ एक घाट पर पानी पीना उसे बहुत अखरता था। पर इस समय वह बहादुरशाह के गुणों का मूल्यांकन करने की स्थिति में नहीं था। तिरस्कारपूर्ण स्वर में उसने कहा : "खाक व्यवस्था है। राज्य का एक भी तो काम ठीक ढंग से नहीं हो रहा। उनकी सारी चेष्टा इस बात के लिए है कि सारे अधिकार उनके ही हाथों में केन्द्रित होते जायें।" फिर थोड़ा उत्तेजित होकर वह कहने लगा : "आपको तो मालूम है कि कई बरस पहले माता जी ने इन्हें देश से निकाल दिया था। उस समय यह बात सब पर प्रकट हो गई थी कि यह मुझे हटा कर राज-सिंहासन पर स्वयं अधिकार कर लेना चाहते थे। मैं उस समय बालक ही था। पर भगवान पशुपतिनाथ की इच्छा थी कि सिंहासन पर मेरा ही अधिकार रहे। इसीलिए चाचा जी के मनसूबे पूरे न हो सके। माता जी ने यत्न किया और इन्हें देश छोड़ कर भागना पड़ा। कई बरस तक भटकते रहने के बाद माता जी का स्वर्गवास होने पर यह फिर नेपाल लौट आये। इन्होंने शपथ लेकर मुझे वचन दिया कि यह कभी राजद्रोह या विश्वासघात न करेंगे; कभी राजसिंहासन पर कब्ज़ा करने की इच्छा न करेंगे और राजभक्त प्रजा बन कर राज्य की सेवा करेंगे। मैंने इनकी बातों पर विश्वास कर लिया और इन्हें अपना संरक्षक, प्रधानमन्त्री, सब कुछ बना दिया। सच तो यह है कि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाचा जी जो कुछ चाहते थे, वह सब उन्हें बिना माँगे मिल गया। और अब वह राजद्रोह कर रहे हैं।"

यह सारा वृत्तान्त दामोदर पांडेय को भलीभाँति मालूम था। परन्तु रणबहादुरशाह ने जो अन्तिम वाक्य यह कहा कि 'अब वह राजद्रोह कर रहे हैं' इसकी संगति वह किसी तरह न बिठा सका। उसने धीमे स्वर में पूछा : "सचमुच राजद्रोह कर रहे हैं ?"

"और नहीं तो क्या ! इस समय शासन और सेना, दोनों पर उनका पूरा अधिकार है। मैं इस अधिकार को अपने हाथ में लेना चाहता हूं। पर वह लेने ही नहीं देते। वह मुझे कठपुतली बना कर मेरे नाम पर स्वयं शासन करते रहना चाहते हैं। मेरे राज्य को न हथियाने का उन्होंने जो शपथपूर्वक वचन दिया था, उसे भंग करके वस्तुतः राज्य को उन्होंने हथिया लिया है।"

"पर सरकार, वह स्वयं को राजा तो नहीं कहते।"

"इसी पर तो मुझे सारा ऐतराज़ है। राजा मैं कहलाता हूं। पर मैं किसी पर प्रसन्न होकर कृपा नहीं कर सकता। किसी से रुष्ट होकर उसे दंड नहीं दे सकता। मैं तो केवल मिट्टी का माधव हूं।"

दामोदर पांडेय को इसमें कोई बुराई दिखाई नहीं पड़ी। रणबहादुरशाह यदि मिट्टी के माधव बने रहें, तो उसमें किसी का कोई नुक़सान नहीं है। उल्टे यदि वह हाड़-चाम के जीवन्त माधव बन जायें, तो उससे स्वयं उनका भी अहित ही होने की आशंका है। जैसे कोई अनाड़ी व्यक्ति महावत के बजाय स्वयं हाथी को चलाने का हठ करे, वैसी ही कुछ इच्छा रणबहादुरशाह की है। पर जो हाथी का स्वामी है, यदि वह ऐसा हठ करे ही, तो उसे कितनी देर तक रोका जा सकता है ? दामोदर पांडेय ने समझ लिया कि नियति कुछ क्रूर खिलवाड़ करना चाहती है। अतः उसने राजा की बात का समर्थन करते हुए कहा : "यह तो सही है। कृपा करने और दंड देने का अधिकार तो उसी के हाथ में रहना चाहिए, जो राजा है।"

"तो आप इस बात को मानते हैं ?"

"इसे कौन नहीं मानेगा ?"

"मैं जानता था कि आप मेरी इस बात से सहमत होंगे।" क्षण भर रुक कर रणबहादुरशाह ने अपने स्वर को थोड़ा धीमा और थोड़ा सा विनीत करके कहा : "अब मुझे आपकी सहायता की आवश्यकता होगी।"

"मेरी सहायता ?" दामोदर पांडेय ने चौंक कर कहा। "मैं तो आपका विनीत सेवक हूं। मैं आपकी क्या सहायता कर सकता हूँ ? मेरे लिए तो आपका आदेश हुआ चाहिए।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दामोदर पांडेय ने यंत्र की भाँति ये वाक्य बोल तो दिये, क्योंकि चुप रहना और सोचना इस अवसर पर उचित न होता, पर साथ ही उसका मन अनगिनत संभावनाओं से आकुल हो उठा। रणबहादुरशाह क्या चाहता है? उससे वह किस कार्य में किस प्रकार की सहायता की अपेक्षा रखता है? वह रणबहादुरशाह के मुख और आँखों पर दृष्टि गड़ा कर उसके मन तक पैठने का यत्न करने लगा।

दामोदर पांडेय की उस एकाग्र दृष्टि को सहन करना रणबहादुरशाह के लिए कठिन हो गया। बात को बहुत न घुमा फिरा कर उसने सीधा ही कहा: "शासन का अधिकार अब मैं चाचा जी से अपने हाथ में ले लेना चाहता हूँ। मेरा खयाल है कि वह इस अधिकार को आसानी से छोड़ना न चाहेंगे।"

"मेरा खयाल है कि वह कोई विरोध न करेंगे। यदि आप उन्हें प्रधान मन्त्री नहीं रखना चाहते, तो वह बलपूर्वक उस पद पर बने रहना न चाहेंगे।"

"पर मैं ऐसा जोखिम उठाना नहीं चाहता। मान लीजिये कि मैं उनसे कहूँ और वह अपना पद और अधिकार छोड़ने को तैयार न हों। उस दशा में मेरे कहने से वह सावधान हो जायेंगे और तब उन्हें हटा पाना किसी के लिए भी संभव न होगा।"

"फिर आपने क्या सोचा है?"

"मैं यह चाहता हूँ कि किसी भी प्रकार की चेतावनी दिये बिना उन्हें कैद कर लिया जाये। उसके बाद जैसा भी उचित होगा, वैसा उनके साथ व्यवहार किया जायेगा। पहले से उनके कानों में किसी प्रकार की भनक पड़ने से सारा काम बिगड़ जायेगा।"

दामोदर पांडेय ने रणबहादुरशाह को कभी इतना उद्यमी, संकल्पवान और नीति-कुशल नहीं समझा था। वह उसे केवल तरंगी और उच्छृंखल युवक समझता था। उसके मन में रणबहादुरशाह के लिए अवहेलना का सा ही भाव रहा था। पर अब उसके प्रति कुछ आदर का भाव जागा। रणबहादुरशाह बिल्कुल ही अकर्मण्य नहीं है। अपने पिता सिंहप्रतापशाह और दादा पृथ्वीनारायण शाह का कुछ शौर्य और प्रताप उसमें भी है। उसने पूछा: "उन्हें प्रधान मन्त्री पद से हटाने के बाद आपको कोई न कोई नया प्रधानमंत्री बनाना पड़ेगा। आपने इस विषय में भी कुछ सोचा है?"

रणबहादुरशाह कुछ क्षण विचारमग्न सा रहा। उसके बाद उसने शान्त स्वाभाविक स्वर में कहा: "मैंने इस विषय में भलीभाँति सोचा है। मेरा विचार है कि प्रधान मन्त्री के पद को जितनी अच्छी तरह आप संभाल सकते हैं, उतना और कोई नहीं सँभाल सकता।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस उत्तर की दामोदर पांडेय ने स्वप्न में भी कल्पना न की थी। यदि यह रणबहादुरशाह की सच्ची राय थी, तो यह उसके लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई। यदि यह उसका अवसरानुकूल नीतिपूर्ण उत्तर था, तो यह उसकी चतुराई का उत्कृष्ट प्रमाण था। इसे सुनते ही दामोदर पांडेय का रुख एकदम बदल गया। जो व्यक्ति हमें अत्यन्त गुणी और योग्य मानता है, उसे हम अयोग्य और गुणहीन कदापि नहीं मान सकते। वहादुरशाह जैसे समर्थ व्यक्ति के रहते दामोदर पांडेय के मन में यह बात कभी आई ही नहीं थी कि प्रधान मन्त्री के रूप में नेपाल का शासन संभालने की क्षमता उसमें हो सकती है। इस विषय में उसने कभी कुछ सोचा ही नहीं था। पर अब रणबहादुरशाह के मुँह से सुनने के बाद उसे क्षण भर में न केवल यह विश्वास हो गया कि वह इस शासन को योग्यतापूर्वक संभाल सकता है, बल्कि यह भी, कि जितनी अच्छी तरह वह संभाल सकता है, उतना अन्य कोई नहीं संभाल सकता। जिस प्रकार रुचिकर भोज्य सामग्री को सामने देख कर बिना भूख भी दर्शक के मुँह में पानी आने लगता है, उसी प्रकार प्रधान मन्त्री बनने की संभावना का पता चलते ही वह प्रधान मन्त्री बनने के लिए लालायित हो उठा। शिष्टाचार के नाते उसने कहा : "यह आपकी कृपा है कि आप ऐसा समझते हैं। अपनी योग्यता के विषय में मुझे कभी अभिमान नहीं हुआ, किन्तु इतना अवश्य है कि आज तक मुझे जो भी कार्य सौंपा गया है, उसे मैंने निष्ठा और परिश्रम के साथ निबाहा है।"

"मुझे मालूम है। पर अब हमें कैसे कदम आगे बढ़ाना है ? मैं चाहता हूं कि इस छोटी-सी बात को लेकर शोरगुल अधिक न हो।"

"शोरगुल नहीं होगा। जब आपका आदेश है, तब बड़े सरकार को कैद कर लिया जायेगा। उसके बाद आप जैसा उचित समझें, करें।"

"किसी को कानोंकान भनक न हो।"

"आप निश्चिन्त रहें।"

"ठीक है, तब आप उन्हें जल्दी से जल्दी कैद कर लें। कल या जिसमें भी सुविधा हो—आज ही, अभी।"

"यह मेरा ज़िम्मा रहा। जब भी उचित अवसर होगा, उन्हें जल्दी से जल्दी कैद कर लिया जायेगा। और कोई आज्ञा।"

"अभी इतना ही काफी है। बाकी इसके बाद देखा जायेगा।" कहते हुए रणबहादुरशाह उठकर खड़े हो गये, जो इस बात का संकेत था कि अब दामोदर पांडेय जा सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

9
वज्रपात

रानी अनुरागलक्ष्मी कुछ अस्वस्थ थीं। महाराज रणबहादुरशाह ने उनका माथा छूकर देखा और कहा : "शरीर गर्म मालूम होता है। ज्वर होगा। मैं अभी वैद्य को बुलवाता हूं।"

अनुरागलक्ष्मी ने कहा : "हाँ, जी घबरा रहा है। पर विशेष नहीं। दवाई से ठीक हो जायेगा।"

कुछ ही देर में वैद्यराज आ गये। उन्होंने नाड़ी, मुँह, जीभ आदि देख कर रोगिणी की परीक्षा की और प्रसन्न मुख से सांत्वना देते हुए कहा : "चिन्ता की कोई बात नहीं। पित्त कुपित हुआ है। दवाई की तीन मात्राओं से ही ठीक हो जायेगा। बस दो-चार दिन पथ्य का सेवन करना होगा। इस ऋतु में प्राय: ऐसा हो जाता है।"

परन्तु रोगिणी के कक्ष से बाहर आते ही वैद्यराज का मुँह मलिन पड़ गया। उन्होंने गम्भीर और चिन्तित स्वर में महाराज से कहा : "रोग विषम है। अभी स्पष्ट दिखाई नहीं पड़ता। पर लगता है कि शीतला मां का प्रकोप हुआ है। भगवान पशुपतिनाथ ही रक्षा करें। कोई औषध देना व्यर्थ है।"

शीतला का नाम सुनते ही रणबहादुरशाह के रोंगटे खड़े हो गये। इससे भयानक किसी व्याधि की वह कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उनके मुँह से इतना ही निकला : "यह क्या कहते हैं आप!"

"अभी स्पष्ट नहीं है। पर दो-तीन दिन में स्पष्ट हो जायेगा। रोग संक्रामक है। सरकार का उस कक्ष में जाना उचित नहीं। अन्य लोगों को भी सावधानी बरतनी होगी। शीतलादेवी नितान्त निष्ठुर हैं।"

"मैं सावधानी नहीं बरत सकता। मैं तो रानी के पास रहूँगा। जो होना हो, सो हो। इस कष्ट के समय मैं उसे अकेली कैसे छोड़ सकता हूँ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वैद्यराज ने उद्वेगहीन शान्ति के साथ कहा : "इससे किसी का कुछ उपकार न होगा। परिचर्या में कोई सहायता न मिलेगी। यदि किसी दूसरे को भी यह रोग हो गया, तो कठिनाई और बढ़ जायेगी। सरकार को रोग होने की आशंका से रानी जी का मानसिक क्लेश बढ़ेगा ही, घटेगा नहीं। मेरी यही प्रार्थना है कि सरकार रोग-कक्ष से दूर ही रहें।"

"यह मेरे बस का नहीं है। रानी वहाँ शीतला ज्वर में तड़पती रहे और मैं इस भय से, कि कहीं मुझे भी रोग न हो जाये, दूर छिपा रहूँ, यह मुझसे न होगा। रोग होना होगा, तो दूर रहते भी हो जायेगा। पास रह कर मैं उसके कष्ट में कुछ हिस्सा तो वँटा सकूंगा।"

"मेरा फिर यही आग्रह है कि आप यह विचार मन से निकाल दें। यह भावुकता परिचारकों के कार्य को दुष्कर बना देगी। भगवान पशुपतिनाथ की कृपा से रानी जी बच भी सकती हैं।"

यह भीषण संभावना अभी तक महाराज के मन में न आई थी। वैद्यराज का यह संकेत, कि शीतला से ग्रस्त होने वाले व्यक्ति प्रायः मर ही जाते हैं, उनके हृदय में बाण की तरह जा चुभा। भीतर ही भीतर वह छटपटा से उठे। पर इससे रानी के निकट बने रहने का उनका संकल्प शिथिल पड़ गया।

वैद्यराज का अनुमान सही निकला। रानी अनुरागलक्ष्मी का ज्वर बढ़ता गया। पहले तो बेचैनी बहुत रही, पर शीघ्र ही प्रकृति ने दया की और रानी की चेतना क्षीण होने लगी। वह अर्ध अचेत सी दशा में पहुँच गई। इस अर्ध अचेतना में रोगिणी को तो कष्ट की अनुभूति बहुत नहीं होती थी, किन्तु जो लोग उसे करवटें बदलते और बेचैनी से छटपटाते देखते थे, उन्हें अवश्य कष्ट होता था।

तीन-चार दिन बाद चेचक के दाने भी उभर आये। बड़ी चेचक थी, जिसके दाने मटर जितने बड़े थे और वे इतने घने निकले थे कि उनके बीच में खाली जगह कम ही बची थी। धूप और गुग्गुलु जलाते रहने के बाद भी कमरे में सड़ रहे मांस की सी दुर्गन्ध भरी रहती थी। परिचारिकाओं ने रानी को यह नहीं बताया था कि उसे क्या रोग है। पर जब उसने अपनी बांहों पर पानी से भरे वे दाने देखे, तब वह बीच-बीच में पूछती थी : "यह मुझे क्या हो गया है ?"

परिचारिकाएँ सान्त्वना देते हुए कहती थीं : "कुछ नहीं। मामूली दाने हैं ; दो-चार दिन में ठीक हो जायेंगे।"

"महाराज कहाँ है ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"उनके सिर में दर्द है। वैद्य ने लेटे रहने को कहा है।"

रानी में सोचने समझने की शक्ति बहुत नहीं रह गई थी। वह कुछ-कुछ प्रश्न पूछ अवश्य लेती थी, किन्तु उनका उत्तर पाने के लिए उसका ज़रा भी आग्रह नहीं था और उन उत्तरों की उस पर कोई भी प्रतिक्रिया नहीं होती थी।

ज्वर के उत्ताप में वह कभी-कभी प्रलाप भी करने लगती : "वे आये हैं मुझे ले जाने के लिए। काले कपड़े पहने हैं। हाथों में लम्बे-लम्बे डंडे हैं। कंकाल! कंकाल! वह कौन खड़ी है खम्भे के पीछे छिप कर? मौका ताक रही है आगे आने का? मैं नहीं जाऊँगी।। मेरा नाम तुम्हारी सूची में नहीं है। फिर तुम सब क्यों आये हो? जाओ। जाते नहीं?…"

परिचारिकाएँ सुनतीं; भयभीत हो उठतीं; कहतीं : "इन्हें वे दिखाई पड़ गये हैं। अब यह नहीं बचेंगी। वे जिसे दीख जाते हैं, उसे लिये बिना कभी नहीं जाते। और खम्भे की ओट में छिपी तो यह माँ शीतला ही हो सकती हैं। बाप रे! इन्हें लेने वह स्वयं आई हैं? मां, रक्षा करो। रक्षा करो।"

तीन-चार दिन मर्त्यलोक और परलोक के बीच झूलते रहने के बाद रानी इसी लोक में वापस लौट आई। ज्वर की उग्रता शान्त हो गई। त्वचा पर उभरे दाने दब गये और क्रमशः सूखने लगे।

रानी पूरी तरह सचेत हो गई। वह बातें करती और पूछती : "यह मुझे हुआ क्या था?" फिर अपनी बाँहों पर, छाती और पेट पर, टाँगों और पैरों पर सूखते दानों के धब्बों को देख कर पूछती : "ऐसे धब्बे मेरे मुँह पर भी पड़ गये हैं क्या? कहीं यह चेचक तो नहीं है?"

परिचारिकाएं बात छिपातीं : "नहीं, मुँह पर तो कोई धब्बा नहीं है। चेचक नहीं थी। चेचक होती, तो आप बचतीं थोड़े ही। यह तो खसरा था। उसके दाने भी ऐसे ही होते हैं।"

रानी ने दर्पण मांगा : "बहुत दिन से शीशा नहीं देखा; आज देखने को जी कर रहा है। ले आ।"

परिचारिका संकट में पड़ गई। रानी को दर्पण तो किसी तरह नहीं दिया जा सकता। थोड़ा सोच कर बोली : "वैद्यराज मना कर गये हैं। विशेष रूप से कह गये हैं कि इस रोग में दर्पण देखने से बीमारी फिर लौट कर आ सकती है। जब तक मैं आ कर न कहूँ, तब तक दर्पण इस कमरे में न आये।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तब मैं समझ गई। ज़रूर यह चेचक ही थी। दानों के निशान मेरे मुँह पर भी पड़ गये हैं। उन्हें मैं न देख सकूं, इसीलिए वैद्य जी ने यह आदेश दिया है। रोग लौट आने का भय भी इसीलिए दिखाया है। पर जो हो गया, सो हो गया। उस पर किसी का बस नहीं है। तू दर्पण ले आ।"

"सरकार, मुझे क्षमा कीजिये। मुझसे दर्पण मत मंगवाइये। वैद्यराज ने जो सलाह दी है, उसका पालन कीजिये। उन्होंने आपके स्वास्थ्य की कामना से ही यह कहा होगा। फिर ऐसी जल्दी क्या है? दो-चार दिन में आप पूर्ण स्वस्थ हो जायेंगी। खायेंगी, पियेंगी, चलेंगी, फिरेंगी। तब दर्पण भी देखेंगी ही। रोग में व्यक्ति यों ही कमज़ोर, पीला सा दिखाई पड़ता है। शायद इसीलिए वैद्य लोग रोगी को शीशा दिखाना मना करते हैं। स्वयं को दुर्बल देख कर रोगी के मन पर बुरा असर पड़ता है। हो सकता है कि इससे बीमारी फिर बढ़ भी जाती हो।"

परिचारिका की विनय और प्रेमपूर्वक कही गई यह बात उचित और तर्कसंगत थी। पर यह रानी के गले उतरी नहीं। वे जो कंकालस्वरूप कृष्णवेशधारी आये थे, लगता है, वे लौटे नहीं थे। वे अपने दंड और पाश लिये वहीं कहीं मंडरा रहे थे। इसीलिए रानी ने दर्पण देखने का हठ किया। इस हठ को देर तक टाला नहीं जा सकता था। जब उसके स्वर में खीझ और रोष भर उठा: "जब मैं कह रही हूँ, तब तू लाती क्यों नहीं?" तब परिचारिका हतप्रभ होकर कमरे से बाहर निकल गई। अब दर्पण लिये बिना रानी के पास लौटने की गुंजाइश नहीं थी।

उसने महल के दास-दासियों से सलाह की। सभी की एक राय थी कि दर्पण न दिया जाये, पर न देने के लिए क्या उपाय करें, यह किसी को न सूझा। दर्पण न पाने पर रानी क्षुब्ध और रुष्ट होती रहे, यह भी उचित नहीं था। अन्त में निरुपाय होकर वह परिचारिका एक बहुत ही पुराना मैला दर्पण रानी के पास ले गई। उस दर्पण में चेहरा बहुत ही धुंधला-धुंधला सा दिखाई पड़ता था।

अपना हठ पूरा हो जाने से रानी प्रसन्न हो गई; फिर भी कुछ तुनक कर बोली: "इससे खराब शीशा सारे महल में और कोई नहीं मिला?" पर इस प्रसंग को उसने तूल नहीं दिया और अधीरता से अपनी मुखाकृति दर्पण में देखने लगी।

दर्पण में जो उसे दीखा, वह किसका चेहरा था? उसका अपना? कभी नहीं। यह ठीक है कि रूपरेखा उसी के चेहरे की सी थी, पर वह विवर्ण, दाग-धब्बों से भरा गन्दा, भद्दा चेहरा उसका कैसे हो सकता है? पर उसकी आँखों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के सामने रखे दर्पण में यह चेहरा और किसका होगा ? उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे किसी ने भारी मुग्दर उसकी छाती पर दे मारा हो। उसे अपना साँस रुकता सा प्रतीत हुआ। दर्पण उसके हाथ में इसलिए थमा रहा कि उसकी अंगुलियाँ अकड़ गई थीं और वह चाह कर भी दर्पण को एक ओर नहीं रख सकी।

कुछ देर तक वह पत्थर की प्रतिमा की तरह जड़ हुई अपने उस विरूप प्रतिबिम्ब को देखती रही। फिर उसकी दृष्टि धुँधली सी हो उठी। उसने दर्पण एक ओर रख दिया और एक दीर्घ श्वास छोड़ते हुए क्षीण, दबी सी आवाज़ में कहा : "यह क्या हो गया!" इस स्वर में उसकी सारी मर्मव्यथा, घोर निराशा और विवशता घनीभूत हो उठी। कटे पेड़ की तरह वह पलंग पर लुढ़क गई और अपने रुदन को बाहर न आने देने के लिए जी जान से यत्न करने लगी। पर घुमड़ते हुए तूफान की तरह वह आकुल रुदन उसे भीतर ही भीतर मथने सा लगा।

परिचारिका ने उसे देखा ; उसकी वेदना को समझा ; पर क्या कह कर उसे सान्त्वना दे, यह वह न सोच सकी। संसार में सभी व्यक्ति रूपवान नहीं होते। जो असुन्दर और विरूप होते हैं, वे शुरू से ही उसके आदी हो जाते हैं। वह विरूपता उन्हें क्लेश नहीं देती, जैसे जन्म के कंगाल को निर्धनता विशेष कष्ट नहीं देती। परन्तु अनुरागलक्ष्मी को तो इतना रूप मिला था कि उतना संसार में कम ही लोगों को मिला होगा। अब इस बीमारी ने वह सारी रूपराशि उससे छीन ली। जैसे कोई करोड़पति सेठ दिवाला निकलने पर दाने-दाने को मोहताज हो जाये, वैसे ही अनुरागलक्ष्मी सौन्दर्य की दृष्टि से नितान्त दीन-हीन हो उठी।

"इस श्रीहीन जीवन से तो मृत्यु कहीं भली है!" रानी अनुरागलक्ष्मी के मन में कोई बार-बार कहने लगा : "जहाँ वह सबकी ईर्ष्या का पात्र बन कर रही है, वहाँ वह औरों की दया का पात्र बन कर कैसे जियेगी ?"

"और महाराज कई दिन से दिखाई नही पड़े!" एक भयंकर विचार उसके मन में आया। "कहीं उन्हें मेरी इस विकृत आकृति से विरक्ति तो नहीं हो गई ?" वैद्य ने उन्हें वहाँ आने को मना किया होगा, यह बात उसे सूझी ही नहीं। सूझती भी, तो उसे समझ नहीं आती। इस समय उसे सान्त्वना और सहारे की बड़ी आवश्यकता थी और वह केवल महाराज से प्राप्त हो सकता था। उसके अभाव में वह स्वयं को नितान्त असहाय अनुभव करने लगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसे अपने रूप पर गर्व था। यद्यपि दर्प के वशीभूत होकर उसने औरों का अपमान कभी नहीं किया, किन्तु वह प्रतिक्षण इस तथ्य को अनुभव करती थी कि उसका रूप सभी दर्शकों के हृदयों पर शासन करता है। महाराज के साथ उसके विवाह का समाज में घोर विरोध हुआ। उसकी पीठ-पीछे अनेक कड़वी बातें कही गई थीं, जो घूम फिर कर उसके कानों तक पहुंच गई थीं; पर उन विषबुझे वाग्बाणों का उस पर कोई दुष्प्रभाव नहीं हुआ था, क्योंकि वह सौन्दर्य के अमृत से लबालब भरी हुई थी। अब वे कटूक्तियां सौगुनी हो कर उसके कानों में पड़ेंगी। अब उन्हें वह किस बल पर सहन करेगी? नहीं···नहीं, ऐसा जीवन बिताना उसके बस का नहीं है।

× × ×

कंचन के मुँह से यह दुःसंवाद सुन कर बड़ी रानी त्रिपुरसुन्दरी देवी अपना सिर थाम कर बैठ गईं। कुछ क्षण जड़ की भाँति बैठे रहने के बाद उन्होंने सिर उठा कर कंचन की ओर देखा और यन्त्र की तरह पूछा : "आत्महत्या कर ली?"

कंचन का भी चेहरा उतरा हुआ था। उसने सिर हिला कर जताया कि हां।

"कैसे की?"

"उस्तरे से गर्दन की नस काट कर। सारा बिस्तर खून से भीगा पड़ा है।"

"तू देख कर आई है?"

"जी हां।" स्वीकृति में सिर हिलाते हुए कंचन ने कहा।

अब रानी त्रिपुरसुन्दरी फफक कर रो पड़ी। "हाय री अभागिन, तूने यह क्या किया? पति का ध्यान नहीं किया, तो पुत्र का तो भविष्य सोचती!"

कंचन कुछ बोली नहीं। बढ़ कर थोड़ा पास आ गई। जब रानी का आवेग कुछ कम हुआ, तब कंचन ने कहा : "उनके सामने और रास्ता भी क्या था? शीतला ने रंग रूप कुछ नहीं छोड़ा था।"

"कम रूप वाले लोग क्या दुनिया में जीते नहीं रहते?"

"छोटी रानी नहीं रह सकती थीं। रूप के कारण अहंकार न किया होता तो बात और होती। उतनी ठसक से रहने के बाद अब किसे कैसे मुँह दिखातीं?"

"भगवान साक्षी है, मैंने कभी छोटी रानी के लिए ऐसे अकल्याण की कामना नहीं की थी।" बड़ी रानी ने पश्चात्ताप से विकल होकर कहा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बड़ी रानी को छोटी रानी से खीझ थी, चिढ़ थी, ईर्ष्या थी और कहा जा सकता है कि वैमनस्य भी था। पर उसके मन में द्वेष या शत्रुता नहीं थी। यह सत्य है कि उसने छोटी रानी की मृत्यु की कामना कभी नहीं की थी। यह निश्चय से कह पाना कठिन है कि उसने छोटी रानी के विरूप हो जाने की भी इच्छा की थी या नहीं। जब उसे पता चला था कि छोटी रानी को चेचक निकल आई है, तब उसके मुँह से निकला था—"हाय बेचारी!" इसमें कितनी दया थी और कितना सन्तोष, यह वह स्वयं भी नहीं बता सकती थी। अब उसकी मृत्यु का संवाद सुन कर उसे सचमुच ही कष्ट हुआ।

यदि छोटी रानी का शरीर शीतला के प्रकोप में ही शान्त हो गया होता, तो बड़ी रानी को इतना शोक न होता। रोग से वह बच गई, पर अपने सौन्दर्य की निधि छिन जाने के क्लेश में उसने जीवन की अमूल्य निधि को भी ठुकरा दिया।

"और प्राण देने का उसने तरीका भी क्या चुना!" बड़ी रानी ने सिहरते हुए कहा। "कैसा पत्थर का कलेजा था उसका। बाप रे, अपने हाथ से अपनी गर्दन पर छुरी चलाना? आदमी क्या ऐसा कर सकता है?"

"छोटी रानी कर सकती थी।"

"तभी वह इतनी सुन्दर थी। उसे थोड़े दिन जीना था, तभी वह इतनी सुन्दर थी। मैं अब समझी।"

एकाएक उसके मन में एक भयावह विचार आया। शोक से उद्विग्न उसका चेहरा एकदम काला पड़ गया। उसने धीमी, दबी आवाज़ में पूछा: "कंचन, कहीं यह उस ओझा का तन्त्र तो नहीं?"

कंचन ने तुरन्त ज़ोरदार प्रतिवाद करते हुए कहा: "हरगिज़ नहीं। ऐसा क्षण भर के लिए भी मत सोचिये। ओझा को जो कुछ करने को कहा गया था, उससे अधिक वह क्यों करने लगा! वह खुद ही कह रहा था कि उच्चाटन और अभिचार में खर्चा बहुत है। आपने उसे मना भी कर दिया था। और खर्चा भी नहीं दिया था। बिना पैसा मिले ये लोग कुछ करने वाले नहीं हैं।"

"मना तो उसे बार-बार किया था। पर क्या ऐसा हो सकता है कि यह केवल खालिस संयोग ही हो?"

"केवल संयोग ही है।" कंचन ने बात पर खूब ज़ोर देते हुए कहा। "बल्कि संयोग भी पूरा नहीं है। संयोग तब होता, जबकि जो कुछ हमने चाहा था, वही हो गया होता। हमने चाहा कुछ, और यह हो गया कुछ और!"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तू ठीक कहती है। मैंने चाहा था कि किसी तरह महाराज का प्रेम मुझे फिर पहले की तरह प्राप्त हो जाये। ओझा से यही मैंने कहा था। पर कहीं ऐसा तो नहीं कि ओझा ने अपनी ओर से ही उत्साह में आकर अभिचार का प्रयोग कर दिया हो? ऐसा हुआ, तो मैं अपने आप को कभी क्षमा न कर सकूँगी।"

"आप ऐसा क्यों सोचती हैं? पहले तो ओझा ने कोई अभिचार प्रयोग किया नहीं है। ये ओझा ऐसे परोपकारी नहीं हैं कि अपनी जेब का धन खर्च कर दूसरे का भला करते फिरें। फिर, उसे आपकी स्पष्ट इच्छा पता चल चुकी थी कि आप छोटी रानी का कोई अनिष्ट नहीं चाहतीं। ऐसी दशा में वह व्यर्थ ही मेहनत क्यों करता? मान लीजिये कि इसके बाद भी यदि उसने कोई प्रयोग कर ही दिया हो, तो आप स्वयं को उसके लिए क्यों ज़िम्मेदार मानेंगी? अभिचार प्रयोग के बिना क्या शीतला किसी को नहीं निकलती? हर साल ही तो गाँव के गाँव साफ हो जाते हैं। रोग और मृत्यु पर किसी का बस नहीं है। ये भगवान के भेजे आते हैं। हमें तो इन्हें बेबस होकर भुगतना ही पड़ता है।"

कंचन ने जैसे-तैसे बड़ी रानी को धैर्य बंधाया। फिर वह उसे साथ लेकर छोटी रानी के कक्ष में गई, जहाँ रोना-पीटना मचा हुआ था। वहां पहुंच कर वह भी शोक के उमड़ते हुए समुद्र में एक लहर बन गई।

मृत्यु एक ऐसी महान घटना है, जिसके सम्मुख हमारे जीवन के सभी कार्यकलाप क्षुद्र और अर्थहीन प्रतीत होने लगते हैं। बड़ी रानी को उस शोक सागर में डूबकर लगा कि इस बात का क्या महत्व है कि कोई पुरुष किसी स्त्री को प्रेम करता है या नहीं? एक को प्रेम करता है या दो को? एक को अधिक प्रेम करता है और दूसरी को कम? क्या बनता बिगड़ता है इससे कि इसके लिए ईर्ष्या और वैमनस्य को मन में स्थान दिया जाये?

अनुरागलक्ष्मी के शव को नहला कर उसे रेशमी वस्त्र पहनाये गये। उसका वैसा ही शृंगार किया गया, जैसा जीवित अवस्था में किया जाता था। उसके बाद शव को अर्थी पर रखा गया। इस सबमें काफी समय लग गया। अर्थी उठते दोपहर हो गई।

अर्थी सजाने तक का काम स्त्रियों ने किया। केवल अन्त में उसे उठाने के लिए पुरुष आये। यह भला ही हुआ कि महाराज रणबहादुरशाह को इस अवसर पर उपस्थित नहीं होने दिया गया। शीतला के संक्रमण का भय दिखा कर उन्हें रानी के अन्तिम दर्शन भी नहीं करने दिये गये। यदि वह रानी के शीतला से विकृत और आत्महत्या से विरूप हुए मुख को देखते, तो उस भीषण आघात को सहने में असमर्थ होकर न जाने क्या कुछ कर बैठते।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जब अर्थी उठ गई, तब बड़ी रानी ने बालक गीर्वाण के बारे में पूछा। दो वर्ष के उस शिशु को अनुरागलक्ष्मी के रोगग्रस्त होने के समय से ही माँ से अलग रखा जा रहा था। कल ही अनुरागलक्ष्मी ने उसे आग्रह करके अपने पास बुलवाया था और बड़ी देर तक उसका दुलार किया था। उस समय किसी को अनुमान न हुआ था कि बच्चे के प्रति माँ का प्यार इतना क्यों उमड़ा पड़ रहा है। आज भी बालक को माँ से दूर धाय के पास रखा गया था। बड़ी रानी त्रिपुरसुन्दरी देवी ने जाकर बालक गीर्वाण को देखा। छोटा सा सुन्दर बालक था। उस मातृहीन शिशु के प्रति त्रिपुरसुन्दरी के हृदय में विचित्र ममता उमड़ पड़ी। उसने उसे गोद में उठा कर प्यार किया और उसे अपने साथ ही लेती आई।

धाय के मन में क्षण भर के लिए शंका हुई कि सौतेली माँ के हाथों में बालक को सौंपना शायद ठीक न हो, पर यह शंका शीघ्र ही मिट गई। त्रिपुरसुन्दरी के मुख पर मातृत्व का जैसा सच्चा आवेश दीख रहा था उसके सामने कोई शंका टिक नहीं सकती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

10

उन्माद

रानी अनुरागलक्ष्मी की मृत्यु से महाराज रणबहादुरशाह को भारी धक्का लगा। उनका मस्तिष्क विक्षिप्त हो गया। यों तो जब से रानी को चेचक निकली थी, और वैद्य के आदेश से उन्हें रानी से दूर रहना पड़ रहा था, तभी से वह अपने मन में घोर व्यथा अनुभव कर रहे थे। रानी के इतने विपत्काल में उससे अलग रहने के कारण वह अपने आपको किसी तरह क्षमा नहीं कर पा रहे थे। रोग के भय से वह उसके पास नहीं जा सके और उधर वह इस लोक को ही त्याग कर चली गई, इस कारण उनके पश्चात्ताप की सीमा नहीं थी। यह पश्चात्ताप ही उन्माद के रूप में प्रकट हुआ। वह किसी से मिलते-जुलते नहीं। घंटों गुमसुम बैठे रहते। कभी अपने आप से ही बातें करने लगते। यदि कोई उनके इस एकान्त, आत्म-वार्तालाप में विघ्न डालता तो वह अत्यन्त रुष्ट हो उठते और उसके प्राण तक लेने की धमकी देने लगते।

उनकी इस दशा से महारानी त्रिपुरसुन्दरी देवी अत्यन्त चिन्तित हो उठीं। अनुरागलक्ष्मी के रूप पर रीझ कर महाराज ने महारानी की जो अवहेलना की थी, उसे महारानी ने भुला दिया। उनके सब अपराधों को क्षमा कर दिया। उसने वैद्यराज को बुलवा कर कहा : "महाराज को यह क्या हो गया है ? आप कुछ करते क्यों नहीं ?"

वैद्य ने बेबसी प्रकट करते हुए कहा : "उनके मन को गहरा धक्का लगा है। समय ही इसकी चिकित्सा करेगा। आपकी सेवा शुश्रूषा सहायक सिद्ध हो सकती है।"

"भाग्य मेरे ! पर मेरी तो वह सूरत ही नहीं देखना चाहते।"

"देखना चाहेंगे। अब वह समय आ गया है।"

"मानसिक आघात के अलावा कुछ विकार, कुछ असामान्यता उनमें पहले से है। वह भावना के आवेग में अत्यधिक बह जाते हैं। इसकी कुछ चिकित्सा होनी चाहिए।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह उनका स्वभाव है। हर मनुष्य का अलग स्वभाव होता है। उसे औषध-उपचारों से बदला नहीं जा सकता।"

"तो उनका यह उच्छृंखल आवेश आजीवन बना रहेगा?"

"क्या किया जाये? स्वभाव रोग से बदल सकता है। स्वास्थ्य प्राप्त हो जाने पर वह फिर अपने असली रूप में आ जायेगा।"

"कोई ऐसा रोग औषध से उत्पन्न किया जा सकता हो, जो उनको शान्त, शिष्ट बना दे?"

"रोग रोग है। यदि ऐसा रोग उत्पन्न किया भी जा सके, तो उसका नियमन नहीं किया जा सकता। वह कहाँ जाकर रुकेगा, कहना कठिन है।"

"तो कोई उपाय नहीं?"

"भगवान पशुपतिनाथ की दया ही उपाय है। प्रेमपूर्ण शुश्रूषा का प्रभाव अवश्य पड़ेगा। यों औषध तो मैं देता ही रहूंगा।"

महारानी ने विषाद भरे स्वर में कहा: "यह सब मेरे भाग्य का दोष है। पिछले जन्म में न जाने क्या-क्या किया है, उससे बच कर कहाँ जाऊँगी?"

वैद्यराज की बात ही सच निकली। औषधों का विशेष प्रभाव नहीं हुआ। पर महारानी की शुश्रूषा का प्रभाव अवश्य दृष्टिगोचर हुआ। किसी अन्य रमणी के प्रेम में पागल, विरह में व्याकुल या शोक में विषण्ण पुरुष की सेवा करना किसी भी पत्नी के लिए सुख की बात नहीं हो सकती, परन्तु त्रिपुर सुन्दरी ने बड़े धैर्य से वह सेवा भी की। उन्मादग्रस्त रणबहादुरशाह उसके सामने ही दिवंगत रानी अनुरागलक्ष्मी के गुणों का वर्णन करते हुए विलाप करने लगते। वह विलाप त्रिपुरसुन्दरी के कलेजे में पैने भाले की तरह लगता। त्रिपुरसुन्दरी को अनुरागलक्ष्मी में कभी कोई गुण दिखाई नहीं पड़ा। और तो और, उसे यह भी नहीं लगा कि अनुरागलक्ष्मी कुछ विशेष सुन्दर है। उसके विचार से अनुरागलक्ष्मी के गुण और रूप महाराज की मुग्ध दृष्टि की उपज मात्र थे। वे केवल भ्रान्ति, माया थे; उनका अस्तित्व कहीं नहीं था। इसलिए उन गुणों की याद करके महाराज का दुःखी होना उसे इतना बुरा लगता था कि कभी-कभी तो उसे हँसी आने को होती थी। पर त्रिपुरसुन्दरी में आत्म-संयम की विलक्षण शक्ति थी। अपनी इस खीझ और उपहास को वह कभी लेशमात्र भी प्रकट नहीं होने देती थी। उसे पता था कि इस विषय में तनिक सी असावधानी से महाराज की मनोदशा और भी बिगड़ सकती है।

ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, त्यों-त्यों महाराज का पागलपन घटने लगा। जो लोकोत्तर रूप और प्रेम उनसे छिन गया था, उसको भूल कर वह उसी लौकिक रूप और प्रेम की ओर ध्यान देने लगे, जो उनके सामने उपस्थित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था। यह ठीक है कि अनुरागलक्ष्मी अनुरागलक्ष्मी ही थी, पर त्रिपुरसुन्दरी भी त्रिपुरसुन्दरी थी। यदि मन पहले ही पक्षपातपूर्ण न हो, तो उसमें दोष ढूंढ पाना आसान न था। रणबहादुरशाह का मन पक्षपातपूर्ण था और वह बिना बात उसमें दोष ढूंढने को उद्यत रहते थे। फिर भी सेवा और प्रेम से तो हिंस्र पशु भी वश में हो जाते हैं। उन्मादग्रस्त रणबहादुरशाह हिंस्र पशु से किसी तरह कम नहीं थे। वह समय असमय अपनी कटूक्तियों से त्रिपुरसुन्दरी के मन को मानो बाघ के पंजों से खरोंचते रहते थे। वह अपने भावावेश में उसकी तुलना अनुरागलक्ष्मी से करते और स्वयं ही निर्णायक बन कर उस तुलना में त्रिपुरसुन्दरी को हीन घोषित करते। फिर भी त्रिपुरसुन्दरी की प्रेमपूर्ण शुश्रूषा उन पर शामक प्रभाव डाल रही थी।

पागल आदमी के साथ ऐसा बहुत बार होता है। जब वह शनैः-शनैः शान्त हो गया प्रतीत होता है, तभी न जाने कहाँ से उसका उन्माद एकाएक भड़क उठता है। उस समय लगता है कि वह इतने समय तक स्वस्थ हो जाने का मिथ्या अभिनय ही कर रहा था। असल में तो गाड़ी जहाँ की तहाँ है। उस दिन रणबहादुरशाह न जाने किस बात पर, या बिना बात ही क्षुब्ध हो उठे और त्रिपुरसुन्दरी से बोले : "देखता हूँ, तुम अनुरागलक्ष्मी का स्थान ग्रहण करना चाहती हो। पर जो बात उसमें थी, वह तुम में नहीं है।"

इस कड़वी बात को पागल का प्रलाप समझ कर चुप ही रहना उचित था। पर त्रिपुरसुन्दरी समझने लगी थी कि अब महाराज स्वस्थ हो गये हैं। अतः उसने उन्हें तर्क से समझाने की भूल की; बोली : "मैंने अनुराग रानी से होड़ करने की चेष्टा कभी नहीं की। पर अब जब वह है ही नहीं, तब उसकी याद करके दुःखी होने से भी क्या लाभ है?"

"तुम्हें उससे ईर्ष्या होती है?" रणबहादुरशाह ने भाला सा मारा।

"ईर्ष्या उपस्थित से होती है, अनुपस्थित से नहीं। जब उसके जीते जी ही मैंने उससे ईर्ष्या नहीं की, तब अब क्यों करूँगी?"

"तुम लोगों की नज़र उसे लग गई। इसीलिए उसे चेचक हुई। इसीलिए वह मर गई। उसका सुख सौभाग्य किसी से देखा नहीं गया। इतनी विषैली दृष्टि से तो लकड़ी पत्थर भी जल कर राख हो जायें, फिर वह बेचारी तो फूल सी नाजुक थी।"

अब त्रिपुरसुन्दरी को होश आया कि यह तो सरासर पागल का प्रलाप है। इससे आहत होना भूल है और इसका कुछ भी उत्तर देना आग में घी डालना है। वह यत्न करके चुप ही रही।

रणबहादुरशाह दुर्ग जीतते हुए से बोले : "चुप हो गई? तो तुम मानती हो कि मैंने जो कहा, वह सच है? तुम मानती हो कि तुम अनुरागलक्ष्मी से

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जलती थीं और तुम्हारी बुरी मनौतियों के कारण ही उसे चेचक हुई ? मानोगी क्यों नहीं ? ज़रूर मानोगी। पर कहे देता हूँ, जैसा करोगी, वैसा भरोगी। बुरे काम का अच्छा फल कभी हुआ है ?"

उत्तर न देने पर रणबहादुरशाह के मुख से यह मधुर वाणी का निर्झर न जाने कितनी देर तक फूटता रहता। उत्तर देने पर तो यह निश्चय ही वेग से छूटते हुए फव्वारे का रूप धारण कर लेता। अतः त्रिपुरसुन्दरी ने जो करना चाहिए था, वही किया। वह उठी और सोने की एक छोटी-सी कटोरी में औषध ले आई और बोली : "औषध का समय हो गया है। यह पी लीजिये।"

रणबहादुरशाह ने उसके हाथ से कटोरी ले ली और औषध पीते हुए कहा : "तुम मुझे विष भी तो दे सकती हो ?"

त्रिपुरसुन्दरी ने इस पर भी बुरा नहीं माना। केवल इतना कहा : "अब आप कुछ देर विश्राम कर लीजिये। मैं आपका सिर सहलाये देती हूँ।"

रणबहादुरशाह चुपचाप बिस्तर पर लेट गये और रानी काफी देर तक पास बैठी उनका सिर सहलाती रही। जब भी वह कुछ बोलने को होते, तभी रानी कुछ कठोरता से कहती : "चुपचाप लेटे रहिये। नहीं तो मैं उठ कर चली जाऊँगी।"

इस दूसरे विकल्प से भयभीत होकर रणबहादुरशाह चुपचाप लेटे रहे।

× × ×

महारानी त्रिपुरसुन्दरी ने कुछ विनय, किन्तु साथ ही उलाहने भरे स्वर में वैद्यराज से कहा : "महाराज की दशा कब तक ऐसी रहेगी ? कोई औषध प्रभाव करती प्रतीत नहीं होती। छह महीने तो होने को आये।"

इस प्रकार के उलाहने वैद्यराज के लिए कोई नई वस्तु नहीं थे। रोग एक से बढ़ कर एक विचित्र हैं। उन सबकी चिकित्सा हो नहीं सकती। औषधियों का प्रभाव बहुत सीमित है। समय और रोगी की जीवनी शक्ति, यही दो वस्तुएँ वैद्यों की सफलता का आधार बनती हैं। किन्तु परिचारक यह मानने को तैयार नहीं होते कि बहुत से रोग ऐसे हैं, जिन्हें ठीक कर पाना तो दूर, समझ पाना भी वैद्यराज के बस का नहीं है। वैद्य लोग स्वयं भी यह डींग हाँकना पसन्द करते हैं कि उनके लिए कोई भी रोग असाध्य नहीं है। पर जब कोई असाध्य रोगी उनके सिर आ पड़ता है, तब वे जो कुछ बहाने बनाते हैं और परिचारकों को जिस तरह झांसा देते हैं, वह सब चिकित्सा शास्त्र का एक महत्वपूर्ण भाग है। वैद्यराज ने भी अब उसी का सहारा लिया; बोले : "सरकार, मस्तिष्क शरीर का नाजुक अंश है। इसमें विकार न तो

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जल्दी आता है और अगर आ जाये, तो न जल्दी जाता है। यह कहने के लिए मुझे क्षमा कीजियेगा कि महाराज का मस्तिष्क छोटी रानी की मृत्यु के आघात से पहले भी पूरी तरह स्वाभाविक नहीं था। साधारणतया मनुष्य इतना मनमौजी और तरंगी नहीं होता। फिर इस आघात ने तो उनका मानसिक संतुलन एकदम बिगाड़ दिया था। अब उपचार से धीमे-धीमे लाभ हो रहा है।''

महारानी ने कुछ अधीर होकर कहा : ''क्या लाभ हो रहा है ? कुछ भी तो नहीं। बीच-बीच में फिर उसी तरह की बहकी-बहकी बातें करने लगते हैं। अभी परसों ही कह रहे थे—'तुम लोगों ने जादू टोना करके मेरी अनुरागलक्ष्मी को मरवा दिया है। मैं इसे कभी भूलूँगा नहीं। मुझे सब पता है, किस-किसने क्या किया है। मैं सबको मज़ा चखाऊँगा। एक को भी नहीं छोड़ूंगा। तभी अनुरागलक्ष्मी की आत्मा को शान्ति मिलेगी।' ये क्या हालत सुधरने के लक्षण हैं ?''

वैद्यराज ने विस्मित होकर पूछा : ''सचमुच ऐसा कह रहे थे ? मैं तो पिछले कई दिनों से उन्हें बहुत ही शान्त और सौम्य देख रहा हूँ। बल्कि मैं तो यहाँ तक सोच रहा था कि शायद इस तरह रोगी बन कर खाली बैठे रहने से उनका मन अशान्त होता हो, अतः उन्हें राजदरबार में बैठने का परामर्श दिया जाये। पर जो कुछ सरकार ने बताया, वह तो मानसिक स्वास्थ्य का चिन्ह नहीं है।''

पर खाली बैठे रहने वाली बात त्रिपुरसुन्दरी देवी को सही जान पड़ी; वह बोली : ''आप यह बिल्कुल ठीक कहते हैं। खाली बैठे आदमी का मन यों भी अशान्त और उद्विग्न रहता है। यदि महाराज राजदरबार में जायेंगे, दस आदमियों से मिलेंगे जुलेंगे, तो वह छोटी रानी के शोक से जल्दी छुटकारा पा सकेंगे। इस समय तो उन्हें अकेले बैठ कर छोटी रानी का ध्यान करने के सिवाय कोई काम ही नहीं है।''

''उन्माद की एक विचित्र बात यह है कि बहुत बार यह प्रसुप्त दशा में पहुंच जाता है। रोगी देखने में बिल्कुल स्वस्थ और सामान्य प्रतीत होने लगता है। फिर किसी भी समय अप्रत्याशित रूप से अचानक उसका उन्माद पूरे उग्र रूप में प्रकट होता है। यह स्थिति और भी चिन्ताजनक होती है, क्योंकि उस समय उसके परिचारक भी असावधान होते हैं।''

''छोटी रानी की मृत्यु के बाद इनकी जैसी दशा हो गई थी, उससे तो अब काफी सुधरी हुई है। पहले पहल कई दिन तक तो यह बिल्कुल ही गुम-सुम रहे थे। उसके बाद उग्र असम्बद्ध प्रलाप करने लगे थे। अब वह शान्त

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं । अधिक समय ठीक-ठीक बातचीत करते हैं । पर बीच-बीच में कभी वहक जाते हैं ।''

''मेरी सम्मति तो यही है कि अभी कुछ दिन और इसी तरह चिकित्सा चलनी चाहिए । बहुत लोगों से मिलने-जुलने से मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है । दस-पन्द्रह दिन बाद यदि दशा और सुधर गई, तो लोगों को उनसे मिलने-जुलने की अनुमति दी जा सकती है ।''

वैद्यराज की चिकित्सा से, या रानी त्रिपुरसुन्दरी देवी की सतत परिचर्या से या केवल काल के प्रभाव से महाराज रणबहादुरशाह की दशा काफी सुधर गई । तब वैद्यराज तथा सभी सम्बन्धित व्यक्तियों के परामर्श से महारानी ने यह निश्चय किया कि महाराज पहले की तरह राजकाज में मन लगायें । महाराज दरबार में जाते और राजकाज के सिलसिले में अनेक व्यक्ति उनसे मिलने महल में भी आने लगे ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

11

पिशाच

महारानी त्रिपुरसुन्दरीदेवी का पुत्र, युवराज रणोद्दीपशाह खूब स्वस्थ और सुन्दर बालक था। नौ-दस बरस की उम्र थी उसकी। गोरा रंग, गठीला शरीर ; पढ़ने-लिखने में तेज़ ; खेल-कूद में सबसे आगे। उसे देख कर लोगों को उसके पिता रणबहादुरशाह की नहीं, बल्कि दादा सिंहप्रतापशाह की याद आती।

राजमहल में जो राजनीति या प्रेमनीति चल रही थी, उसका प्रभाव रणोद्दीपशाह पर भी पड़ा था। उसे पता था कि उसकी माता त्रिपुरसुन्दरी देवी राजमहल में उपेक्षिता बन कर रही है। उसे यह भी पता था कि उसका एक सौतेला भाई—गीर्वाण युद्धविक्रम शाह—है, जिसे पिता कहीं अधिक प्यार करते हैं। इस ज्ञान के कारण उसके मन में वह दर्प और अभिमान नहीं रहा था, जो प्रभुताशाली परिवारों के बालकों में प्राय: पाया जाता है। वह सरल चित्त और मिलनसार बालक था, और इसीलिए बड़े छोटे सभी का स्नेहभाजन बन गया था।

आज छुट्टी का दिन था। बालक रणोद्दीपशाह अपने कई समवयस्क मित्रों के साथ काठमांडो से चार-पांच मील दूर सप्तधारा गया था। सप्तधारा सुन्दर स्थान है। वहाँ एक ही जगह, थोड़ी-थोड़ी दूर पर पहाड़ में से सात झरने फूटते हैं। दूर-दूर तक फैले हरी घास के मैदान हैं। उनके पास ही जंगल है, जिसमें छोटे पशुओं का शिकार किया जा सकता है। युवराज के साथी बालक भी सम्पन्न और प्रभावशाली परिवारों के थे। सभी के साथ नौकर, घोड़े तथा अन्य साज सामान था। सप्तधारा में खेलने, खाने और शिकार करने में दिन बिताने का उनका कार्यक्रम था।

उनका वह दिन बहुत अच्छा बीता। बड़ों की रोक टोक और अनुशासन से मुक्त, नौकरों पर हुक्म चलाते वे बालक स्वच्छन्द हो कर मनमाने खेल खेलते रहे। ऊँचे, बड़े पेड़ों की छाया में बैठे नौकर उनके लिए भोजन तैयार

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर रहे थे। खेलते-खेलते थक जाने के बाद बालक सप्तधारा के नीचे बने विशाल कुण्ड में नहाने लगे। पानी ठंडा था, पर दोपहर की तेज़ धूप और व्यायाम से शरीर में आई गर्मी के कारण वह भला ही लगा। कुछ देर वे तैरते, नहाते और एक-दूसरे पर पानी उछालते रहे। जब पानी में ठंड लगने लगी, तब वे निकले और कपड़े पहन कर अपने पड़ाव की ओर लौट आये।

खेल-कूद की थकान और शीतल जल में स्नान के कारण उनकी भूख चमक उठी थी। पर भोजन तैयार होने में थोड़ी सी देर थी। वे सब चूल्हों के पास आ कर खड़े हो गये और नौकरों को जल्दी से जल्दी भोजन तैयार करने के लिए कहने लगे।

अलग-अलग चूल्हों पर अलग-अलग व्यंजन तैयार हो रहे थे। उनकी उठती हुई सुगन्ध बड़ी प्रिय लग रही थी। वह क्षुधा को उत्तेजित कर रही थी। एक बालक ने धैर्य छोड़कर कहा: "मुझसे अब नहीं रहा जाता। कच्चा पक्का जैसा भी है, तुरन्त दे दो।"

रसोइये ने उसे मनाते हुए कहा: "बस दो मिनट और ठहर जाओ। सब तैयार तो हो गया।"

एक और बालक ने कहा: "जल्दी करो। भूख के मारे आंतें ऐंठी जा रही हैं।"

थोड़ी देर में भोजन तैयार हो गया। भोजन बढ़िया था—पूरियाँ, मछली, सब्ज़ी, और खीर। बालकों ने खूब चाव से होड़ लगा लगा कर खाया। जब पेट में समाने की गुंजाइश ही न रही, तब उन्होंने खाना बन्द किया और वे हाथ मुँह धो कर पेड़ों की छाया में लेट रहे। उनके बाद नौकरों ने भोजन किया।

धूप तेज़ थी। पेड़ों की छाया ठंडी थी। धीमी बयार चल रही थी। लेटते ही बालकों को नींद ने धर दबाया। डेढ़ दो घंटे तक वे घोड़े बेच कर सोते रहे। नौकरों ने भी खा पी कर विश्राम किया; बर्तन साफ किये और सब सामान संभाल कर एक जगह रख दिया।

तीन बजे के आस-पास बालकों की नींद उचटने लगी। जिस छाया में वे सोये थे, वह हट गई थी और वहाँ अब धूप आ गई थी। पहले एक उठा; उसने दूसरे को उठाया और धूप से हट कर छाया में चल कर लेटने को कहा। एक-एक करके सभी उठ बैठे। पर उनकी आंखों में नींद भरी थी और वे रह रह कर जँभाइयाँ ले रहे थे।

रणोद्दीपशाह ने कहा: "अब तो दिन ढल चला। शिकार के लिए चलना चाहिए।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिकार की बात सुनते ही सबकी ऊंघ और सुस्ती दूर हो गई। उनके पास छोटी-छोटी हवाई बन्दूकें थीं, जिनके छर्रों से खरगोशों और तीतरों का शिकार किया जा सकता था। उनमें से कई अच्छे निशानेबाज़ थे।

ज़रा देर में सब तैयारी पूरी हो गई। नौकरों ने खाने के लिए मिठाई, मेवे और फल सामने ला रखे। अल्पाहार करके सब बालक गिरोह बना कर शिकार के लिए चल पड़े। तीन-चार नौकर भी उनके साथ चले। बाकी सामान के पास रहे।

पहले तो बहुत देर तक किसी के हाथ कोई शिकार नहीं लगा, पर ज्यों-ज्यों शाम होने लगी, त्यों-त्यों पशु और पक्षी झाड़ियों से निकल कर बाहर आने लगे और उन बालकों के छर्रों के शिकार बनने लगे।

शिकार की टोह में बालक दूर-दूर फैल गये थे। यह छोटा सा जंगल सब ओर बाड़ से घिरा हुआ था। यह खतरा नहीं था कि अचानक किसी बड़े हिंसक पशु से उनकी मुड़भेड़ हो जाये। इसलिए वे सभी निर्भय थे। उनके मारे हुए शिकारों को नौकर उठाते चल रहे थे।

सूर्य अस्ताचल के निकट पहुँच रहा था। ऊंची पहाड़ियों की छायाएँ दूर तक फैलने लगी थीं। अचानक वह जंगल एक मरणान्तक चीत्कार से गूंज उठा। क्षण भर को सभी लोग सहम गये, पर तुरन्त ही सचेत हो कर उधर दौड़ पड़े, जिधर से वह आवाज़ आई थी। विजयसेन थापा उस आर्त चीत्कार के सबसे निकट था। कुछ ही कदम दौड़ने के बाद उसने जो कुछ देखा, उससे वह हक्का बक्का रह गया। उनके साथ आया हुआ एक नौकर हस्तबहादुर खुखरी से युवराज रणोद्दीपशाह को मार रहा था। रणोद्दीपशाह घायल हो कर भूमि पर गिर पड़ा था और हस्तबहादुर पागल की तरह उस पर खुखरी से वार पर वार किये जा रहा था। घायल युवराज आर्त कण्ठ से चीख रहा था : "मार डाला। बचाओ।"

विजयसेन इस कल्पनातीत दृश्य को देख कर पत्थर की मूर्ति की तरह स्तब्ध खड़ा रह गया था। पर उसकी यह दशा दो क्षण से अधिक नहीं रही। वह आगे की ओर दौड़ता हुआ चिल्लाया : "हस्तबहादुर, हस्तबहादुर, यह क्या करता है ? पीछे हट, नहीं तो गोली मार दूँगा।"

पर उसके चिल्लाने और धमकाने की हस्तबहादुर ने रत्ती भर भी परवाह नहीं की। वह उसी तरह युवराज पर खुखरी से गहरे घाव करता रहा। देखते-देखते उसने रणोद्दीपशाह का सिर काट कर धड़ से अलग कर दिया। उसके बाद सिर को उठा कर वह भागा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इतनी देर में रणोद्दीपशाह और विजयसेन की आवाज़ों को सुन कर और लड़के भी आ पहुंचे थे। विजयसेन चिल्लाया : "युवराज को मार कर यह भागा जा रहा है। पकड़ो। भागने न पाये। गोली मार दो।"

स्थिति कुछ को समझ आ गई ; कुछ को समझ नहीं आई। पर जिन्हें समझ आ गई थी, वे हस्तबहादुर के पीछे दौड़े। यह देख कर कि वे उसे पकड़ नहीं पायेंगे, दो तीन ने उसकी ओर गोलियां चलाईं। दो गोलियाँ हस्तबहादुर को लगीं। पर हवाई बन्दूक के इन छर्रों में इतनी शक्ति नहीं थी कि वे लगते ही उसे गिरा सकते। पर वे हस्तबहादुर के शरीर में घुस गये थे और जहाँ वे घुसे थे, वहाँ से खून निकलना शुरू हो गया था। छर्रों के लगने की परवाह न करके हस्तबहादुर दौड़ता चला गया। एक मूर्खता उसने यह भी की कि उसने युवराज के सिर को छोड़ा नहीं। उसे उठाये हुए ही भागता रहा।

पर उन लड़कों ने भी हस्तबहादुर का पीछा नहीं छोड़ा। वे उसके पीछे भागते रहे। शिकार की भावना उनमें थी ही। अब उनका शिकार उनके सामने भागा जा रहा था। यह ठीक है कि वे अभी बालक थे, किन्तु वे खूब तेज़ दौड़ सकते थे और देर तक दौड़ते रह सकते थे। डर यही था कि हस्तबहादुर के पास अभी तक भी खुखरी थी और किसी के पास पहुँच जाने पर वह खुखरी से चोट कर सकता था।

तेज भाग कर बच पाने की आशा न देख कर हस्तबहादुर ने छिपने की चेष्टा की। भागते जाने से वह आसानी से दिखाई पड़ जाता था और पेड़पत्तों के हिलने की आवाज़ भी होती थी। उसने सोचा कि कहीं भी चुपचाप खड़े हो जाने से बचने की आशा हो सकती है। कुछ देर विश्राम करने के बाद वह सुविधानुसार फिर दौड़ सकता है। उसे जो दो छर्रे लग गये थे, अब उनमें भी दर्द शुरू हो गया था। दौड़ते-दौड़ते एकाएक रुक कर वह पेड़ों के एक झुरमुट में अदृश्य हो गया।

उसके रुकते ही पीछा करने वाले लड़कों को भी अपनी चाल मन्द कर देनी पड़ी। वे सावधान रह कर ही उसके पास पहुँचना चाहते थे। एक ही मिनट में पीछे रह गये लड़के और नौकर भी दौड़ते हुए आ पहुंचे। अगले लड़कों ने इशारा करते हुए बताया कि हत्यारा एकाएक रुक कर पेड़ों के उस झुरमुट में छिप गया है।

"पर इस बदमाश ने यह किया क्या ? उसने युवराज को मार क्यों डाला ?" एक लड़के ने क्रुद्ध हो कर कहा।

"देखा तुमने, वह कैसे बेरहमी से खुखरी चलाये जा रहा था ? जैसे बकरा काट रहा हो ?" एक और बोला।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"ग्रौर वह युवराज के सिर को ग्रभी तक साथ लिये हुए है। वह चाहता क्या है ?" एक ने पूछा।

"इसे भागने नहीं देंगे। ग्रब फिर भागा, तो फिर गोली मारेंगे।" विजयसेन ने कहा। ग्रौर उन सबने फिर ग्रपनी बन्दूकों में छर्रे भर लिये।

नौकरों ने सुना कि हस्तबहादुर ने युवराज की हत्या कर दी है, तो उनके देवता कूच कर गये। बालकों की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी कुछ न कुछ उन पर भी थी। खुखरियाँ उनके पास थीं ही। हस्तबहादुर पर खून सवार है, इस बात की चिन्ता न करके वे ग्रागे बढ़े। सब लड़के लम्बा घेरा बनाते हुए चारों ग्रोर फैल गये, जिससे हत्यारा किसी भी ग्रोर से भाग न सके।

हस्तबहादुर बड़ी धूर्तता से एकाएक रुक कर ज़मीन पर बैठ गया था ग्रौर पेड़ों की ग्रोट लेता हुग्रा धीरे-धीरे बैठा-बैठा ही लड़कों से दूर जाने की कोशिश कर रहा था। पर परिस्थितियाँ उसके प्रतिकूल थीं। भाग कर भी वह बच नहीं सकता था ग्रौर ग्रब भागना बन्द करके वह उनके घेरे में फँस गया था। सब ग्रोर से लड़के ग्रौर नौकर उसी की तरफ बढ़ते ग्रा रहे थे। वह उनमें से किसी को दिखाई नहीं पड़ रहा था, पर थोड़ा ग्रौर निकट ग्राने पर किसी न किसी की पैनी दृष्टि उस पर पड़ ही जायेगी। एक ग्राशा थी कि सांझ का ग्रँधेरा वन पर उतरने लगा था। यदि किसी तरह वह उन्हें ग्राधे घंटे तक चकमा दे सके, तो ग्रन्धकार उसका समर्थ सहायक बन जायेगा। पर क्या वह तब तक इतने लोगों की दृष्टि से बच सकेगा ? वह निश्चल हो कर एक पेड़ की जड़ में पड़ रहा।

एक छर्रा ग्रा कर उसे लगा। दर्द के मारे वह उछल पड़ा। ग्रौर तुरन्त ही सब लड़के ग्रौर नौकर उसकी ग्रोर दौड़ पड़े।

"जीना चाहता है, तो खुखरी फेंक दे। नहीं तो गोलियाँ मार-मार कर तुझे यहीं खत्म कर देंगे।" एक लड़के ने धमकाया।

धमकी में जान थी। यदि हस्तबहादुर का कोई ग्रपराध न होता, तब भी मन में ग्रा जाने पर ये लड़के उसे गोली मार देते, तो कोई बड़ी बात न होती। ग्रब तो इतना बड़ा कारण विद्यमान था कि वे जो चाहें, कर सकते थे। पर हस्तबहादुर ने खुखरी नहीं फेंकी। उसने एक बार फिर प्राणपण से घेरा तोड़ कर भाग निकलने का प्रयत्न किया। यदि वह घेरे से निकल भागता, तो शायद बच जाता, क्योंकि ग्रन्धकार प्रतिक्षण गहरा हो रहा था। पर उसके भाग्य में बच निकलना लिखा नहीं था। सामने ग्राये एक नौकर ने उसे टंगड़ी मार कर ज़मीन पर गिरा दिया ग्रौर वह नौकर ग्रगले ही क्षण उसकी छाती पर चढ़ बैठा। पलक झपकते न झपकते सब लड़के ग्रौर नौकर ग्रा इकट्ठे हुए। एक नौकर ने हस्तबहादुर की खुखरी छीन ली। क्रोध के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्धे आवेश में लड़कों ने लातों, घूंसों और बन्दूकों के बेंटों से उसे पीटना शुरू कर दिया ।

एकाएक किसी ने कहा : "देखना, कहीं मर न जाये । इसे महाराज के सामने पेश करेंगे । वहीं इसे ठीक-ठीक दंड मिलेगा ।"

हस्तबहादुर की मारपीट बन्द हुई । उसके हाथ पीठ पीछे कस कर बाँध दिये गये और वे उसे धकियाते हुए अपने पड़ाव की ओर ले चले । युवराज का सिर एक कपड़े में लपेट कर संभाल लिया गया । कुछ लोग उस ओर चले, जिधर मृत युवराज का धड़ पड़ा था ।

हस्तबहादुर से बार-बार पूछा गया कि उसने यह पिशाच कर्म क्यों किया ? युवराज ने उसका क्या बिगाड़ा था ? पर उसने मुँह से एक शब्द भी तो नहीं कहा । पत्थर की तरह सुनता और पिटता रहा ।

युवराज की लाश को लाने और अर्थी बना कर उसे ले चलने में आधा घण्टा और लग गया । हस्तबहादुर को बाँध कर एक घोड़े की पीठ पर लाद दिया गया । कुछ लोग युवराज के शव के साथ पीछे रह गये और कुछ हस्तबहादुर तथा इस दुःसंवाद को ले कर घोड़ों पर चढ़ कर तेज़ चाल से काठमांडौ के लिए रवाना हो गये ।

दस-पन्द्रह मिनट में वे काठमांडौ जा पहुँचे । शहर में घुसते ही उन्हें कुछ सैनिक मिल गये । उन्होंने सारा वृत्तान्त सुना, तो वे कैदी समेत उन सब लोगों को प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय के पास ले गये ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

12

रहस्य

प्रधान मंत्री दामोदर पांडेय (ये पांडेय ब्राह्मण नहीं, क्षत्रिय थे) उस समय भोजन कर रहा था। तीन-चार इष्ट मित्र साथ थे। चर्चा महाराज रणबहादुर शाह की चल रह थी, जिन्होंने कई महीने की मानसिक अस्वस्थता के बाद कुछ दिन से फिर राजदरबार में आना शुरू किया था।

दामोदर पांडेय कह रहा था : "महाराज से हमें बड़ी आशाएँ थीं। पर इन्होंने तो सब मटियामेट कर दिया। कौन सोच सकता था कि पृथ्वीनारायण शाह और सिंहप्रतापशाह की परम्परा में ऐसा व्यसनी पुरुष उत्पन्न होगा? कोई नियम, कोई अनुशासन उन्हें सुहाता नहीं। पहले तो सारे दरबार का विरोध करके वह एक बाम्हनी को ब्याह लाये। अब उन्हें धुन है कि उस बाम्हनी का बेटा उनके बाद राजसिंहासन पर बैठे।"

"क्यों, रणोद्दीपशाह में क्या कमी है? वह भी तो उन्हीं का पुत्र है। बड़ा होने से गद्दी पर तो उसी का अधिकार है।" एक मित्र ने कहा।

"उलझन तो सारी यही है। ऐसा न होता, तो महाराज की मनचाही होने में कोई अड़चन ही नहीं थी। वह मुझ से दो तीन बार कह चुके हैं कि कोई ऐसा उपाय सुझाओ, जिससे छोटा पुत्र गीर्वाणयुद्धविक्रम सिंहासन का अधिकारी बन जाये। मैं क्या उपाय सुझाऊँ? मुझे तो स्वयं वही अच्छा लगता है, जिसे भगवान ने सिंहासन का उत्तराधिकारी बनाया है।"

"महाराज का मस्तिष्क सचमुच ही असंतुलित हो गया है!"

"वह तो उसी दिन असंतुलित हो गया था, जिस दिन उन्होंने पहले पहल मैथिल रानी को देखा था।"

"सच पूछो तो मैथिल रानी का रूप ही ऐसा था कि मस्तिष्क का असंतुलित न होना ही आश्चर्य की बात होती" एक और ने मौज में आ कर कहा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"पर असंतुलित मस्तिष्क वाले व्यक्ति को राजकाज में दखल न देना चाहिए" दामोदर पांडेय ने कहा ।

"आप दखल न देने दें", एक मित्र ने कहा ।

"चाहिए तो यही । पर राजभक्ति की भी तो कुछ माँग है । उन्होंने स्वयं आग्रह से मुझे प्रधान मंत्री का पद सौंपा है । इसीलिए उनका विरोध करने की बात मेरे मन में स्थान नहीं पाती ।"

"तो फिर विरोध मत कीजिये । जो भी कुछ पागलपन वह करें, उनकी हाँ में हाँ मिलाते रहिये ।"

"वह तो कर ही रहा हूँ मित्र ; पर उसकी भी एक सीमा है । जानते बूझते मक्खी निगलते रहने पर कभी-न-कभी उल्टी (वमन) हो ही जायेगी ।"

इसी समय एक सेवक ने कमरे में प्रवेश किया । उसका चेहरा चिन्ता से मलिन था । वह सीधा प्रधान मंत्री के पास पहुँचा और उसने उनके कान के पास तक मुंह ले जा कर धीरे से कुछ कहा । सब लोग उत्सुक हो कर उसकी ओर देखने लगे । उसकी बात सुनते सुनते प्रधान मंत्री के चेहरे की पेशियां तन उठीं । अत्यन्त आश्चर्य और विषाद का भाव उनके मुख पर झलक उठा । उन्होंने धीमे स्वर में पूछा : "वह कहां है ?"

सेवक ने बाहर की ओर इशारा करते हुए कहा: "यहीं है ।"

"उनसे कहो मैं अभी आता हूँ ।"

सेवक विनय से सिर झुका कर चला गया । प्रधान मंत्री जितना भोजन कर चुके थे, उतना ही उस दिन उनके भाग्य में था, क्योंकि उसके बाद वह एक ग्रास भी नहीं खा सके । उन्हें हाथ धोते देख कर उनके अन्य मित्र भी असमंजस में पड़ गये, पर किसी ने भी कुछ पूछा नहीं । कुछ क्षण बाद प्रधान मंत्री ने खुद ही कहा : "लगता है कि भाग्य भी सनकी महाराज का साथ दे रहा है । उनकी इच्छा को पूरा करने का जो उपाय मैं नहीं ढूँढ पा रहा था, वह भाग्य ने ढूँढ दिया है । रणोद्दीपशाह की किसी ने हत्या कर दी है ।"

श्रोताओं पर मानों बिजली गिर पड़ी । निरीह बालक युवराज की हत्या कोई भी क्यों करेगा? एक ने पूछा : "हत्या किसने की ?"

"हत्यारा पकड़ा गया है । उसे ये लोग यहीं लाये हैं । एकाध बार मुझे युवराज के प्राणों के लिए आशंका हुई थी, पर असंभव समझ कर मैंने उस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया था । भावी प्रबल है । अच्छा, चल कर ज़रा हत्यारे को तो देखें ।" कहते हुए प्रधान मंत्री दामोदर पांडेय उठ खड़े हुए । उनके साथ ही उनके सब मित्र भी उठ खड़े हुए ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रधान मंत्री अपनी विशाल बैठक में आ गये । तब चार सैनिक हस्तबहादुर को वहाँ ले आये । उसे देखते ही प्रधान मंत्री ने चौंक कर कहा : "अरे, यह तो हस्तबहादुर है ।"

हस्तबाहदुर की दशा भली नहीं थी । कपड़े खून से रंगे हुए थे और मुंह पर चोट और खरोंचों के निशान थे । जहाँ छर्रों के घाव थे, वहां काम-चलाऊ पट्टियाँ बाँध दी गई थीं ।

प्रधान मंत्री के प्रश्न की बिल्कुल उपेक्षा करके हस्तबहादुर बिल्कुल चुप रहा । प्रधान मंत्री ने स्वयं को अपमानित अनुभव किया और उनका मुख क्रोध से तमतमा उठा । उन्होंने कहा : "कोतवाल को बुलाओ और उससे कहो कि इससे मालूम करे कि इसने यह पाप किसलिए किया है । इसकी मरहमपट्टी करो और देखो, हत्या का रहस्य प्रकट किये बिना यह मरने न पाये ।" इतना कहकर प्रधान मंत्री ने सैनिकों को इशारा किया कि वे कैदी को बाहर ले जायें ।

उनके चले जाने पर प्रधान मंत्री बोले : "यह हस्तबहादुर अपने आप युवराज की हत्या क्यों करने लगा ! इसके पीछे अवश्य ही कोई अत्यन्त घिनौना रहस्य है ।"

एक मित्र बोला : "रहस्य जो भी होगा, जल्दी ही प्रकट हो जायेगा । हमारा कोतवाल बहुत समर्थ पुरुष है । उसके सामने कोई रहस्य गुप्त नहीं रहता ।"

इतने में दो सैनिक उन बालकों को ले आये, जो रणोद्दीपशाह के साथ सप्तधारा गये थे । उन्होंने प्रधान मंत्री को सारी घटना का आद्योपान्त वृत्तान्त सुनाया । सुनते हुए प्रधान मंत्री बीच-बीच में हाथ मलते रहे । अन्त में उन्होंने पूछा : "युवराज का शव कहाँ है ?"

"उसे वे लोग अर्थी पर रख कर ला रहे हैं ।"

"वे शायद सीधे राजमहल पहुँचेंगे ?"

"वहीं जायेंगे ।"

"तब तो हमें भी राजमहल पहुँचना चाहिए ।" प्रधान मंत्री ने अपने मित्रों से कहा ।

"कोतवाल से रहस्य तो मालूम कर लेते ।"

"रहस्य कुछ विशेष नहीं है । बात लगभग स्पष्ट ही है । बड़ी रानी को इस भीषण दुःसंवाद को सुनने के लिए तैयार करना होगा । नहीं तो वह इस आघात को सह नहीं सकेंगी ।"

प्रधान मंत्री और उसके साथी राजमहल जाने के लिए तैयार होने लगे ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

13

वज्रनारायण

काठमांडौ का कोतवाल वज्रनारायण बहुत विकट आदमी था। जितना वड़ा और डरावना उसका शरीर था, उससे कहीं अधिक कठोर और क्रूर उसका मन था। जो अभियुक्त उसके हाथ में आते थे, उनसे सत्य को उगलवाने में उसे विशेष कठिनाई न होती थी। कारण कि उसके सामने आने से पहले ही उसकी करामाती ख्याति अभियुक्त के कानों तक पहुँच चुकी होती थी। मशहूर था कि उसे देखते ही पत्थर पानी वन कर वहने लगता है। सिपाही कोतवाल की लोमहर्षक क्रूरता की कहानियाँ सुना सुना कर अभियुक्त को ऐसा आतंकित कर देते थे कि कोतवाल के दर्शन होने से पहले ही उसकी तीन चौथाई दृढ़ता तो समाप्त हो चुकी होती थी।

हस्तबहादुर के कानों में भी ये सब बातें पहुँच चुकी थीं। सिपाहियों ने उसे सलाह दी थी कि उसके लिए भला यही है कि वह कोतवाल के सामने जाने से पहले ही सारा भेद खोल दे। एक ने कहा था : "बड़ा जल्लाद है यह कोतवाल। कैदी को आदमी तो समझता ही नहीं। कहता है--कैदी को मैं मरने देना नहीं चाहता। यों कोई मर जाये, तो उससे मेरा कुछ बिगड़ता नहीं। जिनके कहने से मैं कैदियों को घिस्सा देता हूँ, वे मेरे रक्षक हैं। पर कैदी अपराध कबूलने से पहले मर जाये, इससे मेरी नाक कटती है। यह ठीक है कि वह प्राण नहीं लेता, पर इसके सिवाय वह कसर भी कुछ नहीं छोड़ता।"

एक और ने कहा : "भेद तो अन्त में खोलना ही पड़ता है। आज तक तो कोई ऐसा देखा नहीं, जो भेद को पेट में छिपाये कोतवाल के हाथों से निकल गया हो। फिर वेकार शरीर को क्यों सताना ? उसके मन में किसी तरह की दया माया है नहीं। वेतें मार कर चूतड़ों की खाल उधेड़ दे; उल्टा लटका दे; हाथ की उंगलियों को पत्थर से कुचल दे; कई दिन रात सोने न दे; जलती मोमबत्ती शरीर पर जहाँ चाहे छुआ दे; आँख फोड़ दे। जिससे भगवान रुष्ट होता है वही इस कोतवाल के हाथ पड़ता है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुन-सुन कर हस्तबहादुर मन ही मन घबराता रहा, पर मुँह से कुछ बोला नहीं ; चुप्पी ही साधे रहा । अन्त में वह समय भी आ गया, जिसके लिए यह सब तैयारी थी । उसे कोतवाल वज्रनारायण के सामने पेश किया गया । कोतवाल ने हुक्म दिया कि कैदी को नंगा कर दिया जाये । यह बेतों से पिटाई की तैयारी थी ।

अब हस्तबहादुर की वाणी खुली । उसने अकड़ कर कहा : "कोतवाल साहब, अपनी जान प्यारी हो, तो मुझे हाथ मत लगाना ।"

वज्रनारायण के लिए कैदी के मुंह से ऐसी बात सुनने का यह जीवन में पहला अवसर था । वह हक्का बक्का रह गया और मुँह बाये हस्तबहादुर की ओर देखने लगा । क्षण भर बाद तनिक सचेत हो कर उसने कहा : "अच्छा, यह बात है ? मुझे जान का डर दिखाता है ? वीरसिंह, पहले इसे गिनकर बीस बेंत लगाओ । उसके बाद बात करेंगे ।"

जब सिपाही वीरसिंह ने बेंत मारने के लिए हस्तबहादुर के कपड़े उतारने शुरू किये ; तब हस्तबहादुर ने कहा : "कोतवाल साहब, मारपीट की ज़रूरत नहीं । मैं वैसे ही सब कुछ बताये देता हूँ । आप इन सिपाहियों को बाहर भेज दीजिये ।"

कोतवाल ने क्षण भर अविश्वासपूर्वक कैदी की ओर देखा और यह भांपने की कोशिश की कि अकेले में वह कुछ उपद्रव तो न कर बैठेगा । उसे अपनी शक्ति पर भी विश्वास था, अतः बहुत न सोच कर उसने कहा : "बस अभी से होश ठिकाने आ गये ? अच्छा, वीरसिंह, तुम लोग दरवाजे के पास पहुंच जाओ । सुनूँ तो, यह क्या भेद बताता है ।"

सिपाहियों के दूर हटते ही हस्तबहादुर ने धीमे स्वर में कोतवाल से कहा : "यह पाप मैंने महाराज के आदेश से किया है । अब आपको जो करना हो, करें ।"

कोतवाल बुरी तरह चौंका । वह हस्तबहादुर के मुख की ओर इस प्रकार देखने लगा कि जैसे उसे अपने कानों पर विश्वास न हो रहा हो । जो कुछ उसने सुना, क्या वह सचमुच हस्तबहादुर ने ही कहा था ? या उसका भ्रम था ?

कुछ देर तक उसके मुँह से बोल ही न निकला । फिर उसने पूछा : "इसका कोई प्रमाण है ?"

"मैं भगवान पशुपतिनाथ को साक्षी करके कहता हूँ ।"

"तुम्हें कम से कम एक और व्यक्ति के सामने यह बात कहनी पड़ेगी ।"

"कहूँगा । पर बात फैलनी नहीं चाहिए ।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह वायदा मैं नहीं कर सकता। इतनी बड़ी बात छिपी थोड़े ही रह सकती है। वह तो फैलेगी ही।"

"मेरा क्या होगा ?"

"वह भी मैं नहीं जानता। अधिक संभावना यही है कि तुम इस कोठरी से बाहर जीवित नहीं निकल सकोगे। मैं कोई सौदेबाज़ी नहीं करता। अगर तुम अपने इस बयान से मुकरे, तो तुम्हें फिर वही सब भुगतना पड़ेगा, जिससे बचने के लिए तुमने अभी यह भेद खोला है।"

"मेरे पकड़े जाने की खबर आप महाराज तक पहुँचवा दीजिये।"

"मुश्किल है। इस विषय में कुछ भी निश्चय प्रधान मन्त्री ही करेंगे।"

इतना कह कर वज्रनारायण ने सिपाहियों को लौट आने का संकेत किया। कैदी को उनके हवाले करके, चौकसी के लिए बार-बार सावधान करके वज्रनारायण प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय से मिलने चल दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

14

आशंका

दामोदर पांडेय जब हनुमान ढोका दरबार में पहुँचा, तब तक युवराज रणोद्दीपशाह का शव वहाँ पहुँचा नहीं था। प्रधानमंत्री तुरन्त महारानी त्रिपुरसुन्दरीदेवी के पास गया। महारानी उस समय तुलजा भवानी के मन्दिर में पूजा के लिए जाने की तैयारी कर रही थीं; पर प्रधानमंत्री के आकस्मिक आगमन की सूचना पा कर रुक गईं।

महारानी खूब शान्त और प्रसन्न थीं। उन्होंने प्रधान मंत्री का हल्की सी मुस्कान से स्वागत किया और पूछा : "इस असमय में अचानक आने की क्या आवश्यकता आ पड़ी ?"

महारानी की इस शान्ति और आनन्द को नष्ट करना प्रधान मंत्री को अत्यन्त कठोर कार्य प्रतीत हुआ, फिर भी कर्तव्य समझ कर उसने कहा : "क्षमा कीजियेगा। बुरी खबर लाया हूं सरकार।"

त्रिपुरसुन्दरीदेवी का चेहरा आशंका से म्लान हो उठा। फिर भी धैर्य बनाये रख कर उसने पूछा : "क्यों ? क्या हुआ ?"

"युवराज शिकार खेलते समय घोड़े से गिर पड़े हैं।"

महारानी की दुश्चिन्ता कुछ कम हुई। बोली : "रणोद्दीप बहुत ही लापरवाह है। वह हमेशा इसी तरह कुछ न कुछ उत्पात करता और चोट खाता रहता है। बहुत समझाती हूं, पर मानता कहां है ?"

"चोट ज़्यादा आ गई है सरकार !"

प्रधान मंत्री का स्वर शायद आवश्यकता से अधिक गंभीर हो गया था। त्रिपुरसुन्दरीदेवी का चेहरा फक पड़ गया। उसने व्यग्र हो कर पूछा : "रणोद्दीप कुशल से तो है ?"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हां हां। वैसा कुछ नहीं।" प्रधान मंत्री ने सान्त्वना देते हुए कहा। "पर चोट गहरी है। युवराज अभी तक बेहोश हैं।"

"वह है कहां ?" एकाएक मां की ममता उमड़ पड़ी।

"वे लोग उन्हें यहीं ला रहे हैं। बस अब आते ही होंगे।"

प्रधान मंत्री जो कुछ मुँह से कह रहे थे, वह बहुत गंभीर और चिन्ता-जनक बात नहीं थी, परन्तु उनका चेहरा इतना उदास और उतरा हुआ था कि महारानी को किसी गंभीर दुर्घटना की आशंका होने लगी। वह व्याकुल होकर पूछने लगी : "रणोद्दीप बेहोश है, यह आपने स्वयं देखा ?"

"नहीं सरकार। मेरे पास तो प्यादा खबर ले कर आया था। मैंने उचित समझा कि आपको तुरन्त सूचना दे दूं।"

"वह प्यादा कहा है ? मैं उससे बात करना चाहती हूं। मेरा जी घबड़ा रहा है। और यह मेरी दाईं आँख भी फड़कने लगी है। हे भगवान, क्या होने वाला है !"

"मैं प्यादे को अभी बुलवाता हूं सरकार" कह कर प्रधान मंत्री महारानी के कमरे से बाहर निकल आये। महारानी की परिचर्या का भार कंचन ने सँभाला।

प्रधान मंत्री का प्यादे को बुलवाने का कोई इरादा नहीं था। वस्तुतः उनका अभीष्ट सिद्ध हो गया था। महारानी का मन अब बुरी खबर सुनने के लिए तैयार था। उस खबर से उन्हें कष्ट तो अवश्य होगा, फिर भी वह उसे सहन कर सकेगी।

प्रधान मंत्री के जाने के कुछ ही देर बाद युवराज का शव हनुमान ढोका दरबार में आ पहुँचा। उससे पहले ही सारे काठमाँडौ में खबर फैल गई थी कि युवराज की एक सिरफिरे नौकर ने हत्या कर दी है। लोगों की भीड़ राजमहल के आसपास सड़कों पर जमा हो गई थी। खबर पाकर राज्य के भारदार राजमहल में पहुंचने लगे थे।

× × ×

प्रधान मंत्री अपने घर पहुंचे, तो देखा कि कोतवाल वज्रनारायण उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। पूछने पर उसने बताया कि युवराज के हत्यारे हस्तबहादुर ने सारा भेद खोल दिया है। पर उसका कथन इतना विचित्र है कि उस पर विश्वास नहीं होता।

"क्या कहता है वह ?"

"हुजूर, उसका कहना है कि यह पाप उसने स्वयं महाराज के आदेश से किया है।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"ऐसा कहा है उसने ?" प्रधान मंत्री ने बिना बहुत चौंके पूछा ।

"जी हुजूर । कोई मारपीट भी नहीं करनी पड़ी । पहले ही उसने यह भेद खोल दिया। इतना ही नहीं, उसने मुझे धमकी भी दी कि यदि मैंने उसे हाथ भी लगाया तो मेरी जान की खैर नहीं है ।"

प्रधान मंत्री कुछ क्षण विचारमग्न रहे । फिर बोले : "मैं उससे मिलूंगा ।"

प्रधान मंत्री और कोतवाल दोनों पालकी में बैठ कर कोतवाली पहुँचे । हस्तबहादुर को उनके सामने पेश किया गया । उसके पैरों में बेड़ियां थीं और हाथ पीठ पीछे बँधे हुए थे। प्रधान मंत्री ने उससे सीधा प्रश्न किया : "क्या यह सच है कि युवराज की हत्या करने के लिए तुम्हें महाराज ने हुक्म दिया था ?"

"सच है हुजूर ।"

"तुम झूठ बोलते हो" प्रधान मंत्री ने तिरस्कारपूर्वक कहा । "अपना पाप छिपाने के लिए तुम महाराज को बीच में घसीटते हो ।"

क्षण भर को हस्तबहादुर हतप्रभ सा हो गया । पर शीघ्र ही संभल कर बोला : "मैं पशुपतिनाथ को साक्षी करके शपथपूर्वक कहता हूँ कि इस कार्य के लिए मुझे महाराज ने आदेश दिया था । उन्होंने मुझे पांच सौ रुपये भी दिये थे । नहीं तो मेरी युवराज से कौन सी दुश्मनी थी ? उन्होंने मेरा क्या बिगाड़ा था ? यदि मैं महाराज के आदेश का पालन न करता, तो उनके कोप का भागी बनता । मेरे लिए अन्य कोई मार्ग ही नहीं था। मुझे पता है परलोक में इसके लिए मुझे नरक भोगना पड़ेगा, पर . . पर . . "

बोलते-बोलते वह रुक गया ।

प्रधान मंत्री कुछ क्षण सोचते रहे । फिर उन्होंने कोतवाल को पांच छह भारदारों के नाम बताये और उन्हें तुरन्त बुलवाने के लिए कहा । उसके बाद वह फिर हस्तबहादुर से बात करने लगे । बोले : "तुम कहते हो कि महाराज ने तुम्हें आदेश दिया, इसलिए तुमने यह घिनौना काम कर डाला । तुम्हें यह भी पता है कि महाराज का मस्तिष्क पिछले कई महीनों से ठीक-ठिकाने नहीं है । ऐसा आदेश पाने के बाद तुमने किसी से सलाह-मशविरा करने की भी आवश्यकता नहीं समझी ?"

"हुजूर, सलाह-मशविरा करने पर तो बात खुल जाती । फिर मैं इस आदेश का पालन कर ही न पाता । उस दशा में महाराज मुझे कभी क्षमा न करते । फिर उन्होंने मुझे जो धन दिया, उसकी मुझे सख्त ज़रूरत थी ।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तब यह कहो कि तुमने धन के लोभ में यह काम किया। सारा दोष महाराज के सिर क्यों मढ़ते हो ?"

"हुजूर, मैं किसी के सिर दोष नहीं मढ़ता। जो कुछ मैंने किया, उससे मैं मुकरता नहीं। मैंने तो केवल इतना कहा है कि यह काम मैंने महाराज के ग्रादेश से किया है। इसमें किसका कितना दोष है यह ग्राप जानें या वह जानें।"

"महाराज के ग्रलावा ग्रौर भी किसी ने तुम्हें कुछ कहा ?"

"नहीं हुजूर !"

"ऐसे काम को तुम ग्रकेले नहीं कर सकते थे। तुम्हारा ग्रौर भी कोई साथी रहा होगा।"

"साथी कोई नहीं था हुजूर। यह काम ही कितना सा था ! मौका पा कर मामूली सा वार ही तो करना था। इतने दिन मुझे सही मौका ढूंढने में ही लग गये।"

"हाँ, महाराज ने यह ग्रादेश तुम्हें कब दिया था ?"

"ग्राठ-दस दिन हो गये हुजूर !"

प्रधान मंत्री ने जिन भारदारों को बुलवाया था, वे कुछ ही देर में ग्रा पहुंचे। ये सब राजदरबार के प्रभावशाली पुरुष थे। उन सबके सामने प्रधान मंत्री ने एक बार फिर हस्तबहादुर से शपथपूर्वक कहलवाया कि उसे युवराज की हत्या करने का ग्रादेश स्वयं महाराज ने दिया था ग्रौर हत्या करने के लिए उसे पांच सौ रुपये भी दिये थे। सुन कर भारदारों के चेहरे बहुत गंभीर हो गये। पर उनमें से किसी ने भी कुछ कहा नहीं।

प्रधान मंत्री के संकेत पर हस्तबहादुर को वापस उसकी कोठरी में भेज दिया गया। कोतवाल ने पूछा : "हुजूर, ग्रब इस कैदी का क्या किया जाये ?"

प्रधान मंत्री ने एक दृष्टि ग्रन्य भारदारों के चेहरों पर डाली ग्रौर कहा : "उसने हत्या तो की ही है। उसे उसका दंड मिलना चाहिए। ग्रच्छा तो यह है कि तुम उसे ग्राज ही ठिकाने लगा दो।"

भारदारों ने मौन रह कर सहमति प्रकट की। उसके बाद प्रधान मंत्री उन भारदारों को साथ ले कर हनुमान ढोका दरबार की ग्रोर चल पड़े।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

15

त्रिपुरसुन्दरी की व्यथा

कंचन महारानी की सेवा में व्यस्त थी। उसने उन्हें ला कर पानी पिलाया। फिर पास बैठ कर पंखा झलते हुए वह उन्हें सान्त्वना देने लगी : "आप चिन्ता मत कीजिये। भगवान पशुपतिनाथ सब भला ही करेंगे। कुंवर जी बेहोश हो गये हैं। चोट लगने पर बहुत बार बेहोशी आ जाती है। पर वह दूर भी हो जाती है।"

महारानी ने कहा : "तू मेरी चिन्ता छोड़। बाहर जा कर देख तो कि वे रणोद्दीप को लाये या नहीं? पांडे जी प्यादे को बुलवाने गये थे, उसका क्या हुआ? न प्यादा आया और न वही लौटे। तू जा कर पता तो कर। मुझे ऐसा लगता है कि पांडे जी मुझसे कुछ छिपा रहे हैं।"

कंचन कमरे से बाहर गई, पर पाँच-छह मिनट बाद ही बरसाती आंधी की तरह दौड़ती हुई कमरे में आ घुसी और रोती हुई महारानी के पैरों पर गिर पड़ी। महारानी का हृदय आशंका से काँप उठा। बुरी खबर का उन्हें आभास हो गया। फिर भी उन्होंने पूछा : "क्या हुआ कंचन? रोती क्यों है? कुछ बता तो।"

कंचन ने और भी ज़ोर से रोते हुए कहा : "कैसे बताऊं? कुंवर जी नहीं रहे। किसी ने उन्हें मार डाला।"

"मार डाला? मेरे रणोद्दीप को मार डाला?" महारानी उन्मत्त की तरह चीख उठी। "पांडे जी तो कहते थे कि वह घोड़े से गिर कर बेहोश हो गया है। मुझे तभी लग रहा था कि वह कुछ छिपा रहे हैं। वाह पांडे जी, मुझसे ही धोखा! ठीक है, तुम धोखा क्यों नहीं दोगे, जब मेरा रणोद्दीप ही मुझे धोखा दे गया! कंचन, कहाँ है वह? मुझे उसके पास ले चल। एक बार उसे देख तो लूं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"क्या करेंगी देख कर सरकार ? उनमें देखने को कुछ नहीं रहा। प्राण रहते तक ही ममता रखना ठीक है।"

"पर बिना उसे देखे मुझे चैन कैसे पड़ेगी ? हाय मेरे रणोद्दीप, तुमने मुझसे कौन-सी दुश्मनी निबाही ! कंचन, उन लोगों से जा कर कह कि वे उसे यहीं ले आयें।"

'ऐसा हुक्म मत दीजिये सरकार ! उनकी ओर देखा नहीं जाता। हत्यारे ने सिर धड़ से अलग कर दिया है।"

महारानी क्षण भर को शोक भूल कर स्वस्थ सी दिखाई पड़ी; बोली : "कंचन, रणोद्दीप की हत्या किसी ने क्यों की ? किसी से लड़ाई-झगड़ा हुआ था क्या ?"

"कहते हैं कि किसी नौकर का सिर फिर गया था। उसी ने पागलपन में कुँवर जी को मार डाला। कुँवर जी से झगड़ा तो आज तक किसी का नहीं हुआ। सारा शहर हत्यारे के नाम पर थू थू कर रहा है।"

"हत्यारा है कहाँ ? भाग गया क्या ?"

"सुना है कि पकड़ा गया है। पांडे जी को मालूम होगा। वह तो कुँवर जी के पास ही खड़े हैं।"

"पांडे जी वहां हैं ? उन्हें जा कर यहाँ बुला ला।"

कंचन चलने को ही थी कि दामोदर पांडेय और उनके साथ बहुत से भारदार स्वयं ही आ पहुँचे। दामोदर पांडेय को देखते ही महारानी चीख उठी : 'पांडे जी, आप तो कहते थे कि रणोद्दीप बेहोश हो गया है ? कंचन कहती है कि उसे किसी ने मार डाला है। उसे किसी ने क्यों मारा ? आप मुझे सच-सच क्यों नहीं बताते ?"

दामोदर पांडेय ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया : "यही समझिये कि यह होनहार ही थी। यह किसी तरह टल नहीं सकती थी। भगवान पशुपतिनाथ ने युवराज के जीने के लिए इतने ही दिन निश्चित किये थे। इसीलिए उन्हें एक ऐसे आदमी ने मार डाला, जो उनसे ज़रा भी रुष्ट नहीं था और जो उनकी हत्या करके अत्यन्त दुःखी था।"

"वह कौन था ?"

"इसी महल का एक मामूली-सा नौकर।"

"अब वह कहां है ?"

"जहां युवराज गये हैं, वहीं वह भी पहुंच चुका है।"

"मैं समझी नहीं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अपने कुकर्म के लिए उसे प्राणों से हाथ धोना पड़ा।"

"प्राणदंड ? बिना मुझे बताये ? इतनी जल्दी ? क्यों ?

"प्राणदंड की नौबत ही उसने नहीं आने दी। कोतवाली में पूछताछ से घबरा कर उसने आत्महत्या कर ली।"

"और हत्या का रहस्य अपने साथ ही ले गया ?"

"कोतवाल वज्रनारायण किसी कैदी को कोई रहस्य अपने साथ नहीं ले जाने देता। सब यहीं रखवा लेता है।"

"तो इस हत्या के पीछे क्या भेद है ?"

क्षण भर दामोदर पांडेय असमंजस में रहा कि भेद बताये या न बताये, पर शीघ्र ही निश्चय करके बोला : "महल की राजनीति।"

महारानी का शोकाकुल मुखमंडल एकाएक रोष से प्रदीप्त हो उठा। महल की राजनीति ! उसका रणोद्दीप महल राजनीति का शिकार हो गया है ? वह भी तब, जब शासन की बागडोर उसके अपने हाथ में है। महल में ऐसा है कौन, जो ऐसा घोर कर्म करवाने का दुःसाहस कर सके ? पागल रणबहादुरशाह के सिवाय अन्य कोई ऐसा करने की सोच भी नहीं सकता। पर क्या रणबहादुरशाह, रणोद्दीप का बाप ऐसा कर सकता है ?

ये सब बातें विद्युत् वेग से क्षण भर में महारानी के मन में कौंध गईं। उसे रणबहादुरशाह के वे सब उन्मत्त प्रलाप स्मरण हो आये, जिनमें वह त्रिपुरसुन्दरीदेवी पर आरोप लगाया करता था कि उसके जादू टोने के कारण ही अनुरागलक्ष्मी का अनिष्ट हुआ। उसे वे धमकियां भी याद आईं, जो रणबहादुरशाह ने दी थीं—जैसा करोगी, वैसा भरोगी; बुरे का फल कभी भला नहीं होगा। विधाता ने भी कैसा पति उसे दिया है ! एक बार तो उसकी इच्छा हुई कि ऐसे पापिष्ठ पुरुष को अभी गला घोंट कर मार डाले। आवेश के मारे उसका सारा देह झनझनाने सा लगा। यह अवस्था कुछ ही क्षण रही। उसके बाद एकाएक उसे अत्यन्त दुर्बलता अनुभव होने लगी। उसे लगा कि वह बैठी भी नहीं रह सकती। देखते-देखते वह एक ओर को लुढ़क गई। उसकी आंखें खुली थीं ; मुट्ठियां बन्द थीं; और शरीर चेतनाशून्य हो गया था।

सभी उपस्थित लोग एकाएक हड़बड़ा गये। कंचन ने महारानी को संभाल कर सीधा लिटाया; मुंह पर पानी के छींटे दिये। दामोदर पांडेय अपने दुपट्टे से हवा करने लगे। एक भारदार लपक कर अन्य दासियों को बुलाने चला गया। एक वैद्यराज को बुलाने दौड़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ देर में महारानी की चेतना लौट आई। पर लगता है कि यदि वह अचेत ही रहतीं, तो उनके लिए भला रहता। अब वह सारा स्वाभाविक संयम खो कर विक्षिप्त की भांति विलाप करने लगीं : "हाय बेटा रणोद्दीप, आखिर तूने मेरा कहना नहीं ही माना। तुझे कितना रोकती-टोकती थी, मनाती-समझाती थी, पर कुछ काम नहीं आया। तू यही कहता रहा—मेरा कोई दुश्मन नहीं; मुझे किसी का क्या डर! अरे, जिसके ऐसे मां-बाप हों, उसे दुश्मन की ज़रूरत ही क्या है? गलती मेरी है। मैंने तुझे अकेला क्यों जाने दिया? हे भगवान, यह तेरी क्या लीला है? जिन्हें मरना चाहिए, वे तो उमर पूरी हो जाने के बाद भी बैठे दुनियां की छाती पर मूंग दलते हैं और जो हज़ार बरस जीने योग्य होते हैं, वे बचपन में ही चल बसते हैं। पांडेजी, मैं पूछती हूं कि क्या इस राज्य में न्याय नहीं होता? इस तरह अबोध बालकों की हत्याएं होती हैं और हत्यारे दंड नहीं पाते? पर दंड कौन दे? दंड देना तो मेरा काम है। ठीक है। तो मैं ही दंड दूँगी।। पर किसे दंड दूं? क्या दंड दूं? हमारे कुल का उज्वल दीपक बुझ गया, यही क्या कम दंड है? मुझे मेरे किस कर्म का दंड मिला है? रणोद्दीप को किस कर्म का दंड मिला? हाय रणोद्दीप, अब मैं किसके सहारे जीऊंगी?..."

महारानी शोक के प्रबल आवेश में अनर्गल विलाप करती रहीं। कंचन तथा अन्य दासियाँ रोती हुई उन्हें सान्त्वना देने और शान्त करने का प्रयत्न करने लगीं। महारानी के शोक का आवेग कभी मन्द पड़ जाता, पर कुछ ही देर बाद अकारण ही वह फिर दुगना चौगुना हो उठता। वह कहतीं: "यदि यह भगवान की इच्छा होती, तो मुझे ऐसी व्यथा न होती। पर मेरा लाल आदमी की खुखरी का शिकार हुआ। यह भगवान की इच्छा हरगिज़ नहीं थी।"

अब राजमहल में महिलाओं की भीड़ तेज़ी से बढ़ने लगी। युवराज की हत्या की खबर सारे शहर में फैल चुकी थी और उच्च अधिकारियों के परिवारों की महिलाएं शोक में सहानुभूति प्रकट करने के लिए महल में आ रही थीं। महारानी के दुःख में वे भी दुःखी थीं और उनके साथ वे भी रो रही थीं। हनुमान ढोका दरबार करुण विलाप की एक महातरंग में डूब गया। महारानी को महिलाओं की देख रेख में छोड़ कर पुरुष वर्ग अलग हट आया और युवराज की अन्त्येष्टि के प्रबन्ध में जुट गया।

जैसी कि दामोदर पांडेय को आशंका थी, महाराज रणबहादुरशाह इस अवसर पर अपने कमरे से ही नहीं निकले। शरीर अस्वस्थ होने के कारण उन्होंने किसी से भी मिलने-जुलने से इन्कार कर दिया। उनकी अनुपस्थिति में ही युवराज की अर्थी उठाई गई। पशुपतिनाथ के मन्दिर के निकट दाह-संस्कार किया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

16

प्रजा-कोप

"सरकार, इस तरह राजकाज नहीं चल सकता। प्रजा में भारी असन्तोष फैल रहा है।" प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय ने कुछ उत्तेजित स्वर में कहा।

उस स्वर की उत्तेजना से महाराज रणबहादुरशाह कुछ चौंके। यह ठीक है कि वह देश के एकच्छत्र नरेश थे, परन्तु नरेश को भी तो अपने मन्त्रियों और कर्मचारियों पर निर्भर रहना पड़ता है। बहादुरशाह को कारावास में डाल देने के बाद उन्होंने इस दामोदर पांडेय को प्रधान मन्त्री बनाया था। बहुत समय तक इसने आँख मींच कर राजभक्त सेवक की भाँति काम किया। पर अब कुछ समय से उसका रुख बदला-बदला सा दीख रहा है।

दामोदर पांडेय का रुख बदला अवश्य है, परन्तु उसके लिए महाराज रणबहादुरशाह का अपना आचरण ही बड़ा कारण है। मैथिली रानी से उनके मर्यादाहीन विवाह को किसी भी क्षत्रिय ने क्षमा नहीं किया। क्षत्रिय लोग कहने भर को ही ब्राह्मणों को ऊँचा वर्ग मानते हैं। वे उन्हें प्रणाम करते हैं और उनके प्रति आदर भी दिखाते हैं, किन्तु कोई ब्राह्मण-कन्या रानी बन जाये, यह वे किसी तरह सहन नहीं कर सकते। यह तो किसी न किसी क्षत्रिय कन्या का हक छीनना है। इसीलिए मैथिली रानी के साथ महाराज के विवाह को लेकर प्रजा में, अर्थात् राज-दरबार के प्रमुख स्तम्भ समझे जाने वाले सरदारों में बड़ा असन्तोष रहा है। वस्तुतः इन बड़े सरदारों का सन्तोष और असन्तोष ही प्रजा के सन्तोष और असन्तोष के रूप में प्रकट होता है। इसे उस रूप में प्रकट करवाने के हथकंडे उन्हें आते हैं।

यदि सरदारों के हाथ में इतना भी प्रभाव न हो, तो राजा एकदम ही निरंकुश हो जाये। महाराज रणबहादुरशाह की स्वेच्छाचारिता भी उस सीमा तक पहुँच गई है, जहाँ उस पर कोई न कोई रोक लगाना आवश्यक हो गया है। पिछले कुछ दिनों में जैसा उच्छृंखल व्यवहार वह करते रहे हैं, यदि उसे

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रोका न गया, तो कुछ पता नहीं कि उसका अन्त कहाँ जाकर होगा। इसी से कुछ रोक लगाने की इच्छा से ही दामोदर पांडेय आज महाराज रणबहादुर शाह के पास उपस्थित हुआ है।

रणबहादुरशाह कुछ क्षण चुप बैठे रहे। उसके पश्चात् शान्त स्वर में बोले : "किस बात से असन्तोष फैल रहा है?"

"पिछले दिनों जो कुछ भारदारों को प्राण दण्ड दिये गये हैं, उससे लोग बहुत ही क्षुब्ध हैं। विशेष रूप से युवराज की मृत्यु के पश्चात् तो कोई भी व्यक्ति स्वयं को सुरक्षित नहीं समझ रहा है। यह स्थिति देर तक कैसे चल सकती है ?"

सुन कर महाराज रणबहादुरशाह का चेहरा चिन्ता और विषाद से काला पड़ गया। मैथिली रानी के साथ किया गया विवाह उन्हें बहुत भारी पड़ रहा था। वह मैथिली रानी को वचन दे चुके थे कि उसका पुत्र ही राजसिंहासन का उत्तराधिकारी बनेगा। आज वह रानी नहीं है, पर उसके प्रति महाराज के मन में प्रेम ज्यों का त्यों है। इसीलिए वह उस वचन को पूरा करने के लिए और भी अधिक कटिबद्ध हैं।

उन्हें पता था कि मैथिली रानी से उनके विवाह के कारण दरबार के सभी लोग उनसे रुष्ट हैं। उन्हें यह भी निश्चय था कि मैथिली रानी के पुत्र को युवराज बनाने में उन्हें किसी भी सरदार से सहायता मिलने वाली नहीं है। यह दुष्कर कार्य उन्हें अपने बलबूते पर ही करना था। इसके लिए उन्होंने दो भयंकर काम किये हैं। एक तो उन्होंने झूठे आरोप लगाकर उन दो भारदारों को प्राणदण्ड दिलवा दिया है, जो मैथिली रानी के साथ उनके विवाह के सबसे कटु आलोचक थे। इससे भी भयंकर कर्म उन्होंने यह किया कि मैथिली रानी से उत्पन्न छोटे राजकुमार की राह निष्कंटक करने के लिए उन्होंने महारानी त्रिपुरसुन्दरी के पुत्र रणोद्दीपशाह की, जो युवराज और राजसिंहासन का उत्तराधिकारी था, हत्या करवा दी। राजसभा के भारदारों का कहना है कि ऐसा दुष्कर्म केवल पागल व्यक्ति ही कर सकता है। और यदि ऐसा पागल राजसिंहासन पर बैठा हो, तो कब क्या हो जायेगा, कुछ कहा नहीं जा सकता। उन भारदारों का पूर्ण समर्थन प्राप्त करके, बल्कि उन्हीं के आग्रह पर दामोदर पांडेय महाराज रणबहादुरशाह के पास आया है। उसके स्वर की दृढ़ता से महाराज को यह आभास हो गया कि वह किसी शक्ति के भरोसे बोल रहा है। फिर भी उन्होंने पूरे आत्म-विश्वास के साथ कहा : "राजा मैं हूँ। मेरी जो आलोचना करेगा, उसे दण्ड दिया ही जायेगा।"

"ठीक है। अपराधी को दंड देने का अधिकार राजा को है। परन्तु उसके लिए यह आवश्यक है कि राजा धर्मानुसार आचरण करे। यदि राजा

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अधर्म करे, और उस अधर्म की आलोचना करने वालों को प्राणदण्ड मिलने लगे, तो लोग या तो डर कर चुप हो जायेंगे, या फिर विद्रोह कर देंगे। दोनों ही स्थितियाँ भली नहीं हैं। पर स्वर्गवासी युवराज पर तो राजा की आलोचना करने का दोष भी नहीं लगाया जा सकता।''

''युवराज मेरा पुत्र था। उसकी मृत्यु का जितना दुःख मुझे है, उससे अधिक और किसे हो सकता है? जो लोग उसके मुझसे अधिक हितैषी होने का दम भरते हैं, वे पाखंडी हैं। मृत्यु पर किसी का वस नहीं है। पर मेरे पुत्र की मृत्यु हो जाये और उसके लिए कोई आकर मुझसे ही जवाब माँगे, यह निरी उद्दंडता है। मैं इसे नहीं सह सकता।''

महाराज रणबहादुरशाह का यह रुख देख कर दामोदर पांडेय का क्रोध सीमा को अतिक्रमण कर गया। वह यह भूल गया कि वह देश के राजा के सम्मुख खड़ा है, जिसे अपनी प्रजा के जीवन-मरण पर पूरा अधिकार है। उसने क्रुद्ध होकर कहा : ''यदि युवराज की स्वाभाविक मृत्यु हुई होती, तो सारी प्रजा को आपके साथ सहानुभूति होती। पर अब स्थिति यह है कि युवराज की मृत्यु पर प्रजा को शोक है, पर आपको नहीं है। इसीलिए प्रजा आपसे रुष्ट है।''

''रुष्ट है, तो हो ले रुष्ट। वह मेरा क्या कर लेगी?''

''मैं यही पूछने आया हूँ कि अब उसे क्या करना चाहिए। यह स्थिति तो देर तक चल नहीं सकती।''

''चल नहीं सकती का मतलब?''

''मतलब स्पष्ट है कि प्रजा अब नहीं चाहती कि आप राजसिंहासन पर रहें। अच्छा यह होगा कि आप स्वेच्छा से राज्य त्याग कर किसी भी अच्छे स्थान पर जाकर रहें।''

''मैं प्रजा की इच्छा से राजा नहीं बना था। प्रजा ने मुझे राजा नहीं बनाया। मुझे पशुपतिनाथ ने राजा बनाया है। जब तक उनकी इच्छा है, तब तक मैं राजा रहूँगा।''

''मुझे भय है कि तब प्रजा विद्रोह कर देगी।''

'और तुम उस विद्रोह को उकसाओगे? उसका नेतृत्व करोगे? यही तो कहने तुम आये हो? ठीक है, करो विद्रोह। पर यह न भूलना कि सफल विद्रोही को राजसिंहासन मिलता है, तो असफल विद्रोही के गले में फाँसी की रस्सी भी पड़ती है। मेरे दादा ने अपने बाहुबल से यह राज्य जीता था। धमकियों से डर कर कायर की तरह मैं इसे कदापि नहीं छोड़ूँगा।''

''सरकार, यहीं आपके अनुमान में भूल हैं। राज्य किसी एक व्यक्ति के बाहुबल से नहीं जीते जाते। स्वर्गीय महाराज पृथ्वीनारायणशाह ने भी अपने

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साथी सैनिकों के बल से ही इस नेपाल राज्य की स्थापना की थी। एक समय था, जब आपके लिए भी वीर गोरखे लड़ने-मरने को तैयार थे। आपके राज्य के विस्तार के लिए उन्होंने कई लड़ाइयाँ लड़ीं। पर आज आप काठमाँडौ की सड़कों पर निकल जाइये। आपको राजा का सा सम्मान प्राप्त नहीं होगा। आपके पक्ष में तलवार उठाने वाले सौ सैनिक भी नहीं निकलेंगे। आप मुझे फाँसी की डोरी का भय दिखाते हैं? पर किस-किस को फाँसी दीजियेगा? विद्रोह करके मुझे राजा नहीं बनना है। पर भारदारों ने यही निश्चय किया है कि अब वे आपको राजसिंहासन पर नहीं देखना चाहते। जो बात होनी ही है, वह यदि शोभा के साथ हो जाये, तो उसमें सबका भला है। स्वेच्छा से राज्य त्याग देने में और विद्रोहियों से परास्त होकर देशत्याग करने में बड़ा अन्तर है। मेरी अब भी यही हितैषितापूर्ण सलाह है कि आप विद्रोह की नौबत मत आने दीजिये। यदि आपको मुझ पर विश्वास नहीं है, तो अन्य चार-छह भारदारों से बात कर देखिये। संघर्ष करना तभी उचित है, जब सफलता की कुछ आशा हो। मैं सदा ही आपका हितैषी रहा हूँ और आज भी हूँ। इस समय परिस्थितियां ही ऐसी हो उठी हैं कि मुझे आपसे ऐसी प्रार्थना करनी पड़ रही है।"

"यदि किसी के तुम जैसे दो-चार हितैषी हों, तो उसे फिर शत्रुओं की तो कोई आवश्यकता ही नहीं। ठीक है। मैं तुम्हारी बात पर विचार करूँगा। यह भी ठीक है कि यदि सफलता की यथेष्ट आशा दिखाई न पड़ी, तो मैं संघर्ष नहीं करूँगा। पर मैं यह नहीं भूलूँगा कि प्रधान मन्त्री होने के नाते जैसा समर्थन तुम से मुझे मिलना चाहिए था, वैसा नहीं मिला। तुमने राज-द्रोह किया है। तुम विद्रोहियों से मिल गये हो। कम से कम मन में मैं तुम्हें क्षमा नहीं करूँगा।"

"आप मेरे साथ फिर अन्याय कर रहे हैं। दण्ड से मैं नहीं डरता। पर मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि मैं राजद्रोही नहीं हूँ। राजा एक व्यक्ति नहीं, बल्कि एक संस्था है। रानियाँ और राजकुमार भी उस संस्था के उतने ही महत्वपूर्ण अंग हैं, जितना कि राजा स्वयं। राजकुमार भविष्य में बनने वाले राजा हैं। मुझे राजद्रोही तब कहा जा सकता था, जबकि मैं समूचे राजपरिवार को अपदस्थ करके राजसिंहासन और राजमहल पर अपना या किसी दूसरे का अधिकार करवाना चाहता। मैं तो केवल इतना कह रहा हूँ कि आप सिंहासन त्याग दें और आपका पुत्र राजा बन जाये।"

"और तुम उसके प्रधान मन्त्री बन कर असली शासन करते रहो। वह मन्दिर में शालिग्राम की भाँति गूँगा बहरा बन कर बैठा रहे और तुम पुजारी की तरह उसकी पूजा करके मौज करते रहो। यही सच्ची राजभक्ति है!"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दामोदर पांडेय ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। उसने केवल इतना कहा : "आपको जो भी निर्णय करना हो, आज शाम तक कर लें। परसों युवराज का राज्याभिषेक होना है। अब अनुमति हो, तो मैं जाऊँ।"

उसने अनुमति माँगी अवश्य, किन्तु उसके मिलने की प्रतीक्षा नहीं की। रणबहादुरशाह को क्रुद्ध, खिन्न, किंकर्तव्यविमूढ़ बैठा छोड़ कर वह वापस लौट पड़ा।

× × ×

अधिकांश भारदारों का समर्थन प्राप्त करके दामोदर पांडेय ने पाँच वर्ष के बालक गीर्वाणयुद्धविक्रम का बाकायदा राज्याभिषेक करके उसे नेपाल का राजा घोषित कर दिया। महाराज रणबहादुरशाह हनुमान ढोका दरबार में ही थे, किन्तु उनके साथ किसी की सहानुभूति नहीं थी। लोग उन्हें खतरनाक पागल और हत्यारा समझते थे। उनकी दशा कैदी से कुछ भली नहीं थी। राजा वह तभी तक थे, जब तक लोग उनका आदेश मानते थे। पर अब उनका आदेश मानने को कोई तैयार नहीं था।

भाग्य की एक विचित्र विडम्बना थी। लोग महाराज रणबहादुरशाह से इसलिए रुष्ट थे कि वह अपने सही उत्तराधिकारी रणोद्दीपशाह के बजाय छोटी रानी अनुरागलक्ष्मी के पुत्र गीर्वाणयुद्धविक्रम को युवराज बनाना चाहते थे। उसी रोष के आवेश में उन्हीं लोगों ने उसी गीर्वाणयुद्धविक्रम को राजा मान लिया था और रणबहादुरशाह को सिंहासन से उतार दिया था।

दामोदर पांडेय ने रणबहादुरशाह से स्पष्ट कह दिया था कि यदि वह नेपाल से बाहर जाना चाहें, तो उन्हें उनके तथा उनके सेवकों के भरण-पोषण के लिए यथेष्ट धनराशि दी जायेगी। पर यदि वह नेपाल में ही रहने का हठ करेंगे, तो बड़ी लाचारी में उन्हें कारागार में रखना पड़ेगा। एक व्यक्ति के लिए समस्त राज्य की सुख शान्ति को नष्ट नहीं किया जा सकता। रणबहादुर-शाह भी इतने पागल नहीं थे कि इन दो विकल्पों में से भले विकल्प को न चुन सकें।

जब रणबहादुरशाह की नेपाल से बाहर जाने की बात चली, तब बड़ी रानी त्रिपुरसुन्दरीदेवी ने भी उनके साथ ही जाने का दृढ़ संकल्प प्रकट किया। प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय तथा अन्य सभी भारदारों को बड़ी रानी से सहानुभूति थी और सब उनका आदर करते थे। वस्तुतः रणबहादुरशाह को सिंहासन से हटाने का सबसे बड़ा उत्तेजक कारण ही यह था कि युवराज रणोद्दीपशाह की हत्या में रणबहादुरशाह का हाथ पाया गया था। समझा गया था कि इस प्रकार रणबहादुर शाह को दंडित करने से बड़ी रानी के चित्त को कुछ शान्ति मिलेगी। बड़ी रानी के चित्त को शान्ति नहीं मिली,

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह कह पाना कठिन है। पुत्र की मृत्यु के बाद बड़ी रानी को राजमहल से घृणा हो गई थी। पर जब पति के निर्वासन की बात सामने आई, तब उसने पति का साथ देना ही अपना परम कर्तव्य समझा। सुख में साथ चाहे वह न दे सकी हो, किन्तु दुःख में पति का साथ वह नहीं छोड़ सकती।

गीर्वाणयुद्धविक्रमशाह को पता चला, तो वह पाँच वर्ष का बालक त्रिपुर-सुन्दरीदेवी के पास आकर रोने लगा। अपनी सगी माँ की मृत्यु के बाद वह त्रिपुरसुन्दरी को ही अपनी माँ मानता रहा था। बोला : "तुम जाओगी, तो मैं भी साथ चलूंगा। यहां मैं किसके पास रहूँगा ?"

"तुम चलोगे, तो राज्य कौन करेगा ? अब तुम राजा हो। तुम्हें यहीं रहना होगा।"

"तो मैं तुम्हें भी नहीं जाने दूंगा। मैं किसके पास रहूँगा ?"

"क्यों ? मंझली माँ के पास रहना। इतने लोग तुम्हारी देखभाल करेंगे। तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होगी।" त्रिपुरसुन्दरी ने उसे समझाया। उसे मालूम था कि बालक गीर्वाण सचमुच उसे प्यार करता है।

"नहीं, तुम यहीं रहो।"

"मुझे तुम्हारे पिता जी के साथ जाना है। अकेले परदेस में उन्हें तकलीफ होगी।"

"पिता जी क्यों जा रहे हैं ?"

"जब तुम बड़े हो जाओगे, तब सब बातें समझोगे। उनका जाना जरूरी है, इसलिए जा रहे हैं।"

"तुम कितने दिन में आओगी ?"

"जल्दी ही लौट आऊँगी। बहुत दिन नहीं लगेंगे।" बालक का मन रखने के लिए त्रिपुरसुन्दरी ने कहा। उसे स्वयं मालूम नहीं था कि वह कब वापस आ सकेगी और कभी आ भी सकेगी या नहीं।

त्रिपुरसुन्दरी को अनुरागलक्ष्मी की याद हो आई। अभागिन कितना उत्पात कर गई! उसी का यह पुत्र है—कितना प्यारा, कितना भोला! उसे अपने पुत्र रणोद्दीपशाह की भी याद आई। इसी गीर्वाण को राजा बनाने के लिए उसके प्राण लिये गये। और जिसने उसकी हत्या करवाई, उसी की सेवा के लिए वह राजमहल को त्याग कर दूर अनजाने परदेश में जा रही है। पता नहीं भगवान ने क्या-क्या ललाट में लिख रखा है, जो भोगना पड़ेगा!

× × ×

दामोदर पांडेय ने रणबहादुरशाह को बहुत समय नहीं दिया। पचासेक लाख रुपया देकर उसने उन्हें शीघ्र ही काठमांडौ से ही नहीं, नेपाल से भी विदा कर दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

17

निर्गुणानन्द

सब साधु विरक्त होकर, सर्वस्व त्याग करके ही गेरुआ वस्त्र पहनते हों, ऐसी बात नहीं है। कुछ लोग विरक्त नहीं होते, फिर भी गेरुआ धारण कर लेते हैं। कुछ लोग विरक्त हो जाते हैं, पर सर्वस्व त्याग बिना किये ही गेरुआ धारण करते हैं। अधिकांश साधु ऐसे होते हैं, जिनके पास त्यागने को कोई सर्वस्व या अल्पस्व होता ही नहीं। उनकी कहानियाँ भी बड़ी मार्मिक और रोचक हो सकती हैं, पर उनसे हमें कोई मतलब नहीं।

विक्रमी संवत 1860 के आस-पास काशी में जो एक स्वामी निर्गुणानन्द रहते थे, वह साधुओं की इस तीसरी श्रेणी में तो बिल्कुल ही नहीं आते थे। विरक्त वह थे या नहीं, यह तो वह ही जानें, क्योंकि वैराग्य मन की वस्तु है; परन्तु स्वेच्छा से उन्होंने त्याग कुछ नहीं किया था, यह हमें भली भाँति मालूम है। और तो और, उनके विशाल 'निर्गुण आश्रम' में एक परम सुन्दरी महिला भी रहती थी। उस महिला की आयु उनसे दो-चार वर्ष ही कम होगी। संन्यासी के आश्रम में इतनी सुन्दर महिला के रहने का वह क्या उचित कारण बताते थे, यह भी हमें ठीक मालूम नहीं। पर निर्गुणानन्द जी बड़े चतुर और घाघ थे, इसलिए वह अवश्य ही कुछ न कुछ बढ़िया बहाना बनाते होंगे। यदि कोई अपरिचित व्यक्ति देखता, तो यही समझता कि ये दोनों शायद पति-पत्नी ही हैं।

निर्गुणानन्द बिल्कुल निर्गुण थे या नहीं, यह सन्देहास्पद हो सकता है, किन्तु गुणग्राहक वह पक्के थे। लगता है कि आनन्दरसिक भी कम नहीं थे। तभी तो उस महिला को वह 'सुन्दरी' कह कर बुलाते थे। गैरिकधारी साधु के मुँह से यह सम्बोधन कितना ही बेतुका क्यों न जंचता हो, परन्तु सुन्दरी को देखकर यह सबसे उपयुक्त सम्बोधन जान पड़ता था। सुन्दर के अलावा वह मानों और कुछ थी ही नहीं। अंग-अंग से रूप फूटा पड़ता था।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुन्दरी गैरिक वस्त्र धारण नहीं करती थी । जिस ढंग से निर्गुणानन्द उसे पुकारते थे, उससे यह भ्रम न हो जाये कि वह ग्राश्रम की कोई नौकरानी थी । जिस ठसक के साथ वह रहती थी, उससे तो वह ग्राश्रम की मालकिन ही जान पड़ती थी । वह लोगों के सामने कम ग्राती थी, पर कुछ समय तक ग्राश्रम की गतिविधि को देखने से यह बात स्पष्ट हो जाती थी कि ग्राश्रम का प्रत्येक छोटा-बड़ा काम उसी के द्वारा संचालित हो रहा है ग्रौर प्रत्येक काम पर उसकी नज़र है । ऐसी चेली हो, तो साधु ग्रौर ग्राश्रम का माहात्म्य सौगुना हो जाता है । शायद इसी कारण काशी के ग्रनेक गण्य-मान्य पुरुष ग्रौर महिलाएँ स्वामी निर्गुणानन्द ग्रौर उनकी शिष्या सुन्दरी के सत्संग के लिए ग्राते रहते थे ।

उस छोटे से ग्राश्रम में साधुग्रों की भरमार थी । पर उनमें से एक भी वीतराग दृष्टिगोचर नहीं होता था । साधुग्रों में जैसा बड़प्पन ग्रौर शान्ति का भाव सामान्यतया दिखाई पड़ता है, वह भी उनमें नहीं था । ग्राश्रम के सभी साधु निरपवाद रूप से नेपाली ग्रौर वे भी गोरखे थे । ग्रपने ठिगने ग्रौर बलिष्ठ शरीरों पर गेरुए वस्त्र धारण किये वे बहुत ही बेतुके जान पड़ते थे । स्वामी निर्गुणानन्द ग्रौर उनकी शिष्या सुन्दरी के प्रति उनकी भक्ति ग्रपार थी । जिस प्रकार वे उनकी सेवा ग्रौर ग्राज्ञापालन में तत्पर रहते थे, वह सच्ची भक्ति के बिना संभव नहीं । सच पूछो तो वे साधु कम ग्रौर सेवक ग्रधिक प्रतीत होते थे ।

समूचा का समूचा निर्गुण ग्राश्रम एक विशाल पाखंड था । पर मजे की बात यह कि ग्राश्रम में ग्राने वाला कोई भी व्यक्ति इस पाखंड की ग्रोर किसी भी रूप में तनिक सा भी संकेत नहीं करता था । स्वामी जी को सभी लोग 'महाराज' कह कर सम्बोधन करते थे ग्रौर स्वामी जी के ग्रलावा ग्राश्रम के सभी लोग सुन्दरी को 'सरकार' कह कर पुकारते थे ।

समय समय पर ग्राश्रम में कीर्तन, कथा, सत्संग ग्रादि होते रहते थे, जिनमें बाहर के भी गिने चुने लोग ग्राते थे । पर ग्राश्रम का ठाठ बाट कुछ ऐसा था कि जनसाधारण को उसमें घुसने की हिम्मत नहीं होती थी । केवल धन-सम्पन्न पुरुष ग्रौर रूप-यौवन-सम्पन्न स्त्रियाँ वहाँ पहुंचती थीं । परन्तु पुरुषों के प्रति स्वामी जी का व्यवहार उपेक्षापूर्ण था, तो सुन्दर तरुणियों के प्रति सुन्दरी का व्यवहार बहुत उत्साहवर्धक नहीं होता था । उसके किसी शब्द या ग्राचरण को ग्रमित्रतापूर्ण कह पाना कठिन था, परन्तु ग्रमित्रता का यह भाव उसकी ग्राँखों में बीच-बीच में झलक जाता था । वह निर्गुणानन्द जी की ग्रकेली ही चेली रहना चाहती थी । कभी-कभी इसमें बाधा ग्रनुभव होती थी । तब सुन्दरी को कुछ ग्रधिक सावधान रहना पड़ता था । ऐसा ही ग्रवसर इन दिनों उपस्थित है ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ दिन से एक बीस बाईस वर्ष की तरुणी का आश्रम में आना-जाना काफी बढ़ गया है। उसका नाम है भुवनमोहिनी, पर संक्षेप में मोहिनी कह कर ही लोग बुलाते हैं। बुलाने के लिए केवल महिलाएँ या स्वामी जी महाराज ही नाम का प्रयोग करते हैं, बाकी आश्रमवासी साधु 'बहिन जी' कह कर ही काम चलाते हैं।

भुवनमोहिनी सुन्दरी की अपेक्षा निश्चित रूप से कम रूपवती है—मतलब कि उसका अंग-प्रत्यंग-विन्यास वैसा भव्य और आकर्षक नहीं, जैसा कि सुन्दरी का है। सुन्दरी को तो विधाता ने मानो बड़े चाव से गढ़ा है। नाक, ओठ, आँखें, माथा, ठोडी, सभी की बनावट ऐसी निर्दोष है कि देखकर आँखें गड़ी ही रह जाती हैं। परन्तु सुन्दरी की आयु तीस को पार कर गई है। भुवनमोहिनी पर यौवन का मुलम्मा अभी ताज़ा है। उसकी आँखों की चमक और गालों का रंग दर्शक को अपनी ओर खींचता सा है।

भुवनमोहिनी बालविधवा है। इसीलिए उसकी प्रवृत्ति धर्म-कर्म की ओर बहुत है। घर के लोग भी समझते हैं कि ऐसी युवती का धर्म-कर्म में व्यस्त रहना ही भला है, नहीं तो यौवन की बाढ़ से उमड़ कर बहती हुई यह नदी न जाने किन-किन कगारों को तोड़ेगी और स्वयं को भी मलिन करेगी। भुवनमोहिनी पहले कुछ समय तक अपनी सास के साथ इस आश्रम में आती रही। अब कुछ दिन से वह समय-असमय अकेली भी आ पहुंचती है।

× × ×

स्वामी निर्गुणानन्द जी महाराज अपने आसन पर विराजमान हैं। आसन क्या है, किसी राजा का पलंग है। लकड़ी के तख्त पर तो बहुमूल्य गलीचा बिछा ही हुआ है, सारे कमरे में भी बढ़िया कालीन बिछा है। खिड़कियों पर सुन्दर रेशमी पर्दे हैं। अगरबत्ती के धुएँ से सारा कमरा सुवासित हो रहा है। स्वामी जी तन्मय होकर कोई पुस्तक पढ़ रहे हैं। शायद गीता है।

धीरे से किवाड़ खोल कर मोहिनी ने प्रवेश किया। किसी तरह उसे मालूम है कि इसका अधिकार उसे है। उसके और सुन्दरी के सिवाय ऐसे समय, पहले अनुमति लिये बिना अन्य कोई व्यक्ति स्वामी जी के इस निजी कमरे में प्रवेश नहीं कर सकता।

मोहिनी ने पास जाकर स्वामी जी के चरणों में प्रणाम किया और पलंग के पास भूमि पर ही बैठ गई। सादे सफेद वस्त्रों में उसका अलंकार-शून्य सौन्दर्य बहुत ही प्रिय लग रहा था, मानों गाँव के जोहड़ के मैले पानी में कोई अकेला कमल का फूल खिला हुआ हो। पर थोड़ा सा ध्यान से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देखने पर यह बात छिपी नहीं रहती थी कि भले ही मोहिनी ने भड़कीले वस्त्र नहीं पहने हैं, शरीर पर आभूषण और प्रसाधन भी नहीं है, फिर भी उसने स्वयं को संवारने में कम मेहनत नहीं की है। जो बाल घुँघरीले बन कर गालों पर झूल आये थे, वे स्वाभाविक नहीं थे—न जाने कितनी देर के प्रयत्न के बाद वैसे बनाये गये थे।

मोहिनी को प्रसाधन का चाव तो बहुत था, पर आवश्यकता बिल्कुल नहीं थी। काजल के बिना ही उसकी आँखें खूब काली और चमकीली थीं। काजल की रेखा को बाहर की ओर बढ़ा कर आँखों को बड़ा दिखाने का जो प्रयास किया जाता है, वह भी उसके लिए व्यर्थ होता, क्योंकि पहले ही उसकी आँखें इतनी बड़ी थीं कि उससे अधिक बड़ी होने पर शायद उनकी सुन्दरता कुछ घट ही जाती। ओठ इतने लाल थे कि त्वचा की पतली झिल्ली में से रक्त ही झलकता प्रतीत होता था। वसन्त ऋतु में आम्र वृक्ष की डालियों में फूटने वाले नये कोमल पत्ते भी वैसे क्या लाल होते होंगे! मुस्कान के समय उन होठों के खुलते ही ताजे तोड़े हुए नारियल की गिरी के समान सफेद दाँत चमक उठते थे, जिन्हें देखकर चमेली की कलियाँ याद आ जाती थीं।

स्वामी निर्गुणानन्द जी ने पुस्तक पर से दृष्टि उठाई। मोहिनी के सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। आर्शीवाद देते समय उनका स्वर कुछ कम्पित सा हुआ और स्वर का यह कम्पन मोहिनी से भी छिपा न रहा।

कुछ क्षण दोनों चुप बैठे रहे। निर्गुणानन्द के नेत्र मोहिनी के मुख-मंडल पर गड़े रहे, पर मोहिनी कभी भूमि की ओर और कभी इधर-उधर देखती बैठी रही। चुप्पी को तोड़ते हुए स्वामी जी ने कहा: "मोहिनी, हम हिन्दुओं के नियम और व्रत बहुत ही कठोर हैं। जब भी तुम्हें देखता हूँ, तभी इन नियमों की कठोरता हृदय को सालने लगती है।"

मोहिनी ने आँखें बिना उठाये कहा: "इन नियमों की कठोरता ही तो जीवन को पवित्र बनाती है, महाराज।"

निर्गुणानन्द जी थोड़ा मुस्कराते हुए बोले: "यहीं तो भ्रम है मोहिनी। कठोरता और पवित्रता एक तो नहीं हैं। कड़वी दवाई अवश्य ही गुणकारी होगी, ऐसा भोले लोग ही समझा करते थे। सच तो यह है कि जिस घोड़े को लम्बी रास दी जायेगी, वह कम उछल-कूद करेगा और उसे काबू में रखना आसान होगा। यही हाल मन के घोड़े का है। व्रतों, नियमों के जितने बन्धन अधिक और कठोर होंगे, उतना ही यह उनसे छूटने को छटपट करता रहेगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"फिर भी महाराज, सभी लोग घोड़ों को बाँध कर ही रखते हैं। यदि उन्हें खुला दौड़ने की छूट दे दें, तो उन्हें बँध कर रहने की आदत ही नहीं रहती। जिस पंछी को पिंजड़े में बन्द कर दिया जाता है, उसे धीरे-धीरे उसी में रहने की आदत पड़ जाती है। शुरू में कुछ दिन बेकली रहती है, पर बाद में वही जीवन स्वाभाविक लगने लगता है।"

निर्गुणानन्द जी मन के घोड़े को बांध कर रखने के पक्ष में नहीं थे और इसी के लिए वह मोहनी को भी तैयार कर रहे थे। स्वामी जी संन्यासी अवश्य हो गये थे, पर उन्हें देखने से स्पष्ट पता चल जाता था कि उनका मन-पंछी अभी संन्यास के पिंजड़े में रहने का अभ्यस्त नहीं हुआ है। अभी वह अनुराग और विलास के कुंजों में फुदकते फिरने के लिए बेचैन है।

और मोहिनी ? उसका मन अपने वैधव्य जीवन की कठोर चर्या का आदी हो चुका था। परन्तु कभी-कभी यौवन की उद्दाम तरंगें सारी मर्यादाओं को लांघने के लिए विकल हो उठती थीं। आग दबी हुई थी, बुझी नहीं थी।

स्वामी जी कहने लगे: " उस दिन दशाश्वमेध घाट पर तुम्हें देखा था। मैंने अनेक प्रकार का बहुत रूप लावण्य देखा है, पर तुम्हारी उस दिन की सी छवि मैंने अन्यत्र कभी कहीं नहीं देखी।"

लज्जा से मोहिनी के गाल कानों तक लाल हो उठे। वह सुन्दर है, यह उसे मालूम था। कितने ही युवकों की लालसा भरी दृष्टि ने यह बात अनगिनत बार बताई थी। परन्तु आज निर्गुणानन्द जी के मुख से यह अतिशयोक्तिपूर्ण स्तुति सुन कर उसका मन उद्वेलित हो उठा। मुक्त कंठ से प्रशंसा करने वाले इस प्रशंसक को क्या प्रतिदान दिया जाये ?

मोहिनी का मनोभाव निर्गुणानन्द जी से छिपा न रहा। बोले : "तुम्हारे श्वेत वस्त्रों से मैंने तुम्हारे अनिष्ट का अनुमान लगा लिया था। तुम्हें देख कर मेरे मन में इतनी सहानुभूति उत्पन्न हुई कि मैंने उसी क्षण निश्चय कर लिया कि तुम्हारे इस दुःख में हाथ मैं भी अवश्य बटाऊँगा।"

सहसा निर्गुणानन्द जी ने अपना दायां हाथ मोहिनी के सिर पर रख दिया और धीरे-धीरे उसके बालों को सहलाने लगे। मोहिनी पत्थर की प्रतिमा की तरह जड़ हुई बैठी रही। उसे लगा कि निर्गुणानन्द जी की अंगुलियों से निकल कर विद्युत् की एक तीव्र तरंग बालों में से होती हुई उसके शरीर में प्रवेश कर रही है। उसका सर्वांग अवश सा हो गया।

निर्गुणानन्द ने कहा : "मनुष्य के ही नहीं, प्राणिमात्र के जीवन का एक ही लक्ष्य है—दुःख से मुक्ति और सुख की प्राप्ति। जो भी कोई व्यक्ति किसी

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूसरे के दुःख को तिल भर भी घटा पाता है, वह भारी पुण्य का काम करता है। मैंने तुम्हारी खोज करवाई और तुम्हें यहां बुलवाया।..."

मोहिनी ने विस्मयभरी आंखें उठा कर उनकी ओर देखा। स्वामी जी कुछ भूल रहे हैं। उन्होंने उसे नहीं बुलवाया, बल्कि वह तो स्वयं ही इस आश्रम के शान्त और पवित्र वातावरण की प्रशंसा सुन कर यहाँ आई थी। दूसरों का दुःख घटाने और सुख बढ़ाने के सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के उत्साह में स्वामी जी अपना करतब कुछ बढ़ा-चढ़ा कर बता रहे हैं। इस तरह की झूठी शेखी बघारना मोहिनी को तनिक नहीं रुचता। यह बात उसकी बड़ी-बड़ी आंखों की दृष्टि ने वाणी की सहायता के बिना ही स्पष्ट कर दी।

मोहिनी का मनोभाव स्वामी जी ने समझ लिया। वह कुछ कहने को हुए; पर न जाने क्या सोच कर केवल मुस्करा कर बिना कुछ कहे ही रह गये। शायद वह मोहिनी का कोई भ्रम दूर करना चाहते थे, पर बाद में सोचा कि भ्रम बना रहने देने में भी क्या हर्ज है?

मोहिनी समझती थी कि वह निर्गुण आश्रम की महिमा सुन कर स्वयं श्रद्धा, भक्ति से यहाँ आई थी—पर इस आश्रम की प्रशंसा बड़े यत्नपूर्वक उसकी सास के और उसके अपने कानों तक पहुँचाई गई थी और तब तक निरन्तर पहुंचाई जाती रही, जब तक कि वह यहाँ आ ही न गई।

निर्गुणानन्द जी ने मोहिनी को उठाते हुए कहा: "इहां मेरे पास आ कर बैठो।"

मोहिनी को लगा कि जैसे उसमें हिलने-डुलने का दम ही नहीं रहा है। वह ज्यों की त्यों बैठी रही। तब स्वामी जी सरक कर उसके बहुत निकट आ गये। उनका जो हाथ अब तक मोहिनी के बालों से क्रीड़ा कर रहा था, वह अब नीचे उतर कर गालों और गर्दन तक आ पहुँचा।

तभी एकाएक कमरे का द्वार खुला। मोहिनी और निर्गुणानन्द की दृष्टि चौंक कर उधर गई। दरवाज़े के बीचों-बीच सुन्दरी खड़ी थी। निर्गुणानन्द तो ढीठ की तरह ज्यों के त्यों बैठे रहे, पर मोहिनी गुलेल से छूटी हुई कंकरी की तरह छिटक कर उनसे अलग हो गई। उन दोनों ने यह मान लिया कि सुन्दरी ने उन्हें किसी आक्षेप योग्य मुद्रा में नहीं देखा है। सुन्दरी ने भी ऐसा ही प्रकट किया।

वह बोली: "अरे, मोहिनी तुम यहाँ?" फिर उसने निर्गुणानन्द जी की ओर देखा और आँखों से घोर विरक्ति सी बरसाते हुए कहा: "अभी यह पत्र आया है। मुझे लगा कि यह आवश्यक और महत्वपूर्ण है। इसीलिए तुरन्त देने चली आई। क्षमा कीजियेगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुन्दरी का इस प्रकार एकाएक द्वार खोल कर कमरे में घुस आना निर्गुणानन्द जी को बहुत अखरा था और वह क्रुद्ध होने के लिए मन ही मन कोई बहाना खोज रहे थे, पर एकाएक कुछ सूझ नहीं रहा था। तभी सुन्दरी ने वह पत्र उनके हाथ में थमा दिया। पत्र के ऊपर भारत के अंग्रेज़ महाराज्यपाल लार्ड वैलेज़ली की मुहर लगी थी, जिसे निर्गुणानन्द जी भली भांति पहचानते थे। यह पत्र सचमुच ही इतना महत्वपूर्ण था कि स्वामी जी सारी नाराज़गी भूल बैठे। वह पिछले कई दिनों से बड़ी बेकली से इस पत्र की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सुन्दरी ने कहा: "मोहिनी, मुझे महाराज से दो एक आवश्यक बातें करनी हैं। तुम चल कर दो मिनट मेरे कमरे में बैठो। मैं अभी आती हूँ।"

सुन्दरी का बोलने का ढंग इतना रौबदार है कि कोई उसकी बात टालने की सोच ही नहीं सकता। निर्गुणानन्द कुछ बाधा अवश्य दे सकते थे, पर इस पत्र को देख कर वह दुनियां की अन्य सब बातों को भूल बैठे थे। इसलिए जब मोहिनी चोरी करते हुए रंगे हाथ पकड़े गये बच्चे की तरह कमरे से चुपचाप निकल कर चली गई, तब भी वह कुछ बोले नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

18

सुदन्री का रोष

सुन्दरी इस प्रकार आवेश में आ कर निर्गुणानन्द जी से कभी बातें नहीं करती। पर आज वह चोट खाई हुई नागिन की तरह आपे से बाहर हो रही थी। बोली : "मैं पूछती हूं, यह सब क्या हो रहा है ? आदमी एक बार चोट खाता है, तो भविष्य के लिए संभल जाता है। आप क्या सोच कर फिर-फिर उसी गड्ढे में कूदना चाहते हैं ?"

निर्गुणानन्द जी चुप रहे। उन्होंने कुछ बोलना चाहा; एकाध बार लगा भी कि अब वह कुछ बोलेंगे, पर वह कुछ बोले नहीं। सुन्दरी का ऐसा उग्र रूप उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था।

थोड़ा रुक कर सुन्दरी बोली : "आपको इस तरह मेरी छाती पर मूंग दलने में बड़ा आनन्द आता है ? पहले मैथिली रानी को ब्याह लाये थे, उसका फल देख लिया। अब यह एक और नई चेली पकड़ी है। ..."

जैसे दुखते हुए अंगूठे पर किसी का जूते वाला पांव पड़ गया हो, इस प्रकार तिलमिला कर निर्गुणानन्द जी बोले : "क्या बक रही हो ? उन सब बातों को याद दिला कर तुम मुझे फिर पागल कर देना चाहती हो ?"

"पागल ? मेरे इतने भाग कहां कि मैं आपको पागल कर सकूं ! पर पागल तो आप हो चुके हैं। ज़रा भी कसर बाकी नहीं है। ..."

"तुम चुप भी रहोगी या नहीं ?"

"मैं बहुत दिन चुप रही हूं। पर अब चुप नहीं रहा जाता। पर मैं कहती हूं कि अगर यही सब लाड़ लड़ाने थे तो दुनियाँ की आंखों में धूल झोंकने को यह गेरुआ क्यों पहन लिया ? राजा थे, तो राजा की ही तरह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहते। तब दो नहीं, दस व्याह करते। कोई आपको टोकता नहीं। पर यह गेरुआ तो केवल मेरे लिए हैं। ..."

"सुन्दरी, तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। . . ."

"हां हां, मेरा दिमाग खराब हो गया है। अब खराब हुआ है? सदा से ही खराब है। सारी दुनियां को दुश्मन बना कर मैथिली रानी को व्याह लाये थे, वह भी मेरे ही दिमाग की खराबी थी। क्षत्रिय गोरखा हो कर बाम्हनी के फेर में पड़ गये। ..."

"मैं कहता हूं कि मुझे मैथिली रानी की याद मत दिलाओ।"

"अब मैथिली रानी की याद दिलाने से क्या हो जायेगा? कुछ भी नहीं होगा। अब तो मोहिनी रानी के जादू ने सब यादों को सुला दिया है। मैं कहती हूं कि आज अगर मैथिली रानी किसी तरह फिर उसी रूप में आपके सामने आ खड़ी हो, तो आप उसकी ओर देखेंगे भी नहीं। ..."

सुन्दरी क्या बोले जा रही है, इस ओर निर्गुणानन्द जी का ध्यान ही न रहा। 'अगर आज मैथिली रानी फिर उसी रूप में आपके सामने आ खड़ी हो' सुन्दरी के केवल ये शब्द उनके मन में इस छोर से उस छोर तक छा गये। क्या मैथिली रानी फिर उनके सामने फिर उसी रूप में आ सकती है?

किस रूप में? मैथिली रानी के तो दो रूप थे। एक तो नये उठते यौवन की सुकुमारता और लावण्य से भरपूर मोहक रूप। जैसे स्वर्ण चम्पा का कोई नया ताज़ा खिला फूल हो, जिसमें से भीनी महक उठ रही हो और जिस पर शीतल तुषार के सूक्ष्म कण हीरों की तरह झिलमिला रहे हों। उसके इस रूप को देख कर ही तो वह आपा बिसार बैठे थे। वह भूल गये कि वह ब्राह्मण कन्या है और क्षत्रिय होने के कारण वह उसे प्राप्त नहीं कर सकते। अगर प्राप्त करने का यत्न करें, तो भीषण उत्पात उठ खड़ा होगा। परिणाम भयंकर हो सकता है। परन्तु कामदेव अपने पुष्प-धनुष पर तान तान कर ऐसे प्रचंड तीर छोड़ रहा था कि वह वेहाल हो गये।

हिन्दू धर्म के व्रत और नियम उस दिन भी उन्हें कठोर लगे थे। उन नियमों की उन्होंने उस दिन भी अवहेलना कर दी थी; उनके बन्धन को अमान्य कर दिया था। सारा समाज विरोध करता रहा, सब इष्ट परिजन शत्रु बन गये, पर जिस मैथिली रानी के रूप पर वह मुग्ध हो गये, उसे उन्होंने ग्रहण करके ही छोड़ा। अपने इस साहसिक कदम के लिए उन्हें कभी पछतावा नहीं हुआ। अनेक वर्ष उन्होंने प्रेम के नशे में बिता दिये। यह सुन्दरी तब भी थी। पर तब तो इसने कोई विरोध नहीं किया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर मैथिली रानी से उनके प्रेम को जैसे इष्ट बन्धुओं ने सहृदयता से नहीं देखा था, लगता है, वैसे ही विधाता को भी वह सम्बन्ध रुचा नहीं। कुछ समय बाद, जब मैथिली रानी का रूप और यौवन अपने पूर्ण विकास पर था, एकाएक वज्रपात हुआ। उसे चेचक निकल आई। आग की लपटों में जिन्दा जल जाना कम कष्टदायक होता।

निर्गुणानन्द जी का सारा शरीर सिहर उठा। मैथिली रानी के चेचक से विकृत रूप की स्मृति ने उनके मन और तन को भी बुरी तरह झकझोर दिया। मैथिली रानी किस रूप में उनके सामने फिर आ कर खड़ी हो सकती है? वह क्षण भर को अपनी स्मृतियों में खो गये। पर शीघ्र ही उनका ध्यान फिर सुन्दरी की ओर लौट आया। वह कह रही थी : "तब की बात और थी। वह आपके यौवन का प्रथम आवेश था। उस समय मैंने टोकाटाकी नहीं की। पर अब यह सब क्या हो रहा है?"

यह बात सही है। उस समय और सबने बहुत विरोध किया था, तरह तरह से भर्त्सना भी की थी। पर जो सबसे अधिक विरोध कर सकती थी, वह यह सुन्दरी ही थी। मन में उसके चाहे जो बात रही हो, पर प्रकट में उसने विरोध का एक अक्षर भी नहीं मुँह से निकाला। मन में जो बात रही होगी, उसके विषय में भी संदेह की गुंजाइश नहीं है।

सुन्दरी ने फिर कहा : "उस एक गलती के कारण तो आप राज्य गंवा बैठे और यहां परदेश में पड़े दिन काट रहे हैं। अब आपका और क्या इरादा है? यह आपका अपना राज्य नहीं है कि आपकी सब मनमानी चल जायेगी। यहां अपने इष्ट परिजन भी नहीं हैं। समाज भी पूरी तरह अपना नहीं है। फिर आप क्यों जान बूझ कर विपत्ति को निमंत्रित करते हैं? क्या आप मुझे बिल्कुल ही डुबो देना चाहते हैं?"

सुन्दरी के स्वर में उलाहने के साथ-साथ याचना की ध्वनि भी सम्मिलित हो गई, जिसके कारण उसके कथन का प्रभाव बहुत ही मार्मिक हो उठा। क्षण भर रुक कर वह दृढ़ स्वर में बोली : "चाहे जो भी हो, मैं अब मोहिनी को इस घर में पैर न रखने दूंगी।"

निर्गुणानन्द जी से एकाएक कुछ कहते न बना। वह समझ गये कि हो कर वही रहेगा, जो सुन्दरी कह रही है। सुन्दरी का विरोध करके चल पाने का दम उनमें नहीं था। फिर उसे मनाने और शान्त करने की चेष्टा करते हुए वे बोले : "यह क्या कहती हो सुन्दरी? घर में पैर भी न रखने दोगी? ऐसा क्या बिगाड़ा है उसने?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब की बार सुन्दरी हँस पड़ी। इस हँसी में माधुर्य नाम को भी नहीं था। बोली : "वह बेचारी किसी का क्या बिगाड़ेगी? वह खुद ही बिगड़ जायेगी। उसी के लिए मुझे सारी चिन्ता है। आपका कुछ बिगड़ नहीं सकता। मेरा जो कुछ बिगड़ना सुधरना था, बिगड़ सुधर चुका। पर मोहिनी की अभी ऐसी स्थिति नहीं आई है। विधवा है वह। अगर बात खुल गई, तो उसे आत्महत्या करने के सिवाय कोई रास्ता न रहेगा।"

निर्गुणानन्द जी गड़बड़ा गये। इस बात का खंडन न करके मानों उन्होंने यह स्वीकार कर लिया कि उनके और मोहिनी के बीच कोई आक्षेप-योग्य सम्वन्ध है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

19

अंग्रेज़ गुरु

स्वामी निर्गुणानन्द के निर्गुण आश्रम में काफ़ी कुछ नियमित रूप से आने वाला एक अंग्रेज़ था मेजर डवलू० डी० नौक्स। वह ईस्ट इंडिया कम्पनी की सेना में अफ़सर था। भारत में आ कर उसकी रुचि अध्यात्म की ओर हो गई थी—कम से कम वह ऐसा ही प्रकट करता था। फिर सारी काशी नगरी में उसे गुरु मिले स्वामी निर्गुणानन्द, जो स्वयं न केवल काशी में, बल्कि अध्यात्म मार्ग में भी नये थे। परन्तु इस मार्ग में सिद्धि नये पुराने के हिसाब से नहीं होती। हो सकता है कि एक साधक को वीस वर्ष की कठिन साधना के बाद भी उतनी सिद्धि प्राप्त न हो, जितनी कि किसी अन्य साधक को छह मास में ही प्राप्त हो जाये। जब शिष्य को गुरु से सन्तोष हो, तब अन्य लोगों का कुछ भी कहना सोचना व्यर्थ है।

मेजर नौक्स लम्बा तड़ंगा और सुन्दर पुरुष था। उसकी आयु पैंतीस वर्ष के आसपास थी। सैनिक होते हुए भी वह अत्यन्त मधुरभाषी था। स्वामी निर्गुणानन्द उससे खूब प्रसन्न थे। वह कहते भी थे कि यह अंग्रेज़ शिष्य मुझे इसलिए विशेष प्रिय है कि इससे मेरा सम्मान बढ़ता है। कम्पनी बहादुर का अंग्रेज़ अफ़सर मुझसे ज्ञान प्राप्त करने आता है, इससे अन्य दर्शकों पर भारी प्रभाव पड़ता है।

निर्गुणानन्द जी महाराज किसी भी विषय में लम्बा तर्क करना पसन्द नहीं करते थे; अतः उनसे यह पूछना व्यर्थ था कि आप जैसे वीतराग महात्माओं को मान, सम्मान या प्रभाव का ध्यान रखने की क्या आवश्यकता है।

यों मेजर नौक्स अन्य लोगों के सामने भी स्वामी जी महाराज से मिलता और बातचीत करता था, पर उन दोनों की अधिकांश ज्ञान चर्चा एकान्त में होती थी। अन्य लोग सामने होते, तो मेजर नौक्स अपने अध्यात्म गुरु के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रति यथेष्ट विनय प्रदर्शित करता था। परन्तु उन दोनों के एकान्त में पहुंचते ही गुरु शिष्य का सम्बन्ध बिल्कुल पलट सा जाता। ऐसा लगता कि जैसे किसी जादू के ज़ोर से मेजर नौक्स गुरु बन बैठा है और निर्गुणानन्द उसके विनयशील शिष्य बन गये हैं। एकान्त में पहुंचने पर अध्यात्म चर्चा न हो कर आधिभौतिक जगत् के विषयों पर ही वार्तालाप अधिक होता।

सुन्दरी को भी कुतूहल था कि स्वामी जी महाराज इस अंग्रेज़ शिष्य से एकान्त में क्या बातचीत करते हैं, इसलिए वह कभी-कभी दीवार के साथ कान लगा कर उनकी बातें सुन लेतीं थी। उसका अपना कमरा स्वामी जी के कमरे के साथ लगा था और वे दोनों अपने कमरे के एकान्त में निःशंक होकर बातचीत करते थे, इसलिए सुन्दरी को अपने कमरे से उनका लगभग सारा वार्तालाप सुनाई पड़ जाता था।

उस दिन उन दोनों की बातचीत सुन कर सुन्दरी को बड़ा आश्चर्य हुआ। मेजर नौक्स कह रहा था : "यहां बैठने से कुछ नहीं होगा स्वामी। आदमी वहीं होना चाहिए।"

"आदमी तो वहां है। पर खाली आदमी से ही तो कुछ नहीं होता। पैसा भी चाहिए, हथियार भी चाहिए।"

"पैसा मैं दिलवाऊंगा। हथियार वह आदमी बनवाये।"

"ठीक है। पैसा होगा, तो हथियार बन जायेंगे।"

"पैसे की चिन्ता मत करो। आदमी होता है, तो पैसे की कमी नहीं रहती। देखना यह है कि वह आदमी कैसा है। पैसा बहुत खराब चीज़ है। यह आदमी को भी खराब कर देता है।"

"वह आदमी ठीक है। वह पैसे से ख़राब नहीं होगा। मेरा परखा हुआ है।"

"पैसा मैं दिलवाऊंगा, इसलिए आदमी को मैं परखूंगा। मैं खुद वहां जाऊंगा।"

"आप खुद वहां जायेंगे?" स्वामी निर्गुणानन्द ने बहुत आदर जताते हुए कहा। "रास्ता बहुत कठिन है। बहुत ऊंचे पहाड़ हैं।"

"हमारे लिए कोई रास्ता कठिन नहीं है। हमें वेतन मिलता है। रास्ता कठिन होगा, तो वेतन बन्द हो जायेगा। वेतन लेना है, तो सब रास्तों पर जाना होगा।"

"जैसी आपकी खुशी। आप जाना चाहें, तो मुझे कोई ऐतराज़ नहीं है।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हमारी खुशी का सवाल नहीं। पैसा कम्पनी का है। रकम बड़ी है। गलत जगह डूब गई, तो गवर्नर जनरल (महाराज्यपाल) हमारी खाल उतार लेगा। अपनी खाल बचानी है।"

"तब आप खुशी से जाइये। वहाँ आपका स्वागत होगा।"

"उसके साथ कितने आदमी हैं ?"

"बहुत !"

"बहुत कितने ?"

"पचास-साठ आदमी हैं।"

"पचास-साठ आदमी से राज्य पर कब्ज़ा कैसे होगा ?"

"हो जायेगा। बहुत से लोगों को पैसा देकर अपने साथ मिलाना होगा। हमारे विरोध में इतने आदमी भी इकट्ठे न हो सकेंगे।"

"यह कैसा राज्य है तुम्हारा स्वामी ?"

"ऐसा ही है। सामान्य आदमी राज्य के मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं लेते। उनकी बला से कोई भी राजा क्यों न हो। केवल दरबार के अधिकारी और प्रमुख भारदार ही इस मामले में दखल रखते हैं। वह भी अब, इससे पहले उनका भी दखल नहीं था।"

"ठीक है। तो हम कब जायें ? और वहां किससे मिलें ?"

"जब आपकी मर्ज़ी हो, तब चले जाइये। वहाँ भीमसेन थापा नाम का प्रभावशाली भारदार है। उससे मिलिये। बल्कि अच्छा तो यह होगा कि मैं उसको चिट्ठी लिखूं। जब उसका जवाब आ जाये, उसके बाद आप जायें।"

"आप चिट्ठी लिखेंगे ? तो उसे लिखिये कि वह राजदरबार में इस बात के लिए ज़ोर डाले कि नेपाल दरबार ईस्ट इंडिया कम्पनी से यह समझौता कर ले कि नेपाल का एक व्यापारिक दूत कलकत्ते में रहे और कम्पनी का व्यापारिक दूत काठमांडौ में रहे। इससे हमारा काठमांडौ जाना आसान हो जायेगा। किसी का ध्यान हमारी ओर जायेगा नहीं।"

"ठीक है। ऐसा करना तो और भी ज़रूरी है। नेपाल दरबार की अनुमति के बिना आपको नेपाल राज्य में ही घुसने नहीं दिया जायेगा। विलायत का होने से आपकी शक्ल सूरत अलग पहचानी जाती है। मुझे पता नहीं कि थापा व्यापारिक दूत रखने की बात नेपाल दरबार से मनवा पायेगा या नहीं ; फिर भी चिट्ठी लिखता हूं।"

"लिखिये। बात बन जायेगी, तो अच्छा है ; नहीं तो फिर कुछ और उपाय सोचेंगे।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"ठीक है।" थोड़ा रुक कर स्वामी जी महाराज ने कहा : "पैसे की कुछ ज़रूरत मुझे भी है। आजकल आश्रम का खर्च भी बड़ी तंगी से चल रहा है।"

"वह भी मिलेगा। हम आज ही देंगे। यहां अकेले में नहीं, बाहर आपके भक्तों के सामने देंगे। वे सब देखेंगे, तो उन पर अच्छा असर पड़ेगा।"

उस दिन मेजर नौक्स ने भरे सत्संग में स्वामी निर्गुणानन्द जी के चरणों में 25 हजार रुपये भेंट किये। लोगों ने देखा और दांतों तले अंगुली दबा ली। "यह है सच्ची श्रद्धा!" एक ने कहा।

"अजी यह महात्मा जी के तपोबल का परिणाम है। जब आदमी में कोई शक्ति होती है, तभी वह दूसरों को प्रभावित कर सकता है। हम चाहें, तो हमें तो कोई दस रुपये भी भेंट करने को तैयार न होगा।" एक और ने कहा।

"बिल्कुल सच है। दूसरे की जेब से एक पैसा निकलवाना मुश्किल होता है। और इसने पच्चीस हजार रुपये एक साँस में दे दिये। धन्य हैं स्वामी जी महाराज!" एक और बोला।

"सुखी रहो। तुम्हारी सब मोनकामनाएं पूर्ण हों।" स्वामी निर्गुणानन्द ने सच्चे हृदय से मेजर नौक्स को आशीर्वाद दिया। भावावेश से उनका स्वर इतना कम्पित था कि वह कठिनाई से ही अपना संतुलन बनाये रख कर अपना अभिनय पूरा कर सके। लोग स्वामी जी के पैरों पर पड़ रहे थे और स्वामी जी की इच्छा हो रही थी कि मेजर नौक्स के पैरों में जा पड़ें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

20

भाग्य पलटा

उस दिन काठमांडौ नगर में बड़ी चहल-पहल थी। सड़कें और बाज़ार सजाये गये थे। सरकारी अफसर और कर्मचारी बहुत व्यस्त दिखाई पड़ते थे। वे सब बढ़िया पोशाकों में थे। उनकी तत्परता से प्रकट था कि बड़ी धूमधाम से किसी के स्वागत की तैयारी हो रही है।

इस धूमधाम और व्यस्तता में जनसाधारण का सहयोग केवल उतना ही था जितना कि सरकारी दबाव से हुआ करता है। लोगों के अपने मन में कोई उल्लास का फव्वारा नहीं फूट रहा था। फूटने की बात भी नहीं थी। आखिर यह सब आयोजन उन्हीं महाराज रणबहादुरशाह के स्वागत के लिए तो था, जिन्हें चार वर्ष पहले क्रुद्ध प्रजा के विद्रोह से भयभीत होकर अपना राज्य छोड़ कर नेपाल से भाग जाना पड़ा था। उस विद्रोह का नेतृत्व प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय ने किया था। महाराज रणबहादुरशाह के चले जाने पर उसके पुत्र गीर्वाणयुद्धविक्रम शाह को राजसिंहासन पर बिठाया गया और राजकाज फिर ठीक चलने लगा। परन्तु रणबहादुरशाह नेपाल से बाहर भारत में जाकर शान्त न बैठ सके। उन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी की ओर से नियुक्त महाराज्यपाल लार्ड वैलेजली से सहायता की प्रार्थना की, जिससे वह अपना अन्याय से छिना हुआ राज्य वापस ले सकें। अंग्रेज़ लोग इस प्रकार की सहायता देने को सदा तैयार रहते थे। इससे उनके दोनों हाथों में लड्डू रहते थे। यदि उनकी सहायता पाने वाला पक्ष जीत जाता था, तो वह उनका सदा कृतज्ञ रहता था और उस कृतज्ञता को सांसारिक लाभों में रूपान्तरित करना अंग्रेज़ों को भलीभाँति आता था। यदि वह न जीते, तो अंग्रेज़ों का कोई नुकसान नहीं होता था।

अंग्रेज़ों ने रणबहादुरशाह को सहायता दी। उसके द्वारा रणबहादुरशाह ने काठमांडौ में भीमसेन थापा को खड़ा किया। भीमसेन थापा न केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वीर योद्धा, अपितु चतुर कूटनीतिज्ञ भी था। वह मौके की ताक में रहा। उसने दामोदर पांडेय के विरुद्ध यह प्रचार किया कि वह बालक राजा गीर्वाण-युद्धविक्रमशाह की आड़ में स्वयं नेपाल का शासक बन बैठा है और मनमानी कर रहा है। यह आक्षेप बिल्कुल निराधार ही हो, यह बात नहीं थी। जब राजा नासमझ बालक हो, तब स्वभावतः प्रधान मन्त्री को ही उसकी ओर से काम करना पड़ेगा। परन्तु भीमसेन थापा प्रभावशाली व्यक्ति था। उसे भारत में बैठे रणबहादुरशाह का समर्थन प्राप्त था। अतः उसे अपने प्रचार में सफलता मिली। दरबार के बहुत से प्रभावशाली सरदार उसके साथ हो गये। जब दामोदर पांडेय ने उसका दमन करना चाहा, तब संघर्ष हुआ, जिसमें भाग्य से भीमसेन थापा का साथ दिया। दामोदर पांडेय हार गया। तब भीमसेन थापा ने भूतपूर्व महाराज रणबहादुरशाह को फिर काठमांडौ आने और अपना राज्य संभालने का निमंत्रण दिया। आज वही महाराज रणबहादुरशाह काठमांडौ पधार रहे थे।

घुड़सवार सैनिकों की काफी बड़ी टुकड़ी लेकर भीमसेन थापा स्वयं उनके स्वागत के लिए दो मील दूर तक गया था। महाराज और उनके साथी पालकियों में आ रहे थे। इन पालकियों के दिखाई पड़ते ही सैनिकों ने "महाराज रणबहादुरशाह की जय हो" का तुमुल जयघोष किया। पास आने पर पालकियाँ रुकीं। महाराज पालकी से बाहर निकले। भीमसेन थापा ने आगे बढ़ कर उन्हें विनयपूर्वक प्रणाम किया और कहा: "आज आपके आगमन से यह भूमि धन्य हुई। लोग बड़ी अधीरता से आपके दर्शन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

महाराज ने भीमसेन थापा के कन्धे पर हाथ रख कर शाबासी सी देते हुए कहा: "यह तुम्हारी कर्तव्यनिष्ठा की सफलता है। विद्रोहियों ने अना-चारपूर्वक जिस राजसत्ता को हथिया लिया था, उसे तुमने फिर सही हाथों में पहुंचा दिया है। तुम्हारी यह सेवा सदा स्मरण रखी जायेगी।"

भीमसेन थापा और उसका अनुसरण करते हुए सैनिकों ने एक बार फिर महाराज का जयघोष किया। उसके साथ ही बाजे बजने लगे। महाराज फिर पालकी में सवार हो गये। बजते हुए वाद्यों और आगे-पीछे घुड़सवार सैनिकों के साथ यह दल नगर की ओर बढ़ा।

नगर में पहुंचने से पहले ही रास्ते के दोनों ओर लोगों की भीड़ मिलने लगी। सब लोग उच्च स्वर से "महाराज की जय हो", "भीमसेन थापा की जय हो" के नारे लगाते और पालकी पर फूलों की वर्षा करते। परन्तु महाराज ने एक बार भी पालकी से मुँह बाहर निकाल कर नहीं देखा। उनके लिए यह विश्वास करना कठिन था कि ये लोग, जिन्होंने चार वर्ष पहले अपने

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रवल विरोध के कारण उन्हें काठमांडौ से निकल जाने को विवश कर दिया था, ग्राज हृदय से उनका स्वागत कर रहे हैं। महाराज का मन कहता था कि उस दिन का इनका विरोध वास्तविक था ग्रौर ग्राज का यह स्वागत ग्रवास्तविक है, दिखावा मात्र है।

काठमांडौ के प्रमुख राजमार्ग पर धूमधाम से चलता हुग्रा यह जलूस हनुमान ढोका दरवार तक पहुंच गया। मार्ग में सभी नागरिकों ने ग्रपनी राजभक्ति प्रदर्शित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। फूलों के बोझ से पालकी भारी हो गई ग्रौर जय के नारों को सुनते-सुनते कान भनभनाने लगे। राजमहल पहुँच कर महाराज को कुछ चैन मिला।

हनुमान ढोका दरवार के वाहर ही राज्य के सभी भारदार उपस्थित थे। उन्होंने महाराज का बड़े प्रेम से स्वागत किया ग्रौर उनमें से प्रत्येक ने यह यत्न किया कि इस ग्रवसर पर उसकी उपस्थिति महाराज से ग्रलक्षित न रह जाये। महाराज ने भी उन सबसे भेंट की ग्रौर ग्रपने वापस लौट ग्राने पर हर्ष प्रकट किया।

× × ×

सार्वजनिक स्वागत समारोह से छुट्टी पाकर महाराज रणबहादुरशाह एकान्त में भीमसेन थापा के पास बैठे। उन्होंने हँसते हुए कहा : "थापा जी, राज्य का शासन ग्रब ग्रापको ही चलाना है। मैं तो संन्यासी हो गया हूँ। ग्रापके बुलाने पर ग्रा गया हूँ। पर विदेह जनक की तरह ही सिंहासन पर वैठूंगा। पद्मपत्रमिवाम्भसा (जल में कमल की तरह निर्लिप्त)।"

भीमसेन थापा के लिए यह बात ग्रप्रत्याशित नहीं थी, फिर भी महाराज के मुँह से इसे सुन कर उसे सन्तोष हुग्रा। उसने कहा : "मुझे तो ग्राप जो ग्रादेश देंगे, उसे पूरा करने के लिए मैं हर प्रकार से तत्पर हूँ। भगवान पशुपतिनाथ की कृपा ग्रौर ग्रापके प्रताप से शत्रु परास्त हुए हैं। ग्रब ग्राप जिस तरह चाहें, शासन कीजिये।"

शत्रु की वात सुनते ही रणबहादुरशाह को दामोदर पांडेय का स्मरण हो ग्राया; पूछा : "दामोदर पांडेय कहाँ है ?"

"कारागार में बन्दी है। उसके ग्रौर भी कई साथी कैद हैं।"

क्षण भर पुरानी स्मृतियों में डूबे रहने के बाद महाराज ने कहा : "ग्रोहो, कितना प्रपंची जीव है वह !"

"ग्रब तो सारा प्रपंच भूल गया है।"

"मैंने उसे प्रधान मन्त्री बनाया। पर कुछ ही समय में उसका दिमाग फिर गया। मैं उसे कठोर दंड देना चाहता हूँ।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

''उसका प्रधान मन्त्री पद छिन गया, यही क्या कम कठोर दंड है सरकार ?'' भीमसेन थापा ने महाराज को शान्त करने की चेष्टा की।

''नहीं नहीं। आपको पता नहीं है कि उसने मुझे कितना अपमानित और लांछित किया है। वह जिस तरह बढ़-बढ़ कर बातें करता था, उसे मैं कभी भूल नहीं सकता। उसका दंड उसे भुगतना होगा।''

इस मामले को और बढ़ाने से लाभ नहीं था। कुछ भी कहने से महाराज का क्रोध और उग्र ही होता। अतः भीमसेन थापा ने कहा : ''अब वह आपके वश में है। सरकार जैसा चाहेंगे, उसे वैसा ही दंड दिया जायेगा।'' फिर जैसे कोई महत्वपूर्ण बात याद आ गई हो, इस प्रकार महाराज को कुछ बोलने का अवसर दिये बिना ही उसने कहा : ''अच्छा, युवराज के विषय में क्या व्यवस्था की जाये ?''

सचमुच ही यह कठिन प्रश्न था। महाराज रणबहादुरशाह को गद्दी से हटा कर दामोदर पांडेय ने युवराज गीर्वाणयुद्धविक्रमशाह को महाराज घोषित कर दिया था। अब तक राजकाज गीर्वाणयुद्धविक्रम के नाम से ही चल रहा था। पर अब उसका संन्यासी और राजा जनक की तरह निःस्पृह पिता उस राजसिंहासन पर अधिकार करने आ पहुँचा था। गीर्वाणयुद्धविक्रम रणबहादुरशाह का प्रिय पुत्र था। वह अनुरागलक्ष्मी की सन्तान था। इस पुत्र को राज्य का अधिकार दिलवाने के लिए विक्षिप्त रणबहादुरशाह ने अपने ज्येष्ठ पुत्र रणोद्दीपशाह की हत्या करवा दी थी। पर इस समय प्रभुत्व की लालसा के वशीभूत होकर महाराज रणबहादुरशाह अपने उस पुत्र प्रेम को भी भूल बैठे। गीर्वाणयुद्धविक्रम पर उन्हें रोष नहीं था। वह अभी बालक ही था और इन सब बातों को समझने की उसकी उम्र नहीं थी। फिर भी रणबहादुरशाह ने उसे काठमांडौ में अपने पास रखना उचित नहीं समझा। उसके यहाँ रहने से फिर कभी कुछ बावैला खड़ा हो सकता था। अतः उन्होंने कहा : ''गीर्वाण को नुवाकोट भेज दीजिये। अभी उसकी पढ़ने-लिखने की उम्र है। वहाँ रह कर पढ़ेगा, लिखेगा।''

गीर्वाणयुद्धविक्रम की समस्या का समाधान करके महाराज फिर दामोदर पांडेय के प्रश्न को उठा बैठे। बोले : ''दामोदर पांडेय को खत्म ही करवा दीजिये।''

''उसके साथी बहुत से हैं। उसे मरवा देने पर वे शत्रुता ठान लेंगे और सदा बदला लेने की घात में रहेंगे।''

''यदि दामोदर पांडेय जीवित रहा, तो उसके नेतृत्व में उपद्रव करने की योजना बनाने में उन्हें आसानी होगी। पर नष्टे मूले नैव पत्रं न पुष्पम्। समूल नाश ही उचित उपाय है।''

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"फिर उसके साथियों का क्या करना होगा ?"

"साथी उसी के साथ जायेंगे। वे साथ क्यों छोड़ने लगे ?" महाराज ने कुछ विनोदपूर्वक कहा।

भीमसेन थापा ने और विरोध नहीं किया। उसे भी लगा कि प्रमुख पांडेयों का सफ़ाया कर देने से महाराज का रोष तो शान्त होगा ही, साथ ही उसका अपना मार्ग भी निष्कंटक हो जायेगा। उसने कहा : "सरकार ठीक कहते हैं। राजद्रोह के लिए कठोर दंड ही होना चाहिए, जिससे अन्य लोगों को भी शिक्षा मिले।"

उस दिन बात यहीं समाप्त हो गई। अगले ही दिन गीर्वाणयुद्धविक्रम-शाह को नुवाकोट भेज दिया गया। उसके दो दिन बाद दामोदर पांडेय और उसके तीन साथियों को प्राणदण्ड दे दिया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

21

गीर्वाणयुद्धविक्रमशाह

गीर्वाणयुद्धविक्रम की माँ का देहान्त तभी हो गया था, जब वह दो बरस का था। माँ की याद उसे धुँधली-सी ही थी। उसकी सौतेली माँ त्रिपुरसुन्दरी ने उसे माँ का स्नेह प्रदान किया था। वह उसी को माँ समझता और कहता था। पिता रणबहादुरशाह गीर्वाणयुद्धविक्रम को प्यार करते थे, परन्तु गीर्वाण को उनसे कुछ विरक्ति सी थी। वह उनसे दूर ही रहना चाहता था। यह भाग्य की विचित्र विडम्बना थी।

गीर्वाणयुद्धविक्रम सुन्दर, सरल और भावुक बालक था। रणोद्दीपशाह त्रिपुरसुन्दरी का अपना पुत्र था। उसके होते हुए भी गीर्वाणयुद्धविक्रम ने त्रिपुरसुन्दरी के हृदय में थोड़ा सा स्थान बना लिया था और उसके स्नेह का कुछ भाग प्राप्त कर लिया था। उसके पिता रणबहादुरशाह उसे युवराज बनाने के लिए कटिबद्ध थे। पर इस बात का पता बालक गीर्वाणयुद्धविक्रम को न था। न वह इसके महत्व और फलितार्थों को समझता था। यदि उसे पता होता और वह इसके फलितार्थ को समझता होता, तो निश्चय ही उसने अपने पिता से प्रार्थना की होती कि आप कृपा करके मुझे अपने इस स्नेह और कृपा से वंचित ही रखिये। जब उसकी हित कामना से रणबहादुरशाह ने रणोद्दीपशाह की हत्या करवा दी, तब भी छह-सात बरस के बालक गीर्वाण-युद्धविक्रम को उस हत्या का रहस्य किसी ने नहीं बताया। रणोद्दीपशाह की मृत्यु से उसे भी दुःख हुआ था और वह भी रोया था। त्रिपुरसुन्दरी को कुछ क्षण के लिए गीर्वाणयुद्धविक्रम से विरक्ति हुई थी, पर जब उसने उसे रोते देखा, तब वह समझ गई कि इस अबोध बालक पर रोष करना व्यर्थ है। पागल पिता ने ज़बरदस्ती ही एक दुष्कर्म का निमित्त इसे बना डाला है। उसके बाद तो ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों त्रिपुरसुन्दरी का वात्सल्य गीर्वाणयुद्धविक्रम पर ही उमड़ता गया। मातृहीन बालक और पुत्रहीना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माता में कुछ ऐसा सामंजस्य स्थापित हो गया कि दोनों ने एक दूसरे को अपना लिया ।

रणोद्दीपशाह तथा अन्य कुछ भारदारों की हत्या के मामले को लेकर जब सारा राजदरबार रणबहादुरशाह के विरुद्ध भड़क उठा और प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय के नेतृत्व में भारदारों ने रणबहादुरशाह को राजसिंहासन त्यागने और नेपाल से बाहर चले जाने को विवश किया, और गीर्वाणयुद्धविक्रम को राजसिंहासन पर बिठा दिया, तब महारानी त्रिपुरसुन्दरी अपने पति रणबहादुरशाह के साथ काशी चली अवश्य आईं, पर इसलिए नहीं कि हनुमान ढोका दरबार में उनके लिए जगह नहीं रही थी, बल्कि इसलिए कि पति का साथ देना वह अपने लिए आवश्यक समझती थीं ।

त्रिपुरसुन्दरी और चाहे जो हो, नासमझ नहीं थी । काशी में रह कर चार साल तक स्वामी निर्गुणानन्द के रूप में रणबहादुरशाह जो-जो प्रपंच करते रहे, उनमें से कोई भी त्रिपुरसुन्दरी की आँखों से छिपा नहीं था । मेजर नौक्स से उनकी जो राजनीतिक मंत्रणाएँ होती थीं ; मेजर नौक्स की मार्फत ईस्ट इण्डिया कम्पनी से रणबहादुरशाह को जो मोटी रकम आर्थिक सहायता के रूप में मिलती थी ; उस रकम का बड़ा भाग नेपाल में भीमसेन थापा के पास सैनिक और युद्ध सामग्री जुटाने के लिए भेजा जाता था ; और अन्त में मेजर नौक्स को नेपाल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का प्रतिनिधि बना कर काठमांडौ भेजा गया, जबकि असल में उसका काम नेपाल के शासन का तख्ता पलटना था; ये सब बातें त्रिपुरसुन्दरी को पूरे या अधूरे रूप में मालूम होती रहीं । इस प्रकार उसकी पतिभक्ति इहलौकिक दृष्टि से भी व्यर्थ नहीं रही । वह देख रही थी कि रणबहादुरशाह नेपाल को एक और बड़ी विपत्ति में फँसा रहे हैं । पर रणबहादुरशाह को समझाना-बुझाना व्यर्थ था । जंगली भैंसा समझाने से एक बार शायद मान जाये, पर रणबहादुरशाह मानने वाले नहीं थे ।

मेजर नौक्स के काठमांडौ पहुँचने के कुछ ही सप्ताह बाद त्रिपुरसुन्दरी की पतिभक्ति अचानक ही समाप्त हो गई और वह रणबहादुरशाह को काशी में ही छोड़ कर काठमांडौ पहुंच गई । उसके आ जाने से गीर्वाणयुद्धविक्रम को हार्दिक प्रसन्नता हुई । माता-पिता के अभाव में वह किसी को अपना न पाता था और कठपुतली की तरह राजा का अभिनय करना उसे प्रिय न था ।

त्रिपुरसुन्दरी ने देखा कि प्रधान मन्त्री दामोदर पांडेय और भीमसेन थापा में टक्कर होने ही वाली है । परिणाम क्या होगा, यह स्पष्ट पता नहीं चलता था । संघर्ष होने पर कौन भारदार किस पक्ष में जायेगा, यह निश्चित नहीं था । फिर भी त्रिपुरसुन्दरी ने दामोदर पांडेय को अंग्रेज़ी खतरे के प्रति सचेत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया और उसने तुरन्त ही मेजर नौक्स को नेपाल से बाहर निकल जाने का आदेश दिया। नौक्स को भारत लौटना पड़ा और भीमसेन थापा की दामोदर पांडेय का तख्ता पलटने की योजना कुछ समय के लिए स्थगित हो गई।

परन्तु काशी में बैठे रणबहादुरशाह से भीमसेन थापा को धन बराबर आता रहा और उसके द्वारा वह भारदारों को अपने पक्ष में करता रहा। उसने अपने भी बहुत से सैनिक जुटा लिये। अन्त में स्थिति को अनुकूल देख कर उसने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। मामूली सी झड़पें हुईं, जिनमें दामोदर पांडेय का पक्ष निर्बल रहा। भीमसेन थापा दामोदर पांडेय की अपेक्षा अधिक धूर्त और नीतिनिपुण सिद्ध हुआ। दामोदर पांडेय और उसके बहुत से साथी पकड़े गये और जेल में डाल दिये गये।

रानी त्रिपुरसुन्दरी ने दामोदर पांडेय और भीमसेन थापा के बीच हुए संघर्ष में किसी पक्ष का साथ नहीं दिया था। उसका विचार था कि ये दोनों राजकुल के तो भक्त ही हैं। संघर्ष उनका आपस का है। फिर भी उसकी सहानुभूति दामोदर पांडेय के साथ थी, क्योंकि वह गीर्वाणयुद्धविक्रम का समर्थक था। भले ही इसका परिणाम यह होता था कि बालक राजा के होते हुए वास्तविक शासन सत्ता प्रधान मन्त्री के हाथ में रहती थी, फिर भी यह स्थिति उससे अच्छी थी, जो रणबहादुरशाह के राजसिंहासन पर रहते होती। दामोदर पांडेय को प्रधान मन्त्री पद से हटा देने के बाद भीमसेन थापा यदि चाहता, तो गीर्वाणयुद्धविक्रम को ही राजा बनाये रख कर स्वयं प्रधान मन्त्री बन कर शासन करता रह सकता था। परन्तु उसे यह अधिक उपयोगी जान पड़ा कि भारत से रणबहादुरशाह को वापस बुलाया जाये और फिर राजा बनाया जाये। इससे वह रणबहादुरशाह द्वारा दी गई आर्थिक सहायता से भी उऋण हो जायेगा और रणबहादुरशाह पर अहसान भी जता सकेगा।

रणबहादुरशाह धूमधाम से नेपाल लौटे; अपने पुत्र को गद्दी से हटा कर स्वयं राजसिंहासन पर बैठे, और उनके आदेश से दामोदर पांडेय तथा उसके कई साथियों को प्राणदण्ड दिया गया। रानी त्रिपुरसुन्दरी पर भी उनका रोष कम न था। उसकी सब सेवा और त्याग को वह भूल चुके थे; बस एक बात याद रही थी कि वह उन्हें काशी में अकेला छोड़ कर लौट आई थी। वह फिर उसी तरह उपेक्षित होकर अपने दिन बिताने लगी, जिस तरह पहले अनुरागलक्ष्मी के प्रभुत्व के दिनों में बिताया करती थी। राजमहल का वातावरण धुएँ से भरे घर के समान घुटा-घुटा सा हो गया।

रणबहादुरशाह ने राज्य की बागडोर पूरी तरह भीमसेन थापा के हाथ में छोड़ दी, पर अपनी बागडोर पूरी तरह अपने हाथ में रखी। अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उच्छृंखलता पर उन्होंने कोई बन्धन स्वीकार नहीं किया। भीमसेन थापा ने उन पर कोई बन्धन थोपने की चेष्टा इसलिए नहीं की, क्योंकि उसे अन्य क्षेत्रों में मनमानी करने की छूट थी।

यह स्थिति तीन साल चली। बहुत चली। जिनको यह स्थिति चुभती थी, वे बहुत थे। कुछ को रणबहादुरशाह की उच्छृंखलता कष्ट देती थी, तो बहुत से लोगों को भीमसेन थापा की दिनोंदिन बढ़ती शक्ति से ईर्ष्या होती थी। जिन लोगों ने दामोदर पांडेय से संघर्ष के समय भीमसेन थापा का साथ दिया था, वे भी अब उसके असीम प्रभुत्व से जलने लगे थे।

यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता कि कहाँ-कहाँ योजनाएँ बनीं और कहाँ-कहाँ षड्यन्त्र हुए, परन्तु हुआ यह कि एक दिन दिनदहाड़े राजमहल में रणबहादुरशाह की हत्या कर दी गई।

रणबहादुरशाह के लिए आँसू बहाने वाला कोई नहीं था। यों औपचारिक रूप से सारे राज्य में शोक मनाया गया; महारानी त्रिपुरसुन्दरी ने भी सधवाओं का वेश त्याग कर विधवाओं का सारा वेश धारण किया; विलाप भी किया, किन्तु जिस पति से उन्हें सुख कम और दुःख अधिक मिला था, उसकी मृत्यु से उन्हें असह्य वेदना नहीं हुई। उसके साथ सती होने का विचार उनके मन में नहीं आया। बालक गीर्वाणयुद्धविक्रम को नुवाकोट से वापस बुलाया गया, क्योंकि राजसिंहासन का वही एक उत्तराधिकारी था। त्रिपुरसुन्दरी राजमाता के रूप में उसकी संरक्षिका बनीं। राजमाता ने शासन में विशेष उलट-फेर करना नहीं चाहा। भीमसेन थापा प्रधान मन्त्री थे। वही प्रधान मन्त्री बने रहे। उन्होंने हवा का रुख देख लिया था और उसके अनुसार राजमाता के साथ मिल कर चलने में ही अपना हित समझा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

22

अंग्रेज़ रैज़ीडैंट

गीर्वाणयुद्धविक्रम, राजमाता त्रिपुरसुन्दरी देवी और प्रधान मन्त्री भीमसेन थापा की आपस में खूब पटी। गीर्वाणयुद्धविक्रम बालक था और राजमाता का आज्ञाकारी पुत्र था। भीमसेन थापा कुशल योद्धा और निपुण राजनीतिज्ञ था। उसके नेतृत्व में कुछ ही वर्षों में नेपाल शक्तिशाली बन गया। नेपालियों ने अपने आसपास के प्रदेशों पर धावे बोल कर उन्हें जीत लिया। दक्षिण-पश्चिम में उन्होंने न केवल कुमाऊँ और गढ़वाल को जीत लिया, बल्कि हिमाचल के पहाड़ी राज्यों, काँगड़ा आदि को जीतते हुए दूर सतलुज के किनारे तक उन्होंने अपना राज्य जमा लिया। यह नेपाल का चरम उत्कर्ष का काल था। इस उन्नति ने प्रतिद्वन्द्वियों की ईर्ष्या भरी दृष्टि को आकृष्ट किया। भारत पर छा रहे अंग्रेज़ों ने नेपालियों से उलझने की ठानी।

गीर्वाणयुद्धविक्रम और भीमसेन थापा दोनों ही महत्वाकांक्षी पुरुष थे। हिमालय के पहाड़ी प्रदेशों में प्राप्त विजयों के कारण उनके हौसले बहुत बढ़ गये थे। भारत और नेपाल के बारे में अंग्रेज़ों के मनसूबों का ज्ञान उन्हें था। उन्हें मालूम था कि देर-सवेर में उन्हें इन परदेशी डाकुओं से लड़ना ही पड़ेगा।

जब दोनों पक्ष लड़ना चाहें, तब लड़ाई होते क्या देर लगती है? सन् 1814 के नवम्बर मास में अंग्रेज़ों ने नेपाल के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और आधुनिक शस्त्रों से सज्जित भारी सेनाओं ने एक साथ पाँच स्थानों से नेपाल राज्य पर हमला कर दिया। नेपाली सैनिकों ने हर जगह वीरतापूर्वक उनका मुकाबला किया और कई बार उन्हें बुरी तरह हरा कर पीछे हटने को भी विवश कर दिया। परन्तु सारे भारत में फैले अंग्रेज़ी राज्य के साधन छोटे से नेपाल की तुलना में बहुत अधिक थे। जिन भारतीय राजाओं से

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भीमसेन थापा ने सहयोग माँगा था, वे हिचकते रहे। उल्टे, अनेक पहाड़ी राजाओं को अंग्रेज़ों ने धन का प्रलोभन देकर अपने पक्ष में कर लिया।

एक वर्ष तक यह युद्ध कई मोर्चों पर चलता रहा। अंग्रेज़ों की एक सेना हार जाती, तो उसका स्थान लेने के लिए दूसरी नई सेना आ पहुंचती। एक सेनाध्यक्ष हार जाता, तो उसे पदच्युत करके दूसरा सेनाध्यक्ष भेजा जाता। नेपाली सेना संख्या में कम थी और उसके पास आधुनिक ढंग के हथियार भी नहीं थे। भारतीयों को भारतीयों के विरुद्ध खड़ा करने की विद्या अंग्रेज़ों को भलीभाँति आती थी। अतः बहुत थोड़े अंग्रेज़ सैनिकों का खून बहा कर ही अंग्रेज़ों ने नेपालियों को हरा दिया। एक के बाद एक मोर्चे से नेपालियों को पीछे हटना पड़ा और अंग्रेज़ों ने नेपाल के काफ़ी बड़े प्रदेश पर अधिकार कर लिया। जब भीमसेन थापा ने देखा कि प्रबल शत्रु के मुकाबले में विजय की कोई आशा नहीं है, तब उन्होंने लाचार होकर सन्धि की बातचीत चलाई। सन् 1815 के दिसम्बर मास में नेपाल और अंग्रेज़ों के बीच सिगौली की सन्धि हो गई, जिसके अनुसार नेपाल राज्य का बहुत-सा प्रदेश उससे छिन गया। इस सन्धि की एक प्रमुख शर्त यह भी थी कि नेपाल को काठमांडौ में एक अंग्रेज़ रैज़ीडैंट रखना पड़ेगा।

अंग्रेज़ नेपाल में अपना एक प्रतिनिधि (रैज़ीडैंट) रखने के लिए बहुत समय से प्रयत्न करते रहे थे, परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली थी। नेपाल दरबार विदेशी प्रतिनिधि की सूरत से ही भड़कता था।

अंग्रेज़ी नीति सभी जगह यह रही कि वे आपस में लड़ने वाले स्थानीय राज्यों में से किसी एक के साथ मिल जाते और लड़ाई में जीत जाने पर पुरस्कार के रूप में या लूट के हिस्से के रूप में उस साथी से धन और राज्य का कुछ प्रदेश ले लेते। विजेता भी उन्हें खुशी से धन और भूमि दे देता, क्योंकि वह समझता कि अंग्रेज़ों की सहायता से ही उसे विजय मिली है।

पाँव पसारते जाने का यह गुर अंग्रेज़ों को इतना पसन्द आया था कि वे इस बात की प्रतीक्षा नहीं करते थे कि देशी राजा आपस में लड़ें, तो हम उससे लाभ उठायें। कुछ समय बाद तो उन्होंने यत्नपूर्वक देशी राजाओं को आपस में लड़ाना शुरू कर दिया था और उनकी चाल खूब सफल हुई थी।

अंग्रेज़ों का प्रयत्न यह रहता था कि जब भी, जैसे भी संभव हो, दूसरे राज्य में अपना एक प्रतिनिधि (रैज़ीडैंट) रख दिया जाये। कहने को यह रैज़ीडैन्ट व्यापारिक तथा राजनीतिक सम्बन्धों की सुविधा के लिए होता था, परन्तु वस्तुतः इसका काम होता था उस राज्य में बैठ कर वहां के शासक के विरुद्ध एक विरोधी दल तैयार करना। पहला प्रयत्न यह किया जाता था

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कि इन विरोधियों का हौआ दिखा कर शासक को अपनी मुट्ठी में रखा जाये और उससे मनचाही सुविधाएँ प्राप्त की जायें। यदि किसी कारण कोई शासक अंग्रेज़ों की अनुचित मांगों को मानने से इन्कार कर देता था, तो रैज़ीडैन्ट विरोधी पक्ष को भड़का कर शासक का तख्ता पलटवा देता था। प्रचार यह किया जाता था कि उस राज्य में क्रान्ति हो गई है। नया सत्तारूढ़ होने वाला दल अंग्रेज़ों की मांगों को खुशी से स्वीकार कर लेता था।

यह कहानी भारत के छोटे-बड़े अनेक राज्यों में अनगिनत बार दुहराई जा चुकी थी। मज़े की बात यह है कि यह कोई गुप्त रहस्य नहीं था। सब कोई इसे जानते थे। इसके दुष्परिणाम को भी जानते थे। उसके बाद भी वे इस चाल में फंसते थे। अपने तात्कालिक निजी स्वार्थ को पूरा करने के लिए वे अपने और अपने राज्य के स्थायी हित को भूल जाते थे। सच तो यह है कि कोई भी शासक अपने यहां स्वेच्छा से अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट को रखना पसन्द नहीं करता था। पर परिस्थितियां ऐसी बन जाती थीं कि चाहते न चाहते उसे अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट को रखने की स्वीकृति देनी ही पड़ती थी। अंग्रेज़ लोग भी इस मामले में अधीरता या जल्दबाज़ी से काम न ले कर कुशल मछलीमार की तरह अवसर की प्रतीक्षा करते और अवसर आने पर उससे लाभ उठाने में कभी न चूकते।

महाराज पृथ्वीनारायणशाह और उनके पुत्र सिंहप्रतापशाह दोनों ही अंग्रेज़ों को घृणा की दृष्टि से देखते थे। घृणा का कारण यही था कि वे अंग्रेज़ों की कुटिल और विश्वासघातपूर्ण चालों को भली भाँति समझते थे और ऐसे लोगों को दूर से ही नमस्कार करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने राज्य से तो ईसाई धर्म प्रचारकों को निकाल कर बाहर कर ही दिया, उन्होंने तिब्बत और चीन के शासकों से भी अनुरोध किया कि वे भी अपने यहां ईसाई प्रचारकों को न टिकने दे। ऐसे दूरदर्शी और दृढ़ शासकों के रहते नेपाल में अंग्रेज़ों की दाल गलनी कठिन थी।

महाराज रणबहादुरशाह के शासन काल में सन् 1792 में कप्तान कर्कपैट्रिक अंग्रेज़ों के व्यापारिक प्रतिनिधि बन कर काठमांडौ में रहने गये थे। परन्तु वहां उन्होंने नेपाल के सभी अधिकारियों का रुख इतना प्रतिकूल पाया कि वह एक वर्ष में ही अपना बोरिया-बधना समेट कर कलकत्ता लौट आये।

सन् 1802 में मेजर डबलू-डी-नौक्स नेपाल से निर्वासित होकर काशी में रह रहे रणबहादुरशाह की प्रेरणा पर अंग्रेज़ों के प्रतिनिधि बन कर काठमांडौ गये। वह व्यापारिक प्रतिनिधि बन कर गये थे, पर वस्तुतः उनका उद्देश्य राजनीतिक था। वह दामोदर पांडेय के पक्ष को दुर्बल करने और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भीमसेन थापा को सबल बनाने के उद्देश्य से वहां गये थे। पर उनका वह भेद खुल गया और उन्हें तुरत फुरत नेपाल से निकल आना पड़ा। रणबहादुर-शाह के फिर राजा बन जाने पर भी अंग्रेज़ काठमांडौ में अपना रैज़ीडैन्ट नहीं रख सके, क्योंकि भीमसेन थापा अंग्रेजों की चाल को भांपते थे और उनका दूर रहना ही भला समझते थे। पर अब इस सिगौली की सन्धि से यह रैज़ीडैन्ट उन्हें रखना पड़ रहा था।

इस पराजय और अपमानजनक सन्धि से मनस्वी गीर्वाणयुद्धविक्रम-शाह को गहरा मानसिक आघात पहुंचा। अपने पिता रणबहादुरशाह के विपरीत वह भावुक और विवेकशील पुरुष थे। सिगौली की सन्धि के कुछ सप्ताह बाद ही उनका देहावसान हो गया। यों कहने को उनकी मृत्यु बीमारी से हुई, पर वस्तुतः पराजय का आघात ही उनकी मृत्यु का असली कारण था; बीमारी तो केवल निमित्त बन गई थी। उस समय उनकी आयु केवल बाईस वर्ष थी।

गीर्वाणयुद्धविक्रम की मृत्यु के समय उसका पुत्र राजेन्द्रवीरविक्रम केवल तीन वर्ष का था। उसी का राज्याभिषेक किया गया। राजमाता त्रिपुरसुन्दरी अब राजदादी बन गई। अपने पौत्र की संरक्षिका बन कर वह उसी तरह राजकाज चलाने लगी, जिस तरह रणबहादुरशाह की मृत्यु के बाद चलाती थी। प्रधान मंत्री भीमसेन थापा ही रहे। उनका त्रिपुरसुन्दरी के साथ राजनीतिक तालमेल बैठ गया था, जिससे दोनों में कभी टकराव नहीं होता था। इसीलिए यह कह पाना कठिन था कि इन दिनों शासन की वास्तविक शक्ति किसके हाथ में थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

23

राजेन्द्रवीरविक्रमशाह

पुरुष को एक ही समय में दो पत्नियाँ रखनी चाहिएं? या उसे एक पत्नीव्रती होना चाहिए? इस विषय में लोगों में अवश्य ही मतभेद रहेगा। बहुत-से लोग एक से अधिक पत्नियां रखने का समर्थन कर सकते हैं। परन्तु सन् 1817 में 3 वर्ष की आयु में नेपाल के राजसिंहासन पर बैठने वाले राजा राजेन्द्रवीरविक्रमशाह उन लोगों में नहीं थे। यह ठीक है कि उनके दो विवाह हुए थे और उनकी दो रानियां थीं : साम्राज्यलक्ष्मी देवी और राज्य-लक्ष्मी देवी, परन्तु वे दो विवाह उनकी इच्छा या सहमति से नहीं हुए थे, बल्कि उनकी दादी त्रिपुरसुन्दरी देवी ने अपना चाव पूरा करने के लिए कर दिये थे। दादी का यह चाव पौत्र को बहुत पसन्द नहीं आया। इसलिए दो रानियां होते हुए भी उनका मन बड़ी रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी से ही अधिक मिलता था। जब तक बड़ी रानी जीवित रही, तब तक छोटी रानी बिल्कुल उपेक्षित सी रही।

राजेन्द्रवीरविक्रमशाह गोरखा राजवंश के एकमात्र अंकुर रह गये थे। इसलिए राजदादी त्रिपुरसुन्दरी देवी उनकी कम से कम एक सन्तान को अपनी आंखों से देख जाना चाहती थीं। भगवान ने उनकी यह साध पूरी कर दी। सन् 1829 में जब राजेन्द्रवीरविक्रमशाह की आयु लगभग 16 वर्ष की थी, बड़ी रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी ने एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह रखा गया।

जब तक राजदादी जीवित रहीं, तब तक नेपाल के शासन की बागडोर पूरी तरह उनके हाथ में रही। भीमसेन थापा उनके प्रधान मंत्री रहे। उन्होंने किसी अन्य प्रतिद्वन्द्वी को सिर उठाने का अवसर नहीं दिया। उन्होंने राज्य के प्रमुख पदों पर अपने इष्ट बन्धुओं की नियुक्ति करके अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली थी, पर साथ ही उन्होंने बहुत से लोगों के मन में ईर्ष्या की आग भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सुलगा दी थी। पांडेय लोग दामोदर पांडेय और उसके साथियों की हत्या के लिए भीमसेन थापा को ही ज़िम्मेदार माने हुए थे और बदला लेने के लिए मौके की ताक में थे। और भी बहुत-से लोग भीमसेन थापा की बढ़ती हुई शक्ति और प्रभाव से खार खाने लगे थे।

सन् 1832 में राजदादी त्रिपुरसुन्दरी देवी का स्वर्गवास हो गया। कुछ ही दिन बाद नेपाल में थोड़े-थोड़े अन्तर पर चार बड़े भूकम्प आये। इन भूकम्पों में अनेक प्राचीन प्रासाद धराशायी हो गये।

इन भौगोलिक भूकम्पों से भी बड़ा भूकम्प नेपाल की राजनीति में आया। त्रिपुरसुन्दरी की मृत्यु से भीमसेन थापा की शक्ति और प्रभुत्व के प्राचीन और विशाल प्रासाद में बड़ी-बड़ी तरेरें पड़ गईं, जिनके कारण उसका धराशायी होना भी सुनिश्चित हो गया। शासन की शक्ति बीसवर्षीय राजा राजेन्द्रवीरविक्रमशाह ने अपने हाथ में ले ली। परन्तु उस शक्ति का प्रयोग करने लायक योग्यता और अनुभव उसमें था नहीं। बड़ी रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी बुद्धिमती और तेजस्विनी रमणी थी। शीघ्र ही उसने राजेन्द्रवीरविक्रमशाह को इस तरह अपने बस में कर लिया कि वह केवल नाम को ही राजा रह गये। वस्तुतः शासन बड़ी रानी की इच्छा से चलने लगा। राजा राजेन्द्रवीरविक्रमशाह ने भी इसमें सन्तोष ही अनुभव किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

24

रणजंग पांडेय का कुचक्र

बड़ी रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी अपने कक्ष में बैठी रणजंग पांडेय से राजनीति की चर्चा में व्यस्त थीं। रणजंग पांडेय कुछ आवेश में था ; वह कह रहा था : "सरकार, दामोदर पांडेय और उनके साथियों की हत्याओं को हम भूले नहीं हैं। उस अपमान और अत्याचार को याद करके मुझे रात-रात भर नींद आती। किस तरह बिना बात बर्बरतापूर्वक उन सबका वध कर दिया गया ! इन पापी थापाओं से उस नीचता का बदला लेने का अवसर अब आ रहा है।"

रानी का सुन्दर मुख क्रोध और प्रतिशोध की भावना से तनिक विकृत हो गया। स्पष्ट था कि रणजंग जो कुछ कह रहा था, वह यह जानते हुए ही कह रहा था कि रानी उसके साथ पूरी तरह सहमत है। बड़ी रानी पांडेय परिवार की कन्या थी। रणबहादुरशाह के विरुद्ध हुए विद्रोह का दमन करने में भीमसेन थापा ने जो कठोरता बरती थी, उसका घाव पांडेय परिवार के सभी लोगों की भांति रानी के मन में भी ताज़ा बना हुआ था। भीमसेन थापा अभी तक भी राज्य का प्रधान मंत्री था और कुशल प्रधान मंत्री था।

"सबसे पहले तो हमें प्रधान मंत्री से छुटकारा पाना चाहिए" रानी ने कहा। "परन्तु सब काम धीरे-धीरे और शान्ति से होना चाहिए, जिससे कोई उत्पात खड़ा न हो।"

"धीरे-धीरे और शान्ति से कोई काम नहीं हुआ करता। सरकार रानी हैं। अधिकार देना या छीन लेना सरकार के बस की बात है। प्रधान मंत्री को उसके पद से हटा दीजिये। उसके बाद सारा मामला अपने आप ठीक हो जायेगा।"

"तुममें यही तो दोष है। जोश में तुम होश गँवा बैठते हो। प्रधान मंत्री और सेनापति होने के नाते भीमसेन थापा का सेना पर नियंत्रण है। एकाएक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिना बात उसे प्रधान मंत्री पद से हटा देने से मामला बिगड़ सकता है। तुम्हें तो मालूम है कि प्रजा में उसका कितना मान है।''

''सारा मान गद्दी के कारण होता है। प्रधान मंत्री पद से हटे हुए भीमसेन थापा की कीमत सड़े कद्दू जितनी भी न होगी। सरकार एक बार हिम्मत करके उसे इस पद से हटा भर दें, फिर देखें कि उसका साथ कौन देता है?''

''ठीक है। पर इस पद से हटाने के लिए कोई आधार होना चाहिए। वह आधार जितना बढ़िया होगा, उतना ही हमारा पक्ष प्रबल रहेगा। थोड़ा-सा धैर्य रखो। मैं कोई बढ़िया उपाय ढूँढ निकालूंगी। ऐसा उपाय कि सांप मर जाये और लाठी भी न टूटे।''

''धैर्य तो हमने तीस बरस से रखा हुआ है। धैर्य न होता, तो कभी की आत्महत्या कर ली होती। इन तीस बरसों में कितनी लांछना सही है हमने! तीस बरस पहले हमीं लोग इस राज्य के प्रधान मंत्री थे। पर इन तीस बरसों में हम पांडवों का सा अज्ञातवास करते रहे हैं। तीस बरस क्या कम होते हैं? अभी और न जाने कितना धैर्य धारण करना पड़ेगा?'' रणजंग की अकुलाहट उसकी वाणी की अपेक्षा भी उसके हाव-भाव से अधिक प्रकट हो रही थी। उसे लक्ष्य करके उसे शान्त करने के उद्देश्य से रानी ने कहा: ''नहीं, बस अब बहुत देर नहीं है। पाप का घड़ा भर चुका है। ज्योंही मौका मिला, त्योंही मैं उसे ठोकर मार कर फोड़ दूंगी। थापाओं को अपने किये का फल भुगतना पड़ेगा।''

''थापाओं ने जो कुछ किया है, उसका बदला तो उन्हें मौत के घाट उतार कर भी नहीं लिया जा सकता। पर अपने जी की जलन मिटाने के लिए हम इससे अधिक कर भी क्या सकते हैं?'' रणजंग ने वैर की प्रचंडता और सामर्थ्य की अल्पता जताते हुए कहा।

''इससे अधिक किया जा सकता है। उन्हें पद से हटाकर अपमानित और तिरस्कृत किया जा सकता है। उनकी सम्पत्ति छीन कर उन्हें राह का भिखारी बनाया जा सकता है। कारागार में डाल कर उन्हें अपनी करतूतों पर पश्चात्ताप करने को विवश किया जा सकता है।''

''इतना तो अवश्य ही कीजिये। पर भगवान जानता है कि इससे भी मेरे हृदय में धधकती हुई अपमान की ज्वाला पूरी तरह शान्त नहीं होगी। मैं तो...''

रणजंग का वाक्य अधूरा ही रह गया; दरवाज़े को किसी ने धीरे से थपथपाया। रानी ने प्रभुता भरे स्वर में कहा: ''कौन? आओ।''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वार खोल कर एक दासी ने भीतर झांका। उसकी दृष्टि बोलने की अनुमति-सी मांगती प्रतीत हो रही थी। उसका चेहरा घबराया हुआ था। वह समझ नहीं पा रही थी कि इस समय उसका कुछ कहना उचित होगा या नहीं। उसे इस दुविधा में से उबारते हुए बड़ी रानी ने पूछा : "क्या बात है ? कहती क्यों नहीं ?"

दासी ने बहुत ही विनीत स्वर में कहा : "छोटे कुंवर जी की तबियत बहुत खराब है। छोटी रानी जी ने आपको बुला लाने को कहा है।"

रानी ने एक दृष्टि रणजंग की ओर डाली ; फिर दासी की ओर देखते हुए पूछा : "क्या हुआ है छोटे कुंवर को ?"

"पता नहीं सरकार, क्या हुआ ! खूब तेज़ बुखार है और अब गये, तब गये का हाल हो रहा है। इसीलिए जल्दी बुलाया है आपको।"

सुन कर रानी बहुत विचलित हो उठी। रणजंग पांडेय भी व्यस्त हो उठे। रानी ने कहा : "अच्छा रणजंग जी, इस समय तो आप जाइये। मैंने जो कुछ कहा है, उसे भूलियेगा नहीं। धीरज से ही सारा काम बनेगा। अच्छा, मैं जा कर ज़रा देखती हूं कि आखिर छोटे कुंवर को हो क्या गया है।"

यह कहते हुए वह उठ खड़ी हुई। रणजंग पांडेय भी उठ कर खड़े हो गये और रानी के साथ ही कमरे से बाहर निकल आये। रानी दासी के साथ छोटे राजकुमार को देखने चलीं और रणजंग पांडेय भविष्य की योजनाएं बनाते हनुमान ढोका दरबार से बाहर निकल आये।

× × ×

रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी और रणजंग पांडेय में जो कुछ बातचीत हुई थी, वह उसी दिन शाम को राज्य के प्रधान मंत्री भीमसेन थापा को पता चल गई। जो दासी छोटे राजकुमार की बीमारी का समाचार ले कर आई थी, उसने रानी के कक्ष में प्रवेश करने से पहले बाहर खड़े हो कर भीतर की स्थिति भांपने का प्रयत्न किया था। रणजंग द्वारा उत्तेजित स्वर में कहे गये वाक्य तो उसे अनायास ही सुनाई पड़ गये थे। उन्हें सुन कर उसकी उत्सुकता जाग उठी थी और उसने कान लगा कर मन्द स्वर में कही गई रानी की बातों को भी सुन लिया था। यदि रानी के नाम भेजा गया छोटी रानी का सन्देश इतना महत्वपूर्ण न होता, तो वह और भी कुछ देर तक इस संवाद को सुनती, परन्तु छोटे राजकुमार की बीमारी सचमुच इतनी चिन्ता-जनक थी कि वह अधिक देर तक प्रतीक्षा नहीं कर सकती थी। फिर भी जितना कुछ उसने सुन लिया था, वह उसने प्रधानमंत्री तक पहुंचा दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसकी तरह अन्य कई दासियों को प्रधान मंत्री ने राजमहल के भेद इकट्ठा करने का काम सौंपा हुआ था।

यह समाचार सुन कर प्रधान मंत्री भीमसेन थापा के मस्तक पर चिन्ता की कुछ रेखाएं झलक उठीं। अब उनका शरीर वृद्ध हो चला था। जिस प्रबल पराक्रम और कठोरता के साथ उन्होंने तीस वर्ष पूर्व पांडेय विद्रोहियों का दमन कर दिया था, वह अब उनमें पहले जैसी न रही थी। समय के साथ परिस्थितियों में भी बहुत परिवर्तन हो गया था। उनका उपकार मानने वाले महाराज रणबहादुरशाह अब नहीं थे। उनकी बात को कभी न टालने वाली राजमाता (जो बाद में राजदादी बन गई थीं) त्रिपुरसुन्दरी देवी भी अब नहीं रही थीं। महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह भी अब इतने छोटे नहीं रहे थे कि हर बात को चुपचाप मानते रहें। भले ही किसी बात की अच्छाई-बुराई को समझने लायक बुद्धि उनमें नहीं थी, परन्तु राजा होने का अहंकार और यौवन का मद उनमें भर उठा था। राजमहल षड्यंत्रों का अखाड़ा बन गया था।

सबसे बड़ी बात यह हुई थी कि महाराज बड़ी रानी के इशारे पर नाचते थे। बड़ी रानी पांडेयों के हाथ की कठपुतली बनी हुई थी। काल चक्र भीमसेन थापा के प्रतिकूल जा रहा था। यों राज्य में उनकी स्थिति मज़बूत थी। सभी प्रमुख पदों पर उनके अपने विश्वस्त व्यक्ति नियुक्त थे। परन्तु राजा और रानी का विरोध करने का कोई उपाय नहीं था।

राजदादी त्रिपुरसुन्दरी देवी ने भीमसेन थापा की बस एक ही बात नहीं मानी थी—वह थी साम्राज्यलक्ष्मी देवी के साथ राजेन्द्रवीरविक्रमशाह का विवाह। भीमसेन थापा इस विवाह के हक में नहीं थे। उन्होंने राजदादी को मनाने की भरसक चेष्टा की थी कि वह इस सम्बन्ध को न करें। पर नीति-कुशल राजदादी थापाओं और पांडेयों का संतुलन बनाये रखना चाहती थीं। राजवंश की सुरक्षा इसी में थी। इसलिए उन्होंने ज़िद करके यह विवाह करवाया।

अब राजा-रानी बड़े हो गये। त्रिपुरसुन्दरी देवी रहीं नहीं। इसलिए भविष्य की कल्पना करके भीमसेन थापा का मुख आशंका से मलिन हो उठा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

25

भीमसेन थापा चले

तीन-चार दिन बीमार रहने के बाद 24 जुलाई 1837 को बड़ी रानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी के सबसे छोटे पुत्र समरेन्द्र की मृत्यु हो गई। उन दिनों चिकित्सा विज्ञान का यथेष्ट विकास न होने और आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध न होने के कारण रोग द्वारा मृत्यु कोई अप्रत्याशित वस्तु नहीं थी। पुत्र की मृत्यु से बड़ी रानी शोकाकुल हो उठीं। किन्तु इस दुःख को सहन करने के सिवाय उपाय क्या था? विधाता की इच्छा पर किसी का क्या वस चलता है!

बड़ी रानी के शोक में सभी ने सहानुभूति जताई। रणजंग पांडेय को दुःख सबसे अधिक हुआ था। वह नित्य नियम से आता और देर तक बड़ी रानी के पास बैठता। तीन-चार दिन बीत जाने पर जब रानी के शोक का आवेग कुछ कम हो गया, तब मौका देख कर रणजंग पांडेय ने कहा: "जो कुछ होना था, वह तो, सरकार, हो ही गया। अगर सरकार उचित समझें, तो इस मौके से काम निकाला जा सकता है।"

बड़ी रानी ने सिर उठा कर प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देखा।

रणजंग पांडेय कुछ क्षण को हिचका, जैसे वह अब भी असमंजस में हो कि वह जो कुछ कहने वाला है, उसे कहना उचित होगा या नहीं। परन्तु बात छेड़ देने के बाद अब रुक जाने की गुंजाइश नहीं थी। अतः बोला: "मेरा कहना है सरकार, कि छोटे कुँवर की मृत्यु की ज़िम्मेदारी भीमसेन थापा पर क्यों न डाली जाये?"

सुन कर रानी के शोक का आवेग और कम हो गया। उसका मस्तिष्क सचेत हो कर राजनीति के दाँव-पेंचों में दौड़ लगाने लगा। वह बोली: "कैसे?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"बात बिल्कुल साफ़ है। तीस बरस तक प्रधान मंत्री रह कर नेपाल पर राज्य करने के बाद भीमसेन थापा को राज्य से इतना मोह हो गया था कि जब तीन साल पहले उसे राजदूत बना कर कलकत्ता भेजा गया, तब उसने ऊपर से तो प्रकट नहीं किया, पर मन ही मन बहुत बुरा माना। राजपरिवार पर उसे बहुत क्रोध आया और उसने मौका मिलने पर बदला लेने का निश्चय किया। अब कुछ ही दिन पहले वह वापस काठमांडौ लौटा है। उसी ने छोटे कुँवर को विष दिलवाया है, जिससे वह फूल-सा सुकुमार बालक परलोक सिधार गया।"

बड़ी रानी कुछ देर सोचती रही; फिर बोली : "पर इस कल्पना को विश्वसनीय कैसे बनाया जाये ?"

"सरकार इसे कल्पना न कहें। यह सचाई है। छोटे कुँवर को विष दिया गया है और वह भीमसेन थापा ने ही दिलवाया है। अन्य कोई भी व्यक्ति ऐसा निकृष्ट कार्य क्यों करने लगा! भीमसेन थापा को रोष था, इसीलिए उसने किया।"

अब बड़ी रानी को भी यह विवरण विश्वसनीय लगने लगा। उसने कहा : "एक व्यक्ति ऐसा तैयार करना होगा, जो यह स्वीकार करे कि उसने छोटे कुँवर को विष दिया है और विष देने के लिए भीमसेन थापा ने कहा और था।"

"ऐसा व्यक्ति मैंने पहले ही तैयार कर लिया है। वह आपके ही महल की दासी है। पूछने पर वह अपना अपराध स्वीकार करेगी और अन्य षड्यंत्रकारियों का भी भंडा फोड़ेगी।"

"विचार तो अच्छा है। आज थोड़ा और सोचूंगी और कल बताऊंगी।"

× × ×

अगले दिन बड़ी रानी रणजंग पांडेय को साथ ले कर महाराज के कक्ष में पहुंची। उन दोनों को साथ आया देख कर महाराज को कुछ आश्चर्य हुआ, पर उन्होंने उसे प्रकट नहीं किया। उन्होंने दोनों को बैठने को कहा और जिज्ञासा से उनकी ओर देखने लगे।

बात बड़ी रानी ने शुरू की : "सरकार, थापा अब प्रधान मंत्री रहने के योग्य नहीं रहे। उन्हें इस पद से हटाना ही पड़ेगा।"

महाराज ने विस्मय प्रकट करते हुए पूछा : "क्यों, क्या बात हुई ? अभी तीन साल बाद तो वह कलकत्ते से लौटे हैं। तीस बरस तक वह प्रधान मंत्री रहे। सब काम ठीक-ठीक करते रहे। उनके पीछे तीन बरस भी काम ठीक से नहीं चला। यदि प्रधान मंत्री नहीं बनाना था, तो कुछ दिन पहले सोचतीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कलकत्ते से यहां आने पर उन्हें प्रधान मंत्री बना दिया। उसके बाद इतनी जल्दी उन्हें हटाना कुछ भला नहीं जान पड़ेगा।"

"हमें क्या पता था कि कलकत्ते से वह मन में विष भर कर लौटे हैं और यहाँ आते ही राजद्रोह शुरू कर देंगे।"

"राजद्रोह ? क्या मतलब ?"

साम्राज्यलक्ष्मीदेवी सिर झुका कर बैठ गईं। लगा कि वह अपने आवेग को वश में रखने का प्रयत्न कर रही हैं और इस कारण बोल पाना उनके लिए कठिन हो रहा है। बोलने पर वह या तो रो पड़ेंगी, या चिल्ला उठेंगी। उनकी ऐसी दशा देख कर रणजंग पांडेय ने कहा : "सरकार, छोटे कुँवर की मृत्यु विष से हुई है ?"

"विष से ?" महाराज जैसे आकाश से भूमि पर आ गिरे।

"और वह विष छोटे कुँवर को भीमसेन थापा ने दिलवाया था" रणजंग पांडेय ने कहा। यह एक और ऐसी बात थी, जिस पर सहसा विश्वास होना कठिन था।

"यह क्या कह रहे हो तुम ?" महाराज ने विस्मय से आंखें फाड़ कर कहा।

"जो सच है, वही कह रहा हूँ सरकार।"

"विष दिया गया, यह कैसे पता चला ? कब पता चला ?"

"जिसने विष दिया, खुद उसी ने बताया" बड़ी रानी बोली।

"उसी ने ? भीमसेन थापा ने ?"

बड़ी रानी के मुख पर खीझ की रेखाएँ दिखाई पड़ीं, जो कहती प्रतीत होती थीं : "तुम्हारा सिर ! इतनी ही बुद्धि है तुम्हारी खोपड़ी में ?" पर मुंह से उसने केवल इतना कहा : "भीमसेन थापा ने नहीं, उस दासी ने जिसके द्वारा विष दिलवाया गया था। उसने बताया है कि छोटे कुँवर के लिए जो दवाई की पुड़ियाएं ला कर रखी गई थीं, उनमें से एक की जगह उसने बदल कर विष की पुड़िया रख दी थी। उसी को खा कर मेरा समरेन्द्र चल बसा।" कहते-कहते बड़ी रानी का गला रुँध गया और वह साड़ी के छोर से आंसू पोंछने लगी।

महाराज सुन कर स्तब्ध रह गये। भीमसेन थापा पर उन्हें क्रोध भी आया। परन्तु यह खबर इतनी विचित्र थी कि इस पर सहसा विश्वास होना कठिन था। भीमसेन थापा ने छोटे कुँवर को विष क्यों दिलाया ? उससे उसे क्या नाराज़गी थी ? उसे विष दिलाने से उसका क्या स्वार्थ सिद्ध हो सकता था ? यदि महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह में असाधारण रूप से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अधिक मेधा होती, तो भी वह इन प्रश्नों का उत्तर नहीं खोज सकते थे, फिर अब, जब उनमें असाधारण रूप से कम बुद्धि थी, इन प्रश्नों का उत्तर खोज पाना उनके लिए असम्भव था। पर यह उनकी अद्भुत सफलता थी कि उनके मस्तिष्क में ये प्रश्न उठे। रानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी को यह भी आशंका नहीं थी कि महाराज इतना कुछ सोचेंगे। इसलिए जब महाराज ने कुछ हतबुद्धि हो कर पूछा : "समरेन्द्र को विष दिलाने में भीमसेन थापा का क्या हित हो सकता है ?" तब रानी झल्ला उठी और बोली : "यह तो थापा जाने या आप जानें। मुझे तो यह पता है कि मेरे बच्चे को विष दिया गया है। वह विष भीमसेन थापा ने दिलवाया है। जिस दासी ने यह पापकर्म किया, उसने खुद अपना अपराध स्वीकार कर लिया है। आपका बेटा एक नीचतापूर्ण षड्यंत्र का शिकार हुआ और आपको शत्रुओं की चाल समझ नहीं आ रही। जो आदमी आज छोटे कुँवर को विष दिलवा सकता है, वह कल छोटी रानी को, मुझे या आपको भी दिला सकता है।" इतना कह कर रानी तीव्र दृष्टि से महाराज की ओर देखने लगी।

जो बात रानी को इतनी सुबोध लग रही थी, वह महाराज को आसानी से समझ नहीं आ रही थी। उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था कि भीमसेन थापा ने छोटे कुँवर को विष दिलवाया होगा। हर अपराध के पीछे उसे करने वाले का कुछ न कुछ स्वार्थपूर्ण उद्देश्य होता है। भीमसेन थापा ऐसे आदमी नहीं कि निःस्वार्थ, निरुद्देश्य होकर केवल अपराध के लिए अपराध करें। छोटे कुँवर को विष दिलाने से भीमसेन थापा का क्या स्वार्थ सिद्ध होता है, जब तक यह स्पष्ट न हो जाये, तब तक महाराज जैसी मोटी बुद्धि वाले व्यक्ति के लिए भी इतने बड़े आरोप पर विश्वास कर पाना कठिन था। अब रानी का यह स्पष्टीकरण उन्हें कुछ विश्वसनीय लगा कि छोटे कुँवर पर किया गया विष-प्रयोग अभ्यास का पहला चरण है। इसके निर्विघ्न सफल होने पर अन्य लोगों पर भी विष-प्रयोग किये जायेंगे। किन्तु अन्य लोगों को विष दे कर भीमसेन थापा क्या प्राप्त करना चाहता है ? वह राज्य हथियाना चाहता है ? यदि उसे ऐसा करना ही था, तो पहले, भरी जवानी में करता। राज्य हथियाने के लिए उसे अवसर तो कम नहीं मिले। अब बुढ़ापे में राज्य लेकर भी वह करेगा क्या ? अतः कुछ विभ्रान्त-सा होकर महाराज ने फिर पूछा : "इस सबके पीछे थापा की चाल क्या है, यह मुझे बतलाओ।"

महाराज की मोटी समझ पर खेद का भाव जताते हुए रानी ने कहा : "चाल तो सबको साफ़ दिखाई पड़ रही है। भीमसेन थापा सदा से देश पर निरंकुश शासन करता रहा है, क्योंकि सिंहासन पर नाबालिग लोग रहे। अब आप बालिग हो गये और राजकाज आपने अपने हाथ में लेना शुरू

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया है। अब थापा की मनमानी नहीं चलती। इसलिए वह हम सबको हटा कर गद्दी पर अधिकार कर लेना चाहता है। छोटे कुँवर पर उसकी पहली चोट हुई है। अगली हम पर होगी।"

"अगर मैं थापा की जगह होता, तो अलग-अलग चोटें न करके एक ही चोट में काम पूरा करने का यत्न करता। उसने भी क्या बुद्धूपने का काम किया है!" राजेन्द्रवीरविक्रमशाह ने कहा। स्पष्ट था कि उन्हें रानी की बात पर विश्वास नहीं हुआ है। सुन कर रानी की खीझ की सीमा न रही।

तब रणजंग पांडेय ने कहा: "सरकार, बात यह है कि जब आपने भीमसेन थापा को प्रधान मंत्री पद से हटा कर उन्हें राजदूत बना कर कलकत्ता भेजा था, तभी से वह बहुत रुष्ट हैं। प्रधान मंत्री रहते हुए वह राज्य के सर्वेसर्वा थे। कलकत्ते में रहते हुए उन्हें कुछ करने का मौका नहीं था। अब नेपाल लौटते ही उन्होंने बदला लिया है।"

"तो बदला मुझसे लेना था!"

"थापा की दृष्टि में सरकार और छोटे कुँवर अलग थोड़े ही हैं। यह तो संयोग था कि सरकार बीमार नहीं पड़े, छोटे कुँवर बीमार पड़ गये। वहीं थापा को अपनी कुटिल चाल चलने का मौका मिल गया।"

कहते हैं कि सद्गुरु की कृपा से मूढ़ शिष्य के ज्ञान चक्षु खुल जाते हैं और उसका अज्ञान और भ्रम दूर हो जाता है। यहाँ तो दो-दो गुरु थे। महाराज के ज्ञान चक्षु कब तक बन्द रहते? आखिर उन्होंने रानी साम्राज्यलक्ष्मी से पूछा: "तो अब क्या करने को कहती हो?"

"थापा को तुरन्त प्रधान मंत्री पद से हटा दीजिये।........"

महाराज ने बीच में ही टोक कर कहा: "फिर राजकाज चलायेगा कौन?"

"वही बता रही हूँ। पांडेय जी को प्रधान मंत्री बनाइये। इनसे बढ़ कर राजभक्त और योग्य व्यक्ति मिलना असंभव है। थापा के इस षड्यन्त्र का भी भांडा इन्होंने ही फोड़ा है। राजकाज जैसे अब आप चलाते हैं, वैसे ही आगे भी चलायेंगे।"

अपने मुँह पर रानी के मुँह से अपनी प्रशंसा सुन कर रणजंग पांडेय का चेहरा लज्जा से लाल हो उठा। फिर भी अवसर न चूक कर उसने कहा: "राजकुल की सेवा करना हमारा सबसे बड़ा कर्तव्य है।"

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम राजकाज नहीं चलाते; रानी साम्राज्यलक्ष्मी ही चलाती हैं। फिर भी रानी ने जिस ढंग से बात कही, उससे महाराज को सुनने में भला लगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अच्छा, एक वार उस दासी को तो बुलवाओ, जिसने यह सब भेद खोला है" कुछ क्षण चुप रहने के बाद महाराज ने एकाएक कहा।

रानी ने समझ लिया कि मोर्चा फतह हो गया। इसलिए उसने थोड़ा हँसते हुए कहा : "क्यों, मुझ पर विश्वास नहीं है ? मैं क्या सरकार से झूठ बोलूँगी ?" क्षण भर रुक कर, मुस्कान को और भी उज्वल करते हुए और रणजंग पांडेय को भी बीच में डालते हुए उसने कहा : "और यदि चालाकी ही चलनी हो, तो क्या मुझे महल में ऐसी कोई दासी न मिलेगी, जो मेरी मनचाही बात कह दे ?"

सुन कर महाराज का चेहरा धूमिल हो उठा, यह देख कर रानी मधुर हँसी हँसती हुई बोली : "पर यहां तो सब कुछ स्फटिक जैसा निर्मल और स्वच्छ है। मैं अभी उस दासी को बुलवाये देती हूँ।"

दासी आई। दुःखी और पश्चात्तापभरे स्वर में आत्मग्लानि प्रकट करते हुए उसने अपना घोर पाप स्वीकार किया और बताया कि किस प्रकार प्रधान मंत्री भीमसेन थापा ने स्वयं उसे यह नीच कर्म करने का आदेश दिया था। प्रधानमंत्री ने उसे नकद धन देने तथा उसके पुत्र की पदोन्नति करने के जो प्रलोभन दिये थे, वे भी उसने विस्तार से बताये। उसने यह भी बताया कि लोभ के वशीभूत होकर मैं यह पाप कर तो बैठी, पर उसके बाद मेरी अन्तरात्मा मुझे वुरी तरह कचोटने लगी और मैं किसी तरह अपना अपराध स्वीकार किये विना न रह सकी। अपराध स्वीकार कर लेने के बाद मेरे मन में काफ़ी शान्ति है।

उस दासी से जिरह करने और कुरेद-कुरेद कर बात में से बात निकालने का महाराज का मन न हुआ। उसके चले जाने जाने के बाद उन्होंने तीन आदेश दिये—उस दासी को प्राणदंड दिया जाये; भीमसेन थापा को प्रधान मंत्री पद से हटा दिया जाये; रणजंग पांडेय को प्रधान मंत्री नियुक्त किया जाये।

मन में उन्होंने सोचा—भीमसेन थापा बहुत दिन प्रधान मंत्री रह लिये। अब वह बूढ़े भी हो गये हैं। कुछ-न-कुछ परिवर्तन होना चाहिए। इससे बड़ी रानी खुश होगी, यह और भी अच्छा है।

रानी और रणजंग पांडेय जब महाराज के कक्ष के बाहर निकले, तब उनके मुख उल्लास से दमक रहे थे। छोटे कुँवर की मृत्यु दोनों के मन से इतनी दूर थी कि जैसे वह बरसों पुरानी बात हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

26

उथल-पुथल

रणजंग पांडेय ने प्रधान मंत्री बनते ही पहला काम यह किया कि पदच्युत प्रधान मंत्री भीमसेन थापा और उसके भतीजे मातबरसिंह को, जो सेना में उच्च अधिकारी था, तुरन्त कैद करने और जेल में डालने का आदेश दे दिया। रानी साम्राज्यलक्ष्मी ने उसे धैर्य रखने और जल्दबाज़ी न करने की सलाह सौ बार दी, परन्तु उसका कोई लाभ न हुआ। रानी अपने पति महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह को तो अपने इशारे पर नचा लेती थी, किन्तु रणजंग पांडेय और ही धात का बना था। जब वह किसी तरह न माना, तब रानी को अनिच्छापूर्वक उससे सहमत होना पड़ा और उसकी सहमति से ही भीमसेन थापा और मातबरसिंह को कारागार में डाला गया।

जीवन में आकस्मिक उत्थान पतन क्यों होते हैं? एकाएक ऐसी घटनाएँ घटती हैं, जिनकी कुछ समय पूर्व कोई कल्पना भी नहीं कर पाता। क्या यह पूर्व जन्म के कर्मों का फल होता है? या ये घटनाएँ ग्रह-नक्षत्रों की गति से प्रभावित होती हैं? तेतीस वर्ष पूर्व भीमसेन थापा ने जिस प्रकार संघर्ष करके प्रधान मंत्री पद प्राप्त किया था, उसे उसके प्रयत्न का फल कहा जा सकता था। किन्तु अब जिस तरह उसे प्रधान मंत्री पद से हटना पड़ा और उसके बाद सामान्य अपराधी की तरह जेल जाना पड़ा, वह तो उसकी किसी चेष्टा का परिणाम प्रतीत नहीं होता। फिर मातबरसिंह का कृतित्व तो केवल इतना था कि वह भीमसेन थापा का भतीजा था। इतने भर से नियति ने उसे अपने पाश में बाँध कर कारागार में ला पटका।

कारागार में भीमसेन थापा और मातबरसिंह को तरह-तरह की यातनाएँ देने में कोई कसर नहीं रखी गई। महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम को विश्वास दिला दिया गया था कि उनके पुत्र को भीमसेन थापा ने ही विष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दिलवाया है। इसलिए उन्हें भीमसेन थापा या मातबरसिंह से कोई सहानुभूति नहीं थी। इसका लाभ रणजंग पांडेय अपनी प्रतिशोध लालसा को पूरा करने के लिए उठा रहा था। और उसकी प्रतिशोध लालसा में अंग्रेज़ रैज़ीडैंट की राजनीतिक चाल सफल हो रही थी। काँटा काँटे से निकल रहा था।

अंग्रेज़ रैज़ीडैंट हौगसन ने रणजंग पांडेय से कहा था : "आप नेपाली लोग उदार, दयालु और क्षमाशील होते हैं। यह बहुत बड़ा गुण है। आप लोग विरोधी द्वारा किये गये अपकार को शीघ्र ही भूल जाते हैं। पर हम पश्चिम के लोग ऐसा नहीं कर पाते। भीमसेन थापा ने जिस पाशविक बर्बरता से दामोदर पांडेय और उसके अन्य साथियों की हत्याएँ करवाई थीं, वैसे यदि हमारे यहाँ किसी ने करवाई होतीं और बाद में कभी वह अपने विरोधियों के चंगुल में आ जाता, तो वह जीते-जी कालकोठरी से बाहर नहीं आ सकता था। पर यहाँ की तो बात ही निराली है। मुझे आप लोगों का ढंग पसन्द है।"

रणजंग पांडेय ने कहा था : "आप कैसे समझते हैं कि भीमसेन थापा कालकोठरी से जीते जी बाहर आ जायेगा ? अन्य लोगों का तो मुझे पता नहीं, पर कम से कम मैं इस मामले में आपके पश्चिम के लोगों से बहुत भिन्न नहीं हूँ।"

रणजंग पांडेय के चले जाने के बाद हौगसन ने सन्तुष्ट हो कर मन में कहा था : "बेटा थापा, तुम बहुत जल्दी भूल गये कि तुम्हें किसने बनाया था। दामोदर पांडेय को हराने के लिए तुम्हें पैसा कहाँ से मिलता था ? क्या मेजर नौक्स ने तुम्हें बताया नहीं था कि उस धन की एक एक पाई ईस्ट इण्डिया कम्पनी के खज़ाने से आई थी ? वह धन न होता, तो तुम क्या कभी दामोदर पांडेय को हरा सकते थे ? अब वही तुम, जो अंग्रेज़ों के पैसे से पनपे, नेपाल से ही नहीं, भारत से भी अंग्रेज़ों को उखाड़ने के सपने देख रहे हो। ठीक है, हम जिन कबूतरों को उड़ाते हैं, उनके पंख कतरना भी हमें आता है। भगवान ने चाहा, तो अब तुम कालकोठरी से ज़िन्दा बाहर न आ सकोगे।"

पर कुछ ही दिन बाद भीमसेन थापा और मातबरसिंह, दोनों ही कालकोठरी से बाहर आ गये। हुआ यह कि फतहजंग चौतरिया का महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह पर बहुत प्रभाव था। वह उनका घनिष्ठ मित्र सरीखा था। फतहजंग चौतरिया का मातबरसिंह से बहुत प्रेम था। जब भीमसेन थापा और मातबरसिंह कैद में डाल दिये गये और उन पर लगाये गये आरोप का पता चला, तब उनके हितैषियों ने, जिनमें फतहजंग चौतरिया भी था, उस आरोप की सत्यता की जाँच पड़ताल शुरू की।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पता चला कि विष देने का आरोप छोटे कुँवर की मृत्यु के बाद गढ़ा गया है, क्योंकि उसकी मृत्यु से पहले विष-प्रयोग की संभावना किसी के मन में न आई थी। वैद्यराज ने भी ऐसा कोई संदेह प्रकट नहीं किया था। फिर विष-प्रयोग का एकमात्र प्रमाण उस दासी का बयान ही था, जिसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया था। उस दासी के बारे में छानबीन करने से कम-से-कम भीमसेन थापा के हितैषियों को तो यह निश्चय हो गया कि इस आरोप में कोई सत्यता नहीं है। पर इसे महाराज और महारानी के सामने प्रमाणित कैसे किया जाये? बड़ी समस्या महारानी की थी, क्योंकि यह प्रकट था कि वह थापा परिवार से रुष्ट थी।

अन्त में लगभग वैसा ही उपाय किया गया, जैसा रणजंग पांडेय ने किया था। एक और दासी तैयार की गई, जिसने महाराज के सम्मुख शपथपूर्वक कहा कि जिस दासी ने विष देने का अपराध स्वीकार किया था, उसी ने मुझे अकेले में बताया था कि विष देने की यह झूठी बात उसे इसलिए स्वीकार करनी पड़ी है, क्योंकि रणजग पांडेय ने इसके लिए बहुत दबाव डाला था। उसने इस षड्यन्त्र में सहयोग न करने पर मरवा देने की धमकी दी थी और सहयोग करने पर मालामाल कर देने का वचन दिया था। महाराज का ध्यान इस बात की ओर भी आकृष्ट किया गया कि यद्यपि उस दासी को प्राणदण्ड देने का हुक्म हुआ था, पर वह अभी तक जीवित है और अपने गांव में ठाठ से रह रही है। महाराज के आदेश से उस दासी को पकड़वा मंगवाया गया। उससे सीधा प्रश्न यही किया गया कि जब उसने छोटे कुँवर को विष नहीं दिया था, तब उसने झूठमूठ अपना अपराध स्वीकार क्यों किया?

वह दासी घबड़ा गई। महाराज द्वारा दिये गये प्राणदण्ड के आदेश के बाद भी वह जीवित पकड़ी गई, यही बात उसे घबड़ा देने के लिए बहुत थी। उसने सचाई प्रकट कर दी। रणजग पांडेय ने उसे जैसा सिखाया पढ़ाया था, वैसा ही उसने कह दिया था। रणजंग पांडेय ने ही उसे प्राणदण्ड से बचा कर गाँव भेज दिया है।

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह ने बहुत खिन्न होकर रणजंग पांडेय को प्रधान मन्त्री पद से हटा दिया और रंगनाथ उपाध्याय नामक एक भारदार को प्रधान मन्त्री बनाया।

रंगनाथ उपाध्याय थापा और पांडेय, दोनों गुटों से अलग थे। इसलिए आशा थी कि उनका विरोध कोई गुट नहीं करेगा। उन्होंने प्रधान मन्त्री बनने के कुछ ही दिन बाद भीमसेन थापा और मातबरसिंह को कारागार से मुक्त कर दिया। भीमसेन थापा वृद्ध हो चुके थे, अतः वह सरकारी नौकरी करने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को उत्सुक नहीं थे। परन्तु मातबरसिंह को तो कहीं न कहीं नौकरी करनी थी। रंगनाथ उपाध्याय ने उन्हें फिर सेना में नौकरी देने का प्रस्ताव रखा, किन्तु अकारण पकड़ कर जेल भेज दिये जाने के अनुभव से मातबरसिंह इतने खिन्न हो गये थे कि उन्होंने नेपाल राज्य की नौकरी करना स्वीकार नहीं किया। वह नेपाल छोड़ कर पंजाब चले गये और वहां महाराजा रणजीत-सिंह की सेना में ऊँचे पद पर नियुक्त हो गये। भीमसेन थापा काठमांडौ में ही रहे।

× × ×

जब रणजंग पांडेय की धोखाधड़ी प्रकट हो गई थी, यदि तभी उसे समुचित दण्ड दिया जाता, तो उसे भविष्य में उपद्रव करने से रोका जा सकता था। पर महारानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी और अंग्रेज़ रैज़ीडैंट हौगसन उसके रक्षक थे। इसलिए षड्यंत्र का भंडाफोड़ हो जाने पर भी रणजंग पांडेय का बाल बाँका न हो सका। प्रधान मन्त्री पद छिनने के बाद वह सेनापति बना दिया गया।

पंडित रंगनाथ उपाध्याय से रणजंग पांडेय का कोई व्यक्तिगत द्वेष नहीं था। परन्तु रंगनाथ उपाध्याय प्रधान मन्त्री थे और रणजंग पांडेय प्रधान मन्त्री रह चुका था और फिर प्रधान मन्त्री बनना चाहता था। यह भी द्वेष के लिए कम कारण नहीं था। रणजंग पांडेय निरन्तर मौके की ताक में था। पहला मौका पाते ही उसने रंगनाथ उपाध्याय का तख्ता पलट दिया।

पण्डित रंगनाथ उपाध्याय ने शासन व्यवस्था में कई सुधार और परिवर्तन किये थे। एक परिवर्तन सैनिकों के बारे में था। इससे पहले सैनिकों को नियमित रूप से मासिक वेतन देने का रिवाज नहीं था। उन्हें कुछ ज़मीन दे दी जाती थी, जिस पर वे खेती करते थे। लड़ाई-भिड़ाई के दिनों में जब उनकी सेवाओं की आवश्यकता पड़ती थी, तब उन्हें कुछ पुरस्कार दे दिया जाता था। इससे सैनिकों पर अनुशासन और नियंत्रण अच्छा नहीं रह पाता था। अतः पंडित रंगनाथ उपाध्याय ने उन्हें भूमि के बजाय नियमित मासिक वेतन देने की व्यवस्था की।

पुरानी चली आ रही परम्पराएँ और प्रथाएँ अपनी जड़ ऐसी जमा लेती हैं कि उन्हें बदलने की चेष्टा करने पर काफ़ी हलचल होती है। यद्यपि नियमित रूप से वेतन देने की नई व्यवस्था सैनिकों के अपने हित में थी, फिर भी जब यह लागू की गई, तब सैनिकों में असंतोष भड़का देना रणजंग पांडेय के लिए बहुत आसान सिद्ध हुआ। उसने उन्हें समझाया कि कुछ रुपल्ली मासिक वेतन के बदले तुम्हारे भूमि के अधिकार छिन जायेंगे। तुम बेघर हो जाओगे। सैनिकों ने इस नये प्रबन्ध के विरोध में विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलस्वरूप पंडित रंगनाथ उपाध्याय को प्रधान मन्त्री पद से हटना पड़ा और सैनिकों का नेता होने के कारण फिर रणजंग पांडेय को ही प्रधान मन्त्री बनाया गया। कहने की आवश्यकता नहीं कि उसे फिर प्रधान मन्त्री बनवाने में महारानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी का आग्रह ही प्रधान कारण रहा।

संसार में जो कुछ होता है, वह क्यों होता है ? बड़े-बड़े और प्रभावशाली मनुष्य जो कुछ इच्छा और प्रयत्न करते हैं, क्या उसी के फलस्वरूप संसार की घटनाएँ घटित होती हैं ? यदि ऐसा होता, तो बड़े और प्रभावशाली मनुष्यों की इच्छाएँ और योजनाएँ सदा पूरी हो जाया करतीं। परन्तु ऐसा होता नहीं है। कभी-कभी ऐसे लोगों की इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं, पर बहुत बार नहीं भी होतीं। जब बड़े और प्रभावशाली लोगों की इच्छाएँ पूरी होती दिखाई पड़ती हैं, तब प्रतीत होता है और कहा भी जाता है कि मनुष्य के प्रयत्न से ही संसार बनता बिगड़ता है। पर जब इन बड़े और प्रभावशाली लोगों की प्रबलतम इच्छाओं और भरसक प्रयत्नों के बाद भी परिणाम प्रतिकूल निकलता है, तब यह प्रखर सत्य सामने आता है कि विश्व की घटनाएँ तो किसी अन्य नियम से ही घटित होती हैं और तथाकथित बड़े और प्रभावशाली मनुष्यों की इच्छा या अनिच्छा का उन पर कोई निर्णायक प्रभाव नहीं होता। यहां तक कि उन मनुष्यों की इच्छा भी कभी-कभी स्वतन्त्र और स्पष्ट नहीं रहती। वे क्या चाहते हैं और क्या करते हैं, यह उन्हें स्वयं ही पूरी तरह पता नहीं होता। घटनाओं के घटित हो जाने के बाद वे बहुत बार कहते सुने जाते हैं—यह क्या हो गया !

रणजंग पांडेय ने दूसरी बार प्रधानमन्त्री बनते ही फिर भीमसेन थापा को कारागार में डाल दिया और इस दृढ़ संकल्प के साथ डाला कि इस बार वह उसे जीते-जी कारागार से बाहर नहीं निकलने देगा। उसकी खूनी दृष्टि ने मातबरसिंह को भी ढूंढा, पर मातबरसिंह वहाँ था ही नहीं। वह पंजाब में था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

27

इस हाथ दे

राजमहल की तीन-चार दासियाँ छोटी रानी राज्यलक्ष्मीदेवी की दासी मन्दाकिनी को घेरे खड़ी थीं। उनकी मुद्रा गम्भीर, किन्तु कुतूहलपूर्ण थी। मन्दाकिनी कह रही थी: "अब तो छोटी रानी की तबियत बहुत सुधर गई है। वैद्यराज का कहना है कि अब चिन्ता नहीं है।"

"सुना है, विष दिया गया था" एक ने कहा।

"भगवान ही जाने" मन्दाकिनी बोली : "उस दिन एकाएक छोटी रानी मुझ से बोली : 'देख तो मन्दा, मुझे हुआ क्या है ?' मैंने पास जाकर देखा, तो उनके शरीर से पसीना छूट रहा था। मैंने पूछा : 'आपको इतना पसीना क्यों आ रहा है ?' उन्होंने कहा : 'पता नहीं। मेरा जी बहुत घबरा रहा है। मुँह सूख रहा है। जीभ ऐंठ रही है। महाराज को खबर कर। वैद्यराज को बुलवा।' मैंने महाराज को खबर दी। वैद्यराज भी आ गये।" इसके बाद मन्दाकिनी ने अपने स्वर को बहुत ही धीमा करके कहा : "वैद्यराज ने कहा : 'लक्षण तो विष के हैं।' महाराज ने चौंक कर पूछा : 'विष के ? विष किसने दिया ?' वैद्यराज ने कहा : 'वह बाद में देखा जायेगा। सबसे पहले तो चिकित्सा आवश्यक है।' उन्होंने कई औषधियाँ दीं। कुछ पुड़ियाएँ थीं। दो-तीन तरह के काढ़े बनवाये गये। छोटी रानी को वमन कराया गया; रेचक दवाइयाँ दी गईं। एक ही दिन में वह इतनी कमज़ोर हो गईं कि पहचानी नहीं जाती थीं। दो दिन बेहोश रहीं। पर यही बड़ी बात है कि बच गईं।"

"विष किसने दिया होगा ?" एक और ने पूछा।

"जब तक पक्का पता न हो, तब तक किसका नाम लिया जाये ? किसी का भी नाम लेना अपनी विपत्ति बुलाना है। पर ऐसा दुष्कर्म कभी विफल नहीं होता; देर-सवेर में उसका फल अवश्य सामने आता है" मन्दाकिनी ने कहा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"विष कोई अपने आप तो खान-पान में घुस नहीं जाता। उसके लिए किसी न किसी को यत्न करना पड़ता है। यत्न वही करता है, जिसका कोई प्रयोजन होता है" एक बोली।

"किसी की जीभ तो पकड़ी नहीं जाती। पर लोग यही कह रहे हैं कि यह बड़ी महारानी और रणजंग पांडेय का काम है" एक और दासी ने कहा।

सबकी सब अवाक् होकर उस दु:साहसी दासी की ओर देखने लगीं। कुछ क्षण बाद एक और बोली : "काम चाहे किसी का हो, पर नाम तो उन्हीं का लगेगा। और किसी का छोटी रानी से विरोध ही क्या है ?"

मन्दाकिनी ने कहा : "छोटी रानी से उनका भी क्या विरोध है ? छोटी रानी उनके किस काम में दखल देती हैं ?"

"आज न दें, पर कल दे तो सकती हैं। वह बड़ी रानी की सौत तो हैं ही।"

"जैसी सौत हैं, उनमें शिकायत छोटी रानी को हो, तो हो; बड़ी रानी को क्या शिकायत है ? महाराज तो बड़ी रानी की मुट्ठी में हैं।"

"इसीलिए तो उससे सदा के लिए छटकारा पाने की कोशिश है। नहीं तो क्या किसी को ऐसा करने की हिम्मत होती ?"

"पर वह कोशिश सफल नहीं हुई। असहायों का भी कोई रक्षक है।"

"ऐसा न होता, तो बलवान निर्बलों को कभी का घोट पीस कर पी गये होते।"

"महाराज क्या कहते हैं ?"

"वह चुप हैं। जब बिना कुछ कहे काम चलता है, तब कुछ भी क्यों कहें ?"

"भगवान के सिवाय और कहीं न्याय नहीं है। छोटी रानी को विष दिया गया, और महाराज इस विषय में कुछ करते नहीं ?"

मन्दाकिनी ने कहा : "जब मनुष्य कुछ नहीं करता, तब भगवान को करना पड़ता है।"

"कैसा समय आ गया है। ओफ़ !" कहते हुए सब दासियाँ गोष्ठी भंग करके अपने-अपने काम से चल पड़ीं।

मन्दाकिनी छोटी रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के पास पहुँची। रानी का चित्त आज काफ़ी स्वस्थ था। शरीर में धीरे-धीरे शक्ति लौट रही थी। वह पलंग पर एक मोटे तकिये के सहारे पीठ टेक कर बैठी थी। रेशमी रज़ाई उसके पैरों पर पड़ी थी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन्दाकिनी पास आ कर फ़र्श पर बिछे कालीन पर बैठ गई और मन्द स्वर में बोली : "सारे महल में यही चर्चा है कि सरकार को विष बड़ी रानी और रणजंग ने दिलवाया है। लोग खुलमखुल्ला नाम ले रहे हैं।"

"तू अपना मुँह बन्द रखना। भूल कर किसी का नाम मत लेना। जो नाम लेते हैं, उन्हें लेने दे।"

"मैं क्या इतनी नासमझ हूँ सरकार! मैं न किसी का नाम लेती, न किसी को टोकती। जिसका जो मन हो, वह कहे।" फिर थोड़ा रुक कर बोली : "यह तो भगवान पशुपतिनाथ की ही दया थी कि उन्होंने शत्रुओं का षड्यंत्र विफल कर दिया। करने वालों ने तो कोई कसर नहीं छोड़ी थी। पूरे दो दिन दो रात सरकार जीवन और मृत्यु के हिंडोले में झूलती रही। एक क्षण आशा होती थी कि जीवन की लौ फिर जल उठेगी, पर कुछ समय बाद लक्षण बदल जाते थे। निराशा प्रबल हो उठती थी। आशंका होती थी कि अनिष्ट होकर ही रहेगा।"

"अभी इस जीवन में और न जाने क्या-क्या देखना बाकी है। इसीलिए भगवान पशुपतिनाथ ने बचा लिया।"

"कुशल यह हुई कि वमन में विष का अधिक अंश शुरू में ही निकल गया। जो बच गया, उसी ने यह हाल कर दिया; यदि सारा ही विष अन्दर रह गया होता, तो···" मन्दाकिनी ने अपना वाक्य अधूरा ही छोड़ दिया।

"कितना विष निकल गया यह तो मुझे पता नहीं, परन्तु यह मैं खूब अनुभव करती हूँ कि बहुत-सा विष बाहर नहीं निकल पाया है। वह मेरे खून में घुल गया है, वह मेरे रोम-रोम में पहुँच गया है। यह विष किस तरह बाहर निकल सकेगा, यह मैं नहीं जानती। यह मुझे आजीवन व्याकुल करता रहेगा। पर मन्दाकिनी, यह विष दूसरों ने मुझमें भरा है। पहले यह मुझमें नहीं था।" कहते-कहते रानी मानो थक गई। पीठ पीछे रखे मसनद को एक ओर हटा कर वह बिस्तर पर सीधी लेट गई। उसकी आँखों में आँसू की बूंदें छलक आई थीं।

मन्दाकिनी कुछ देर उसकी ओर देखती रही; फिर बोली : "आप आराम कीजिये सरकार। इन बातों को सोचने के लिए अभी बहुत समय पड़ा है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

28

थापा का शाप

भोमसेन थापा की दशा बहुत ही शोचनीय थी। शारीरिक कष्ट तो जो था, सो था ही, पर उससे भी अधिक मानसिक कष्ट था। सारे जीवन-भर ठाठ से शासन करने के पश्चात् अब इस वृद्धावस्था में कारागार मे दिन बिताना उन्हें मृत्यु से भी अधिक कष्टदायक जान पड़ता था। वह अकेले ही कालकोठरी में पड़े रहते। ऐसा भी कोई नहीं, जिसे सुना कर अपनी व्यथा कुछ हल्की कर सकें। रणजंग पांडेय ने इस बात का पक्का प्रबन्ध किया था कि उनकी कोठरी के पास कोई चिड़िया तक पंख न मार सके।

कोठरी में धूप की बात तो दूर, दिन का प्रकाश भी केवल उतनी ही देर आ पाता था, जितनी देर के लिए भोजन लाने वाला सेवक कोठरी का दरवाज़ा खोलता था। उस सेवक को विशेष रूप से यह आदेश था कि वह कैदी प्रधान मन्त्री से कोई बात न करे। अपनी सील और बदबू से भरी उस कालकोठरी में भीमसेन थापा को इस सेवक का आगमन किसी देवदूत के आगमन के समान प्रिय जान पड़ता था, क्योंकि उसके आगमन के साथ उन्हें प्रकाश के दर्शन हो जाते थे और स्वच्छ वायु का भी थोड़ा-सा सांस मिल जाता था।

कठोरतम आदेशों के बाद भी मनुष्यता के नाते वह सेवक कुछ न कुछ बातचीत भीमसेन थापा से कर ही जाता था। सब कैदखानों में नियमों का थोड़ा बहुत उल्लंघन होता ही है, विशेष रूप से तब, जबकि बहुत से प्रभावशाली और सम्पन्न व्यक्ति किसी कैदी के हितचिन्तक हों। कभी-कदास बहुत मन्द स्वर में यह सेवक काम की कुछ खबरें थापा को दे जाता था।

आज दोपहर के समय वह भोजन लेकर कुछ देर से आया। और दिन दरवाजे का ताला खोलने वाला सन्तरी उसके साथ आता था, पर आज सन्तरी उसके साथ नहीं था। सेवक की मुखमुद्रा अत्यन्त मलिन हो रही थी। वैसे

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो शायद थापा का ध्यान उसके उदास चेहरे की ओर न जाता, पर जब वह नित्य की भाँति भोजन देने के बाद लौट पड़ने के बजाय वहीं खड़ा रह गया, तब थापा ने चकित होकर उसकी ओर गौर से देखा। उन्हें उसके चेहरे पर भय और विषाद के बादल घुमड़ते दिखाई पड़े। वह स्वयं भी चिन्तित हो उठे।

"क्यों, कोई खास खबर है ?" थापा ने बेकली से पूछा।

"पता नहीं इन पापियों का सत्यानाश कब होगा !" सेवक ने सीमातीत क्षोभ प्रकट करते हुए कहा : "प्रलय होने वाली है, तभी भगवान की दृष्टि संसार से फिर गई है।"

"क्यों, क्या हुआ ?"

"पाप का घड़ा दिनोंदिन भरता जा रहा है, पर वह किसी तरह फूटने में नहीं आता। यह झूठ है कि पाप का घड़ा एक दिन फूट कर रहता है। यहाँ तो दीख रहा है कि पाप दिन दूना, रात चौगुना फल-फूल रहा है।"

"यह तो बता कि हुआ क्या है ?" किसी अप्रिय आशंका से थापा का चित्त विकल होने लगा।

"क्या बताऊँ हुज़ूर ? मुँह से कह कर बताने की बात होती, तो बताता भी।"

आखिर ऐसी क्या बात है, जिसे बताने में भी इसे इतनी हिचक हो रही है ? अवश्य ही बड़ी रानी और रणजंग ने कोई नई कारस्तानी की है। पर अत्यधिक अधीरता प्रकट करना उन्हें उचित न जान पड़ा, अतः उन्होंने कुछ कहा नहीं। सेवक की ओर देखते हुए प्रतीक्षा करने लगे कि वह कुछ कहे।

कुछ देर चुप, विचारमग्न रहने के बाद सेवक फिर बोला : "पर बचेंगे नहीं। जैसा करेंगे, वैसा भरना पड़ेगा। भगवान के यहाँ अनदेखा कुछ नहीं रहता। इतना बड़ा पाप उसकी आँखों से छिप जायेगा ?"

"पर बता तो कि हुआ क्या है ?" उत्सुकता पर वश न रख पाने पर अधीर थापा ने कहा।

"कल महारानी जी ने माँ जी को बुलवाया था।..."

"कौन माँ जी ?"

"आपके घर से।"

"उसे बुलवाया था ?" जैसे पाँव पर अंगारा गिर पड़ा हो, ऐसे चौंक कर थापा ने कहा। तो रानी मुझ से ही बदला नहीं ले रही, मेरी घर वाली से भी ले रही है, उन्होंने मन ही मन सोचा।

"सुना है कि उन्होंने यह इल्ज़ाम लगाया है कि माँ जी आपको छुड़ाने की कोशिश कर रही हैं। आज सवेरे राजमहल से बीसियों सिपाही गये और

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

माँ जी को पकड़ लाये। बड़ी रानी ने उन्हें बहुत बुरा-भला कहा और अन्त में क्रोध में आकर हुक्म दिया कि इसे नंगा करके सारे शहर में घुमाओ।...''

''ऐसा हुक्म दिया?'' भीमसेन थापा आवेश के मारे उठ कर खड़े हो गये।

सेवक ने सिर हिला कर स्वीकृति जताते हुए एक लम्बी साँस छोड़ कर कहा: ''भगवान भी कैसे-कैसे लोगों के हाथ में शासन का अधिकार दे देता है!''

''हे भगवान, फिर क्या हुआ?''

''जिन सिपाहियों को यह हुक्म दिया गया था, उन्होंने इसे मानने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि ऐसा पाप कर्म करने के लिए हमने महाराज की नौकरी नहीं की है।''

''शाबास! अभी तक भी लोगों में मनुष्यता बाकी है।''

''पर इस पापी रणजंग में तो बिल्कुल ही नहीं। जब उसने सुना कि सिपाहियों ने ऐसा कहा है, तब उसने उन्हें तुरन्त गिरफ्तार करवा लिया। रानी के आदेश का पालन न करने के अपराध में उन्हें गोली मार दी गई।''

''गोली मार दी गई?'' भीमसेन थापा ने ऐसे कहा, जैसे इस बात पर विश्वास कर पाना उनके बस से बाहर हो। फिर क्षण भर रुक कर कहा: ''ठीक है रणजंग, किये जा। जो कुछ होगा, देखा जायेगा। अच्छा, फिर?''

सेवक एक क्षण दुविधा में रहा कि कुछ कहे या न कहे। उसके बाद जैसे कोई कठिन निश्चय कर लिया हो, इस प्रकार बोला: ''फिर रणजंग ने अपने भरोसे के नये सिपाहियों को बुलाया और उन्होंने महारानी के आदेश का पालन किया।''

''क्या मतलब? उसे नंगा करके काठमांडौ की सड़कों पर घुमाया?''

सेवक सिर झुकाये चुपचाप खड़ा रहा। उसने मुँह से न हाँ कहा, न ना।

''हे भगवान, मेरे जीते जी यह भी होना था!'' भीषण मनोव्यथा से भीमसेन छटपटा कर कराह से उठे। ''मेरी गलतियों का, मेरे पापों का फल मुझे मिलता, मैं उसे खुशी से भोगता। पर यह क्या हुआ? उस बेचारी के सिर यह अपमान, यह लांछना क्यों मढ़ी गई? स्त्रियों पर अत्याचार करना क्या मर्दों का काम है? छिः रणजंग! और काठमांडौ के सारे लोग चुपचाप यह देखते रहे?''

''सारे शहर में महारानी और रणजंग के नाम पर थू-थू हो रही है महाराज। पर सामने आ कर कोई नहीं बोलता। रणजंग ने भीषण आतंक फैला रखा है।''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अरे, गोरखों को तो जीवन इतना प्यारा कभी नहीं था। इतना भीषण अन्याय और अनाचार हो रहा हो, और लोग मरने के डर से उसे चुपचाप सह लें, ऐसा और कहीं हो तो हो, पर काठमांडौ में हो सकता है, यह मैं नहीं सोच सकता।"

"सभी तो अनहोनी हो रही है। ऐसा हुक्म ही क्या किसी राजा या रानी ने पहले कभी दिया है? कलियुग इसी तरह तो समाप्त होगा। प्रलय आयेगी।"

कुछ क्षण दोनों चुपचाप खड़े रहे। उसके बाद सेवक ने अपनी मुद्रा से जताया कि काम की खबर उसने दे दी है, पर अब देर तक यहाँ रुकना खतरे से खाली नहीं है। अतः उसे लौट जाना चाहिए। भीमसेन थापा ने उसके इस भाव को ताड़ लिया और कहा: "हाँ, तुम जाओ। और देर करना तुम्हारे लिए ठीक नहीं है।"

सेवक वहाँ से चला गया और कोठरी का द्वार बन्द करता गया।

× × ×

जो भोजन सेवक छोड़ गया था, उसकी ओर भीमसेन थापा ने देखा तक नहीं। जैसे बिच्छू काट लेने पर थोड़ी-थोड़ी देर बाद उसके विष की लहर चढ़ती है, उसी प्रकार जो दुःसमाचार वह सेवक दे गया था, उसकी यंत्रणा उनके हृदय को रह-रह कर आकुल करने लगी। अपनी पत्नी का अपमानित चेहरा उनकी कल्पना में फिरने लगा। पर वह कुछ भी समझ न पाये कि इस घृणित अन्याय का प्रतिकार करने के लिए वह क्या करें।

वह सोचने लगे कि यह सब काल की महिमा है। नहीं तो क्या कोई यह सोच सकता था कि किसी दिन मेरी यह दशा होगी। वह भी इस राजेन्द्र-वीरविक्रम के हाथों, जिसके दादा को मैंने शरण दी; जिसके बाप को मैंने पाला; और स्वयं उसे भी तो मैंने ही पाला है। यदि मैं किसी प्रकार भविष्य को देख सकता और यह जान पाता कि यह इतना निकम्मा निकलेगा, स्वयं कुछ भी करने में असमर्थ होकर राज्य की बागडोर स्त्री के हाथों में दे देगा, तो मैं आसानी से इसका कुछ भी उपाय कर सकता था। आज परिस्थिति कितनी बदल गई है? बरसों तक ऐसा समय रहा कि इस सारे राज्य में वही होता था, जो मैं चाहता था। मैंने गलती की, जो इन पांडे लोगों को जड़ मूल से समाप्त नहीं कर दिया। जब इनसे शत्रुता हो ही गई थी, तब एक किनारे लगना चाहिए था, इधर या उधर। अपनी उदारता का ही यह कड़वा फल आज मुझे चखना पड़ रहा है।

परन्तु इन बातों को सोचने से अब क्या होता है? जो कुछ हो चुका, वह हो चुका। उसे अब बदल पाना सम्भव नहीं है। अब तो अपनी वर्तमान दुर्दशा से निकलने का कोई उपाय नहीं दीखता। कैद में रहना कोई कलंक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की बात नहीं थी। कैद से छूटने के बाद वह फिर सम्मानित जीवन व्यतीत कर सकते थे। किन्तु इस अपयश की कालिमा मुँह पर पोत कर वह कैद से निकल कर भी सुखी नहीं रह सकते। "फिर मैं किस झूठी आशा से अपने इस जीवन को बचाये हुए हूँ ? इस काल-कोठरी के कष्टों को व्यर्थ किसलिए सह रहा हूँ ? जब इससे बाहर निकल कर भी सुख का साँस नहीं लिया जा सकता, तब इन यंत्रणाओं से तुरन्त मुक्ति क्यों न पा लूँ ?"

परन्तु इन यंत्रणाओं से तुरन्त मुक्ति पाना भी एकदम आसान नहीं है। उसके लिए भी कुछ साधन चाहिए। इस अँधेरी कोठरी में आत्महत्या करने का साधन भी तो कुछ नहीं है। चाहने भर से मरा भी नहीं जा सकता।

मानसिक व्यथा से विह्वल हो कर वह उस छोटी सी कोठरी में उन्मत्त की भाँति इधर उधर फिरने लगे। कभी वह दीवारों को और छत को हाथों से टटोलते, कभी पैरों से फर्श को। शायद कोई ऐसी चीज़ मिल जाये, जो इस अभिशप्त जीवन से उन्हें मुक्ति दिलाने में सहायक बन सके। पर वहां क्या मिलना था ? वह कई सप्ताहों से इस कोठरी में रह रहे थे। इसके चप्पे-चप्पे का हाल उन्हें मालूम था।

वह भोजन लाने वाले इस सेवक के द्वारा राजा से प्रार्थना करें कि वह उनकी दुर्दशा पर दया करके उन्हें प्राणदंड देने की कृपा करे ? पर सेवक इस प्रार्थना को राजा तक पहुँचायेगा कैसे ? लिखने की कोई सामग्री उनके पास नहीं है और न आ सकती है।

एक उपाय यह हो सकता है कि रणजंग पांडेय को यहां बुलवाया जाये और उसे कटु बातों से इतना उत्तेजित किया जाये कि वह स्वयं ही उनके प्राण ले लेने का आदेश दे दे। उनकी यह चाल सफल हो सकती थी। यदि रणजंग वहां आ जाता, तो बातचीत से उसे इतना उत्तेजित किया जा सकता था कि वह आपे से बाहर हो कर भीमसेन थापा का वहीं वध कर डालता। वस्तुतः उसकी अपनी तो महत्वाकांक्षा ही यह थी। पर रानी साम्राज्यलक्ष्मी कहीं अधिक नीतिनिपुण थी। वही रणजंग को इस दुष्कार्य से रोके हुए थी। इसलिए नहीं कि वह भीमसेन थापा के प्रति कुछ उदार थी, बल्कि इसलिए कि यदि थापा मर गया, तो उससे बदला पूरी तरह नहीं लिया जा सकेगा। मरने के बाद तो वह उसके वश से बाहर हो जायेगा। दूसरे यह कि भीमसेन थापा को हर संभव यंत्रणा देने के बाद भी वह उसकी हत्या का कलंक अपने सिर नहीं लेना चाहती थी। अगर उसका बस चलता, तो भीमसेन थापा तिल-तिल घुल कर मरता। परन्तु उसका बस चला नहीं।

भीमसेन थापा बहुत ही आकुल और अशान्त हो कर अपनी उस अंधेरी कोठरी में चक्कर काटने लगे, जैसे पिंजड़े में बन्द किया गया बाघ भूख या गर्मी से बेचैन हो कर चक्कर काटा करता है। न जाने किस असंभव आशा

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से वह वन्द दरवाज़े के पास तक जाते और वहां से वापस लौट पड़ते। छोटी-सी तो वह कोठरी थी। दरवाज़े के पास पहुँचने के लिए आठ दस कदम एक सँकरी सी गली में चलना पड़ता था। एक बार जब वह उस सँकरी सी गली में से लौट रहे थे, तब सहसा उनका पांव किसी वस्तु से टकराया। वह चौंके। यह ईंट-पत्थर, साँप-बिच्छू कोई चीज़ हो सकती है, यह उन्होंने कल्पना भी न की थी। उन्होंने अँधेरे में पांव से टटोल कर देखा। कुछ कड़ी सी चीज़ थी। उत्सुकतावश वह तुरन्त भूमि पर बैठ गये और हाथ से टटोल कर यह जानने की कोशिश करने लगे कि वह कड़ी-सी चीज़ है क्या ?

हाथ से छूते ही उन्हें तुरन्त पता चल गया कि वह चीज़ क्या थी। पर वह यह नहीं समझ पाये कि यह चीज़ यहां पहुँची कैसे ? आश्चर्य के साथ-साथ उल्लास का भाव भी उनके मन में जाग उठा। उनका मन बारबार कहने लगा कि भगवान के सिवाय और कौन ऐसी वस्तु यहां भेज सकता है ? वह कड़ी वस्तु एक खुखरी थी।

उस खुखरी को पा कर भीमसेन थापा को लगा कि जैसे उन्हें मुहमाँगी मुराद मिल गई हो। उन्होंने अधीरता से उसे म्यान से निकाल कर अंगुली से उसकी धार को परखा। धार ठीक थी। उन्होंने संतुष्ट हो कर उसे म्यान में बन्द कर दिया।

यह खुखरी यहां आई कैसे ? इस प्रश्न का कोई उत्तर वह नहीं सोच पा रहे थे। जो सेवक भोजन ले कर आता है, उसके सिवाय अन्य कोई व्यक्ति इस कोठरी में प्रवेश नहीं करता। अतः एकमात्र सम्भावना यही है कि वही इसे यहाँ लाया हो और असावधानी से यह उससे गिर पड़ी हो। पर गोरखे की खुखरी ऐसी चीज़ नहीं कि वह गिर पड़े और गोरखे को पता न चले। तब क्या वह इसे जान बूझ कर यहाँ छोड़ गया है ? जान बूझ कर छोड़ जाने में उसका क्या प्रयोजन हो सकता है ?

थापा ने इस गुत्थी को सुलझाने के लिए बहुत दिमाग लड़ाया, पर यह किसी तरह सुलझी नहीं। अन्त में खिन्न हो कर उन्होंने इसे सोचना ही छोड़ दिया। उनका मन फिर साम्राज्यलक्ष्मीदेवी और रणजंग पांडेय की करतूतों के चिन्तन में डूब गया।

वह मन ही मन कहने लगे : 'रानी और मंत्री तो मुहरे हैं। असली दोष तो राजा राजेन्द्रवीरविक्रम का है। उसने इन दोनों को इतनी छूट क्यों दी हुई है कि ये अपनी मनमानी करते हैं ? रणजंग पांडेय पर मेरा कोई उपकार नहीं है। रानी साम्राज्यलक्ष्मी पर भी मेरा कोई उपकारों का ऋण नहीं है। पर राजा राजेन्द्रवीरविक्रम और उसके पूर्वजों पर तो मैंने इतने उपकार किये हैं कि वे किसी भी प्रकार उनसे उऋण नहीं हो सकते। यदि मैंने रणबहादुरशाह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को भारत से वापस न बुलाया होता, तो आज कहाँ होता राजा राजेन्द्रवीरविक्रम और कहाँ होती रानी साम्राज्यलक्ष्मी ? उस उपकार को उसने शनैः-शनैः भुला दिया है। वस्तुतः वह इतना अकर्मण्य और अयोग्य है कि राज्य का तो दूर, अपना भी हिताहित नहीं सोच पाता। ऐसे अभागे राजा का भविष्य बहुत ही अन्धकारमय है।'

इस प्रकार सोचते हुए वह कुछ देर के लिए अपने कष्टों को भी भूल गये। राजेन्द्रवीरविक्रम कभी उन्हें दया का पात्र प्रतीत होता, क्योंकि वह बेचारा रानी और रणजंग के हथकंडों का शिकार बन रहा था। उसके नाम पर ऐसे काम किये जा रहे थे, जिनसे उसका कोई हित न होता था। पर कुछ ही क्षण बाद राजेन्द्रवीरविक्रम पर उनका क्रोध भड़क उठता। वह सोचते : 'ऐसे व्यक्ति को राजसिंहासन पर बैठना क्यों चाहिए ? क्यों नहीं वह संन्यासी बन कर इन झंझटों से मुक्ति पा लेता ? जब तक राजमुकुट उसके सिर पर है, तब तक राज्य की ओर से होने वाले समस्त पाप-पुण्यों का दायित्व उसी का है। मेरे साथ होने वाले सारे दुर्व्यवहार और अत्याचारों के लिए वही ज़िम्मेदार है।'

जैसे विस्तृत खुले समुद्र में प्रचंड आँधी से कोई लहर उत्पन्न होती है और एक दिशा में आगे बढ़ने लगती है ; वह ज्यों-ज्यों आगे बढ़ती है, त्यों-त्यों उसका आकार और वेग बढ़ता जाता है, वैसे ही भीमसेन थापा के मन में क्रोध तथा क्षोभ की महातरंग निरन्तर प्रचंड और प्रचंडतर होने लगी। उस क्रोध के आवेश में उन्होंने पशुपतिनाथ से प्रार्थना की : 'यदि मैंने सदा सच्चे मन से राजभक्त रह कर इस राजपरिवार की सेवा की हो, तो हे पशुपतिनाथ, उसका ऐसा उल्टा बदला चुकाने वाले इस पापिष्ठ राजा को और इसके वंशजों को सौ बरस तक कारावास की यातना भुगतनी पड़े। ये प्रतापशून्य लोग शासन के अधिकारी नहीं, कारावास के ही पात्र हैं।'

यह घोर शाप दे कर थापा का मन कुछ हल्का हुआ। जैसे क्रोध में भर कर शत्रु को डँसने के बाद विषधर नाग कुछ देर के लिए शिथिल हो जाता है, वैसे ही क्रोध का ज्वार उतरने पर भीमसेन थापा विषाद की दलदल में डूबने लगे। आत्मग्लानि और विवशता की अप्रिय अनुभूति से उनका मन कड़वा हो उठा। भोजन लाने वाला सेवक जो अप्रिय समाचार दे गया था, वही उनके मन और मस्तिष्क में सब ओर भर उठा। वस्त्रहीन करके काठमांडौ के बाज़ारों मे घुमाई जाती हुई अपनी पत्नी का कल्पित चित्र उनकी आंखों के आगे आ खड़ा हुआ। इस चित्र को देख-देख कर उनकी आंखों से आंसू बहने लगे।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अगले दिन रणजंग पांडेय खुशी से फटता हुआ सा रानी साम्राज्यलक्ष्मी दवी के पास पहुंचा और बोला : "काम हो गया।"

कुछ समझ न पा कर रानी ने पूछा : "कौन-सा काम ?"

"थापा नरक में चला गया !"

"मतलब ?"

"उसने आत्महत्या कर ली।"

"आत्महत्या ? कैसे की ?"

"खुखरी से !"

"खुखरी उसे कहाँ से मिली ?"

"मैंने ही भोजन ले जाने वाले सेवक के हाथ उसकी कोठरी में गिरवा दी थी।"

"तुम मूर्ख हो ! इतनी जल्दी क्या थी ? अब वह हमारे काबू से बाहर हो गया। अब हम उसका क्या कर लेंगे ?"

"अभी पूरी तरह बाहर नहीं हुआ है।"

"मतलब ?"

"उसने अपने पेट में खुखरी भोंक अवश्य ली है। किन्तु वार पूरा नहीं बैठा। मरणासन्न दशा में वह पड़ा है, पर पूरी तरह मरा नहीं है।"

"क्या वह बच सकता है ?"

"बचेगा नहीं। सुना है कि घाव बहुत गहरा है।"

"बचाया जा सके, तो बचा लो। उससे हमें बहुत लम्बा हिसाब चुकाना है।"

"क्या कीजियेगा बचा कर ? मरता है, तो मरने दीजिये।"

× × ×

नौ दिन तक भीमसेन थापा उसी काल कोठरी में घायल पड़े तड़पते रहे। घाव में सड़न पैदा हो गई ; ज्वर खूब तेज़ हो गया। रोम-रोम पीड़ा से व्याकुल था। परन्तु प्राण शरीर से बाहर निकलते ही नहीं थे। नौवें दिन शाम को उनकी इस भीषण यंत्रणा का अन्त हुआ। किसी ने उन्हें दवाई नहीं दी। किसी ने उनके सिर पर सान्त्वना का हाथ नहीं रखा। अन्तिम दो दिनों में तो किसी ने उनकी कोठरी के भीतर कदम भी नहीं रखा।

जब निश्चय हो गया कि उनके प्राण शरीर को छोड़ गये हैं, तब कोठरी का द्वार खोला गया और भीमसेन थापा की सड़ती हुई लाश गिद्ध-कुत्तों के खाने के लिए खुले मैदान में डाल दी गई। राज-कोप के भय से किसी ने उस ओर मुँह उठा कर देखा तक नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

29

उस हाथ ले

भीमसेन थापा को ठिकाने लगाने के बाद रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी और प्रधानमंत्री रणजंग पांडेय ने नेपाल को सशक्त बनाने की ओर ध्यान दिया। उन्होंने नेपाल की सेना को नये सिरे से संगठित करना शुरू किया। इससे अंग्रेज़ रैज़ीडैंट हौगसन के कान खड़े हुए।

अंग्रेज़ों के विषय में रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी और रणजंग पांडेय के विचार एक-से नहीं थे। रणजंग पांडेय अंग्रेज़ रैज़ीडैंट से मिलता रहता था और भीमसेन थापा के पतन में अंग्रेज़ रैज़ीडैंट का काफ़ी हाथ रहा था। रणजंग पांडेय रैज़ीडैंट के प्रति कृतज्ञता अनुभव करता था। पर रानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी को अंग्रेज़ों की सूरत से नफ़रत थी। भारत में अंग्रेज़ जो कुछ चालें चल रहे थे, वे रानी को मालूम थीं। नेपाल पर भी जिस तरह वे धीरे-धीरे अपना शिकंजा कस रहे थे, वह रानी को बहुत बुरा लगता था। वह अंग्रेज़ों को अपना शत्रु समझती थी और उनसे निपटना चाहती थी।

रैज़ीडैंट हौगसन को अपने गुप्तचरों से यथेष्ट सूचनाएँ मिलती रहती थीं। उसने कलकत्ते में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के महाराज्यपाल को सूचित किया कि रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी अंग्रेज़ों की प्रबल शत्रु है। वह जितनी बुद्धिमती है, उतनी ही निष्ठुर भी है। वह अनेक भारतीय राजाओं से मिलकर अंग्रेज़ी प्रभुत्व को समाप्त करने के लिए षड्यन्त्र रच रही है। कुछ-न-कुछ उपाय किया जाना चाहिए।

परिणाम यह हुआ कि अंग्रेज़ी सेना ने नेपाल से छेड़खानी शुरू कर दी। गोरखा सेना ने भी रक्षात्मक कार्रवाई की। पर शीघ्र ही रानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी ने अनुभव किया कि अभी अंग्रेज़ों से लड़ने का समय नहीं आया है। नेपाल की तुलना में अंग्रेज़ों की शक्ति बहुत अधिक है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसलिए गोरखा सेना, जो भारत के अंग्रेज़ी प्रदेश में घुस गई थी, वापस लौटा ली गई ।

परन्तु नेपाल में अंग्रेज़ों के विरुद्ध कटुता बहुत बढ़ गई । एक रात काठमांडौ के बारूदघर में आग लग गई । यह बारूदघर अंग्रेज़ी रैज़ीडैंसी के साथ लगा हुआ था । इस आग में बारूदघर और रैज़ीडैंसी दोनों पूरी तरह नष्ट हो गये । रैज़ीडैंट संयोगवश उस समय कहीं बाहर गया था, अतः वह बच गया । अंग्रेज़ों ने यही माना कि बारूदघर में आग जान बूझ कर रैज़ीडैंट समेत रैज़ीडैंसी के विनाश के लिए लगाई गई थी ।

परन्तु धूर्त अंग्रेज़ नेपाल के साथ मित्रता का अभिनय करते रहे । उन्होंने 1841 के अक्टूबर के शुरू में राजा और रानी को तराई के जंगलों में शिकार खेलने के लिए निमंत्रित किया । अंग्रेज़ महाराज्यपाल भी इस अवसर पर शिकार का आनन्द लेने के लिए उपस्थित थे ।

शिकार तो आपस में मिलने-जुलने का निमित्त मात्र होता था । इस अवसर पर हँसी-खुशी के वातावरण में सहभोज और नृत्य-गीत होते । बहुत से कलह और विवाद शान्तिपूर्वक निपटा दिये जाते । शिकार का यह मनोरंजक कार्यक्रम कई दिन तक चलता ।

छह अक्टूबर को दोपहर के भोजन के बाद एकाएक रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी की तबियत बहुत बिगड़ गई । वमन और दस्तों के अलावा शरीर में ऐंठन सी होने लगी । वैद्यराज को बुलाया गया, तो उन्होंने कहा कि यह स्पष्ट ही विष का प्रभाव है । विष भोजन में दिया गया है ।

उपचार किया गया, किन्तु उससे विशेष लाभ नहीं हुआ । कुछ ही देर में रानी अचेत हो गई । राजेन्द्रविक्रमशाह कुछ समझ ही न सके कि अब क्या किया जाये ।

अंग्रेज़ अफ़सरों को पता चला, तो वे तुरन्त व्यग्र होकर सहानुभूति जताने पहुँचे । उन्होंने अपने डाक्टर की सेवाएँ भी प्रस्तुत कीं, किन्तु उन्हें स्वीकार नहीं किया गया । कुछ घंटे अचेत रहने के बाद रानी ने दम तोड़ दिया ।

सारे शिकार शिविर पर शोक का बादल छा गया । सब कार्यक्रम रद्द कर दिये गये । स्वयं अंग्रेज़ महाराज्यपाल ने आ कर राजेन्द्रवीरविक्रमशाह से इस शोक में समवेदना प्रकट की । पर जो हो चुका था, उस पर किसी का क्या बस था !

रानी की वहीं अन्त्येष्टि करके अपने अनुचरों समेत राजेन्द्रवीरविक्रमशाह काठमांडौ लौट आये ।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी की इस आकस्मिक मृत्यु से काठमांडौ का राजनीतिक ढाँचा बुरी तरह लड़खड़ा गया। तराजू की डंडी, जो पहले एक विशेष संतुलन में स्थिर थी, काफ़ी देर तक हचकोले लेते रहने के बाद एक नये ही संतुलन में जा कर टिकी।

साम्राज्यलक्ष्मी देवी के प्रभुत्व के दिनों में राज्यलक्ष्मीदेवी की पूछ कम थी। फिर भी उससे सहानुभूति रखने वाले हितैषी लोग थे। यह ठीक है कि उनकी चलती नहीं थी। रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी ने अपनी उग्र नीतियों से एक वर्ग को अपना समर्थक और एक अन्य वर्ग को अपना विरोधी बना लिया था। इस विरोधी वर्ग की सहानुभूति स्वभावतः रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के साथ थी। पर न तो रानी राज्यलक्ष्मीदेवी और न उनके समर्थकों को ही यह आशा थी कि उनके दिन इतनी जल्दी फिर जायेंगे। साम्राज्यलक्ष्मी देवी खूब स्वस्थ और सक्रिय थीं। सभी को आशा थी कि वह अच्छा दीर्घ जीवन प्राप्त करेंगी। उनकी असमय मृत्यु से उनके समर्थकों पर वज्र सा गिर पड़ा और रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के हितैषियों की बांछें खिल गईं।

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह पहले बड़ी रानी के सहारे चलते थे, अब छोटी रानी के सहारे चलने लगे। उनमें अपने सहारे चलने की क्षमता थी ही नहीं। रानी राज्यलक्ष्मीदेवी ने शीघ्र ही दिखा दिया कि बुद्धि, कुटिलता और विद्वेष, किसी में भी वह अपनी स्वर्गीया सौत से कम नहीं है।

जो लोग बड़ी रानी के कृपापात्र रहे थे, वे केवल इसी कारण छोटी रानी के कोपभाजन बन गये। बड़ी रानी ने थापाओं को चुन-चुन कर ऊँचे पदों से हटाया था और उनकी जगह पांडेयों को रखा था। अब रानी राज्यलक्ष्मीदेवी ने उस प्रक्रिया को उलट दिया। सबसे पहले रणजंग पांडेय को प्रधानमंत्री पद से हटा दिया गया। उससे रानी को इतनी चिढ़ थी कि नया प्रधानमंत्री कौन होगा, इसका निश्चय करने से पहले ही रणजंग पांडेय को पदच्युत कर दिया गया।

अब प्रधानमंत्री पद के लिए सुपात्र की खोज शुरू हुई। भीमसेन थापा तो अब रहे ही नहीं थे। पर उनके भतीजे मातबरसिंह ने अपनी योग्यता से नेपाल दरबार को काफ़ी प्रभावित किया था। उन्हें तो भीनसेन थापा का भतीजा होने के कारण ही पहले जेल और फिर नेपाल से बाहर जाना पड़ा था। अब रानी राज्यलक्ष्मीदेवी ने महाराज से आग्रह किया कि उन्हीं मातबरसिंह को नेपाल का प्रधानमंत्री बनाया जाये। महाराज ने इस सुझाव को तुरन्त स्वीकार कर लिया। नेपाल के इतिहास ने एक नई करवट बदली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

30

जंगबहादुर

जनरल मातवरसिंह जब प्रधानमंत्री बने, तब से ही उनके पास कृपा-कांक्षियों का तांता लग गया। जो भी कोई व्यक्ति उनके साथ अपना निकट या दूर का सम्बन्ध खोज सका, वही उनके प्रधानमंत्री बनने का लाभ उठाने के लिए काठमांडौ में आ उपस्थित हुआ। सरकारी नौकरी के दो ही तो लाभ हैं—मित्रों का उपकार और शत्रुओं का अपकार। जनरल मातवरसिंह सहृदय और विवेकशील पुरुष थे। इस प्रकार असली या नकली सम्बन्ध ढूँढ कर आने वाले सब व्यक्तियों को अनुगृहीत कर पाना उनके लिए कठिन था। फिर भी जो लोग पहले पहुँचे, या जिनका सम्बन्ध और परिचय घनिष्ठ रहा, उनका तो कार्य सिद्ध हो ही गया। इन सबका कार्य एक ही था—किसी अच्छे सरकारी पद पर नियुक्ति। यह नहीं कि इनमें सब व्यक्ति अयोग्य हों, किन्तु वे अपनी योग्यता से अधिक प्रतिफल देने वाली नौकरी पाना चाहते थे। वह—जैसा कि सब राज्यों में सदा होता रहा है—परिचय और पहुँच के ज़ोर से उन्हें मिल गई। ऐसे व्यक्तियों की संख्या बहुत कम थी, जो बिलकुल नालायक होते हुए भी मोटे वेतन वाले पदों पर बिठा दिये गये थे। ऐसे व्यक्तियों की संख्या का कम होना ही जनरल मातबरसिंह की विवेकशीलता और कुशलता का प्रमाण था और ऐसे व्यक्तियों का होना उनकी सहृदयता का।

पर शीघ्र ही प्रधानमंत्री की विवेकशीलता अधिक और सहृदयता कम प्रकट होने लगी। जिन पदों पर नये लोगों की नियुक्ति की जा सकती थी, वे सीमित थे। जब वे भर गये, तब प्रधानमंत्री को अपना कृपालु हाथ समेट लेना पड़ा और कोई न कोई विवशता जता कर कृपाकांक्षियों को अगले अवसर की प्रतीक्षा करने का परामर्श देना पड़ा। आवश्यकता होने पर नये पद भी बनाये जाते थे, पर केवल उन्हीं लोगों के लिए, जिनके साथ प्रधानमंत्री अत्यधिक आत्मीयता अनुभव करते थे।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जनरल मातबरसिंह का भानजा जंगबहादुर प्रधानमंत्री से कृपा-याचना की इस दौड़ में काफ़ी पीछे रहा। यह नहीं कि कृपा पाने की आकांक्षा उसमें कम थी, बल्कि जिस समय कृपा प्राप्त करने का यह सुयोग बना, उस समय वह ब्रह्मदेश में हाथी पकड़ने वाले ठेकेदारों के पास नौकरी कर रहा था। यह बहुत ही घटिया नौकरी थी, जिसमें नाममात्र वेतन के लिए आये दिन प्राणों को जोखिम में डालना पड़ता था। प्रत्येक दिन जीवन का अन्तिम दिन प्रतीत होता था। वह इस नौकरी को करना नहीं चाहता था, पर बड़ी विवशता में कर रहा था। मामा के प्रधानमन्त्री बनने की खबर दूर ब्रह्मदेश में उसके पास पहुंचने में समय लगा। पर खबर मिलने के बाद उसने विलम्ब नहीं किया। वह सीधा काठमांडौ पहुँचा। जब वह पहुँचा, तब तक मातबरसिंह की विवेकशीलता उनकी सहृदयता पर हावी हो चुकी थी।

जंगबहादुर मातबरसिंह का भानजा अवश्य था, परन्तु वह उनसे कई वर्षों से नहीं मिला था। बचपन में उन्होंने उसे कभी देखा होगा। उसके बाद मामा और भानजे के जीवनमार्ग इतनी भिन्न दशाओं में चले कि उनके कभी मिलने-जुलने का अवसर ही नहीं आया। मातबरसिंह सरकारी सेना में नौकर हो गये और तेज़ी से उन्नति की सीढ़ियाँ चढ़ते गये। जंगबहादुर उच्छृंखल स्वभाव और शिक्षा के अभाव के फलस्वरूप घर छोड़ कर निकल गया और बालकपन से ही आवारागर्द हो गया। अब वह युवक हो चुका था और उसकी सूरत शक्ल इतनी बदल चुकी थी कि मातबरसिंह उसे देख कर पहचान नहीं सकते थे। यह उन्हें अवश्य याद था कि उनका एक भानजा जंगबहादुर है और जब इस युवक ने दावा किया कि वह ही जंगबहादुर है, तब मातबरसिंह को यह मानने की हिम्मत नहीं हुई कि वह कोई धोखेबाज ठग है। भानजे को मामा की शरण मिलनी ही चाहिए।

पर जंगबहादुर के पास ऐसी कोई योग्यता नहीं थी, जिसके आधार पर उसे तुरत-फुरत किसी कुर्सी पर बिठाया जा सकता। अतः मातबरसिंह ने कहा: "अभी तुम कुछ दिन हमारे घर रहो। मौका देखकर किसी अच्छी नौकरी पर लगा देंगे।"

जंगबहादुर ने समझा कि यह टालने की बात है। अतः उसने अत्यधिक विनय और दीनता प्रदर्शित करते हुए कहा: "मामाजी, आपके पास रह कर तो मुझे बहुत खुशी होगी। पर मेरे पिछले दिन बहुत ही मुसीबतों में गुज़रे हैं। मेरा हाथ बहुत तंग है। लोगों का कुछ देना भी हो गया है। बिना वेतन के मेरा गुज़ारा नहीं होगा। कोई नौकरी मिल जाये, तो आपकी बड़ी दया होगी। वह अहसान मैं कभी नहीं भूलूंगा।"

नौकरी के लिए उसका यह आग्रह मातबरसिंह को पसन्द नहीं आया, विशेष रूप से तब, जबकि वह उसे भविष्य के लिए आश्वासन दे रहे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्होंने क्षण भर सोचा कि तत्काल नौकरी कहाँ दी जा सकती है और फिर पूछा : "सेना में भर्ती होवोगे ?"

"जो भी आप कहेंगे, वह करूँगा ।"

"ठीक है । तो तुम्हें सेना में लगा देते हैं ।" और उन्होंने उसे सेना में मामूली-सा अफ़सर नियुक्त कर दिया । कुछ तो लोक-व्यवहार की दृष्टि से और कुछ अपनी सुविधा की दृष्टि से उन्होंने उसके रहने की व्यवस्था अपने घर पर ही कर दी । जंगबहादुर ने इसे खुशी से स्वीकार किया । ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, त्यों-त्यों जंगबहादुर को यह अनुभव होने लगा कि मामा ने नौकरी देने से भी बढ़ कर उस पर उपकार उसे अपने घर रख कर किया है ।

× × ×

हौगसन की जगह अब कर्नल लारैन्स अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट बन कर काठमांडौ आया था । वह किसी ऐसे व्यक्ति की खोज में था, जिससे उसे नेपाल की राजनीति का भीतरी हाल मालूम होता रहे । राजनीति के केन्द्र बिन्दु दो थे—एक तो राजमहल, जहाँ रानी राज्यलक्ष्मीदेवी राज्य की सर्वेसर्वा बनी हुई थीं और दूसरे प्रधानमन्त्री जनरल मातबरसिंह । राजमहल की खबरें पाने के लिए कर्नल लारैन्स के पास प्रबन्ध था । पर मातबरसिंह हाल में ही प्रधानमन्त्री बने थे, अतः उनके घर की खबरें गुप्त रूप से प्राप्त करने के लिए कुछ प्रबन्ध करना आवश्यक था । काफ़ी सोच-विचार के बाद उसकी दृष्टि जंगबहादुर पर आकर टिकी । उसने अपने एक नेपाली कर्मचारी से पूछा : "जनरल मातबर-सिंह के यहाँ जो एक जंगबहादुर नाम का आदमी रहता है, वह कौन है ? कैसा आदमी है ?"

'सुना है कि वह जनरल साहब का भानजा है । बाकी बातें पूछ कर बता सकता हूँ ।" उस कर्मचारी ने कहा ।

"हाँ हाँ, ज़रूर पता करो और मुझे बताना ।"

तीन-चार दिन बाद उस चतुर कर्मचारी ने जंगबहादुर का कच्चा चिट्ठा रैज़ीडैन्ट के सामने ला रखा । उसने बताया कि जंगबहादुर जनरल मातबरसिंह का भानजा अवश्य है, किन्तु वह जनरल साहब की सगी बहन का पुत्र नहीं है । वह कोई मौसेरी, दूर के रिश्ते की बहन है । जंगबहादुर काठमांडौ में अभी आया है । इससे पहले वह राजधानी से बाहर दूसरी जगहों पर ही रहता रहा है । कहते हैं कि उसने एक कत्ल कर दिया था । उसके बाद पुलिस के डर से वह नेपाल छोड़ कर भाग गया । अब बहुत बरसों के बाद लौट कर आया है ।

कर्नल लारैंस ने पूछा : "वह कत्ल किस मामले में था ?"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"कोई खास बात नहीं थी। यह जंगबहादुर एक जुआघर में नौकर था।..."

"जुआघर में ?"

"जी हाँ। जुआघर के ठेकेदारों को दो एक ऐसे आदमियों की ज़रूरत रहती है, जो ज़रूरत पड़ने पर गुंडों से निपट सकें। उन्होंने जंगबहादुर को ऐसे ही काम के लिए रखा हुआ था। एक दिन शराब के नशे में चूर जंगबहादुर की एक छोकरे से कुछ कहासुनी हो गई। वह लड़का खूब तगड़ा था। उसने जंगबहादुर की अच्छी तरह पिटाई की और अन्त में उसे गन्दे पानी की नाली में दे पटका। इस अपमान से क्रुद्ध होकर जंगबहादुर ने अपनी कमर में बँधी खुखरी निकाली और उस छोकरे पर हमला कर दिया। बहुत-से लोग इस झगड़े को देख रहे थे, पर किसी ने यह नहीं सोचा था कि बात यहाँ तक बढ़ जायेगी। जब तक लोग बीच-बचाव करें, तब तक जंगबहादुर ने खुखरी से उस लड़के का पेट ही चीर डाला। खून की धार बह निकली और अन्तड़ियाँ बाहर निकल आईं। खून देखते ही जंगबहादुर का नशा हिरन हो गया और वह जुआघर के मालिकों से कुछ भी कहे-सुने बिना ऐसा भागा कि उसका कुछ पता ही न चला।"

"आदमी दबंग मालूम होता है" कर्नल लारैन्स ने जंगबहादुर की आकृति को अपने मन में चित्रित करते हुए कहा।

"दबंग भी कुछ विशेष नहीं है। पर हाँ, कभी-कभी ऐसे मौकों पर, जहाँ दूसरा आदमी कदम बढ़ाते दस बार सोचे, वह झोंक में आकर हिम्मत का काम कर जाता है। अपनी बहादुरी का एक किस्सा वह स्वयं बड़े शौक से सुनाया करता है। उन दिनों वह विराटनगर में था। वह छोटा-सा कस्बा है। एक दिन वहाँ के जमींदार का एक हाथी बेकाबू हो गया और अपने महावत को पटक कर पागल सा होकर बाज़ार में दौड़ पड़ा। उसे आते देख कर लोग अपनी-अपनी जान बचाने को भागे। जो समय रहते नहीं भाग सके, वे उसके पैरों तले कुचले गये। कुछ ही मिनट में सारे कस्बे में आतंक छा गया। उस मस्त हाथी के पास जाने और उसे काबू करने के लिए कोई भी तैयार न हुआ।

"जंगबहादुर को पता चला, तो वह तुरन्त उस हाथी से निपटने के लिए चल पड़ा। एक अंकुश लेकर वह उस बाज़ार में, जिसमें हाथी ऊधम मचाता कभी इधर, कभी उधर फिर रहा था, एक दूकान के ऊँचे छज्जे पर चढ़ गया। लोगों ने मिल कर एक ओर से शोर मचाया, तो हाथी बाज़ार में दूसरी ओर को भागा। जब वह जंगबहादुर की ओर आ रहा था, तब जंगबहादुर ने अपनी टोपी उतार कर सड़क पर फेंक दी। हाथी ठिठक कर रुका और

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धीरे-धीरे चलता हुग्रा उस टोपी के पास पहुँचा । वह ग्रभी टोपी को सूंघ ही रहा था कि पास के छज्जे से जंगबहादुर उसकी पीठ पर कूद पड़ा ।

"उसके पीठ पर पहुँचते ही हाथी चौंक कर बड़ी ज़ोर से चिघाड़ा ग्रौर उसे लिये तेज़ी से भागा । जंगबहादुर हाथी पर बैठने का ग्रभ्यस्त था, पर उस बिगड़े हुए हाथी की पीठ पर जम कर बैठना सचमुच बड़ी हिम्मत ग्रौर निपुणता का काम था । दौड़ते हुए हाथी की पीठ पर धीरे-धीरे ग्रागे सरक कर जंगबहादुर उसके सिर की ग्रोर बढ़ा ग्रौर पहला मौका मिलते ही उसने पूरा ज़ोर लगा कर ग्रंकुश हाथी के सिर में मारा । ग्रंकुश की गहरी चोट पड़ते ही हाथी का जोश कुछ ठंडा पड़ा । उसकी चाल मन्द हो गई ग्रौर वह सूंड उठा कर चिघाड़ने लगा । पर इन चिंघाड़ों में रोष के साथ-साथ वेदना भी मिश्रित थी ।

"जंगबहादुर हाथी की गर्दन के दोनों ग्रोर एक-एक पैर लटका कर इस तरह जम कर बैठ गया कि हाथी ग्रब किसी तरह उसे गिरा नहीं सकता था । वह जब भी सूंड ऊपर को करता, तभी जंगबहादुर उसे एक ग्रंकुश जमाता । कुछ ही देर में ग्रंकुश मार मार कर उसने हाथी को बेहाल कर दिया । जब हाथी का जोश पूरी तरह ठंडा हो गया, तब वह उसे हांक कर हथसाल में ले गया । वहाँ महावतों ने उसके चारों पैरों में लोहे की जंज़ीरें जकड़ दीं ।"

कर्नल लारैन्स बड़े ध्यान से सुन रहा था ; ग्रब बोला : "बहादुर ग्रादमी है तब तो । मरने से डरता नहीं ?"

"ऐसा ही समझिये । बाज़ी जीतने के लिए वह जान पर खेल जाता है ।"

"ठीक है । ऐसा ग्रादमी हमको पसन्द है ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

31

धूर्त सियार

कुछ दिन पहले रेज़ीडैन्ट कर्नल लारैन्स जब प्रधानमंत्री मातबरसिंह से मिलने गया था, तब उसकी भेंट वहाँ जंगबहादुर से हुई थी। उसने स्वयं ही आगे बढ़ कर जंगबहादुर से परिचय बनाते हुए कहा था : "आप ही जंगबहादुर हैं न ? मैं कर्नल लारैन्स हूँ—अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट। आपसे मिल कर बड़ी प्रसन्नता हुई।"

जंगबहादुर उत्तर में केवल स्वीकृतिसूचक सिर हिलाकर खड़ा रहा। वह क्या उत्तर दे, या आगे क्या बात चलाये, यह उसे कुछ नहीं सूझा। पोशाक उसने खूब बढ़िया पहनी हुई थी। कर्नल लारैन्स ने ही फिर बात बढ़ाई : "प्रधान मंत्री आपके मामा होते हैं ?"

"जी हाँ।" जंगबहादुर ने संक्षिप्त सा उत्तर दिया।

"तो फिर किसी दिन रैज़ीडैन्सी में आइये न। शाम की चाय वहीं पीजिये।"

क्षण भर तो जंगबहादुर मुँह बाये उसकी ओर खड़ा देखता रहा। उसे समझ ही न आया कि अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट उसे अपने यहाँ चाय पीने का निमंत्रण दे सकता है। पर जब दो-चार क्षण बाद यह बात उसकी बुद्धि में पैठी, तब उसने थोडा-सा हड़बड़ा कर कहा : "अच्छा, अच्छा। अवश्य आऊँगा।"

"किस दिन ?" कर्नल लारैन्स ने आग्रहपूर्वक पूछा।

"जब भी आप कहें।"

"तो इसी शनिवार को। आज मंगलवार है। शाम को साढ़े तीन बजे।"

"ठीक है।"

"तो पक्का रहा ? भूलना नहीं।" कह कर कर्नल लारैन्स लौट पड़ा। उसके मुख पर सन्तोष की झलक थी।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आज वही शनिवार था। कर्नल लारैन्स तीन बजे से ही जंगबहादुर की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने उसके स्वागत के लिए कोई विशेष आयोजन नहीं किया था। कोठी के उद्यान में हरी घास पर ही मेज़ कुर्सियाँ बिछा कर चाय का प्रबन्ध किया गया था।

जंगबहादुर के आने पर कर्नल लारैन्स ने अपनी पत्नी और पुत्री से उसका परिचय कराया : "आप हैं श्री जंगबहादुर, प्रधान मंत्री मातबरसिंह के भानजे। यह मेरी पत्नी है और यह है मेरी पुत्री।"

"आपसे मिल कर बड़ी प्रसन्नता हुई !" दोनों पक्षों ने बारी-बारी से कहा।

पहले दिन के अनुभव से कर्नल लारैन्स को पता था कि उनका यह अतिथि वार्तालाप में बहुत कुशल नहीं है, अतः बातचीत को एकदम ठप होने से रोकने का ज़िम्मा उनके अपने ही सिर रहेगा। उन्हें निरन्तर कुछ न कुछ ऐसे प्रश्न पूछते या ऐसे प्रसंग छेड़ते रहना होगा, जिनके उत्तर देने में जंगबहादुर को कठिनाई न हो।

"अब काठमांडौ का मौसम बहुत प्यारा हो गया है" कर्नल लारैन्स ने कहा।

शरद् ऋतु समाप्त हो रही थी और हेमन्त शुरू होने वाली थी। सवेरे नौ बजे तक सारी काठमांडौ घाटी सफेद कुहरे से ढँकी रहती थी। उसके बाद दिन की गर्मी से कुहरा तेज़ी से हटना शुरू होता था। कुछ देर बाद ऊपर नीला आकाश चमकने लगता था और ओस से भीगी भूमि पर धूप खिल उठती थी। दिन भर हवा में हल्की ठंड बनी रहती थी, जिसके कारण धूप में बैठना भला लगता था। जंगबहादुर ने कहा : "बस ये थोड़े से ही दिन और हैं। उसके बाद सर्दी बढ़ जायेगी।"

"हमें सर्दी बुरी नहीं लगती। हमारे इंग्लैंड में खूब सर्दी पड़ती है।"

"हमारे यहाँ सर्दी की ऋतु ही सबसे कष्टदायक होती है। अन्य ऋतुओं में कपड़े की बहुत आवश्यकता नहीं होती। पर सर्दियों में कपड़े के बिना निर्वाह नहीं।"

मौसम की चर्चा काफ़ी हो ली, तो कर्नल लारैन्स ने दूसरा विषय छेड़ा। "आपको शिकार का तो शौक है न ?"

"शिकार का शौक किसे नहीं है ? पर शिकार का मज़ा तो तराई में है। इस घाटी में शिकार बहुत कम है।"

"हम तो कई बार खरगोश और लोमड़ी मार कर लाये हैं।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जंगबहादुर तनिक हँसा। बोला : "हाँ हाँ। वह भी शिकार ही है। मेरे मन में बड़े शिकार की बात थी। बाघ, तेंदुग्रा, गैंडा, हाथी, भालू। इनका शिकार मुझे पसन्द है। यह शिकार तराई में ही मिलता है।"

बाघ ग्रौर भालू का नाम सुन कर श्रीमती लारैन्स ग्रौर उससे भी ग्रधिक कुमारी लारैन्स का मन कुतूहल से भर उठा। श्रीमती लारैन्स ने पूछा : "ग्रापने बाघ या भालू मारा है?"

"बीसियों बार!" जंगबहादुर ने झूठी शेखी बघारते हुए कहा। यह नहीं कि वह बाघ या भालू को मार नहीं सकता था, पर सचाई यह थी कि ग्रपने गरीब ग्रौर व्यस्त जीवन में उसे बाघ या भालू का शिकार करने का सुग्रवसर नहीं मिला था।

"कैसे मारा? मचान पर बैठ कर बन्दूक से?" कुमारी लारैन्स ने पूछा। बीसियों बार बाघ ग्रौर भालुग्रों को मारने वाला व्यक्ति उसे ग्राकर्षक लग रहा था।

"एक दो बार बन्दूक से भी मारा। पर ग्रधिकतर ग्रामने-सामने खड़े होकर इस खुखरी से ही मारा।" उसने ग्रपनी कमर में बँधी हुई खुखरी की ग्रोर इशारा किया।

"खुखरी से?" कुमारी लारैन्स ने ग्रत्यधिक ग्राश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा। "तो बाघ हमला नहीं करता?"

"करता है। ज़रा-सी चूक हो जाये, तो मार भी डालता है। एक बार मुझे भी घायल कर दिया था।" कहते हुए जंगबहादुर ने बांह पर से कपड़ा हटा कर एक घाव का निशान दिखाया। यहाँ उसका पंजा पड़ा था। "सारा मांस उसने उतार लिया था। पर मैंने होश-हवास नहीं खोये ग्रौर ग्रागे बढ़ कर खुखरी उसके पेट में घोंग ही दी। खुखरी बाहर निकलते ही बाघ ढेर हो गया।"

जंगबहादुर की बांह पर एक बड़े घाव का निशान था ग्रवश्य, पर वह ग्रापसी मारपीट में लगी चोट का था। शिकार के सच्चे वर्णन उसने इतने ग्रधिक सुने थे कि उसे उस चोट को बाघ के पंजे का प्रहार बनाने में कोई कठिनाई नहीं हुई। कर्नल लारैन्स ने भी कभी बाघ का शिकार नहीं किया था। उन्हें यह मालूम ही था कि जंगबहादुर बहुत दबंग ग्रौर निर्भीक पुरुष है। ग्रतः उन्होंने भी यह मान लिया कि जंगबहादुर ने सचमुच ही खुखरी से बाघ को मारा होगा। वैसे यदि यह बात सच होती, तो जंगबहादुर के विषय में जानकारी एकत्रित करके लाने वाले कर्मचारी ने यही बात उन्हें सबसे पहले बताई होती। खुखरी ले कर बाघ से ग्रामने-सामने खड़े होकर लड़ना बिगड़ैल हाथी को वश में करने से कम बहादुरी का काम नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रीमती लारैन्स और कुमारी लारैन्स श्रद्धाविगलित होकर जंगबहादुर को देखने लगीं और अपनी दृष्टि से ही मानो उसकी बांह पर बने उस घाव के निशान को सहानुभूतिपूर्वक सहलाने लगीं।

"और भालू ?" कुमारी लारैन्स ने पूछा।

"भालू बड़ा सुस्त और लद्धड़ होता है। बाघ और तेंदुए फुर्तीले बहुत होते हैं। उनकी तुलना में भालू को मारना बहुत आसान है।"

"भालू को भी खुखरी से ही मारा ?" श्रीमती लारैन्स ने पूछा।

"नहीं। भालू के बाल लम्बे होते हैं। खुखरी का वार पूरा नहीं बैठता। चूक सकता है। भालू को तो डंडे से ही मारा।"

"डंडे से ?" कुमारी लारैन्स ने कहा : "कभी नहीं।"

"बिल्कुल !" जंगबहादुर ने दृढ़ और स्वाभाविक स्वर में कहा। "भालू को मारने के लिए हम दो डंडे लेकर जाते हैं। जब भालू हमला करने आता है, तब वह आदमी की तरह पिछले दो पैरों पर खड़ा होकर आदमी का मुँह नोंचने की चेष्टा करता है। उस समय हम एक डंडा इस तरह उसके सामने कर देते हैं कि वह उसे अपने दोनों हाथों से पकड़ सके। उस डंडे को पकड़ कर भालू समझता है कि मैंने अपने शिकार को पकड़ लिया है और वह उसे मज़बूती से पकड़े रहता है। उस समय हम उसे दूसरे डंडे से पीटना शुरू कर देते हैं। पिटते-पिटते भालू मर जाता है, पर उस डंडे को नहीं छोड़ता, जिसे वह शिकार समझ कर मज़बूती से अपने हाथों में पकड़े रहता है।"

"नहीं-नहीं। ऐसा नहीं हो सकता। भालू इतना मूर्ख नही हो सकता!" कुमारी लारैन्स ने घोर अविश्वास प्रकट किया।

"इतना मूर्ख होता है। विश्वास न हो तो कभी आप लोग हमारे साथ शिकार के लिए चलें। मैं दिखा दूँगा।"

"होता होगा बेटी, होता होगा। जब इन्होंने खुद मारा है।" श्रीमती लारैन्स ने कहा। उसके बाद जंगबहादुर से पूछा : "और हाथी को कैसे मारते हैं ?"

"हाथी मैंने कभी नहीं मारा। हाँ, जंगली हाथियों को पकड़ा बहुत है।"

"जंगली हाथियों को पकड़ा है ?" कुमारी लारैन्स ने फिर इतना आश्चर्य प्रकट किया कि वह अविश्वास की सीमा तक जा पहुँचा।

बाघ और भालू के विषय में जंगबहादुर भले ही कच्ची ज़मीन पर रहा हो, किन्तु हाथियों के विषय में उसके अनुभव सच्चे थे और बहुत थे। उसने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहा : "शौक के लिए नहीं, अपितु जीविका के लिए मैं हाथी पकड़ता रहा हूँ। उन्हें वेच कर जो पैसा मिलता था, उसी से मैं निर्वाह करता था। काम मज़ेदार है।"

कर्नल लारैन्स के संकेत पर चाय आ गई। साथ कुछ मिठाई और मेवे भी थे। श्रीमती लारैन्स ने चाय प्यालों में डाली। चाय पान होता रहा और जंगबहादुर जंगली हाथियों को पकड़ने के अपने रोमांचकारी अनुभव सुनाता रहा। इन अनुभवों को सुनने और सुनाने में सुनने और सुनाने वाले, दोनों को ही इतना आनन्द आया कि यह गोष्ठी तब तक जमी रही, जब तक कि सूर्य अस्ताचल पर ही न पहुँच गया।

कर्नल लारैन्स ने कहा : "अब ठंड हो चली है। हमें कमरे में चलना चाहिए।"

जंगबहादुर ने संध्या की फैलती हुई छायाओं को देखा, तो कहा : "ओहो, बहुत देर हो गई। बातचीत में समय का कुछ पता ही न चला। अच्छा, अब मैं चलूँगा। आपके यहाँ चाय पी कर बहुत आनन्द आया।"

कर्नल लारैन्स ने कहा : "अगली बार के लिए अभी से निमंत्रण दिये देता हूँ। जब भी आपको फुरसत मिले, खुशी से यहाँ आइये। आपका सदा स्वागत है। आपकी गोष्ठी से हमें बहुत ही आनन्द मिला।"

"यह स्थायी निमंत्रण आपको बहुत महँगा पड़ेगा" जंगबहादुर ने हँसते हुए कहा।

"उसके लिए हम तैयार हैं" कुमारी लारैन्स ने कहा। जंगबहादुर की बातें उसे सचमुच ही बहुत पसन्द आई थीं।

उन लोगों से विदा लेकर जब जंगबहादुर चला, तब उसे लगा कि सचमुच ही यह स्थान बार-बार आने लायक है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

32

बाबा हरिहरनाथ

बाबा हरिहरनाथ गोरखपन्थी कनफटे साधु थे। किसी समय उन्होंने हठयोग का बहुत अभ्यास किया था, किन्तु अब बहुत वर्षों से वह उसे छोड़ चुके थे। उन दिनों तांत्रिकों का बोलबाला था और तान्त्रिक साधना में सुरा तथा अन्य नशीले पदार्थों का प्रचुर प्रयोग किया जाता था। बहुत पहले कभी बाबा ने इन पदार्थों का सेवन किया हो, तो किया हो, किन्तु अब तो वह बिल्कुल सन्तों का सा जीवन व्यतीत करते थे। उनका बाना अब भी वही था। कानों में बड़े-बड़े छेद करके पहने हुए मोटे-मोटे कुण्डल ! गले में रुद्राक्ष की माला। वस्त्र के नाम पर मात्र एक कौपीन।

बाबा की आयु कितनी थी, इस विषय में किसी को कुछ पता नहीं था। चेहरे को देखने से कुछ भी अनुमान नहीं होता था। हाथ-पैरों की झुर्रियों से वह अस्सी-नव्वे वर्ष के प्रतीत होते थे, पर मुख और आँखों की चमक से वह साठ वर्ष से अधिक के नहीं जान पड़ते थे। उनका रंग तांबे की तरह लाल था। सिर के बाल कुछ उड़ गये थे। पर जो बचे थे, वे भी सब सफ़ेद नहीं हुए थे। कालापन कुछ-कुछ बाकी था।

उनका चेला मस्तनाथ लम्बा तड़ंगा, हट्टा-कट्टा और मुस्टंडा था। उसका रंग खूब गोरा था। उसकी आयु तीस-पैंतीस वर्ष के आस-पास होगी। उसके कानों में भी काले रंग के बड़े-बड़े कुण्डल थे। वह गले में बहुत सारी मालाएँ पहने रहता था। उसका कौपीन घुटनों से नीचे तक रहता था और वह गेरुए रंग की एक चादर कन्धों पर भी डाले रहता था।

गुरु और चेले, दोनों का निर्वाह भिक्षा से ही होता था। यों बाबा हरिहरनाथ का बड़ा प्रभाव था। बड़े-बड़े धनी मानी पुरुष उनके दर्शन करने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और उनका आशीर्वाद प्राप्त करने आते थे। वे श्रद्धा से फल, मिष्टान्न और मेवे भेंट कर जाते थे। पर बाबा को किसी प्रकार की तृष्णा नहीं थी। वह इस प्रकार प्राप्त हुआ सब सामान दर्शन के लिए आने वाले भक्तों में ही बाँट देते थे। अपने उदरपालन के लिए वह सद्गृहस्थों के द्वार पर मिली भिक्षा पर ही निर्भर रहते थे। भिक्षा के लिए कभी-कभी गुरु और चेला दोनों साथ जाते और कभी अकेला मस्तनाथ ही चला जाता।

ये दोनों बाबा उड़ते पंछी थे। साधु को एक जगह तीन दिन से अधिक निवास नहीं करना चाहिए, इस नियम का वे दृढ़तापूर्वक तो पालन नहीं करते थे, पर कहीं एक जगह जम कर रहते भी नहीं थे। काठमांडौ आते, तो कभी गुरु गोरखनाथ के मन्दिर—काष्ठ मंडप—में ठहरते और कभी बागमती के पार गुह्येश्वरी के मन्दिर में जा टिकते। मन की मौज के अनुसार महीना बीस दिन वहाँ रहते, उसके बाद फिर किसी नई जगह के लिए निकल पड़ते। पर काठमांडौ में कुछ ऐसा आकर्षण था कि वे बीच-बीच में वहाँ आते रहते थे।

बाबा चाहे गोरखनाथ मन्दिर में ठहरें, चाहे गुह्येश्वरी के मन्दिर में, भक्तों की भीड़ उनके पास बनी ही रहती थी। कुछ लोग केवल सत्संग करने आते थे, तो कुछ अपने अभावों की पूर्ति के लिए बाबा का आशीर्वाद लेने आते थे। कुछ केवल ज्ञान चर्चा करते थे, तो कुछ अपनी उलझनें सुलझाते थे। और मज़े की बात यह थी बाबा हर स्तर पर भक्तों के साथ बात करते थे। तपस्वियों और साधुओं से वह भक्ति और साधना का विवेचन करते, तो सद्गृहस्थों को उनकी घरेलू समस्याओं को हल करने का परामर्श देते थे और राजनेताओं से राजनीति के प्रश्नों पर वार्तालाप करते थे।

बाबा हरिहरनाथ की ख्याति थी कि वह त्रिकालदर्शी हैं। इस ख्याति का मुख्य कारण यह था कि बाबा के पास विविध वर्गों के बहुत लोग मिलने आते थे और वे बिना पूछे ही उन्हें तरह-तरह के समाचार बता जाते थे। इससे बाबा को अतीत और वर्तमान की घटनाओं का इतना ज्ञान रहता था कि उतना शायद ही किसी अन्य व्यक्ति को रहता हो। अपने सुलझे हुए मस्तिष्क और प्रखर बुद्धि से वह भविष्य की घटनाओं के लिए जो अनुमान लगाते थे, वे प्रायः सही निकल जाते थे। कुछ अनुमान गलत भी निकलते थे, पर वे कम होते थे और उनसे बाबा की त्रिकालदर्शिता की ख्याति पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता था—विशेष रूप से इसलिए कि न तो बाबा हरिहरनाथ ही त्रिकालदर्शी होने का दावा करते थे और न उनका चेला मस्तनाथ ही उनके बारे में ऐसी कोई बात कहता था। यह बात उनके भक्तों ने उड़ाई थी और भक्तों के प्रचार का प्रतिवाद कर पाना सदा कठिन होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उस दिन गुह्येश्वरी के मन्दिर में बाबा हरिहरनाथ के पास प्रधानमन्त्री जनरल मातवरसिंह, फतहजंग चौतरिया, राणा अभिमानसिंह और उनके दो-चार साथी बैठे थे। मस्तनाथ थोड़ा हट कर बैठा था और एक पेड़ की जड़ के पास दौड़ रही दो गिलहरियों को देख रहा था।

बाबा ने मातवरसिंह को लक्ष्य करके कहा : "तू अच्छे समय प्रधानमन्त्री बना है। अब यत्न करके नेपाल को सशक्त बना। जल्दी ही भारत में नेपाल की सहायता की आवश्यकता पड़ेगी।

"भगवन्, आप ठीक कहते हैं। पर यहाँ तो हमारे आपसी ईर्ष्या द्वेष ही हमें चैन नहीं लेने देते। हम आपस में लड़-लड़ कर कमज़ोर हो रहे हैं।"

"उसी से बचने के लिए कह रहा हूँ। भीमसेन थापा के साथ जो कुछ हुआ, वह मुझे मालूम है। उस कर्मठ पुरुष ने नेपाल का बल और गौरव बढ़ाने में कोई कसर उठा नहीं रखी। पर मौका मिलते ही पुरानी खानदानी शत्रुताएँ भड़क उठीं। भीमसेन के साथ जो हुआ, वह बहुत बुरा हुआ। पर अब उस बुराई को याद रखने और तूल देने का समय नहीं है। यह तो आपसी द्वेष को भुला कर संगठित होने का समय है।"

"पर जिन दुष्टों ने भीमसेन थापा पर अमानुषिक अत्याचार किये थे, उन्हें तो दंड मिलना ही चाहिए" राणा अभिमानसिंह ने कहा।

बाबा हरिहरनाथ थोड़ा-सा मुस्कराये, बोले : "यदि एक साथ दो जगह आग लगी हो—एक जगह छोटी-सी आग हो, जिससे थोड़ी-सी गठरी-मुठरी जल जाने का डर हो और दूसरी जगह बड़ी आग हो, जिसमें घर-द्वार, खेत-खलिहान सब कुछ जल जाने का खतरा हो, तो उस समय तो तू भी छोटी आग को बुझाने न जायेगा। बड़ी आग को ही पहले बुझायेगा। इस समय भारत में वह बड़ी आग लगी है, जिसमें सर्वस्व भस्म हो जाने का डर है।"

"पर भगवन्, हमें भारत से पहले अपनी समस्याएँ देखनी हैं" राणा अभिमानसिंह ने कहा।

"नेपाल और भारत क्या अलग हैं? भारत से अलग रह कर नेपाल का निर्वाह कहाँ है? नेपालियों और भारतीयों में क्या अन्तर है? अनादिकाल से दोनों मिलजुल कर रहे हैं और भविष्य में भी उन्हें मिल कर ही रहना पड़ेगा। उनमें से एक पर जो विपत्ति आयेगी, उससे दूसरा बचेगा नहीं। भारत की आग नेपाल की ही आग है।"

"यह तो मैं भी समझता हूँ भगवन्, कि नेपाल भारत से अलग-थलग नहीं रह सकता" मातबरसिंह बोले : 'दुर्गम पहाड़ों में घिरे होने के कारण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम भारत की राजनीति से कुछ ही दिन तक अप्रभावित रह सकते हैं। पर उसका प्रभाव हम पर पड़ेगा ही पड़ेगा। भारत पर यदि अंग्रेज़ी शासन बना रहा, तो देर-सबेर में हम भी बस कहने को ही स्वतन्त्र रह जायेंगे।"

"ठीक यही बात है। भारत में अज़ीमुल्ला खाँ मुझसे मिला, नाना धुन्धुपन्त पेशवा मिला, कुँवरसिंह भी मिला। सब यही अनुभव करते हैं, जैसे भी हो, इन फिरंगियों से पिंड छुड़ाना आवश्यक है। हिन्दुओं और मुसलमानों में भारत पर अधिकार करने के लिए कई सौ वर्ष तक लड़ाई होती रही है। जब जिसका बस चला है, दोनों ने ही एक दूसरे को मारा काटा है। पर अब हिन्दू और मुसलमान, दोनों यह अनुभव करते हैं कि यह तीसरा फिरंगी सबसे खतरनाक है। उन दोनों का धर्म-ईमान है, पर इस फिरंगी का कोई धर्म-ईमान नहीं है। इसका ईमान है केवल पैसा। इसके हथियार हैं छल, फरेब, बेईमानी और घूस। इसलिए हिन्दू और मुसलमान, दोनों ने संकल्प किया है कि वे आपस में बाद में निपटते रहेंगे, पहले इस परदेशी जोंक से अपना पिंड छुड़ायें, जो चुपचाप दोनों का ही खून पिये जा रही है। इस काम में वे लोग नेपाल से भी सहायता की आशा करते हैं। नेपाल तभी सहायता दे सकता है, जब वह स्वयं सशक्त हो।"

"इतने सशक्त तो हम हैं" फतहजंग चौतरिया ने कहा।

"कितने ?" बाबा ने हल्का-सा हँसते हुए पूछा।

"यही कि किसी भी एक पक्ष में सम्मिलित होकर युद्ध का पासा पलट सकें।"

"तेरा अनुमान सही नहीं है। अंग्रेज़ों ने कुछ ही दशाब्दियों में भारत में अपनी जड़ें गहरी जमा ली हैं। उन्होंने भारतीयों के ही कई वर्गों को फोड़कर अपने साथ मिला लिया है। भारत में जातीय चेतना नहीं के बराबर है। अपने तुच्छ से तुच्छ स्वार्थ के लिए एक भारतीय दूसरे का गला रेतने को तैयार हो जाता है। ज़मींदारों और जागीरदारों को अंग्रेज़ों ने बहुत सी रियायतें और छूटें दे दी हैं। उनके लालच में वे ही ज़मींदार और जागीरदार अंग्रेज़ों के तलुए चाटते हैं और अपने ही देशवासियों पर ऐसे निष्ठुर अत्याचार करते हैं कि देख-सुन कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। भाई से भाई को लड़ाने में फिरंगी चतुर है। मुझे तो ऐसा दीखता है कि जब भारत में अंग्रेज़ों को निकाल बाहर करने के लिए लड़ाई छिड़ेगी, तब अंग्रेज़ों के विपक्ष में लड़ने वाले तो भारतीय होंगे ही, उनके पक्ष में लड़ने वाले भी भारतीय ही होंगे। अगर कुछ भारतीय तलवार लेकर उनका गला काटने को झपटेंगे, तो कुछ भारतीय उन्हें अपने घरों में छिपा कर उनके प्राण बचाने की भी चेष्टा करेंगे। इसलिए युद्ध

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का पासा अंग्रेज़ों के विरुद्ध पलटना उतना सरल नहीं होगा, जितना तू समझ रहा है।" इतना कह कर बाबा फिर मुस्कराने लगे।

"तो फिर मुझे क्या आदेश है ?" मातबरसिंह ने पूछा।

"मैं किसी को कभी कोई आदेश नहीं देता। मैं सलाह देता हूँ। सोच-विचार कर उस पर चलना न चलना तेरा काम है। मेरा कहना यह है कि कि जब भीमसेन थापा ने रणबहादुरशाह को भारत से वापस बुलाया था, उस समय यदि वह थोड़ा अधिक संयम से काम लेता और दामोदर पांडेय आदि कुछ लोगों को प्राणदण्ड न देता, तो वह शत्रुता शुरू ही न होती, जिसने बाद में पनप कर भीमसेन थापा की दुर्दशा की। जब पांडेयों का पलड़ा भारी हुआ, तब उन्होंने थापाओं से बदला लिया और उन्हें राजशासन से निकाल बाहर किया। जिसके हाथ में सत्ता न हो, उसे समझाना-बुझाना व्यर्थ होता है। इस समय सत्ता तुम थापा लोगों के हाथ में है। इसीलिए कहता हूँ कि यदि तुम लोग बदला लेने की भावना मन से निकाल दो, तो उसका राज्य पर हितकारी प्रभाव हो सकता है।"

"भगवन्, मेरा विचार यह है" मातबरसिंह बोले : "कि दामोदर पांडेय को प्राणदण्ड न देने और देने, दोनों ही दशाओं में परिणाम एक ही होना था। जीवित दामोदर पांडेय मृत दामोदर पांडेय से कम खतरनाक न होता। एक बार प्रधानमन्त्री पद पर बैठ कर शासन कर लेने के बाद अपदस्थ होकर वह शान्त कभी न बैठता। फिर, उन लोगों को प्राणदण्ड देने के लिए तो महाराज रणबहादुरशाह ने ही आग्रह किया था। चाचा जी को दामोदर पांडेय से निजी द्वेष नहीं था। पर महाराज रणबहादुरशाह दामोदर पांडेय से इसलिए अत्यन्त रुष्ट थे कि उसने उनके विरुद्ध विद्रोह का नेतृत्व किया था।"

"मुझे लगता है कि भीमसेन थापा उन लोगों को क्षमा दिलवा सकता था। यदि वह क्षमा दिलवा देता, तो पांडेय लोग थापाओं के शत्रु तो होते ही नहीं, उनके कृतज्ञ होते। अब फिर वैसा ही मौका है। रणजंग पांडेय और उसके साथियों को प्राणदण्ड न दे कर यदि उन्हें साथ मिलाने की चेष्टा की जाये, तो द्वेष की आग बुझ सकती है।"

"भगवन्, शायद आपको मालूम नहीं है कि रणजंग पांडेय ने क्या-क्या किया है ?" फतहजंग चौतरिया ने कहा।

बाबा का शान्त सस्मित भाव तनिक भी विक्षुब्ध नहीं हुआ। वह उसी तरह हँसते हुए बोले : "पता है। सब पता है।"

"फिर भी आप रणजंग को क्षमा करने को कहते हैं ?" अभिमानसिंह ने कुछ अधीर-सा होकर पूछा। "उस पापी को ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मैं तो शुद्ध नीति के तौर पर उसे प्राणदण्ड न देने के लिए कहता हूँ। तुम लोग क्षमा कर दोगे, तो क्या उसे अपने कुकर्मों का दण्ड न मिलेगा?" बाबा इस प्रकार हँसे, जिससे सुनने वालों को आभास हो गया कि विश्व की विराट् व्यवस्था में उनका अस्तित्व तो बहुत ही क्षुद्र और नगण्य है; उनके ईर्ष्या-द्वेष, क्षमा-प्रतिशोध सभी तुच्छ हैं।

कुछ देर सभी चुप रहे। बाबा समझ रहे थे कि यह कड़वी गोली इन श्रोताओं के गले उतर नहीं रही है। अतः कुछ देर बाद वह बोले: "प्रतिशोध लेने में आनन्द आता है। पाप का प्रतिशोध लेकर हमें अनुभव होता है कि हम नैसर्गिक न्याय की प्रक्रिया में योग दे रहे हैं; पुण्य का पक्ष ले रहे हैं। पर बहुत बार हमारी पाप-पुण्य की धारणा हमारे निजी ममत्वों और हितों से प्रभावित रहती है। जिसे हम पाप समझते हैं, उसी को दूसरा व्यक्ति पुण्य समझता है। उस दशा में प्रतिशोध का आनन्द लेने की प्रक्रिया कभी समाप्त होने में ही नहीं आती। जैसे झूला ऊपर से नीचे आने के बाद अपने ही ज़ोर से दूसरी ओर ऊपर चला जाता है, उसी प्रकार प्रतिशोध की प्रतिक्रिया फिर प्रतिशोध के रूप में होती है। और उसकी फिर वैसी ही प्रतिक्रिया होती है। यह क्रम कहीं समाप्त होने में ही नहीं आता। यत्न करके इसे कहीं न कहीं तोड़ देना ही हितकर होता है।"

"पर भगवन्, मुक्ति कहीं नहीं है। दुष्ट को दण्ड न दिया जाये, तो उसका हौसला बढ़ता चला जाता है और वह अधिकाधिक अपराध करता है। आततायी को क्षमा करना तो सीधा अपराध को बढ़ावा देना है" मातबर-सिंह ने कहा।

"मान लो कि ये दोनों ही बुराइयाँ हैं। दोनों में से किसी एक को चुनने का प्रश्न हो, तो प्रतिशोध के बजाय क्षमा वाले मार्ग को चुनना ही श्रेयस्कर है।"

फिर सब चुप हो गये। कुछ देर बाद बाबा बोले: "मैं जानता हूँ, होगा वही, जो होना है। मेरी सलाह, तुम्हारा प्रयत्न कुछ काम न आयेगा। फिर भी मैं सलाह देता हूँ। प्रयत्न करना तुम्हारा काम है। कहा है न 'भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढ़ानि मायया' (अपनी माया से मैं सारे चराचर को इस प्रकार घुमा रहा हूँ, जैसे मैंने उन्हें किसी चर्खी पर बिठाया हुआ हो)। जो वह चाहते हैं, वही होता है।" कह कर बाबा फिर मुस्कराने लगे। इस मुस्कराहट ने स्पष्ट कर दिया कि उन्हें रत्ती भर भी आग्रह नहीं है कि उनकी सलाह मानी ही जाये।

जैसे कुछ एकाएक याद आया हो, इस प्रकार बाबा फिर बोले: "और हाँ, एक बात याद रखने की है। भारत में अंग्रेज़ों के विरुद्ध जो यह युद्ध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छिड़ने वाला है, इसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों ही मिल कर लड़ेंगे। पर भीतर ही भीतर मुसलमानों का प्रयत्न यह रहेगा कि देश पर शासन का अधिकार उनके हाथ में आये। वे सोचते हैं कि अंग्रेज़ों के आने से पहले भारत में मुगलों का राज्य था, इसलिए अंग्रेज़ों के जाने के बाद फिर मुगलों का ही राज्य स्थापित होना चाहिए। अपने भोले स्वभाव के कारण हिन्दू उनके झाँसे में आ सकते हैं। इसके लिए प्रयत्न करना होगा कि इस आने वाले स्वाधीनता संग्राम के पश्चात् हिन्दू लोग अंग्रेज़ों की दासता से छूट कर मुगलों की दासता में न फँस जायें।"

"इसके लिए हम भरपूर यत्न करेंगे" मातबरसिंह ने कहा।

"भारत में अंग्रेज़ों का आगमन घोर अभिशाप सिद्ध हुआ है। पर हर बुराई में भी कुछ अच्छाई छिपी रहती है। अंग्रेज़ों के भारत में आने का एक छोटा-सा लाभ यह हुआ कि हिन्दू मानसिक दृष्टि से मुगलों की आधीनता से मुक्त हो गये।"

फतहजंग चौतरिया बोले : "वह तो भगवन्, वैसे भी होना ही था। मराठे, बुन्देले, सिख और राजपूत जिस तरह मुगलों के विरुद्ध उठ खड़े हुए थे, उसे देखते हुए वह शासन देर तक टिक थोड़े ही सकता था!"

"नहीं टिकना चाहिए था। पर हिन्दुओं में कहीं कोई बड़ी कमी है। राजनीतिक स्थिति को सही-सही आँकने में वे सदा धोखा खाते हैं। जब वे शक्तिशाली होते हैं, तब वे एक तरह की गलत उदारता दिखाने लगते हैं। वह उदारता उन्हें बहुत महँगी पड़ती है और पराजित प्रतिद्वन्द्वी फिर सशक्त हो उठता है। उसके बाद कुछ किया नहीं जा सकता। जब मराठे सरलता से मुगल सम्राट् को गद्दी से हटा सकते थे, तब भी उन्होंने नहीं हटाया। अगर अंग्रेज़ न आते, तो मुगलों का प्रताप हिन्दुओं के मन से हटता नहीं। बल से नहीं, तो छल से गद्दी पर मुगल सम्राट् ही रहता। वही खतरा अब फिर दिखाई पड़ रहा है। विद्रोह का आयोजन मुख्यतया हिन्दुओं की ओर से है, पर मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करने के लिए विजय का सारा फल उन्हें ही दे देने की बात चल रही है। दिल्ली की गद्दी पर फिर मुगल बादशाह को बिठाने की चर्चा है।"

मातबरसिंह बोले : "यह ठीक है कि अंग्रेज़ मुग़लों से बुरे हैं, पर मुगलों के शासन में भी तो हम पर कम अत्याचार नहीं हुए। उन्हीं के कारण हमें भारत से भाग कर नेपाल आना पड़ा। अब अंग्रेज़ों को हटाने के लिए हम मुसलमानों के साथ मिल कर लड़ेंगे, तो विजय का लाभ दोनों को बराबर मिलना चाहिए।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यही मैं कहता हूँ। उस समय झूठी उदारता या मिथ्या बड़प्पन की भावना में फँस कर हमें सारा लाभ दूसरों को नहीं दे देना है, कुछ अपने पास भी रखना है। शासन की बागडोर जिसके हाथ में आ जाती है, उसका पलड़ा अपने आप भारी होता चला जाता है।"

"ठीक है भगवन्, इस विषय में हमारे प्रयत्न में कोई त्रुटि न रहेगी। आप जैसा चाहते हैं, ठीक वैसा ही होगा। आपका आशीर्वाद चाहिए।"

"शुभ कार्य के लिए बाबाओं का आशीर्वाद सदा रहता है। तुम्हारी बुद्धि सदा सुपथ पर चलती रहे; विजय और यश तुम्हें प्राप्त हो।"

इस आशीर्वाद को सभी श्रोताओं ने अपने लिए माना और सिर झुका कर ग्रहण किया। उसके बाद मातबरसिंह और उनके साथी उठ खड़े हुए और बाबा को प्रणाम करके मन्दिर से निकल आये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

33

अंग्रेज़ों से कैसे निपटें ?

प्रधानमंत्री मातबरसिंह के निवास स्थान पर प्रायः नित्य ही दोपहर बाद राज्य के प्रमुख भारदार एकत्रित होते। इस अवसर पर आवश्यक काम-काज भी निपटाये जाते और विचार-विमर्श, गप-शप तथा हँसी मजाक भी होता। मातबरसिंह काफ़ी समय तक कलकत्ता में राजदूत और लाहौर में महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में सैनिक पदाधिकारी के रूप में रह आये थे, अतः वह औपचारिक शिष्टाचार में विश्वास नहीं करते थे।

आज भी कई भारदार उपस्थित थे। फतहजंग चौतरिया, राणा अभिमानसिंह, राजभंडारी गगनसिंह नित्य की भांति आये थे। प्रधानमंत्री का भानजा जंगबहादुर इस गोष्ठी के समय अवश्य उपस्थित रहता था। उसे उपस्थित रहने के लिए प्रधानमंत्री ने स्वयं कहा था। यह नहीं कि उससे विचार-विमर्श में भाग लेने की आशा की जाती थी बल्कि इसलिए कि यदि उस समय प्रधानमंत्री को कोई छोटा-मोटा काम करवाना हो, तो उसे भरोसे के साथ जंगबहादुर से करवाया जा सके। अन्य लोगों में से कभी कोई, कभी कोई अनुपस्थित रहता था, पर जंगबहादुर कभी अनुपस्थित नहीं होता था। इसका बड़ा कारण यह भी था कि वह रहता ही वहीं था। उसे कहीं से आना नहीं होता था।

काफ़ी देर तक इधर उधर की बातें होती रहीं। उसके बाद मातबरसिंह ने गंभीरतापूर्वक कहा : "चौतरिया जी, इन अंग्रेज़ों के विषय में हमें अपनी स्पष्ट नीति निश्चित कर लेनी चाहिए।"

"वह नीति तो सदा से निश्चित रही है" फतहजंग चौतरिया न कहा। "जितनी जल्दी नेपाल से इनका विस्तर गोल करवा दिया जाये, उतना भला।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"पर बिस्तर गोल करवाना ही तो कठिन काम है। उसका उपाय क्या है ?"

"एक बार पहले भी तो उपाय किया गया था" एक वृद्ध भारदार ने कहा। "जब बारूदघर में आग लगी थी और रैज़ीडैन्सी जल कर राख हो गई थी।"

"पर यह उपाय दो बार नहीं आज़माया जा सकता" मातबरसिंह ने कहा। "फिर तब के और अब के अंग्रेज़ में अन्तर है।"

कुछ क्षण सब चुप रहे। अन्तर स्पष्ट था। उस समय जब रणबहादुर-शाह शासन काल में अंग्रेज रैज़ीडैन्सी भस्म हुई थी, तब भारत में अंग्रेज़ों की शक्ति अब की अपेक्षा कम थी। पर गीर्वाणयुद्धविक्रम के शासन काल में भारत में स्थित अंग्रेज़ों की देशी सेनाएं लड़ कर नेपाल को हरा चुकी थीं और उसे सिगौली की अपमानजनक सन्धि करने के लिए विवश कर चुकी थीं। इस समय काठमांडौ में अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट गोरखों की दया से नहीं, बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति के ज़ोर से रहता था। उस साम्राज्य की शक्ति संसार के सभी भागों में छल-कपट, रिश्वत, वचन-भंग, विश्वासघात और हृदयहीन क्रूरता पर निर्भर थी। इस समय अंग्रेज़ रैज़ीडैंट से छेड़छाड़ करना विपत्ति को आमंत्रित करना होता।

मातबरसिंह ने कहा : "अंग्रेज़ों जैसी घृणित जाति दुनियां भर में दूसरी नहीं है। धर्म, ईमान, नैतिकता इन्हें छू नहीं गई। इनका एकमात्र धर्म है डकैती। न्याय-अन्याय, उचित-अनुचित का तनिक भी विचार किये बिना पड़ौसी के स्वत्व को हथिया लेना ही इनकी एकमात्र नीति है। इन्होंने किस तरह हमारे देखते देखते आधे से अधिक भारत पर अधिकार कर लिया है। जो बचा है, उसे भी निगल लेने की तैयारी पूरी हो चुकी है।"

राणा अभिमानसिंह बोले : "स्वर्गीय भीमसेन थापा कहा करते थे कि अंग्रेज़ों की सफलता का रहस्य यह है कि यह समूचा राष्ट्र का राष्ट्र डाकू है। इंग्लैंड से बाहर डाका डालने वालों का इंग्लैंड में सार्वजनिक रूप से सम्मान किया जाता है। वहां के लोग यह मानते हैं कि जो लोग इंग्लैंड से बाहर, समुद्र में या स्थल पर, कहीं भी डाका डाल कर, लूट-पाट करके धन सम्पत्ति इंग्लैंड में लाते हैं, वे देश की समृद्धि बढ़ाते हैं ; वे देश के सेवक हैं। ड्रेक और मौर्गन खुल्लमखुल्ला डाकू थे ; क्लाइव और हेस्टिंग्ज़ फरेब और डकैती के सबसे बड़े गुरु थे। पर उन्हें इंग्लैंड में राष्ट्रीय नेताओं जैसा सम्मान दिया गया। भारत के अधिकांश भाग पर अंग्रेज़ों का कब्ज़ा हो गया, पर मज़े की बात यह है कि लड़ाई कोई लड़ी नहीं गई। पलासी की एक लड़ाई अवश्य हुई,-जिसमें क्लाइव के पांच हज़ार सिपाहियों ने सिराजुद्दौला के

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पचास हज़ार सैनिकों को हरा दिया। कोई भला आदमी सुन कर विश्वास कर सकता है कि क्लाइव के सिपाही इतने बहादुर थे कि उन्होंने न केवल अपने से दसगुनी बड़ी सेना से टक्कर ली, बल्कि उसे परास्त भी कर दिया ?"

"जो कुछ अंग्रेज़ों ने पलासी में किया, वही वे सब जगह करते रहे हैं।" मातवरसिंह ने कहा। "सब जगह वे मीरजाफरों को ढूंढते हैं और उनके बल पर अपना खून बहाये बिना जीत जाते हैं। मज़े की बात यह है कि सब जगह उन्हें मीरजाफर मिल भी जाते हैं।"

फतहजंग चौतरिया ने कहा: "उन्हें लोगों को मीरजाफर बनाना आता है।"

"अब प्रश्न यह है" मातबरसिंह बोले: "कि यदि हमें अंग्रेज़ों के चंगुल से बचना है, तो उसके लिए हमारा अकेले किया गया अपना प्रयत्न काफ़ी नहीं होगा। नेपाल में उनके पांवों को जमने से तभी रोका जा सकता है, जब कि भारत से उनके पाँव उखाड़ दिये जायें। भारत में इसके लिए प्रयत्न शुरू हो चुका है। केवल अपने हित की दृष्टि से हमें उसमें सहायता देनी चाहिए।"

राजभंडारी गगनसिंह ने कहा: "पर कुछ भी करने से पहले हमें अंग्रेज़ों की शक्ति का बिल्कुल सही अन्दाज़ा लगा लेना चाहिए। मेरा खयाल है कि अंग्रेज़ों की शक्ति इस समय बहुत अधिक है। उनके हथियार कहीं बढ़िया हैं। जब उनकी शक्ति कम थी, तभी भारतीय नरेश उनके सामने न टिक सके, तो अब, जबकि भारत के जन-धन के साधन अंग्रेज़ों के हाथ में हैं, भारतीय नरेशों को सफलता मिल सके, इसकी मुझे आशा दिखाई नहीं पड़ती। कोई भी कदम उठाते समय हमें अपने देश के हित को नहीं भूलना चाहिए।"

"मैं यही तो विचार करने के लिए कह रहा हूँ। देर-सबेर में भारत में अंग्रेज़ों के विरुद्ध भीषण विद्रोह होने वाला है। वह विद्रोह सफल हो जाये, तभी हम अंग्रेज़ों के चंगुल से मुक्त रहने की आशा कर सकते हैं। इस दृष्टि से इस विद्रोह की सफलता के लिए प्रयत्न करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। यदि किसी कारण यह विद्रोह विफल हो गया, तो उसके बाद अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए किया गया, हमारा अकेला प्रयत्न भी निश्चय ही विफल रहेगा। अंग्रेज़ हमें चींटी की तरह मसल डालेंगे।"

"यदि हमने भारत में विद्रोह की सहायता की और किसी कारण वह विद्रोह विफल हो गया, तो क्या अंग्रेज़ हमसे उसका बदला न लेंगे ?" एक भारदार ने पूछा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"पर इस डर से हम अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए प्रयत्न को तो नहीं छोड़ सकते" राणा अभिमानसिंह ने कहा। "लड़ने से पहले ही हम हार जाने को तैयार नहीं हैं।"

फतहजंग चौतरिया ने कहा : "इस दिशा में स्वर्गीय महाराज पृथ्वीनारायणशाह की नीति हमारा मार्गदर्शन कर सकती है। उन्होंने न केवल अपने राज्य में यूरोपवासियों का प्रवेश निषिद्ध कर दिया था, बल्कि तिब्बत और चीन के नरेशों से भी अनुरोध किया था कि वे इन बन्दर जैसे मुँह वाले लोगों को दूर से ही नमस्कार कर विदा करें। ईसाई धर्म-प्रचारकों से वह विशेष रूप से रुष्ट थे।"

"रुष्ट होना उचित था" मातबरसिंह ने कहा। "यूरोपीय देशों की नीति ही यह रही है कि जिस भी देश में अपने पाँव पसारने हों, उसमें पहले अपने धर्मप्रचारक भेजो।..."

"धर्मो रक्षति रक्षितः" (धर्मात्मा व्यक्ति की रक्षा धर्म करता है) एक भारदार ने चुटकी ली।

"यही बात है।" मातबरसिंह बोले : "धर्म की ओट अनेक विपदाओं से उनका बचाव करती थी। जैसे सूए की पैनी नोक आगे चलती है और उसके पीछे-पीछे धागा पहुँच जाता है, वैसे ही ये पादरी नये देशों में प्रवेश करके अपने पीछे आने वाले व्यापारियों के लिए रास्ता बना देते थे। व्यापारी पहले तो विनयपूर्वक याचना-सी करते आते थे। पर कुछ पांव जम जाने के बाद वे अपने व्यापारिक ठिकानों की रक्षा के नाम पर सैनिक ले आते थे। इन सैनिकों के पास होते थे मनुष्य मारने के नये से नये और बढ़िया से बढ़िया हथियार। इन सैनिकों के आगमन के बाद धर्मप्रचारकों का रुख बदल जाता था। वे लोगों को ईसाई बनाने के लिए बल, छल और धन का प्रयोग करने के अलावा स्थानीय धर्मों के विरुद्ध इतनी उच्छृंखल बकवास करते थे कि किसी न किसी तरह स्थानीय लोग क्रुद्ध होकर झगड़ा कर बैठें। झगड़ा होने पर बन्दूकें और मशीनगनें काम आती थीं। चीन, अमेरिका और अफ्रीका के हर राज्य का इतिहास इसी घटना की पुनरावृत्तियों से भरा पड़ा है।"

फतहजंग चौतरिया ने कहा : "धर्म परिवर्तन भी केवल राजनीतिक चाल है। जिन लोगों को ये यूरोपीय पादरी ईसाई बना लेते थे, वे यूरोपीयों के अपने हो जाते थे। अपने देशवासियों और सगे-सम्बन्धियों के हित को भूल कर वे इन विदेशियों के हाथों में खेलने लगते थे। वे स्वयं को काला साहब समझने लगते थे। यह कुशल है कि अभी तक नेपाल इस व्याधि से बचा हुआ है।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राणा अभिमानसिंह ने धीमी आवाज़ में कहा : "अंग्रेज़ों को भारत से उखाड़ने की योजना स्वर्गीय भीमसेन थापा ने और उनके बाद रानी साम्राज्य-लक्ष्मी देवी ने भी बनाई थी। पर भाग्य ने अंग्रेज़ों का साथ दिया।"

रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी का उल्लेख होते ही वातावरण में कुछ सनसनी सी दौड़ गई। वर्तमान शासक गुट, जिसके प्रमुख मातबरसिंह थे, रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी का विरोधी था। उस रानी ने इस गुट का भारी अपकार किया था और केवल उसकी मृत्यु के बाद ही ये लोग राजदरबार में प्रवेश पा सके थे। उस रानी से इनकी कोई सहानुभूति नहीं हो सकती थी। पर अब जिस प्रसंग में उसका उल्लेख हुआ था, उसमें उसके प्रति द्वेष के बजाय सहानुभूति का ही भाव उदित होता था।

मातबरसिंह बोले : "राजसत्ता को हथियाने के लिए मारकाट सदा से चलती रही है और शायद भविष्य में भी सदा चलती रहेगी। अंग्रेज़ों का साम्राज्य जितना विशाल है, उसे बनाये रखने के लिए उनकी अधीरता भी उतनी ही अधिक है; होनी स्वाभाविक भी है। जिस भी व्यक्ति या संस्था से उन्हें अपने साम्राज्य पर आँच आने की आशंका होगी, उसके विरुद्ध कठोर से कठोर और क्रूर से क्रूर उपाय बरतने में वे कभी न हिचकेंगे।"

गगनसिंह ने कहा : "जिस साँप को मार पाने का सामर्थ्य न हो, उसे छेड़ना ठीक नहीं।"

"पर यदि वह साँप बिना छेड़े घर में ही आ घुसे, तब भी तो कुछ करना होगा" फतहजंग चौतरिया ने कहा। "या तो घर छोड़ कर भाग जायें, या फिर जान पर खेल कर साँप से निपटें।"

"ससर्पे तु गृहे वासः मृत्युरेव न संशयः" (साँप वाले घर में रहना तो निश्चित रूप से मृत्यु को बुलाना है) उसी मौजी भारदार ने कहा।

मातबरसिंह ने कहा : "इसलिए विपत्ति और संकट से डर कर चलने से तो न व्यक्ति का निर्वाह है, न राष्ट्र का। लड़ना तो हमें पड़ेगा ही। प्रश्न केवल इतना है कि हम कब लड़ें? उस समय, जबकि अन्य बहुत-से नरेश अंग्रेज़ों से जूझने को कमर कस रहे हैं, या तब, जबकि वे लड़ कर हार-जीत का फैसला कर चुके हों?"

गगनसिंह के अतिरिक्त लगभग सभी भारदार मातबरसिंह के इस विचार से सहमत थे कि भारतीय नरेशों द्वारा अंग्रेज़ों को भारत से निकाल बाहर करने के प्रयत्न में नेपाल को सक्रिय सहयोग करना चाहिए। सात समुद्र पार के विदेशी म्लेच्छ भारत में स्थायी रूप से जम जायें, यह नेपाल के लिए न केवल कलंक की बात है, बल्कि संकट की भी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तो मेरा खयाल है कि हम सब इस विचार पर एकमत हैं कि हमें अंग्रेज़ों के विरुद्ध भारतीय नरेशों से सहयोग करना चाहिए ?" मातबरसिंह ने पूछा।

इस बार किसी ने प्रतिवाद नहीं किया, असहमति प्रकट नहीं की—गगनसिंह ने भी नहीं।

"ठीक है। इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर कुछ निश्चय हो जाना उचित था। अब मैं निश्चिन्त हूँ।" मातबरसिंह ने कहा।

कुछ देर तक अन्य छोटे-मोटे विषयों पर बातचीत होती रही। उसके पश्चात् गोष्ठी समाप्त हो गई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

34

धर्म संकट

रानी राज्यलक्ष्मी देवी का यह रूप जनरल मातबरसिंह ने कभी न देखा था। रानी के विषय में उनकी अच्छी धारणा कभी नहीं थी, पर आज तो वह धारणा एकाएक बहुत ही बिगड़ गई।

वह लगभग नित्य ही राजकाज के सिलसिले में रानी से भेंट करने जाते थे। आवश्यक प्रश्नों पर रानी के आदेश लेने के पश्चात् वह वापस लौट आते थे। आज जब वह अपना काम समाप्त करके लौटने को हुए, तब रानी ने कुछ हिचकते हुए कहा : "प्रधान जी, आपको मेरा एक छोटा-सा काम करवाना होगा।"

मातबरसिंह कुछ चकित हुए। रानी को यह कहने की क्या आवश्यकता है? सीधा आदेश देने मात्र से ही तो उनके छोटे-बड़े सभी काम कर दिये जाते हैं। वह कुछ बोले नहीं और इस आशा से रानी के मुँह की ओर देखने लगे कि वह बतायें, कौन-सा काम करना है।

रानी ने काम न बता कर फिर पूछा : "कहिये, कर सकेंगे न?"

"सरकार का कौन सा आदेश है, जो पूरा न हुआ हो। कहिये, क्या काम करना होगा?"

"पहले कहिये कि आप उसे कर देंगे। तभी बतलाने का कुछ लाभ है। मैं बताऊँ और फिर आप उसे करने से इन्कार कर दें, तब तो बताने का कोई लाभ न हुआ।"

मातबरसिंह का माथा ठनका। ऐसा कौन-सा काम हो सकता है, जिसे बताने से पहले रानी उसे करने का वचन ले लेना चाहती हैं? निश्चय ही वह कोई 'छोटा-सा' काम नहीं हो सकता। ऐसे काम को जाने बिना उसे करने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का वचन देना ठीक न होगा। मातबरसिंह नासमझ नहीं थे; बोले : "मेरे बस का काम होगा, तो क्यों पूरा नहीं होगा ? अवश्य पूरा होगा।"

"तो आप वचन देते हैं कि आप उसे कर देंगे ?"

यदि मातबरसिंह को पहले केवल शंका थी, तो अब पक्का निश्चय हो गया कि मामला कुछ गड़बड़ है। रानी, और वह भी रानी राज्यलक्ष्मी पहले पक्का वचन लेने के बाद ही काम बताना चाहती हैं। ऐसी दशा में तो वचन किसी तरह दिया ही नहीं जा सकता; कम से कम मातबरसिंह नहीं दे सकते। बोले : "यदि कोई ऐसा काम हो, जिसे कर पाना मेरे लिए संभव ही न हो, तब तो बात और है। नहीं तो सरकार का बताया हुआ छोटा सा काम पूरा न किया जाये, यह तो सोचने की भी बात नहीं। आदेश दीजिये।"

रानी समझ गई कि मातबरसिंह वचन नहीं दे रहे। गोलमोल उत्तर दे कर बच रहे हैं। पर काम तो उसे करवाना ही है। मातबरसिंह से अधिक भरोसा वह किस पर कर सकती है ? फिर भी उसने सीधा उत्तर न दे कर कहा : "प्रधान जी, आपको यह तो स्मरण है न कि आपको यह प्रधानमन्त्री पद किसने दिलाया है ?"

"यह क्या मैं कभी भूल सकता हूं कि यह केवल सरकार की ही कृपा है ?"

"यदि आप यह भूल न गये होते, तो मेरा काम करने में इतनी आनाकानी न करते।" रानी ने कुछ रुष्ट सा होते हुए कहा। "खैर, अब यह काम तो आपको जैसे भी हो, करना ही है।"

"मैंने इन्कार तो नहीं किया सरकार। केवल अपने सामर्थ्य की बात कही है। पर वह काम क्या है ?"

"मैं चाहती हूं कि पांडे रानी के पुत्र सुरेन्द्रविक्रम और उपेन्द्रविक्रम राजसिंहासन पर न बैठ पायें। पर यदि वे जीवित रहे, तो वे अवश्य ही राजा बनेंगे। बस यही काम है।"

मातबरसिंह अवाक् रह गये। उनका चेहरा एकदम पीला पड़ गया। क्षण भर वह सोच ही न सके कि क्या उत्तर दें। रानी अपनी तीव्र दृष्टि उनके चेहरे पर गड़ाये देखती रही। मातबरसिंह की मुखमुद्रा को देख कर रानी को अपना काम सिद्ध होने की ज़रा भी आशा न रही।

कुछ देर दोनों चुप रहे। मातबरसिंह एकदम स्पष्ट शब्दों में इन्कार कर दें, इससे पहले ही रानी फिर बोली : "पांडे रानी आपके परिवार के साथ क्या-क्या कर गई है, इसे आप भूल गये दीखते हैं। अपने चाचा भीमसेन थापा के घोर अपमान और यातना की बात इतनी जल्दी आपके स्मृति-पटल से धुल-पुँछ गई है। मैं तो समझती हूँ कि यह काम मेरा नहीं, बल्कि आपका अपना है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पांडेय परिवार की लड़की रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी, जो अब परलोक सिधार चुकी थीं, थापा परिवार के साथ भारी वैर निभा गई थीं। उनके राज्यकाल में सभी थापा पदाधिकारी अपने पदों से हटा दिये गये। बीस बरस से भी अधिक पुराने और योग्य प्रधानमन्त्री भीमसेन थापा को केवल पद से ही नहीं हटा दिया गया था, बल्कि उन्हें कालकोठरी में डाल कर इतनी शारीरिक और मानसिक यातनाएँ दी गई थीं कि उन्होंने आत्महत्या ही कर ली। वह भीमसेन थापा मातबरसिंह के चाचा थे। रानी साम्राज्यलक्ष्मी के जीते जी कोई उनके विरुद्ध उँगली भी नहीं उठा सका। पर अब उनके द्वारा किये गये अपकारों का बदला लेने का बढ़िया मौका है। स्वयं रानी राज्यलक्ष्मीदेवी का आग्रह है। थापा और पांडेय परिवारों में साँप और नेवले का सा वैर है। इस समय सुरेन्द्रविक्रम और उपेन्द्रविक्रम का काम तमाम करके भीमसेन थापा की आत्मा को शान्ति पहुँचाई जा सकती है। पर अविचारिणी माता के अपराध के लिए निरीह बालकों के प्राण ले लेना क्या उचित होगा? जिन पापों के लिए प्रधानमन्त्री रणजंग पांडेय और रानी साम्राज्यलक्ष्मी ज़िम्मेदार थे, उनके लिए अबोध बालकों का रक्त बहाने से क्या भीमसेन थापा जैसे तेजस्वी महापुरुष की आत्मा को शान्ति मिलेगी?

इस प्रश्न का निश्चित उत्तर ठीक तो किसी को पता नहीं, अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने चरित्र और मानसिक विकास के अनुसार इसका उत्तर 'हाँ' या 'ना' में दे सकता है। मातबरसिंह ने इसका उत्तर 'ना' में दिया। कुछ क्षण तक विचारमग्न रहने के बाद मातबरसिंह ने विनीत, किन्तु दृढ़ स्वर में कहा: "सरकार, मैंने राजभक्ति की शपथ ली है। राजपरिवार के प्रति द्रोह मुझसे न होगा। और कोई आदेश दीजिये। उसे मैं प्राण देकर भी पूरा करूँगा।"

अब अवाक् और हतप्रभ होने की रानी की बारी थी। उसने इतने महत्वपूर्ण और गोपनीय षड्यन्त्र में मातबरसिंह को शामिल करना चाहा था और वह भेद उसके सम्मुख इसी आशा से प्रकट किया था कि वह खुशी से शामिल होगा। परन्तु वह तो धर्मात्मा और राजभक्त बन रहा था। वह भी कैसे गलत आदमी को प्रधानमन्त्री बना बैठी! इस पर तो तनिक भी भरोसा नहीं किया जा सकता। पर अब, जबकि भेद प्रकट किया ही जा चुका है, किसी न किसी तरह मातबरसिंह को इसके लिए मनाना ही चाहिए। उसने समस्त स्त्रीसुलभ माधुर्य को अपने स्वर में उँडेलते हुए कहा: "नहीं प्रधान जी, आप इस काम से इन्कार नहीं कर सकते। आप वचन दे चुके हैं। मैं फिर कहती हूँ कि यह आपके और आपके परिवार के हित में है। सुरेन्द्रविक्रम के राजगद्दी पर बैठते ही थापा लोगों के लिए केवल कारागार में जगह होगी। इस बात को आप तो मुझसे अधिक अच्छी तरह समझते हैं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह बात सही नहीं है। कम से कम मातबरसिंह यह नहीं समझते कि सुरेन्द्रविक्रम राजगद्दी पर बैठने के बाद थापाओं से शत्रुता ठानेगा। वह पांडे रानी का पुत्र भले हो, किन्तु राजा राजेन्द्रवीरविक्रमशाह का भी तो पुत्र है। वह स्वयं को पांडेय वंश का क्यों मानने लगा ? फिर यदि माने भी, तो भी वह राजा का पुत्र है और युवराज है। प्रधानमन्त्री होते हुए वह राजद्रोह की बात मन में भी नहीं ला सकते। अतः रानी के उस मधुरता से भरे अनुरोध से भी वह विचलित न हुए। उन्होंने स्थिर स्वर में केवल इतना कहा : "सरकार, मुझे क्षमा कीजिये। यह काम मुझसे न हो सकेगा। मेरी अन्तरात्मा इसके लिए कभी गवाही न देगी। बल्कि मैं तो आपसे भी प्रार्थना करूँगा कि आप इस विचार को मन से निकाल दें। सुरेन्द्रवीरविक्रम बुरा लड़का नहीं है।"

यह बात रानी राज्यलक्ष्मीदेवी को किसी प्रकार नहीं समझाई जा सकती। उनका अपना पुत्र रणेन्द्रवीरविक्रम ही अच्छा लड़का है। वह सब सद्‌गुणों की खान है। उसके राजसिंहासन तक पहुंचने के मार्ग को सुरेन्द्रवीरविक्रम और उपेन्द्रवीरविक्रम रोके हुए हैं। उनसे बुरा और कौन होगा ? दुनियां भर के सब दोष उनमें हैं। कम से कम रानी राज्यलक्ष्मीदेवी को तो स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। राजेन्द्रवीरविक्रमशाह केवल कहने को राजा हैं। राज्य वस्तुतः रानी के हाथ में है। अतः गद्दी का उत्तराधिकारी रानी राज्यलक्ष्मी का पुत्र ही बनेगा। इसमें मातबरसिंह सहायता दें, तो भला, और न दें, तो भला। पर अपना सदुपदेश वह अपने ही पास रखें। अपना भला बुरा रानी स्वयं सोच सकती है। उसने शान्त और विरक्तिपूर्ण स्वर में कहा : "प्रधान जी, आप और विचार कर लीजिये। पर हाँ, विश्वास करके कही गई यह बात कहीं भी आपके मुँह से निकलने न पाये।"

मातबरसिंह ने मुँह से तो कुछ नहीं कहा, किन्तु सिर हिला कर संकेत किया कि इस विषय में रानी निश्चिन्त रह सकती हैं। यह रहस्य केवल उन तक ही रहेगा; कहीं फूटेगा नहीं। उसके बाद वह अनुमति माँग कर चलने के लिए उठ खड़े हुए। रानी भी चाह रही थी कि अब यह जल्दी से जल्दी चलते बनें, तो भला है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

35

शराब के नशे में

जंगबहादुर का अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट के यहाँ आना-जाना बहुत बढ़ गया। वहाँ जाना उसे अच्छा लगता था। इसका कारण यह था कि जब भी वह वहाँ पहुँचता, तभी उसका बढ़िया आतिथ्य होता। न केवल खाने को बढ़िया मिठाइयाँ प्रस्तुत की जातीं, अपितु पीने के लिए महँगी विलायती शराब भी मिलती, जो देशी शराब के मुकाबले में जंगबहादुर को बहुत अधिक पसन्द थी। विलायती शराब बाज़ार में दुर्लभ थी। इसके अतिरिक्त श्रीमती लारैन्स और उनकी पुत्री सदा ही जंगबहादुर से वार्तालाप के लिए उत्सुक और लालायित प्रतीत होतीं। वे प्रश्न पर प्रश्न पूछ कर उसे बोलने के लिए प्रेरित करतीं और इतने चाव से उसकी बातें सुनतीं, कि वह देर तक बोलता चला जाता। वे उससे नेपाल के भूगोल, लोगों के रीति-रिवाजों और रहन सहन के विषय में प्रश्न पूछतीं। वे उसके अपने जीवन के अनुभव सुनतीं। उनको देख कर ऐसा लगता था कि जंगबहादुर की बातें उन्हें इतनी पसन्द हैं कि वे जितना ही अधिक उन्हें सुनती हैं, उतनी ही उनकी सुनने की लालसा बढ़ती जाती है।

कर्नल लारैन्स को सदा फुरसत नहीं होती। बहुत बार वह आवश्यक कार्यों में व्यस्त रहता। पर जब भी वह समय निकाल पाता, तभी इस गोष्ठी में आ बैठता और यह प्रकट करता कि जंगबहादुर के साथ बैठ कर गप-शप करना उसे बहुत पसन्द है। ज़रूरी काम के कारण उसे इस गोष्ठी-सुख से वंचित रहना पड़ता है, यह उसे बहुत अखरता है। पर क्या करे? उसका काम ही ऐसा है कि किसी तरह निपटने में नहीं आता। फिर भी मदिरा पान में जंगबहादुर का साथ देने के लिए वह अवश्य उपस्थित हो जाता। जंगबहादुर को आश्चर्य होता था कि कर्नल लारैन्स इतनी कम मदिरा पीता है। फिर वह इतनी कीमती, बढ़िया शराबें मंगा कर किसलिए रखता है? पर वह यह सोच कर स्वयं ही समाधान कर लेता था कि जिसकी किस्मत में जितनी

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है, वह उतनी ही तो पी सकता है। जंगबहादुर की किस्मत में खूब थी और मुफ्त थी।

मदिरापान के बाद जंगबहादुर की जिह्वा पर देवी सरस्वती आ विराजतीं। विवेक समाप्त हो जाता। तब उसका वार्तालाप सजीव और कई गुना रोचक हो उठता। यह बात उसके भक्त श्रोताओं की मुख मुद्रा को देखकर छिपी नहीं रहती। उस समय उसकी कल्पना लम्बी उड़ानें भरती—सत्य और असत्य, संभव और असंभव अपना स्थायी विरोध त्याग कर आपस में ऐसे हिल-मिल जाते कि उन्हें अलग कर पाना कठिन होता।

एक दिन ऐसी ही चिन्मय अवस्था में जंगली हाथियों को पकड़ने के अपने अनुभव सुनाते हुए उसने कहा था: "हाथियों को बड़ी संख्या में एक साथ पकड़ने का सबसे अच्छा उपाय खेदे का है। इसमें सैकड़ों आदमी मिल कर सौ पचास हाथियों को एक साथ एक मजबूत बाड़े में बन्द कर देते हैं। पर यह तरीका खर्चीला बहुत है। छोटे-मोटे ठेकेदार इसका प्रयोग नहीं कर सकते। हमें जो उपाय अपनाना पड़ता था, वह था हथिनी द्वारा हाथियों को लुभाने का।

"हम एक-दो पालतू हथिनियों को जंगल में ले जाते थे। उनके पीछे कुछ दूरी पर पाँच-छह पालतू हाथियों पर हाथी पकड़ने वाले लोग रहते थे। वे हथिनियाँ जब हाथियों के किसी टोल के पास पहुंचती थीं, तब झुंड का कोई बड़ा हाथी उनके पीछे लग लेता था। वह अन्य छोटे हाथियों को घुड़क कर दूर भगा देता था।

"सभी पशुओं की तरह हाथी भी अत्यन्त कामुक होता है। हथिनी के आकर्षण में पागल हो कर वह अन्य सब बातों को भूल जाता है। सामान्यतया अत्यन्त सतर्क रहने वाला जंगली हाथी ऐसे समय खतरों की ओर से लापरवाह हो जाता है। आदमियों को देख कर भी वह उनसे डरता नहीं। उसका सारा ध्यान हथिनी पर ही केन्द्रित रहता है।

"वे पालतू हथिनियाँ धीरे-धीरे टहलती हुई उस हाथी को उसके झुण्ड से दूर हटा लाती थीं और पालतू हाथियों की टोली की ओर आ जाती थीं। सामान्य दशा में जंगली हाथी पालतू हाथियों के पास कभी न फटकेगा। पर इस समय वह उन हाथियों की परवाह नहीं करता।

"जब वह जंगली हाथी हथिनी से प्रेमलीला में मग्न रहता है, ठीक तभी शिकारी लोग हाथियों से उतर कर उसके पैर में मोटे रस्से का मज़बूत फन्दा डाल देते हैं। यह फंदा ऐसा होता है कि जितना खिंचता है, उतना ही कसता जाता है। खुल नहीं सकता।"

"इसमें खतरा नहीं रहता?" श्रीमती लारैन्स ने पूछा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"खतरा बहुत अधिक रहता है। शिकारियों को अन्दाज़ा रहता है कि एक बार हथिनी से हाथी के लग जाने के बाद उन्हें फन्दा बाँधने के लिए दो-तीन मिनट का समय मिल जायेगा। इतने समय में वे अपने काम को भली भाँति कर सकते हैं। पर कभी अन्दाज़ा गलत हो जाता है। कभी एकाएक हथिनी ही चौंक कर भाग खड़ी होती है। यदि किसी भी कारण हाथी हथिनी से अलग हो जाता है, तो वह अपने पाँव के पास खड़े आदमी का कचूमर निकालने में पल भर का भी विलम्ब नहीं करता। मैं अपनी आँखों से कितने ही आदमियों को इस तरह कुचले जाते देख चुका हूं। मैं खुद एक बार इस तरह कुचले जाने से बाल-बाल बचा हूं।"

"फिर ?" कुमारी लारैन्स ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"हाथी के एक पैर में फंदा पड़ जाने के बाद असली संघर्ष शुरू होता है। उसका हथिनी के प्रति प्रेम गायब हो जाता है और वह उस फंदे से अपने पैर को छुड़ाने के लिए जी-जान से चेष्टा करता है। उस रस्से का दूसरा छोर एक पालतू हाथी की कमर से बँधा रहता है। पिछले पैर में बँधा यह फंदा उस जंगली हाथी की जान का बवाल बन जाता है। जीवन भर स्वच्छंद रहा वह प्राणी यह समझ ही नहीं पाता कि उसे यह क्या हो गया है। वह छट-पटाता है और पाँव को झटकता है। जब तक रस्सा ढीला रहता है, तब तक तो झटकने का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। पर जब रस्सा खिंचता है, तब उसके झटके का असर स्वयं उस पर तथा दूसरे उस हाथी पर भी पड़ता है, जिसकी पीठ से वह रस्सा बँधा रहता है।

"तब पालतू हाथी पास आते हैं और उसकी उछल-कूद को शान्त करने की चेष्टा करते हैं। हाथियों की पीठ पर बैठे महावत ऊपर बैठे-बैठे ही उस जंगली हाथी की गर्दन में एक और रस्सा बाँधने की चेष्टा करते हैं। यह काम काफ़ी कठिन होता है और कई बार इसमें दो-तीन घंटे भी लग जाते हैं, पर आखिर यह पूरा हो अवश्य जाता है। बात यह है कि पिछले पैर में रस्सा बँधा होने के कारण वह हाथी भाग तो सकता नहीं। पालतू हाथी बार-बार पास आ कर उसे सब ओर से घेर लेते हैं। वे उसके साथ इस तरह सट जाते हैं कि वह हिल-डुल भी न सके। अत्यधिक शक्तिशाली होने के कारण जंगली हाथी उनके प्रयत्न को जल्दी सफल नहीं होने देता। बहुत बार वह उनमें से किसी हाथी को बुरी तरह घायल भी कर देता है। घायल हाथी कभी-कभी अपने महावतों और शिकारियों को पटक कर भाग खड़े होते हैं। पर ऐसा शायद ही कभी होता हो कि पैर में फंदा पड़ जाने के बाद जंगली हाथी छूट कर भाग जाये। कम से कम मैंने तो ऐसा एक बार भी नहीं देखा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तब तो हथिनी का प्रेम हाथी को बहुत महँगा पड़ता है" श्रीमती लारैन्स ने हँसते हुए कहा।

"प्रेम सदा ही सबको महँगा पड़ता है" जंगबहादुर ने दार्शनिक की तरह कहा : "कोई सस्ता नहीं छूटता।"

× × ×

आज भी जंगबहादुर विलायती शराब के सरूर में था। एकाएक कर्नल लारैन्स की ओर घूम कर उसने पूछा : "क्यों कर्नल साहब, अंग्रेज़ों का राज्य बहुत बड़ा है ?"

इस प्रश्न से कर्नल लारैन्स कुछ चकित हुआ। पर अपने आश्चर्य को प्रकट न करके उसने शान्त भाव से उत्तर दिया : "बहुत बड़ा !"

"कितना बड़ा ?"

"बहुत बड़ा। हिन्दुस्तान से दस गुना बड़ा।"

"फिर आप नेपाल पर कब्ज़ा क्यों करना चाहते हैं ?"

"नेपाल पर ? हम तो नेपाल पर कब्ज़ा करना बिल्कुल नहीं चाहते।"

"ज़रूर चाहते हैं। मामा जी कभी गलत बात नहीं कहते। उनका कहना है कि अंग्रेज़ों का राज्य जितना बड़ा है, उतना ही अधिक उन्हें लोभ भी है। अंग्रेज़ लोग नेपाल को भी हड़प लेना चाहते हैं। हिन्दुस्तान के तो अधिकांश राज्यों को उन्होंने हड़प ही लिया है।"

"हमने हिन्दुस्तान के किसी राज्य को नहीं हड़पा। लड़ाई लड़ कर राज्य जीतना हड़पना नहीं कहलाता। फिर जो राज्य हमने जीते हैं, उन्हें हम उठा कर कहीं ले थोड़े ही गये। वे राज्य वहीं के वहीं हैं। अब उनका शासन प्रबन्ध अच्छा है। अब वहाँ की प्रजा सुखी है।"

"अब यह सुखी प्रजा आपके विरुद्ध विद्रोह करने वाली है। प्रजा सुखी हो, तो वह विद्रोह क्यों करेगी ?"

"विद्रोह की अफ़वाह गलत है। हिन्दुस्तानी हमारे शासन में सुखी हैं। वे पूरी तरह राजभक्त हैं।"

"मामा जी, कभी गलत बात नहीं कहते। हिन्दुस्तान के लोग अंग्रेज़ों से दुःखी हैं और वे जल्दी ही उनके विरुद्ध लड़ाई शुरू करेंगे।"

"आपके मामा जी को क़हीं से गलत खबर मिली है।"

"वह तो स्वयं बहुत दिन भारत में रह आये हैं और वहाँ की सही-सही दशा जानते हैं। अगर आप लोग नेपाल पर कब्ज़ा करने की कोशिश करेंगे, तो परेशानी में फँसेंगे।"

"हम नेपाल के मित्र हैं ; हितैषी हैं। हम नेपाल पर कब्ज़ा करने की कोशिश कभी करेंगे ही नहीं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मामा जी का कहना है कि आप लोग ज़रूर करेंगे। आप लोगों की रोकथाम पहले से करना ज़रूरी है।"

"वैसे हम नेपाल पर कब्ज़ा नहीं करेंगे, यह पक्की बात है। पर मान लो कि हम कब्ज़ा करने की कोशिश करने ही लगें, तो उसकी रोकथाम क्या हो सकती है? हमारा राज्य इतना बड़ा है कि नेपाल उसके सामने तीन दिन भी नहीं टिक सकता।"

"यही तो मामा जी कहते हैं। मेमने को सामने देख कर भूखा भेड़िया देर तक संयम नहीं रख सकता।"

"और क्या कहते हैं?"

"और क्या कहना है? अपनी रक्षा के लिए हमें हिन्दुस्तान के राजाओं से सहायता लेनी पड़ेगी और उनकी सहायता करनी पड़ेगी। आप लोगों से जान बचाने का एक यही उपाय है। पर क्या नेपाल पर कब्ज़ा किये बिना आपका काम नहीं चल सकता?"

"क्यों नहीं चल सकता? खूब चल सकता है। चल ही रहा है। हमें नेपाल पर कब्ज़ा नहीं करना; कभी नहीं करना; बिल्कुल नहीं करना। पर जंगबहादुर, आप जैसे साफ़ और सच्ची बात कहने वाले लोग मुझे बहुत पसन्द हैं। ऐसे लोगों का मैं हृदय से आदर करता हूँ। आपसे पहली बार मिलते ही मैं आपके स्वभाव को पहचान गया था। मैं खुद साफ़ बात कहना पसन्द करता हूँ। इसीलिए आपके साथ मेरी पटरी शुरू से ही सही बैठ गई।"

"बेशक, बेशक। लुका-छिपा कर चलने की मेरी आदत नहीं है। मेरा मन मेरी जीभ पर रहता है।"

"और ये जो लोग मन में कुछ और मुँह में कुछ रख कर चलते हैं, वे मुझे बेहद नापसन्द हैं।"

कुमारी लारैन्स ने जंगबहादुर की आँखों में देखते हुए कहा: "ऐसे लोगों से मुझे भी बड़ी घृणा है।"

जंगबहादुर ने आँखों ही आँखों में पूछा: "मुझसे तो नहीं?"

"तुमसे तो बिल्कुल नहीं" कुमारी लारैन्स ने आँखों के संकेत से ही उत्तर दिया।

"क्षमा कीजियेगा जंगबहादुर, आपके नेपाल के अधिकांश लोग स्पष्ट-भाषी नहीं हैं। इसीलिए यहाँ के लोगों से मैं बहुत कम वास्ता रखता हूँ। जितना बहुत ही आवश्यक है, उससे ज़रा भी अधिक नहीं मिलता जुलता।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"ठीक है। ठीक है। यहाँ के लोग मिलने-जुलने लायक हैं भी नहीं। मुझ जैसा आदमी आपको दूसरा दिखाई नहीं पड़ेगा।"

"पर, क्षमा कीजियेगा जंगबहादुर, आपमें एक बहुत बड़ी कमी है।" इतना कह कर लारैन्स रुका और जंगबहादुर के मन का भाव पढ़ने की कोशिश करने लगा। पर जंगबहादुर के मुख पर मूर्खता के सिवाय कोई चीज़ उसे दिखाई नहीं पड़ी। वह यह जानने के लिए, कि उसमें क्या कमी है, कर्नल लारैन्स के मुँह की ओर आँखें फाड़े देख रहा था। लारैन्स ने निःशंक हो कर कहा : "आपको अपना मित्र न समझता होता, तो यह बात कभी न कहता। किसी को भी उसकी कोई कमी बताना उससे शत्रुता मोल लेना है। पर क्योंकि मेरा आपसे प्रेम है, मैं आपका सच्चा हितैषी हूँ, इसीलिए कहने लगा हूँ। आपमें महत्वाकांक्षा का अभाव है। आप युवक हैं; बलिष्ठ और वीर हैं। आप जैसा निर्भीक योद्धा सारे काठमांडौ में एक भी न होगा। राजनीति के दांव-पेंचों को आप खूब समझते हैं। पर आप सेना में मामूली-सा सूबेदार का पद पा कर सन्तुष्ट पड़े हैं। आपके मन में यह बात ही नहीं आती कि यदि आप चाहें और यत्न करें, तो धीरे-धीरे उन्नति करते हुए आप सेनापति या प्रधानमन्त्री भी बन सकते हैं। कौन सी योग्यता आपमें नहीं है? आप क्या नहीं कर सकते? आप क्या नहीं बन सकते? हमारे देश में महत्वाकांक्षा के इस अभाव को बहुत बड़ी कमी समझा जाता है।"

"प्रधान मंत्री मेरे मामा हैं। मैं और वह, दोनों तो प्रधान मंत्री नहीं हो सकते?"

"मैं यह नहीं कहता कि आप उन्हें हटा कर प्रधान मंत्री बनने की कोशिश करें। पर वह सदा तो प्रधानमन्त्री नहीं रहेंगे। फिर प्रधानमन्त्री ही क्यों, आप सेनापति बनने की कोशिश कर सकते हैं। मामा प्रधानमन्त्री हो और भानजा सेनापति, यह तो बहुत ही बढ़िया रहे। मेरा कहने का मतलब यह है कि आपमें आगे बढ़ने की इच्छा और लगन होनी चाहिए। आप कहाँ तक पहुंचते हैं, यह तो आपके परिश्रम और भाग्य पर निर्भर है; पर यदि आपमें महान बनने की आकांक्षा ही न हो, तो वह शोचनीय बात है।"

कुमारी लारैन्स ने कहा : "आखिर सूबेदार के पद पर आप कितने दिन पड़े रह सकते हैं?"

कर्नल लारैन्स ने कहा : "यों प्रधानमन्त्री बहुत भले और सहृदय पुरुष हैं। उन्होंने कितने ही लोगों का बड़ा उपकार किया है। पर मेरा खयाल है कि आपके मामले में उन्होंने कुछ कृपणता बरती है। आपको वह आसानी से कोई ऊँचा पद दे सकते थे।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह बात जंगबहादुर को समझाने की आवश्यकता नहीं थी। वह स्वयं इसे अनुभव करता था—दो एक बार वह कहीं कह भी चुका था कि मामा ने उसे उसकी योग्यता के अनुरूप नौकरी नहीं दी। यह समझने लायक मस्तिष्क और कृतज्ञता अनुभव करने लायक हृदय उसमें नहीं था कि मामा ने उसे अपने साथ रहने की सुविधा दे कर उसे बड़े-बड़े पदाधिकारियों से भी ऊँचा आसन दे दिया है। यदि वह प्रधानमन्त्री के घर न रहता होता, तो वह चाहे कितना ही बड़ा पदाधिकारी क्यों न होता, अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट उसे अपने पास फटकने भी न देता। उसने कहा : "मामा जी, अपनों का भला नहीं कर सकते।"

"शायद वह समझते हों कि अपने सगे-सम्बन्धियों को बढ़ावा देने से उन पर पक्षपात का लांछन लग सकता है।"

"पक्षपात क्या उन्होंने किया नहीं है ? कितनों के ही साथ किया है। बिल्कुल निकम्मे आदमी बैठे-बैठे मोटी तनखाहें पा रहे हैं। यह डरावा तो बस मेरे लिए ही है।"

"उन्हें आपके साथ न्याय करना चाहिए। यह आपका कोई अपराध तो नहीं कि आप उनके निकट सम्बन्धी हैं ?"

"बस क्या बताऊँ कर्नल साहब, आपको हमारे देश की रीत का पता नहीं है। हमारे यहाँ अपना ही अपने को खाता है। हम परायों की उन्नति देख सकते हैं, पर अपनों को पनपते नहीं देख सकते। पराये पर हाथ उठाते हम हिचकते हैं, पर अपनों का गला काटते हमें ज़रा हिचक नहीं होती। पर भगवान सब देखता है और जिसका जैसा कर्म होता है, वह उसके आगे आ जाता है।"

जंगबहादुर का अन्तिम वाक्य सुन कर कर्नल लारैन्स बुरी तरह चौंका। भगवान सब कुछ देखता है, यह उसके लिए शुभ सूचना नहीं थी। पर जंगबहादुर का ध्यान उसकी ओर नहीं था। कुमारी लारैन्स की ओर देखते हुए वह बोला : "यह ठीक है ; मैं कब तक इस सूबेदार पद पर पड़ा रहूँगा ? आगे बढ़ने का कोई उपाय ढूँढना पड़ेगा।"

"उपाय ढूँढेंगे, तो मिल अवश्य जायेगा।" कर्नल लारैन्स ने कहा : "कभी मेरी सहायता की आवश्यकता समझें, तो आप मुझे सहायता देने के लिए इच्छुक पायेंगे। जो कुछ मेरे बस में है, उसके लिए आप मुझ पर भरोसा कर सकते हैं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

36

दासी के वेश में

सारा मामला कुछ अस्वाभाविक सा था। बल्कि ऐसा लगा कि जो कुछ हुआ, वह पहले से रची गई किसी योजना के अनुसार था।

रात अँधेरी थी। यों तो शुक्ल पक्ष शुरू हो चुका था, पर पंचमी या षष्ठी का चन्द्रमा अभी कुछ देर पहले छिप गया था। वैसे भी कोट (राजमहल) में चन्द्रमा की चांदनी तभी आती थी, जब चन्द्रमा आकाश में काफ़ी ऊपर हो।

अँधेरे में एक युवती दासी कुछ तेज़ कदमों से बढ़ी जा रही थी। किसी ने पुकारा : "कौन है री ? बिन्दो ?"

चली जा रही युवती ने कोई उत्तर नहीं दिया। न मुड़ कर देखा और न अपनी चाल ही मन्द की। बल्कि यदि बहुत ध्यान से देखा जाता, तो पता चलता कि उसकी चाल मामूली-सी तेज़ ही हो गई है।

जिसने उसे पुकारा था, वह भी महल की एक दासी ही थी। उसने जाने वाली के इस उपेक्षा भाव को बहुत बुरा माना। वह तुरन्त लपक कर उसके पास पहुँची और उसका हाथ पकड़ कर झिझोड़ती हुई बोली : "ऐसी कौन-सी साजन के पास जा रही है कि मुड़ कर जवाब तक नहीं देती ?" फिर थोड़ा हिचक कर बोली : "अरे, तू बिन्दो नहीं है ?"

जिसे बिन्दो समझा गया था और अब बिन्दो नहीं पाया गया, वह अब भी कुछ नहीं बोली। उसने समझा कि उसे गलती से कुछ का कुछ समझा गया था और अब गलती पता चल जाने पर पूछने वाली को स्वयं ही पीछे हट जाना चाहिए। पर पूछने वाली इतनी निःस्पृह नहीं थी। उसके मन में जिज्ञासा हुई कि यह बिन्दो नहीं है, तो है कौन ? उसने पूछा : "तू कौन है री ? कहाँ जा रही है ?"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह प्रश्न बिल्कुल अनावश्यक था। वह बिन्दो को ढूँढ रही थी। बिन्दो से उसे कोई काम होगा। बिन्दो होती, तो वह काम हो जाता। बिन्दो के बिना वह काम होने से रहा। फिर यह पूछने से क्या मतलब कि यह कौन है और कहाँ जा रही है? परन्तु कितना ही अनावश्यक होने पर भी जब यह प्रश्न पूछ ही लिया गया, तब इसका उत्तर मिलना ही चाहिए। कारण कि प्रश्न पूछने वाली राजमहल की दासी थी। वह राजमहल की अन्य दासियों को जानती थी। प्रश्न इतना ही नहीं था कि जाने वाली युवती बिन्दो नहीं थी, बल्कि यह भी, कि वह और भी कोई ऐसी दासी नहीं थी, जिसे पूछने वाली तुरन्त पहचान पाती। है, तो उसे बताना चाहिए।

परन्तु जाने वाली ने कुछ भी उत्तर न दे कर बाँह झटक कर स्वयं को छुड़ा लेने और आगे बढ़ जाने की चेष्टा की। इस पर पूछने वाली दासी ने ऊँची आवाज़ में पुकारा : "चन्द्रा ! कुन्तल !"

उसे पुकारते सुन कर जाने वाली युवती ने आगे बढ़ाया हुआ कदम रोक लिया और फुसफुसाते हुए कहा : "चुप !"

चन्द्रा और कुन्तल ऐसे दौड़ती हुई आ पहुँचीं, जैसे उसकी पुकार सुनने के लिए तैयार ही खड़ी थीं। आते ही बोलीं : "क्या बात है दीदी ?"

"देखो तो, यह कौन है ? बोलती नहीं। मैं तो इसे पहचानती नहीं" जिसे दीदी कहा गया था, उसने कहा। लगा कि वह चन्द्रा और कुन्तल की अपेक्षा अधिक प्रभावशालिनी है।

चन्द्रा और कुन्तल इस तरह रास्ता रोक कर खड़ी हो गईं कि यदि वह युवती भागने की चेष्टा करे, तो भाग न सके। चन्द्रा ने अँधेरे में उसका मुख देखने की कोशिश करते हुए कहा : "यहाँ अँधेरे में कुछ पहचाना नहीं जाता। पर यह खुद क्यों नहीं बताती ? क्यों री, बोलती क्यों नहीं ? दीदी को पहचानती नहीं तू ?"

जब अब भी वह युवती चुप ही रही, तब दीदी ने कुछ ऊँची आवाज़ में कहा : "बाप रे ! यह तो कुछ गोलमाल मालूम होता है। लगता है, आज मैंने चोर पकड़ लिया। पिछले दिनों में कई चोरियाँ हुईं। उनका दोष मढ़ा गया हमारे सिर। वे सब करतूत थीं इसकी। ज़रा बलबहादुर को तो बुला। इसे उसके हवाले करूँगी।"

चन्द्रा चलने को हुई, तो उस युवती ने लपक कर चन्द्रा का हाथ पकड़ कर रोकते हुए कहा : "नहीं।"

"मैया री !" चन्द्रा ने चौंक कर कहा : "यह तो मरद का सा हाथ है। कलाई ऐसे ज़ोर से पकड़ी है कि दर्द कर रही है।" यह कहते हुए उसने ज़ोर से झटक कर अपना हाथ छुड़ा लिया।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मरद !" कुन्तल ने, जो अब तक चुप खड़ी थी, हैरानी प्रकट करते हुए कहा। वह इन तीनों में सबसे हट्टी-कट्टी थी। "औरत के भेस में !" उसने आगे बढ़ कर उस युवती का हाथ पकड़ लिया, जैसे उसे बन्दी बना रही हो।

"कसम से दीदी, बिल्कुल मरद का हाथ है। यह औरत का हाथ हो हा नहीं सकता।" कुन्तल ने दीदी से कहा और अगले ही क्षण उस युवती की ओर मुड़ कर बोली : "सच बोल, कौन है तू। ज़नानी पोशाक पहन कर कोट में आने की हिम्मत तुझे कैसे हुई ? जानता है, अभी एक मिनट में तेरा सिर धड़ से अलग हो सकता है।"

कुन्तल की धमकी का वांछित प्रभाव हुआ। वह युवती-वेशधारी युवक बुरी तरह घबरा गया और घिघियाता हुआ बोला : "मुझे माफ़ करो। शार मत करो, नहीं तो भीड़ जमा हो जायेगी।"

"भीड़ तो जमा होगी ही" दीदी ने कठोरतापूर्वक कहा। "पहले यह बता, तू है कौन ? यहाँ किसलिए आया ? और इस भेस में क्यों आया ?"

"यह सब मत पूछो। इससे किसी का कोई भला नहीं है। मुझे चुपचाप निकल जाने दो।" उस पुरुष ने इतने आत्मविश्वास के साथ कहा कि जैसे यही एक हितकारी मार्ग है।

परन्तु दीदी इतनी जल्दी प्रभावित होने वाली नहीं थी। वह तमक कर बोली : "हाँ, तुझे चुपचाप निकल जाने दें और हम अपनी गर्दन कटवा लें। चल, उधर कमरे में चल। यहाँ सचमुच ही भीड़ इकट्ठी हो जायेगी।'

वह पुरुष उनके साथ जाना नहीं चाहता था, पर अन्य कोई उपाय भी नहीं था। यदि वह भागने की चेष्टा करता, तो निश्चय ही वे तीनों दासियाँ शोर मचा देतीं। ज़रा देर में संतरी आ पहुँचते। स्त्री-वेष में उसका पकड़ा जाना विपत्तिजनक सिद्ध होता। इसलिए जब कुन्तल और चन्द्रा ने उसे कमरे में ले जाने के लिए धकेलना शुरू किया, तब वह विरोध न करके उनके साथ चल पड़ा।

एक और नौकरानी को पास से गुज़रते देख दीदी ने उसे दीपक ले आने को कहा। जितनी देर में ये तीनों उस पुरुष को ले कर कमरे में पहुँचीं, उतनी देर में वह नौकरानी दीपक ले कर आ पहुँची। दीदी ने कमरे का दरवाज़ा खुला रहने दिया और कहा : "अब बोल, क्या कहता है ?"

स्त्रीवेषधारी उस पुरुष की दशा बड़ी दयनीय थी। दीपक के प्रकाश में उसका गोरा, सुन्दर मुख घबराया और परेशान दिखाई पड़ा। दाढ़ी मूँछ उसके नहीं थी। शायद इसी से उसने आशा की थी कि स्त्रीवेष में वह छिपा रह सकेगा। पर अब दीपक के प्रकाश में वह स्त्री कम और पुरुष अधिक प्रतीत हो रहा था।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुन्तल ने कहा : "पहले यह बता कि तू औरत है या मरद ?"

लगा कि वह पुरुष पूछताछ के झंझट से बचना चाहता था। वह यह प्रकट नहीं होने देना चाहता था कि वह कौन है और राजमहल में इस वेष में क्यों आया था और किससे मिलने गया था। परन्तु ये ही वे प्रश्न थे, जिनका सन्तोषजनक उत्तर पाये बिना महल की ये दासियां उसे हाथ से निकलने देने को तैयार नहीं थीं।

जब उसने कुन्तल के प्रश्न का उत्तर देने में टालमटोल की, तब दीदी ने कहा : "यह ऐसी बात नहीं है, जिसे छिपाया जा सके। अगर तू नहीं बतायेगा, तो हम खुद पता कर लेंगी। कुन्तल, उतार तो इसके कपड़े।"

कुन्तल ने झटक कर उसके कपड़े उतारने शुरू कर दिये। तब उस व्यक्ति ने दबी आवाज़ में कहा : "क्यों मेरी इज़्ज़त उतारने पर तुली हो ? लो, मैं बताये देता हूँ कि मैं पुरुष हूँ। पर यह सब जानने से तुम्हें क्या फ़ायदा है ?"

"फ़ायदा हो, न हो ; पर राजमहल की सेवा की दृष्टि से यह पता करना हमारा कर्तव्य है। पर अब तेरी किसी बात का विश्वास नहीं। वेष तेरा औरत का ; कहता है तू कि मरद है। हमें खुद ही देख कर तसल्ली करनी पड़ेगी। यह न हो कि ऊपर वाले अफ़सरों के सामने हम झूठे बन जायें।"

उस पुरुष के यह कहने पर कि मैं पुरुष हूँ, कुन्तल ने उसके कपड़े उतारने बन्द कर दिये थे। अब दीदी का इशारा पा कर वह और चन्द्रा मिल कर फिर उसे नंगा करने पर तुल गईं। वह बेचारा कपड़े न उतरने देने के लिए यथाशक्ति चेष्टा करने लगा, परन्तु वह पोशाक ही ऐसी थी कि उसकी रक्षा कर पाना कठिन था। दो चार झटकों में ही ज़नाने ढंग से बांधी गई धोती उसके शरीर से अलग हो गई। जो प्रमाण दीदी चाहती थी, वह उसे मिल गया। अब सन्देह की गुंजाइश नहीं थी। इसके साथ ही यह भी दीखा कि उस पुरुष की जांघें तपे हुए सोने के समान गौर वर्ण, सुन्दर और सुपुष्ट थीं। देख कर उन चारों ही दासियों का मन एक विचित्र आकांक्षा से आन्दोलित हो उठा। दीदी ने कहा : "बस कर कुन्तल। उसे धोती पहन लेने दे।"

पुरुष ने धोती बाँधने की जल्दी नहीं दिखाई। उसने आहत स्वर में कहा : "संदेह मिट गया या नहीं ? न मिटा हो, तो अब अच्छी तरह मिटा लो।"

दीदी ने लज्जा जताते हुए मुंह फेर कर कहा : "ठीक है। ठीक है। अब धोती पहन भी ले, या इसी तरह नंगा खड़ा रहेगा ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अब नंगा रहने या न रहने में क्या फ़र्क है !" कहते हुए वह पुरुष धीरे-धीरे धोती बाँधने लगा।

चन्द्रा ने धीमे से दीदी के कान में कहा : "यों जवान है बढ़िया।"

"बढ़िया लग रहा है, तो उससे कह। मुझसे कहने से क्या होगा ?" दीदी ने ऊँचे स्वर में कहा। फिर उस पुरुष की ओर मुड़ कर बोली : "यह लड़की तेरी जवानी की तारीफ़ कर रही है।"

पुरुष कुछ नहीं बोला ; चुपचाप सिर झुकाये धोती बाँधता रहा। कुन्तल ने कहा : "तारीफ़ के लायक चीज़ है ; तभी तारीफ़ कर रही है।"

पुरुष के मन में हल्की-सी गुदगुदी हुई। दो युवतियाँ उसके पौरुष की प्रशंसा कर रही हैं। पर इस समय वह जिस संकट में फँसा था, उसमें इस प्रशंसा का आनन्द लेने की उसकी मनोदशा नहीं थी। परन्तु इस आनन्द-विनोद को उसने छुटकारा पाने के लिए अच्छा मौका समझा। उसने विनती सी करते हुए कहा : "तुमने मुझे जितना अपमानित करना था, कर लिया। अब मुझे जाने दो।"

"हमने कोई अपमानित नहीं किया। केवल यह पता किया है कि तू मर्द है या औरत। जाने क्यों दें ? तूने हमारा क्या उपकार कर दिया है, जो जाने दें ? खैर, अब यह बता कि तू कौन है ? कहाँ रहता है ? क्या करता है ? इस वेष में महल में तू किसके पास गया था ? वहाँ जाने का तेरा प्रयोजन क्या था ? आज तू पहली ही बार आया है, या इससे पहले भी आता रहा है ?" दीदी बोली।

उस पुरुष को काटो तो खून नहीं। लगा कि उसे चक्कर आ रहा है और वह फ़र्श पर बैठ गया। यदि इनमें से एक-एक प्रश्न उससे अलग-अलग पूछा जाता, तब भी संदेह था कि वह उसका उत्तर देता या नहीं ; पर दीदी ने एक साथ इतने प्रश्न पूछ कर तो उसका हौसला ही समाप्त कर दिया। इनमें से एक-एक प्रश्न का उत्तर उसे एक-एक कदम वधिक की तलवार की ओर ले जायेगा और सब प्रश्नों का उत्तर पूरा होते न होते उसका सिर धड़ के ऊपर नहीं रहेगा।

दीदी ने उसे चुप्पी साधे देखा, तो बोली : "तेरे छिपाने से भी छिपा कुछ नहीं रहेगा। जैसे हमने अभी एक बात पता कर ली, वैसे ही और सब बातें भी पता कर लेंगी। फ़जीहत से बचना हो, तो सब कुछ सीधे-सीधे बता दे।"

उस पुरुष को लगा कि दीदी गलत नहीं कह रही। पर सब कुछ सीधे-सीधे बता देने से वह फ़जीहत से बच सकेगा, यह विश्वास उसे किसी तरह हो नहीं रहा था। इसलिए उसके मुँह से कोई बोल नहीं निकला।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तू नहीं बताता, तो मैं बताती हूँ" कुन्तल ने कहा। "यह भेस धर कर तू महल में किसी चहेती के साथ रँगरेलियाँ करने गया था। ऐसे गबरू जवान का इस तरह औरत का रूप धरने का और मतलब ही क्या हो सकता है ?"

"तुम लोग इस तरह कुरेदा कुरेदी मत करो। मुझे इस समय यहाँ से चला जाने दो। मैं फिर कभी नहीं आऊँगा।" पुरुष ने बहुत ही हताश हो कर कहा।

"तेरे फिर न आने से हमारा क्या फायदा ? हमारी ओर से तू रोज़ आ। और कहीं नहीं तो, हमारे ही पास आ। पर हमें पता तो रहना चाहिए कि कौन आता है; कहाँ आता है और क्यों आता है ?" चन्द्रा ने दुष्टतापूर्वक कहा।

"अरे कहीं यह वही तो नहीं" जो दासी दीपक लाई थी, उसने अचानक चौंक कर कहा।

उस पुरुष का सुन्दर मुख आशंका से पीला पड़ गया। उसे लगा कि इस दासी ने शायद उसे ठीक-ठीक पहचान लिया है।

"कौन ?" दीदी ने कुतूहल से पूछा।

दासी ने धीरे से दीदी के कान में कुछ कहा, जिसे सुन कर दीदी के चेहरे पर क्षण भर के लिए भय की रेखाएँ उभर आईं। पर शीघ्र ही वह स्वयं को सँभाल कर बोली : "नहीं-नहीं, यह वह नहीं हो सकता। उसे इस तरह आने की क्या ज़रूरत ? इस तरह आ कर उसे अपनी मिट्टी खराब करवानी है ?"

"कौन दीदी ?" कुन्तल ने पूछा।

"यह कहती है कि यह शायद गगनसिंह हो, जो महारानी जी के पास आया-जाया करता है। पर वह ऐसे क्यों आने लगा ?"

परन्तु उस पुरुष की भाव भंगी ने बता दिया कि उन लोगों का अनुमान सही है। उसकी सारी घबराहट और बेचैनी समाप्त हो गई। वह इस तरह निढाल हो कर बैठ गया, जैसे अब कुछ करने को शेष नहीं रहा है। जो होना था, वह हो चुका है। अब तो निष्क्रिय बैठ कर घोरतम अनिष्ट की प्रतीक्षा करना ही बाकी है।

कुन्तल ने आँखें फाड़ कर उसकी ओर देखते हुए कहा : "वही है।"

वह गगनसिंह ही था। वह महारानी राज्यलक्ष्मी के कक्ष से लौट रहा था। महारानी के साथ किये गये विलास की स्मृति इस समय उनके मन में कड़वे धुएँ की तरह भर उठी। वह महारानी की अतृप्त लालसाओं को तृप्त

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करने का साधन बना था—न चाहते हुए, डरते हुए। अब महारानी क्या उसकी प्राण-रक्षा कर सकेंगी ? यदि ये दासियाँ अपने हठ पर दृढ़ रहीं, तो कुछ ही देर में सिपाही आ पहुँचेंगे। उसे महाराज के सामने पेश किया जायेगा। उसके बाद जो कुछ होगा, उसकी कल्पना न करना ही भला है।

दीदी ने पूछा : "सच बताइये, क्या आप गगनसिंह ही हैं ?"

गगनसिंह ने मुँह से कुछ नहीं कहा, पर स्वीकृतिसूचक सिर हिला दिया।

क्षण भर दीदी विचारमग्न रही। फिर उसने पूछा : "आप महारानी जी के पास गये थे ?"

गगनसिंह को उसकी धृष्टता पर बहुत क्रोध आया। "मेरा परिचय जानने के बाद भी यह मुझसे ऐसा प्रश्न पूछने की हिम्मत करती है ?" उसने सोचा। उसकी इच्छा हुई कि वह उसे वहीं मुट्ठी में पकड़ कर मसल डाले। पर इच्छा होने मात्र से यह असम्भव कार्य किया थोड़े ही जा सकता था। उसने इस प्रश्न के उत्तर में स्वीकृतिसूचक सिर भी नहीं हिलाया। फिर भी उसका मौन ही पक्की स्वीकृति बन गया। यदि वह इस आरोप को अस्वीकार करना चाहता था, तो उसे तुरन्त ज़ोरदार प्रतिवाद करना चाहिए था।

"आपने हमें बड़े संकट में डाल दिया। यदि हम लोगों ने आपको न देखा होता, तो कोई बात नहीं थी। पर अब तो हमें महाराज को इसकी सूचना देनी ही पड़ेगी।" दीदी ने अपनी बेबसी जताते हुए कहा।

"भगवान के लिए ऐसा न करो" इस बार गगनसिंह ने चिरौरी करते हुए कहा। "तुम जानती हो, उसका परिणाम क्या होगा ? मेरा तो जो होगा, सो होगा ही, पर यह बात भी छिपी न रहेगी कि यह बात महाराज तक किसने पहुँचाई है। महारानी के कोप से तुम लोग भी बच नहीं पाओगी। मेरा विनाश करने के लिए अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मत मारो।"

"आपका विनाश हम क्यों चाहने लगीं ? आपसे हमारी क्या दुश्मनी है ? पर जिस कार्य के लिए हम नियुक्त हैं, उसे करना भी तो हमारा कर्तव्य है। नहीं तो स्वामी का अन्न ऋण परलोक में हमारे सिर चढ़ा रहेगा।"

"तुम स्वामी का अन्न ऋण चुकाओगी, तो मैं विनाश से कैसे बच सकता हूँ ?"

"पर इसमें हमारा दोष कहाँ है ?" दीदी ने कहा।

"तुम लोग जो कुछ माँगो, वह मैं देने को तैयार हूँ। बोलो, क्या चाहती हो ?" गगनसिंह ने प्रलोभन दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"महाराज की दया से हमें सब कुछ प्राप्त है। हमें कुछ भी नहीं चाहिए।"

"मेरे बाल-बच्चों पर दया करो। मैं न रहा, तो एक बसा हुआ घर उजड़ जायेगा।"

"उस घर की चिन्ता करके ही तो आप यहाँ रँगरेलियाँ मनाने आते हैं?" दीदी ने ताना दिया।

"जो बात तुमने व्यंग में कही है, वही वस्तुतः सच है। मैं यहाँ आता हूँ अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए ही। यह न करूँ, तो जीविका जुटाना कठिन हो जाये।"

अब दीदी कुछ नरम पड़ी; बोली : "यदि हम आपको जाने दें, और बात खुल जाये, तो हमारा क्या होगा?"

गगनसिंह ने कहा : "बात खुलेगी नहीं। तुम पर कोई आँच न आयेगी।"

दीदी ने प्रश्नभरी दृष्टि से चन्द्रा और कुन्तल की ओर देखा। चन्द्रा ने कहा : "दीदी, जाने दीजिये। किसी के विनाश में हम निमित्त क्यों बनें?"

"अच्छा, जाइये।" दीदी ने कहा। "हमसे जो अभद्रता हुई, उसे क्षमा कर दीजियेगा।"

"तुमने मेरा जो उपकार किया है, उसे मैं कभी नहीं भूलूँगा" चलते चलते गगनसिंह ने कहा।

× × ×

गगनसिंह उनके उपकार को भूला नहीं। दो ही दिन बाद दीदी, चन्द्रा, कुन्तल और दीपक लाने वाली वह दासी, चारों राजमहल से कहाँ गायब हो गईं, किसी को कुछ पता न चला। उनका मुँह सदा के लिए बन्द कर दिया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

37

आवश्यक काम

मातवरसिंह का माथा ठनका। महारानी ने आज अभी, इसी समय बुलाया है। ऐसा कौन सा आवश्यक काम आ पड़ा ? पर स्वयं ही सोच कर उन्होंने अपना समाधान कर लिया : "और क्या काम होने वाला है ? काफ़ी दिन पहले महारानी ने जिस काम का ज़िक्र किया था, शायद उसी के लिए फिर कहती होंगी।" पर वह काम तो कर पाना उनके लिए सम्भव नहीं है। आज फिर कुछ अप्रिय कहा-सुनी होगी, इस कल्पना से ही उनका मन कुछ खिन्न हो उठा।

सूर्यास्त हुए देर हो चुकी थी। घरों में दीपक जल चुके थे। सड़कों पर अँधेरा था। प्रधानमंत्री का इस समय घर से बाहर जाने का मन नहीं था, पर महारानी का अनुरोध है—जो आदेश से कम नहीं है—उसे टाला नहीं जा सकता। उचित वस्त्र धारण करके वह हनुमान ढोका दरबार के लिए रवाना हुए। दो सेवक उनके साथ चले। एक मशालची राह दिखाता आगे चला।

राजमहल के मुख्य द्वार के बाहर स्थित हनुमान जी की प्रतिमा के सम्मुख सिर झुका कर प्रधानमंत्री ने प्रणाम किया। उसी समय उनका बायाँ नेत्र फड़कने लगा। उनके मन में विचित्र-सी बेचैनी हुई, परन्तु धीर-चित्त होने के कारण उन्होंने उस पर विशेष ध्यान न दिया। मशालची और सेवकों को महल के बाहर ही छोड़ कर वह अन्दर प्रविष्ट हुए।

महल की अव्यवस्था देख कर उनका चित्त रोषाविष्ट हो उठा। ये नौकर-चाकर कितने हरामखोर हैं ? जो काम इन्हें सौंपा जाता है, वह कितना ही हल्का क्यों न हो, उसमें ये टालमटोल अवश्य करते हैं। इतना अँधेरा हो चुका है, पर यहाँ अभी तक दीपक जला कर नहीं रखे गये। गलियारे में इतना अँधेरा है कि कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता। पहले वह कई बार रात में

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी महल में ग्राये हैं, पर हमेशा यहाँ दीप रखे रहते थे। पर ग्राज किसी नौकर ने छुट्टी मनाई है। एक बार उनका मन हुग्रा कि बाहर से ग्रपने मशालची को बुला लें। फिर सोचा कि बीस-पच्चीस कदम का ही तो रास्ता है ग्रौर वह भी भली-भाँति पहचाना हुग्रा है। उसे पार करके तो वह परले चौक में पहुँच ही जायेंगे, जहाँ ग्रवश्य ही दीप जल रहे होंगे। यह सोच कर वह ग्रागे बढ़े।

ग्रभी वह मुश्किल से ग्राठ दस कदम चले होंगे कि उन्हें एकाएक ग्रपनी छाती में ग्रसह्य वेदना ग्रनुभव हुई। उसके साथ ही उन्हें बन्दूक का धमाका सुनाई पड़ा। वह छटपटा कर भूमि पर गिर पड़े। ग्रब उन्हें समझ ग्राया कि उन्हें गोली मारी गई है। उनकी छाती से गर्म खून निकल कर उनके कपड़ों को भिगो रहा था। ग्रभी वह सोच ही रहे थे कि यह हुग्रा क्या है कि उन्हें सामने ग्रँधेरे में बढ़ती हुई एक मनुष्याकृति दिखाई पड़ी। वह ग्रस्पष्ट ग्राकृति पास नहीं ग्राई। उन्हें लगा कि वह व्यक्ति फिर उनकी ग्रोर बन्दूक का निशाना साध रहा है। उन्होंने चिल्ला कर शोर मचाना चाहा, पर इससे पहले ही एक ग्रौर गोली ने ग्राकर उनके कपाल को फोड़ दिया। उनकी चेतना उसी क्षरण समाप्त हो गई। वह शोर नहीं मचा सके। यदि मचा भी पाते, तो भी उससे कोई लाभ होता, इसमें सन्देह है।

जब मातबरसिंह के शरीर में कोई चेष्टा दिखाई न पड़ी, तब ग्रन्धकार में खड़ी वह ग्राकृति तेज़ी से मातबरसिंह पर झपटी ग्रौर उसने उस निर्जीव शरीर पर खुखरी से कई गहरी चोटें कीं। हर नये वार से गर्म खून का झरना-सा फूट पड़ता था। मृतक की हत्या करने का वह प्रयत्न जितना वीभत्स था, उतना ही रोमांचकारी भी था।

जब यह पूरा निश्चय हो गया कि इस शव में ग्रब प्राण किसी तरह रह ही नहीं सकते, तब उस पुरुष ने उस शव को कन्धे पर उठाया ग्रौर ग्रन्दर राजमहल में ले चला। यह ग्राश्चर्य की बात थी कि जिन गलियारों में हो कर वह चला, उनमें से किसी में भी कोई दीप नहीं जल रहा था। इसलिए उसको किसी ने भी देखा नहीं। यदि किसी ने कहीं से लुकछिप कर देख भी लिया हो, तो भी किसी ने यह जताया नहीं कि उसने देखा है।

कुछ ही मिनट पश्चात् उसने शव को ले जा कर एक कमरे में पटक दिया। इस कमरे में एक दीपक जल रहा था। उसके प्रकाश में उसने एक दृष्टि उस लाश पर डाली। उसकी दृष्टि उस ग्रोर गड़ी रह गई। लगा कि जैसे उस शव से ग्रपनी ग्राँखों को हटा पाने की शक्ति ही उसमें .नहीं रही है। वह कुछ विचारों ग्रौर स्मृतियों में खो गया सा प्रतीत हुग्रा। ऐसा भी लगा कि ग्राँसू की एक-एक बूँद उसकी पलकों की कोरों के पास झलक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आई है। या शायद यह भ्रम ही हो, क्योंकि कोई भी आँसू न तो भूमि पर ही गिरा और न बह कर उसके गालों पर ही आया।

पर यह स्थिति देर तक न रही, क्योंकि दो मिनट बाद ही महारानी राज्यलक्ष्मी देवी ने उस कमरे में प्रवेश किया। वह अकेली थी। कोई दासी तक उसके साथ न थी। उसके आते ही हत्यारे की मुख-मुद्रा बदल गई। उसके चेहरे पर और आँखों में जो पश्चात्ताप और भावुकता की सी झलक दिखाई पड़ी थी, वह क्षण भर में विलीन हो गई। उसका स्थान क्रोध, घृणा और हिंसा के आवेश ने ले लिया। यदि रानी उसकी पहली मुखमुद्रा को देख पाती, तो शायद डर ही जाती। पर इस समय उसकी घृणाभरी मुख-मुद्रा को देख कर उसे सन्तोष हुआ। वह मानो पूछ रहा था : "अब तो आप खुश हैं ?"

रानी कुछ देर खड़ी दीपक के मन्द प्रकाश में उस लाश को देखती रही। उसके मुख पर घृणा और प्रतिशोध का भाव बहुत ही तीव्र रेखाओं में झलक उठा था। उसने सन्तोष की एक साँस ली। वह सोच रही थी : "इस दुष्ट पुरुष का ऐसा ही अन्त होना उचित था। मैंने उसे बनाया था। वह यह भूल बैठा कि मैं ही उसे बिगाड़ भी सकती हूँ। खैर, अब किस्सा खत्म हुआ। उसने जैसा किया, वैसा उसका फल पाया।"

पर उसने मुँह से केवल इतना कहा : "ठीक है। अब इसका क्या किया जाये ?" फिर क्षण भर रुक कर स्वयं ही बोली : "अच्छा ऐसा करो। इस कमरे की यह खिड़की बाहर सड़क पर खुलती है। खिड़की से इसे बाहर सड़क पर फेंक दो।"

हत्यारे ने तुरन्त इस आदेश का पालन किया। उसके बाद खिड़की फिर पहले की तरह बन्द कर दी गई।

अब हत्यारे ने विनयपूर्वक कहा : "मैंने आपके आदेश का पालन किया है सरकार। आगे भी मैं इसी प्रकार आपके हर आदेश का पालन करता रहूँगा। इस सेवक पर आपकी कृपा होनी चाहिए।"

रानी ने कहा : "अवश्य, अवश्य। इसका पुरस्कार तुम्हें अवश्य मिलेगा।" और इतना कह कर वह हत्यारे को उसी कमरे में खड़ा छोड़ कर बाहर निकल गई।

× × ×

मातबरसिंह का शव प्रातःकाल राजमहल के निकट पड़ा देखा गया। काठमांडौ में ऐसे आदमी कम ही थे, जो इस शव को देखते ही न पहचान लेते। कुछ ही मिनट में सारे शहर में खबर फैल गई कि मातबरसिंह की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हत्या कर दी गई है। यह हत्या किसने की, क्यों की, इस विषय में तरह-तरह के अनुमान लगाये जाने लगे। यद्यपि लाश राजमहल के पास पड़ी थी, फिर भी किसी ने यह संकेत करने की हिम्मत नहीं की कि इस हत्या में राजमहल के किसी व्यक्ति का कोई हाथ हो सकता है। और वस्तुतः यह अनुमान करने के लिए कोई कारण था भी नहीं कि राजदरबार ने मातबरसिंह को मरवाने का यत्न किया हो। पर इस हत्या से सारे शहर में भीषण आतंक छा गया।

कुछ देर बाद उत्सुक और साहसी लोगों की भीड़ लाश को देखने के लिए एकत्र होने लगी। तब पुलिस के चार सिपाही वहाँ आ खड़े हुए। उन्होंने लाश को ढकने या लोगों को हटाने का कोई प्रयत्न नहीं किया।

लाश महल की दीवार के निकट एक खिड़की के पास इस तरह पड़ी थी कि ऐसा लगता था कि जैसे उसे खिड़की से ही बाहर फेंका गया हो। उसे सीधा करके लिटाया नहीं गया था, बल्कि वह ऊपर से जैसी गिरी थी, वैसी ही टेढ़ी-मेढ़ी पड़ी थी और पड़े-पड़े उसी दशा में अकड़ गई थी। खून से कपड़े लाल हो गये थे और कुछ खून बह कर ज़मीन पर भी गिर गया था। खिड़की की चौखट की निचली पटिया पर कुछ लाली सी दीख रही थी। ठीक नहीं कहा जा सकता कि वह खून का निशान था या नहीं। यदि वह खून का निशान रहा हो, तो उसे गीले कपड़े से पोंछा गया प्रतीत होता था।

मातबरसिंह के सम्बन्धियों और इष्ट मित्रों की काठमांडौ में कमी नहीं थी। उनमें से कई अत्यन्त प्रभावशाली भी थे। वे सब कुछ ही देर में वहाँ आ पहुँचे। मातबरसिंह का भानजा जंगबहादुर वहाँ पहुँचा और मामा की लाश को देख कर फूट-फूट कर रोने लगा। फतहजंग चौतरिया, राणा अभिमानसिंह आदि कई संभ्रान्त पुरुषों ने उसे संभाला और उसे सान्त्वना देने की चेष्टा की, हालाँकि वे स्वयं इस भीषण आघात से किंकर्तव्यविमूढ़ हो रहे थे।

"हाय, मैं तो अनाथ हो गया। मेरे तो मामा ही सब कुछ थे। उन्होंने मेरे लिए जो कुछ किया, वह और कौन करेगा? हाय मामा जी, यह क्या हुआ!" कह कर वह अपना सिर पीटने लगा।

उस तरुण और बलिष्ठ युवक को इस प्रकार विलाप करते देख कर कुछ विचित्र-सा अनुभव होता था। किसी ने यह आशा नहीं की थी कि वह इतना भावुक और मामा के प्रति इतना अनुरक्त होगा। पर इस समय उसकी दशा देख कर तो पत्थर भी पसीजता था। और तो और, थापा-परिवार से वैर रखने वाले व्रजकिशोर पांडे भी पुराना विरोध भूल कर उसे

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धीरज बँधाने लगे। जैसे तैसे समझा कर कई लोग उसे वहाँ से हटा ले गये।

अब प्रश्न यह उठा कि लाश का इस तरह देर तक पड़े रहना ठीक नहीं। अब तो इसे यहाँ से हटा कर इसकी अन्त्येष्टि का प्रबन्ध करना चाहिए। फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह ने, जो दोनों ही राज-दरबार के प्रमुख व्यक्ति थे, लाश को हटाने का प्रबन्ध किया, तो पहरे पर खड़े सिपाहियों ने विनयपूर्वक कहा : "हुज़ूर, हुकुम नहीं है।"

फतहजंग को लगा कि जैसे किसी ने उन्हें तमाचा जड़ दिया है। प्रधान मंत्री की इस प्रकार हत्या हो गई, यही क्या कम बात है? फिर उस लाश को हटाने का हुक्म नहीं है। फिर भी उन्होंने शान्तिपूर्वक पूछा : "किसका हुक्म है?"

"दरबार का हुक्म है हुज़ूर कि कत्ल की जाँच पड़ताल होगी। जब तक जाँच पूरी न हो जाये, तब तक लाश जहाँ है, जैसी है, वहीं वैसी ही पड़ी रहे।"

फतहजंग चौतरिया ने आश्चर्य और प्रश्नभरी मुद्रा से राणा अभिमानसिंह की आँखों में देखा। उन आँखों में भी उन्हें वही भाव दिखाई पड़ा। सिपाहियों से बहस करने का कोई लाभ नहीं था। मामला जितना दिखाई पड़ता था, उससे कहीं अधिक गहरा था। महल के बाहर पड़ी लाश की खबर अन्दर राजा और रानी तक पहुँच चुकी है। पता नहीं कि वे बाहर आकर लाश को देख गये हैं या नहीं, किन्तु जाँच के लिए उन्होंने आदेश अवश्य दे दिये हैं। फिर राजा तो कुछ करने-धरने वाले हैं नहीं, आदेश रानी ने ही दिया होगा।

फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह पर रानी राज्यलक्ष्मी देवी की कृपादृष्टि नहीं थी। कारण यह कि वे राजकाज के मामलों को स्वयं भलीभाँति समझते थे और सब प्रश्नों पर अपनी सम्मति बना सकते थे। ऐसे व्यक्ति रानी को पसन्द नहीं आते थे, क्योंकि वह सब प्रश्नों पर अपनी सम्मति को ही दूसरों के मुख से दुहराया जाना पसन्द करती थी। पर ऐसे लोग राजा राजेन्द्रवीरविक्रम को पसन्द थे, क्योंकि रानी द्वारा किये जाने वाले सब निश्चयों को राजा पसन्द नहीं करते थे और इन लोगों के साथ विचार-विमर्श करके वह रानी के निश्चय के विपक्ष में तर्क और युक्तियाँ प्राप्त कर लेते थे। वैसे भी फतहजंग चौतरिया से उनका विशेष सौहार्द था। अतः इन दोनों भारदारों ने महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम से मिल लेना उचित समझा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज से मिलने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई। मातबरसिंह की हत्या का समाचार महाराज को मिल चुका था। पर इन दोनों भारदारों को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि महाराज इस समाचार से उद्विग्न या चिन्तित नहीं थे। उल्टे ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे उनके सिर से कोई बोझ उतर गया हो।

फतहजंग चौतरिया ने कहा : "हत्या बड़ी बेरहमी से की गई है!"

"मैंने देखा तो नहीं। पर सुना है कि लाश पर कई घाव हैं—गोली के भी और खुखरी के भी।" महाराज बोले।

"यह किसका काम हो सकता है?" चौतरिया ने इस प्रकार कहा, जैसे वह स्वयं अपने से ही पूछ रहे हों।

इस प्रश्न का उत्तर किसी ने नहीं दिया। कुछ देर रुक कर फतहजंग चौतरिया ने ही फिर कहा : "कहीं पांडे लोगों में से तो किसी का काम नहीं?" वह सचमुच ही किसी निष्कर्ष पर पहुँच नहीं पा रहा था।

राजेन्द्रवीरविक्रम ने भोलेपन से कहा : "हो सकता है!"

"पर अब ऐसा पांडेय है कौन?" राणा अभिमानसिंह ने पूछा।

"क्या पता चलता है! अँधेरे में छिप कर कोई भी वार कर सकता है।" राजेन्द्रवीरविक्रम ने कहा।

"या कहीं अंग्रेज़ रैज़ीडैंट की तो करतूत नहीं?" चौतरिया ने नया सन्देह प्रकट किया।

यह सुन कर राजेन्द्रवीरविक्रम का तटस्थ उदासीनता का भाव उड़ता दिखाई पड़ा और उसका स्थान हल्की-सी चिन्ता और घबराहट ने ले लिया। उनका चेहरा उतर सा गया। अंग्रेज़ रैज़ीडैंट की वकालत सी करते हुए वह बोले : "नहीं। अंग्रेज़ रैज़ीडैंट का इससे क्या सम्बन्ध हो सकता है?"

मातबरसिंह की हत्या में अंग्रेज़ रैज़ीडैंट को क्यों दिलचस्पी हो सकती है, यह बात फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह दोनों भलीभाँति जानते थे। पर राजेन्द्रवीरविक्रम के मनोभाव को देखते हुए इस चर्चा को बढ़ाना अभीष्ट नहीं था। वस्तुतः राजेन्द्रवीरविक्रम यह समझते थे कि यह हत्या अंग्रेज़ रैज़ीडैंट ने ही करवाई है। पर वह नहीं चाहते थे कि यह रहस्य प्रकट हो। अंग्रेज़ रैज़ीडैंट का नाम सामने आने से उसके विरुद्ध रोष फैल सकता है। यदि किसी कारण अंग्रेज़ रैज़ीडैंट का कुछ अनिष्ट हो गया, तो नेपाल दरबार को परम महिमाशाली अंग्रेज़ों का कोप भाजन बनना पड़ेगा। मातबरसिंह से यही तो खतरा था कि वह अंग्रेज़ों से शत्रुता मोल

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ले रहा था। पर अब, जब वह नहीं रहा है, तब तो वह खतरा समाप्त होना चाहिए।

राजेन्द्रवीरविक्रम के रुख से फतहजंग चौतरिया का यह संदेह दृढ़ हो गया कि इस हत्या से अंग्रेज़ रैज़ीडैंट का सम्बन्ध अवश्य है। पर यदि यह बात सही हो, तो इस पर आवरण डालने में महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम का क्या लाभ है, यह वह समझ नहीं सके।

"पर सरकार, अब अन्त्येष्टि का तो प्रबन्ध होना चाहिए" फतहजंग ने काम की बात चलाई।

"रानी का कहना है कि इस हत्या की पूरी जाँच होनी चाहिए। पता चलना चाहिए कि इसके पीछे किन लोगों का षड्यंत्र है। यदि लाश वहाँ से हटा दी गई, तो हत्या का पता देने वाले बहुत से सूत्र मिट जायेंगे। इसीलिए लाश को वहाँ से हटाने से रोका गया है।"

"पर सरकार, यह जाँच तो जल्दी ही हो सकती है।"

"जल्दी ही होनी चाहिए। फिर भी कुछ समय तो लग ही जाता है।"

"इस समय वह लाश सड़क पर उघड़ी पड़ी है। कम से कम उसे वस्त्र से ढकवा देना तो उचित होगा।" चौतरिया ने कहा।

"मेरा तो विचार है कि जब तक पूरी जाँच पड़ताल न हो जाये, तब तक लाश को बिल्कुल न छेड़ना ही अच्छा है। फिर भी यदि आप ठीक समझें, तो उसे कपड़े से ढकवा दें।"

इस कृपा के लिए महाराज का धन्यवाद करके फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह वापस लौट पड़े। उन दोनों ने यह सोचा ही नहीं था कि मातबरसिंह की हत्या के प्रति महाराज का ऐसा रुख होगा। चौतरिया ने कहा : "राणा जी, यह तो दाल में कुछ काला मालूम होता है। मुझे तो ऐसा लगा कि जैसे इस हत्या से महाराज कुछ प्रसन्न ही हैं।"

"मुझे तो यह आशंका हो रही है कि कहीं यह उन्हीं के इशारे पर तो नहीं की गई। कम से कम उन्हें यह पता अवश्य है कि इसके पीछे किसका हाथ है।"

"पर इन्होंने कभी यह प्रकट तो नहीं किया था कि वह मातबरसिंह से रुष्ट हैं?"

"अब तो पूरी तरह रुष्ट दीख रहे हैं। जाँच-पड़ताल का तो केवल बहाना है। वस्तुतः वे लाश की अन्त्येष्टि नहीं होने देना चाहते।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान ढोका दरबार से बाहर निकल कर दोनों कुछ क्षण यह सोचते खड़े रहे कि अब किधर जायें और क्या करें। किसी अज्ञात आकर्षण से खिचे वे उसी ओर चले, जिस ओर मातबरसिंह का शव सड़क पर शोचनीय दशा में पड़ा था।

इस समय तक प्रातःकाल का कुहरा काफ़ी कम हो गया था, पर वह पूरी तरह हटा नहीं था। अभी वे दोनों कुछ दूर ही थे कि उन्हें उत्सुक तमाशबीनों की भीड़ के परे एक हाथी की धुँधली-सी आकृति दिखाई पड़ी। यहाँ हाथी किस लिए? हाथी पर कौन आया हो सकता है? यह सोचते हुए वे तेज़ी से आगे बढ़े। जब वे भीड़ के बीच में से रास्ता बनाते हुए हाथी के सामने पहुँचे, तब उन्हें काठ-सा मार गया।

हाथी के आस-पास सब ओर पचास-पचास कदम दूर तक खाली जगह थी। हाथी से कुछ दूर हट कर पुलिस के वे चारों सिपाही ज्यों के त्यों खड़े थे। महावत हाथी की गर्दन पर बैठा उसे शान्त रख रहा था। दो आदमी, जिन्होंने अपने मुँह पर कपड़ा लपेटा हुआ था और इसीलिए जिनकी शक्ल पहचानी नहीं जाती थी, लोहे की एक मोटी जंज़ीर से मातबरसिंह के शव को इस तरह बाँध रहे थे कि वह किसी प्रकार खुल कर निकल न सके। उन्होंने जंज़ीर को पैरों के बीच में से निकाल कर धड़ के चारों ओर लपेटा और बाँहों के नीचे से जनेऊ की तरह लपेटते हुए गर्दन के चारों ओर कस कर बाँध दिया। उसके बाद उन्होंने जंज़ीर का दूसरा सिरा हाथी के एक पिछले पाँव से बाँधा। वे दोनों अपने काम में निपुण थे, अतः इस काम में उन्हें बहुत ही थोड़ी देर लगी। जंज़ीर को भलीभाँति बाँध कर वे भी हाथी की पूँछ पकड़ कर उसकी पीठ पर चढ़ गये। महावत ने पैर मार कर इशारा किया और हाथी सड़क पर आगे बढ़ा। तमाशबीनों की भीड़ ने बीच-बीच में से फट कर हाथी के लिए रास्ता दे दिया। हौदे के दोनों ओर झूलती हुई घंटियाँ बारी-बारी से बज कर करुण विलाप-सा करने लगीं। दर्शकों की इतनी बड़ी भीड़ में से किसी ने भी हर्ष या विषाद प्रकट नहीं किया। सब चुपचाप लकड़ी की मूर्तियों की तरह खड़े देखते रहे।

जब हाथी पास से गुज़र कर आगे बढ़ गया, तब फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह को एक दूसरे की ओर देखने की फ़ुरसत मिली। राणा ने कहा : "यह हो रही है जाँच-पड़ताल, जिसके लिए प्रधानमंत्री के शव को वस्त्र से ढकने तक नहीं दिया जा रहा था।"

जो कुछ होते उन्होंने अपनी आँखों से देखा था, वह राजा या रानी के आदेश के सिवाय और किसी तरह हो नहीं सकता था। राजा या रानी के सिवाय किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि वह मातबरसिंह की ओर टेढ़ी दृष्टि से देख

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सकता। तो क्या यह राजा का आदेश है? या फिर रानी का आदेश है? चाहे जिसका भी हो, पता करना होगा और उसे बदलवाने का भरसक प्रयत्न भी करना होगा। प्रधानमंत्री का शव हाथी के पाँव में बँधवा कर राजधानी की सड़कों पर घसिटवाया जाये, इसमें आदेश देने वाले राजा या रानी का भी तो अपयश है। इस घटना का राजनीतिक प्रभाव नेपाल से बाहर भारत के अंग्रेज़ों पर भी पड़ सकता है।

वे दोनों क्षणभर का भी विलम्ब किये बिना फिर हनुमान ढोका दरबार में पहुँचे। महल में उनके प्रवेश में कोई कठिनाई नहीं थी। जब महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम को उनके आने की सूचना दी गई, तब इन दोनों के फिर इतनी जल्दी आ धमकने पर वह कुछ खीझ से उठे। फिर भी उन्होंने अपनी खीझ को मन में ही दबा कर तुरन्त ही दोनों को मिलने के लिए बुलवा लिया।

फतहजंग चौतरिया अब तक अपना स्वाभाविक संयम खो बैठे थे और नमस्कार करते ही कह उठे: "सरकार, यह क्या हो रहा है?"

राजेन्द्रविक्रम कुछ समझ न सके कि चौतरिया किस विषय में यह उलाहना भरा प्रश्न पूछ रहे हैं। कुछ क्षण तक वह विस्मित होकर उनके मुँह की ओर देखते रहे: "क्या हो रहा है?"

चौतरिया राजा की उस मुखमुद्रा से पहचान गये कि जो कुछ हो रहा है वह राजा के आदेश से तो हो ही नहीं रहा, राजा को उसकी जानकारी भी नहीं है। उन्होंने विनीत, किन्तु आहत स्वर में कहा: "अभी कुछ ही देर पहले सरकार ने आदेश दिया था कि मातबरसिंह के शव को इसलिए हिलाया-डुलाया न जाये, कि उसकी जाँच-पड़ताल होनी है। पर इस समय उसे हाथी के पाँव से बाँध कर काठमांडौ की सड़कों पर घसीटा जा रहा है। अब जाँच-पड़..."

"सड़क पर घसीटा जा रहा है? किसने बताया?"

राणा अभिमानसिंह ने रुद्ध आवेश के साथ कहा: "हम दोनों ने अपनी आँखों से देखा है सरकार। आखिर शव का इस तरह अपमान करने से किसका क्या लाभ होगा?"

महाराज के मुख पर रोष की हल्की-सी झलक आई, पर शीघ्र ही गायब हो गई। शान्त स्वर में उन्होंने कहा: "लाभ? उल्टे हानि है। इसे तुरन्त रोकना होगा।" फिर चौतरिया की ओर मुड़ कर उन्होंने कहा: "आप ही जाइये और अभी इसे रुकवाइये।"

"मेरी वहाँ कौन सुनता है सरकार? वे लोग कहते हैं कि दरबार का हुक्म है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हाँ हाँ। मैं ही हुकुम दे रहा हूं। हुकुम तैयार कीजिये। मैं उस पर छाप लगाता हूँ।"

फतहजंग चौतरिया ने शाही कागज़ पर हुकुम लिखा। महाराज राजेन्द्र-वीरविक्रम ने उस पर अपने पंजे की छाप और राजकीय मुहर लगवाई। उस आदेश को उन्होंने चौतरिया को देते हुए कहा : "जल्दी कीजिये; यह पैशाचिक कार्य तुरन्त बन्द होना चाहिए।"

फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह फिर राजमहल से बाहर निकले। इस बार वे पहले घर गये। उन्होंने अपने शस्त्र लिये; अपने कुछ सिपाही साथ लिये और घोड़ों पर सवार होकर उस हाथी को खोजने चले।

इस सब काम में लगभग आधा घण्टा लग गया। इतनी देर में हाथी ने काफ़ी लम्बा चक्कर लगा लिया था। काठमांडौ ज़रा सा तो शहर था। उसकी सभी बड़ी सड़कों पर से वह घूम गया था। दूकानें खुल चुकी थीं और सड़कों पर लोगों की खूब भीड़ थी। यद्यपि किसी प्रकार की घोषणा नहीं की गई थी, फिर भी सब दर्शकों को पता चल गया था कि इस दुर्दशा में घसीटी जा रही लाश मातबरसिंह की है, जो कल तक इस राज्य के प्रधान-मंत्री और सेनापति थे। उनका क्या अपराध था, जिसके लिए उन्हें यह दण्ड मिल रहा था, यह नहीं बताया गया। सब लोगों को केवल इतना पता चल जाना ही काफ़ी था कि देश में कोई इतनी बड़ी शक्ति भी है, जो रुष्ट होने पर इतने बड़े और प्रभावशाली व्यक्ति का भी यह हाल कर सकती है। बाकी सब लोगों को अपनी स्थिति का अनुमान स्वयं कर लेना चाहिए। सब लोगों ने अनुमान कर लिया था और वे अत्यन्त त्रस्त और आतंकित हो गये थे। वे उस दृश्य को देखते थे; देखना नहीं चाहते थे, फिर भी देखते थे।

जब फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह अपने सिपाहियों के साथ मातबरसिंह की लाश को घसीटने वाले उस हाथी को खोजते हुए उसके पास पहुंचे, तब वह धरहरे (भीमसेन थापा की बनवाई ऊंची सफेद मीनार) के निकट था। घोड़ा दौड़ाते हुए दोनों भारदार हाथी के आगे गये और उन्होंने महावत को हाथी रोकने को और लाश को खोल देने को कहा। महावत तो चुप रहा, पर मुँह पर कपड़ा लपेट कर हाथी की पीठ पर बैठे हुए दो पुरुषों में से एक ने कहा : "लाश नहीं खुल सकती। दरबार का हुकुम है।"

"मैं भी दरबार का ही हुकुम लाया हूँ। यह देखो।" यह कहते हुए फतहजंग चौतरिया ने शाही हुकुम उस आदमी के आगे कर दिया। उस आदमी ने हाथी से उतर कर शाही हुकुम को पढ़ा।

"हम यह नहीं चाहते कि मातबरसिंह की लाश का अपमान हो। हम यह सोच भी नहीं सकते कि उनकी लाश को हाथी के पाँव से बाँध कर घसीटा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जा रहा है। इस वर्वरतापूर्ण कार्य को तुरन्त वन्द किया जाये और लाश को फौरन हनुमान ढोका दरबार में लाया जाये।"

उस आदमी में दरबार की इस आज्ञा के पालन के लिए कोई उत्साह दिखाई नहीं पड़ा। पर यह उसने देख लिया कि इस आज्ञा को टालने का कोई उपाय भी नहीं है। दोनों भारदार और उनके सिपाही सशस्त्र हैं और वे बलपूर्वक इस आज्ञा को मनवा लेंगे। भविष्य में चाहे जो हो, पर इस समय तो उनके हाथ अधिक मजबूत हैं। अतः उसने कुछ अनिच्छा से दरबार की आज्ञा का पालन करते हुए लाश को बाँधने वाली जंज़ीर को खोल डाला। जंजीर को खोल कर वह हाथी पर जा बैठा और हाथी तुरन्त आगे चल पड़ा। खाली जंज़ीर घिसटती हुई साथ चली।

अब लाश को उठवा कर हनुमान ढोका दरबार तक पहुंचवाने का काम फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह के ज़िम्मे पड़ा। उन्होंने तुरन्त कफ़न, अरथी आदि लाने के लिए आदमी भेजे। शव कहीं फिर गायब न हो जाये, इसलिए सैनिकों के साथ स्वयं वहीं रहे।

इस समय मातबरसिंह का शव और भी भयानक और घिनौना लग रहा था। पहले कपड़े खून से ही रंगे हुए थे, अब मिट्टी लगने से वे मैले भी हो गये थे। पथरीली सड़क पर घिसटने से घाव खुल गये थे और उनमें से पानी जैसा हल्का पीला द्रव रिस रहा था। ज़मीन की रगड़ से खाल जगह-जगह से छिल गई थी। पर इस सबसे भयावह थी लाश के मुख की मुद्रा। ओठ और जबड़े खुले हुए थे। उस खुले मुँह में मिट्टी से सने दाँत प्रेत का सा विकट हास्य करते प्रतीत होते थे। पथराई हुई आँखें भी खुली थीं, जो अपने आसपास की दुनियां को देख कर घृणा सी बरसा रही थीं।

कुछ ही देर में सब सामान आ गया। स्वच्छ वस्त्र में लपेट कर शव को अरथी पर रख दिया गया और उसे महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम के पास हनुमान ढोका दरबार में पहुंचा दिया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३८

चार काज़ी

मातबर्रसिंह की मृत्यु से दो पद रिक्त हुए थे—प्रधानमंत्री और सेनापति। इन दोनों पदों पर तुरन्त नई नियुक्ति होनी आवश्यक थी। यह नियुक्ति महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम ही कर सकते थे। रानी राज्यलक्ष्मीदेवी इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर अपना बहुमूल्य परामर्श महाराज को बिना माँगे और लगभग ज़बरदस्ती ही दे रही थीं। जैसे ऐलोपैथिक चिकित्सक की दवाई लेने से बच्चा डरता और घबराता है और उसे तरह-तरह के प्रलोभन देकर दवाई खाने के लिए राज़ी किया जाता है, उसी प्रकार महाराज रानी का परामर्श स्वीकार करने को तैयार नहीं थे और रानी अपने नारीत्व का समस्त माधुर्य उँडेल कर उन्हें कड़वा घूँट पीने के लिए मना रही थीं।

"मैंने इस प्रश्न पर खूब विचार किया है" महाराज ने कहा। "प्रधानमंत्री बने फतहजंग चौतरिया और सेनापति बने राणा अभिमानसिंह। तब काम ठीक चलेगा। इन दोनों में मित्रता भी है।"

"दो अलग नियुक्तियाँ करने की क्या आवश्यकता है? जैसे पहले मातबर्रसिंह थे, वैसे ही अब भी एक ही व्यक्ति प्रधानमंत्री और सेनापति दोनों रहे, तो क्या हानि है?"

"पर दूसरा मातबर्रसिंह कहाँ मिलेगा? वह पहले जनरल था, फिर प्रधानमंत्री।"

रानी ने प्रेमभरी चितवन और मुस्कान की मधुरता बखेरते हुए कहा: "क्यों, गगनसिंह में क्या कमी है? वह आसानी से इन दोनों पदों को निबाह सकता है।"

सुन कर महाराज हँस पड़े। बोले: "गगनसिंह? वह तो निरा पोंगा है। राजनीति उसके लिए काला अक्षर भैंस बराबर है। बन्दूक का धमाका सुन ले, तो वह बेहोश ही हो जाये।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रानी मन ही मन बहुत कुढ़ी। एक बार तो उसके मन में आया कि कह दे : "तुम से तो हज़ारगुना अच्छा है। तुममें कहाँ के लाल जड़े हैं, जो तुम महाराज बने बैठे हो? सूरत शक्ल में बन्दर तुमसे भले। बल और बुद्धि तुममें जितनी है, वह मुझे मालूम है। गगनसिंह में रूप और यौवन तो है, तुममें वह भी नहीं है। फिर पोंगा वह हुआ या तुम? अगर तुम महाराज बन सकते हो, तो वह प्रधानमंत्री और सेनापति क्यों नहीं बन सकता? ज़रूर बन सकता है। तुमसे अच्छा बन सकता है।" पर राज्यलक्ष्मीदेवी में और चाहे किसी चीज़ की कितनी ही कमी क्यों न हो, बुद्धि की कमी बिल्कुल नहीं थी। उसे अपने मन की भड़ास नहीं निकालनी थी, अपितु उसे तो अपना कार्य सिद्ध करना था। यदि चार गालियां देकर गगनसिंह की उन्नति का मार्ग रुकता हो और चालीस गालियाँ सुनने से उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता हो, तो वह गालियाँ सुनाने के बजाय सुनने को उद्यत थी। इसलिए अपने मन की कुढ़न को ज़रा भी प्रकट न करके मधुर हँसी हँसती हुई बोली : "वह बनता है। संकोची बहुत है। अपनी योग्यता को छिपाये रखता है। इसीलिए लोग उसे सीधा समझते हैं। वैसे वह बहुत चतुर है। मातबरसिंह से किसी भी तरह कम नहीं है।"

जो व्यक्ति राजा के महल में घुस कर सब विघ्न-बाधाओं को लाँघ कर राजा की रानी से प्रेम करता रहे, उसे चतुर बता कर राज्यलक्ष्मीदेवी ने कोई अतिशयोक्ति नहीं की थी। किन्तु महाराज को गगनसिंह की इस योग्यता का सही-सही ज्ञान नहीं था, अतः यदि वह उसे चतुर नहीं समझते थे, तो उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। पर यदि उन्हें कोई सन्देह कभी रहा भी हो, तो गगनसिंह को मातबरसिंह के बराबर बता कर रानी ने उसे बिल्कुल दूर कर दिया। यदि रानी एक हाथ में चींटी और दूसरे में हाथी को उठा कर हँसते हुए कहती कि इस चींटी का बोझ इस हाथी से ज़रा-सा अधिक है, तो राजेन्द्र-वीरविक्रम शायद विश्वास कर लेते, पर गगनसिंह मातबरसिंह के बराबर? यह वह सोचने को भी तैयार नहीं थे। यही बात उन्होंने कह भी दी : "अच्छा, यह बताओ कि यदि एक तराज़ू के एक पलड़े में एक चींटी हो और दूसरे में एक हाथी, और चींटी वाला पलड़ा नीचे झुका हुआ हो, तो तुम क्या कहोगी?"

"चींटी वाला पलड़ा नीचे झुका हुआ हो?"

"हाँ।"

"चींटी वाला पलड़ा झुकेगा कैसे?"

"किसी भी तरह झुका हुआ हो, तो तुम क्या कहोगी?"

"मैं क्या कहूंगी?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"तुम नहीं कहोगी। मैं कहे देता हूं कि ऐसी दशा में मैं समझूंगा कि वह तराजू ही गलत है। या तो तुम गगनसिंह को नहीं जानतीं, या मातबरसिंह को नहीं पहचानतीं।"

इस बार रानी मन ही मन हँसी; सोचने लगी : "गगनसिंह को मैं नहीं जानती ? तो क्या तुम जानते हो ? मातबरसिंह को जितना मैंने पहचाना, उतना पहचानने का मौका तुम्हें कभी मिलेगा ही नहीं। रही तराजू गलत वाली बात। वह शायद सही हो। पर दाँव लगा, तो गलत तराजू का तोल भी चल ही जायेगा।" पर ऊपर से बनावटी खिन्नता जताते हुए बोली : "किसी ने गगनसिंह के विरुद्ध आपके कान यों ही झूठ-मूठ भर दिये हैं। पहले मैं भी उसे बुद्धू ही समझती थी। पर धीरे-धीरे पता चला कि वह तो बहुत काम का आदमी है।"

गगनसिंह के विषय में काम का आदमी होने का जो अनुभव राज्यलक्ष्मी देवी को था, वह अन्य किसी को हो नहीं सकता था, अतः इस विषय में अन्य लोगों से उसका मतभेद रहना स्वाभाविक था। पर अब इस समय इस मामले को और बढ़ाना उचित न समझ कर उसने बात का रुख दूसरी ओर मोड़ा। बोली : "मातबरसिंह ने इतने दिन योग्यतापूर्वक राज्य की सेवा की, उसका भी तो आपको कुछ ध्यान रखना होगा।"

"क्या मतलब ?"

"उनका कोई पुत्र तो अभी इस योग्य है नहीं कि उसे कोई पद दिया जा सके। पर उनका भानजा जंगबहादुर भी उनके पुत्र के समान ही है। वह उनके घर पर ही पुत्र की तरह रहता रहा है। यदि उसे कोई पद दे दिया जाये, तो इससे मातबरसिंह के इष्ट मित्रों को सन्तोष होगा। आखिर मातबरसिंह भी गुणी आदमी थे ही।"

"यह तो मुझे ध्यान ही न आया था। तो उसी को प्रधानमंत्री बना दूँ ?" महाराज ने इस प्रकार भोलेपन से कहा कि यह पता ही न चला कि वह ताना दे रहे हैं या सहज भाव से पूछ रहे हैं।

"नहीं नहीं। प्रधानमंत्री बनाने को मैं नहीं कह रही।"

"तो सेनापति बना दूँ ?"

"आप भी औघड़ दानी हैं। देने लगेंगे, तो एक दम परात ही उलट देंगे। मैंने तो केवल यह कहा है कि उसे कोई अच्छा-सा पद दे दिया जाये, जिससे उसे सन्तोष हो जाये। आप एकदम प्रधानमन्त्री और सेनापति बनाने की सोचने लगे।"

जंगबहादुर की चर्चा लाने का उद्देश्य केवल इतना था कि कुछ देर के लिए गगनसिंह की बात टली रहे। उसके बाद जब महाराज का मन कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अधिक अनुकूल होगा; तब फिर उसके लिए सिफारिश की जा सकेगी। पर जंगबहादुर का नाम आ जाने से महाराज सचमुच उलझन में पड़ गये। अब तक वह यह सोच कर निश्चिन्त थे कि प्रधानमंत्री और सेनापति दो पद हैं और उनके लिए दो योग्य उम्मीदवार हैं। फतहजंग चौतरिया को प्रधानमंत्री और राणा अभिमानसिंह को सेनापति बना देने से समस्या बढ़िया ढंग से हल हो जायेगी। अब ये दो नाम और आ खड़े हुए—गगनसिंह और जंगबहादुर। अब क्या किया जाये ?

इस प्रकार की उलझन रानी राज्यलक्ष्मी देवी के लिए बहुत हितकर होती थी। संशय में पड़े राजा के चित्त को अवसर देख कर वह अपने मन के अनुकूल मोड़ लेती थी।

अब रानी ने फतहजंग चौतरिया पर चोट की; बोली : "और फतहजंग में क्या खूबी है, जो उसे प्रधानमंत्री बनाने का विचार आपके मन में आया ?"

सच कहा जाये, तो ऐसे लोग बहुत थोड़े होते हैं, जिनके विषय में यह कहा जा सके कि वे अमुक पद के योग्य हैं। जैसे बर्तन पानी को अपनी आकृति के अनुरूप ढाल लेता है, वैसे ही पद भी पदधारी को अपने अनुकूल ढाल लेता है। पद पर बिठा दिये जाने के बाद अयोग्य व्यक्ति भी बहुत कुछ उसी प्रकार गाड़ी खींच लेता है, जिस प्रकार योग्य व्यक्ति खींचता है। पद पर बैठने के बाद उसकी योग्यता व्यक्ति में स्वयं आ जाती है। इसलिए दावे से यह कह पाना बहुत कठिन होता है कि अमुक व्यक्ति अमुक के पद के योग्य है या बिल्कुल अयोग्य है। परिचित और घनिष्ठ व्यक्ति ऊँचे से ऊँचे पद के योग्य प्रतीत होता है और अपरिचित या प्रतिद्वन्द्वी व्यक्ति उस पद के एकदम अयोग्य जान पड़ता है। प्रायः सभी देशों में सभी कालों में ऊँचे पद परिचय और सिफारिश के कारण ही दिये जाते रहे हैं। महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम फतहजंग को जो प्रधानमन्त्री बनाने लगे थे, उसमें एक कारण घनिष्ठ परिचय भी था। रानी के इस सीधे प्रश्न के उत्तर में वह एकाएक कोई ऐसी बात न कह सके, जो अन्य किसी उम्मीदवार के लिए न कही जा सकती हो। फिर भी कुछ तो कहना था; बोले : "वह देश और विदेश की राजनीति का रत्ती-रत्ती हाल जानता है। उलझी से उलझी गुत्थी को सुलझाना उसके बायें हाथ का खेल है।"

रानी ने अवज्ञा दिखाते हुए कहा : "खाक जानता है। वह आपका चहेता है, सदा साथ रहता है, इसीलिए आपको उसमें गुण ही गुण दिखाई पड़ते हैं। फतहजंग से कहीं अधिक गुणी बीसियों भारदार आपके दरबार में हैं। अच्छा, एक बात सुनिये।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज जिज्ञासा से रानी के मुँह की ओर देखने लगे। रानी ने उनकी आँखों में आँखें डालकर कहा : "राणा अभिमानसिंह को सेनापति मत बनाइये।"

"क्यों ?"

"राज्य का शासन उसके हाथ में होता है, जिसके हाथ में सेना है। अभिमानसिंह स्वतन्त्र वृत्ति का व्यक्ति है। आपको ऐसे व्यक्ति को सेनापति बनाना चाहिए, जिसका अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व कुछ न हो; जो आपके हाथ की कठपुतली बन कर रह सके। वह व्यक्ति केवल कहने को ही सेनापति होगा। वस्तुतः सेना की बागडोर आपके हाथ में होगी।"

"ऐसा व्यक्ति कौन है ?"

"मैं कहूँगी, तो फिर आप ऐतराज़ करेंगे कि मैं पक्षपात कर रही हूँ।"

"नहीं। फिर भी सुनूँ, तो।"

"इस काम को गगनसिंह खूबी से कर सकेगा।"

गगनसिंह को इतना श्रेय तो महाराज भी देने को तैयार थे कि वह काठ का घोड़ा बन कर रह सकता है। यदि सेना की बागडोर अपने हाथ में रखनी हो, तो सचमुच ही गगनसिंह को सेनापति बना देना हितकर होगा। महाराज की मनोदशा उस भीरु और अशक्त व्यक्ति की सी थी, जो बढ़िया घोड़ा न खरीद कर मरियल टट्टू इसलिए खरीदता है कि उससे गिरने का भय न रहेगा। वह बोले : "यह बात तो मेरे ध्यान में ही नहीं आई थी। पर इस तरह एक अनाड़ी आदमी को बढ़ावा दे कर सेनापति बना देने से बहुत से भारदार रुष्ट हो जायेंगे।"

"उसका उपाय भी बताती हूँ। किसी एक व्यक्ति को प्रधानमंत्री मत बनाइये। जिन-जिन लोगों के रुष्ट या असन्तुष्ट होने की आशंका है, उन सबकी एक समिति बनाइये और उस समिति को प्रधानमंत्री का कार्य सौंप दीजिये। वे लोग आपस में ही एक दूसरे को संतुलित करते रहेंगे। आपके प्रति किसी को रोष नहीं रहेगा।"

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम गहरे सोच में पड़ गये। रानी की इस नई योजना का कोई उचित उत्तर उन्हें सूझ नहीं पड़ा। जो योजना वह सोच कर आये थे, उसकी अपेक्षा रानी की योजना कहीं अधिक उपयोगी जान पड़ती थी।

रानी फिर बोली : "ले दे कर इस समय चार ही तो व्यक्ति हैं, जिन्हें आप नया काम सौंप सकते हैं—फतहजंग, अभिमानसिंह, गगनसिंह और जंगबहादुर। इन चारों को ही मिला कर प्रधानमंत्री का काम सौंप दीजिये।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज के मन में केवल पहले दो नाम थे। गगनसिंह और जंगबहादुर रानी ने अपनी ओर से चिपका दिये थे। सचाई यह थी कि यदि पदोन्नति होनी ही हो, तो कई अन्य भारदार उसके लिए पहले से दावेदार थे। गगनसिंह के विषय में बात हो ही चुकी थी, अतः उसे दुबारा न उठा कर महाराज ने कहा : "यह जंगबहादुर आदमी मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है।"

रानी ने आश्चर्य प्रकट करते हुए मधुर स्वर में पूछा : "ऐसा उसने क्या कर दिया ?"

"मैं ठीक-ठीक तो नहीं कह सकता कि उसने ऐसा क्या किया है, पर शक्ल-सूरत, बातचीत और चाल-ढाल से मुझे लगता है कि वह बहुत ही गन्दा और खतरनाक आदमी है। उससे जितना दूर रहा जाये, उतना भला।"

सुन कर रानी के चेहरे का रंग हल्का-सा फीका पड़ गया। बिल्कुल बुद्धू से प्रतीत होने वाले राजेन्द्रवीरविक्रम की बुद्धि कैसे इस सत्य तक पहुँच गई कि जंगबहादुर खतरनाक आदमी है। इस खतरनाक आदमी को ही तो वह अपने वश में कर लेना चाहती है, जिससे वह औरों के लिए खतरनाक बना रहे। धीमे स्वर में उसने कहा : "अकारण किसी के विषय में ऐसी राय नहीं बना लेनी चाहिए।"

"कारण तो सचमुच ही कोई नहीं है। फिर भी उसे देख कर मन में यह भाव आये बिना नहीं रहता।"

रानी ने आवाज़ को और धीमा करके गुप्त मंत्रणा के से ढंग से कहा : "यदि वह सचमुच ही खतरनाक हो, तो उसे अपने बस में रखना और भी आवश्यक है।"

"यह भी ठीक है। सचमुच ही इन मामलों में तुम्हारी बुद्धि अधिक काम करती है।"

यह प्रशंसा सुन कर रानी फूल कर कुप्पा हो गई और हँसती हुई बोली : "और फिर भी आप मेरी राय नहीं मानते।"

"तुम्हारी बात कभी टली है ?" कहते हुए महाराज चलने के लिए उठ खड़े हुए।

× × ×

वही हुआ। सेनापति का पद गगनसिंह को मिला। प्रधानमंत्री का पद किसी एक व्यक्ति को न दिया गया। फतहजंग चौतरिया, राणा अभिमानसिंह, गगनसिंह और जंगबहादुर, इन चारों को काज़ी की पदवी प्रदान की गई। ये चारों मिल कर प्रधानमंत्री के कार्यों को निबाहने लगे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३९

विष वमन

उस शिकार का आयोजन मुख्य रूप से जंगबहादुर ने किया था। 'काज़ी' बनने के बाद महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम से मिलने के अवसर उसे काफ़ी मिलते थे। ऐसे ही एक अवसर पर उसने महाराज के सामने 'शिकार का प्रस्ताव रखा। पृथ्वीनारायणशाह की तरह बाघ से लड़ने और उसे मारने की हिम्मत राजेन्द्रवीरविक्रम में नहीं थी। अतः जंगबहादुर ने स्वयं ही छोटे शिकार का प्रस्ताव रखा था। राजमहल के एकरस जीवन से ऊबे हुए महाराज ने प्रसन्नता के साथ उसे स्वीकार कर लिया। जंगबहादुर का विचार था कि इस प्रकार महाराज का कुछ मनपसन्द कार्य करके वह महाराज की कृपा प्राप्त कर सकेगा। उसे अनुभव होता था कि महाराज उससे प्रसन्न नहीं हैं। फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह का महाराज पर बहुत प्रभाव है। गगनसिंह पर महारानी की कृपा है। अतः चार काज़ियों में उसी की स्थिति सबसे दयनीय है। यदि उसे अपनी स्थिति सुधारनी हो, तो उसे ऐसे कार्य करते रहना होगा, जो महाराज को पसन्द हों। यह शिकार का आयोजन उन्हीं में से एक था।

महाराज के शिकार के लिए कई जंगल सुरक्षित थे। इनमें अन्य कोई शिकारी घुस नहीं सकता था। इनमें एक जंगल बाघों, गैंडों और हाथियों के लिए विख्यात था। परन्तु जंगबहादुर ने उसमें जाने का कार्यक्रम नहीं बनाया। उसने हिरनों, लोमड़ियों और सूअरों वाले जंगल को शिकार के लिए चुना था।

शिकार की तैयारियाँ कई दिन तक होती रहीं। घोड़ों, शिकारियों, और शिकारी कुत्तों की एक छोटी मोटी सेना ही तैयार हो गई। महाराज के अलावा फतहजंग, अभिमानसिंह, तथा अन्य कई भारदार शिकार के लिए जाने वाले थे। जंगबहादुर तो इस आयोजन का संयोजक था ही। गगनसिंह

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को शिकार का विशेष शौक नहीं था। उसकी तबियत भी ठीक नहीं थी। इसलिए उसने शिकार यात्रा से अनुपस्थित रहने की अनुमति माँग ली थी।

शिकारियों से पहले उनके अनुचर जंगल में पहुँच गये। उन्होंने तम्बू और शामियाने लगा कर इस बात का पूरा प्रबन्ध किया कि जंगल में आने पर भी उनके मालिकों को जंगल की कोई असुविधा न हो। उन्हें वे सब आराम प्राप्त हो सकें, जो शहर में प्राप्त होते रहे हैं। खाने-पीने का प्रबन्ध खूब बड़े पैमाने पर किया गया। सच कहा जाये, तो शिकार का असली आनन्द इन अनुचरों ने ही लिया।

सब प्रबन्ध पूरा हो जाने के बाद महाराज और अन्य शिकारी लोग भी घोड़ों पर सवार होकर जंगल में जा पहुँचे। जंगल के वातावरण ने सब लोगों में एक विचित्र स्फूर्ति भर दी।

यथेष्ट जलपान के पश्चात् दस बजे के आस-पास शिकार का पहला धावा शुरू हुआ। इस जंगल में किसी प्रकार का भय तो था नहीं, इसलिए लोग छोटी-छोटी टुकड़ियों में बँट गये। घोड़ों पर सवार होकर वे हिरनों और सूअरों की खोज में निकले। फतहजंग, अभिमानसिंह और जंगबहादुर महाराज के साथ रहे। परन्तु जब हिरन दिखाई पड़ने शुरू हुए, तब शिकार के लोभ में एक दूसरे के साथ रहने का लोभ छोड़ देना पड़ा। जिसे जो शिकार आसानी से प्राप्त होता दिखाई पड़ा, वह उसी के पीछे हो लिया। केवल जंगबहादुर यत्न करके महाराज के साथ लगा रहा।

महाराज ने एक के बाद एक, कई हिरनों का पीछा किया। परन्तु निशाना पक्का न होने के कारण वह एक को भी मार नहीं पाये। परन्तु इससे उनके उत्साह में कमी नहीं आई। वे नये शिकारों की खोज में आगे बढ़ते रहे। बीच-बीच में जंगबहादुर उन्हें नये शिकार दिखाता चल रहा था।

दो घंटे तक निष्फल दौड़धूप करने के बाद महाराज को कुछ थकान अनुभव होने लगी। उन्होंने जंगबहादुर से कुछ देर विश्राम कर लेने के लिए कहा। दोनों घोड़ों से उतर पड़े। जंगबहादुर ने घोड़ों को दो पेड़ों से बाँध दिया। एक पेड़ की हल्की-सी छाँह में दोनों बैठ गये। महाराज को लगा कि इस तरह शहर से दूर जंगल में निश्चिन्त बैठने से बढ़ कर और कोई सुख जीवन में नहीं है।

आकाश नीला था। बहुत ऊँचाई पर चीलें उड़ रही थीं। अन्य कई पक्षी एक पेड़ से उड़ते, और दूसरे पर जा बैठते। उनकी बोलियाँ इस समय तो मधुर ही प्रतीत हो रही थीं। हरे पेड़-पौधे आँखों को नवजीवन सा दे रहे थे। कई पौधों पर जंगली बेलें फैलीं थीं और उनमें छोटे-छोटे रंगीन फूल खिले थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लगता है कि इस प्राकृतिक सौन्दर्य का जंगबहादुर पर कोई काव्यमय शामक प्रभाव नहीं हुआ था। कुछ देर शान्त बैठे रहने के बाद उसने कहा : "सरकार अनुमति दें, तो एक बात कहूँ।"

महाराज ने कहा : "कहो।"

"राजकुमार सुरेन्द्र और उपेन्द्र की सुरक्षा के लिए विशेष प्रयत्न किया जाना चाहिए।"

"क्यों ?"

"उनके प्राणों को संकट है।"

"संकट ? किससे ?"

"क्षमा कीजियेगा। यह संकट महारानी जी से है।"

सुन कर महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम का मुख चिन्ता से म्लान हो उठा। कुछ क्षण विचारमग्न रहने के बाद उन्होंने जंगबहादुर के मुख की ओर तीखी एकाग्र दृष्टि से देखा और पूछा : "तुम्हें कैसे अनुमान होता है कि रानी सुरेन्द्र और उपेन्द्र के प्राण ले लेना चाहती हैं ?"

"अनुमान नहीं है। महारानी ने स्वयं मुझसे कहा।"

महाराज का मुख और फीका पड़ गया। इस भयंकर बात पर विश्वास न करने के लिए उन्हें कोई सहारा मिल जाये, इस आशा से उन्होंने पूछा : "स्वयं रानी ने कहा है ?"

पर वह सहारा उन्हें नहीं मिला। जंगबहादुर ने कहा : "महारानी ने मुझसे अकेले में कहा। राजकुमार रणेन्द्र का राजसिंहासन पर अधिकार तभी हो सकता है, जब दो बड़े भाई न रहें। पर मैंने स्पष्ट कर दिया कि मेरे लिए तो तीनों भाई एक से हैं। मैं राजपरिवार के किसी भी सदस्य के प्रति द्रोह और विश्वासघात नहीं कर सकता।"

"तब रानी ने क्या कहा ?"

"महारानी ने मेरी बात सुन कर अपना रुख एकदम बदल लिया। बोलीं : 'जंगबहादुर, मैं तो तुम्हारी परीक्षा ले रही थी। मैं देख रही थी कि किसी के भड़काने से तुम कहाँ तक भड़क सकते हो। राजपरिवार के प्रति तुम्हारी निष्ठा देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तुम पर सचमुच विश्वास किया जा सकता है। ऐसे राजभक्त अधिकारी ही राज्य की शक्ति के स्तम्भ होते हैं।' इसी प्रकार की लल्लो-चप्पो की बातें वह काफ़ी देर तक करती रहीं। एक बार उन्होंने यह भी कहा कि मैं इस बात की चर्चा किसी से न करूँ। पर मुझे लगा कि सरकार तक यह सूचना पहुँचा देना मेरा परम कर्तव्य है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह तुमने बहुत अच्छा किया। पर अब करना क्या चाहिए ?" महाराज को लगा कि इतनी महत्वपूर्ण गुप्त सूचना लाने वाले व्यक्ति से बढ़ कर परामर्शदाता और कौन मिलेगा ?

"यह बात जितने कम लोगों को मालूम हो, उतना ही भला है। यदि किसी तरह महारानी को यह पता चल गया कि मैंने यह बात सरकार के कानों तक पहुँचा दी है, तो वह भविष्य में मुझे कोई गोपनीय बात नहीं बतायेंगी। सूचना मिलने का एक स्रोत सदा के लिए बन्द हो जायेगा।"

"वह तो अब भी बन्द हुआ ही समझो। अब वह तुमसे इस विषय में कभी कोई बात न करेगी।"

"कुछ कुछ मैं भी यही समझता हूँ। पर अभी तक वह मुझसे एकदम रुष्ट नहीं हो गई हैं। किसी न किसी रूप में शायद वह मुझसे फिर सहायता माँगें।"

"ठीक है। तब इस चर्चा को अपने तक ही सीमित रखना उचित होगा।"

"पर महारानी मेरी ही सहायता के भरोसे बैठी नहीं रहेंगी। वह अन्य लोगों से भी अपना काम करवा सकती हैं।"

"जैसे ?"

"कुछ बातें ऐसी हैं, जिन्हें कहने की मेरी हिम्मत नहीं पड़ती। शायद वे सरकार को अप्रिय लगें। यदि सरकार अनुमति दें और यह विश्वास कर सकें, कि केवल स्वामिभक्ति के वशीभूत होकर मैं ऐसी अप्रिय बात कह रहा हूँ, तो मैं कहूँ।"

जंगबहादुर ने जो पहली खबर दी थी, वह निश्चय ही महाराज के हित की कामना से और स्वामिभक्ति के कारण दी थी। वह चौंकाने वाली चाहे जितनी हो, किन्तु अप्रिय नहीं थी। अब यह क्या और ऐसी बात है, जिसके लिए वह इतना अभयदान माँग रहा है ? वह चाहे जितनी अप्रिय क्यों न हो, सुननी तो होगी ही। बहुत ही उत्सुक हो कर उन्होंने कहा : "मैं बहुत भावुक नहीं हूँ। हितकर किन्तु अप्रिय सूचना को शान्त रह कर सुन सकता हूँ। यह मुझे विश्वास है कि तुम केवल मुझे रुष्ट करने के लिए कुछ न कहोगे। कहो, क्या बात है।"

"सरकार नाराज न हों। मेरा खयाल है कि महारानी गगनसिंह से यह काम करवा सकती हैं।"

"गगनसिंह काज़ी से ?"

"जी हाँ। इस समय समूची सेना उसके हाथ में है। महारानी के प्रति उसका जैसा भाव है, वह सरकार को पता ही होगा।"

"कैसा भाव है ? मुझे पता नहीं है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"महारानी ने राजकुल की मर्यादा को कलंकित कर दिया है। वह गगनसिंह से खुल्लमखुल्ला प्रेम करती हैं। महल के अधिकांश दास-दासी इस बात को जानते हैं।"

"तुम यह क्या कह रहे हो ?" महाराज ने कुछ विचलित होकर कहा।

"यदि सरकार को यह पता नहीं है, तो सरकार ही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जो इस रहस्य से अनभिज्ञ हैं। गगनसिंह छिप कर रनिवास में जाता है और घंटों वहाँ रहता है।"

"ऐसा कैसे हो सकता है !" महाराज ने अत्यन्त आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा।

"आश्चर्य की बात इतनी ही है कि सरकार को यह पता नहीं है। महारानी के रुझान को देखते हुए मुझे लगता है कि वह गगनसिंह की सहायता से न केवल राजकुमार सुरेन्द्र और उपेन्द्र का अहित करवा सकती हैं, बल्कि सरकार के लिए भी संकट बन सकती हैं। किनारों को लाँघने वाली नदी और मर्यादा को त्यागने वाली नारी कहाँ पहुँचकर रुकेगी, कुछ कहा नहीं जा सकता।"

"रानी मुझसे द्रोह करेगी ?"

"सरकार से विश्वासघात तो वह कर ही चुकी हैं। वह आसानी से सोच सकती हैं और शायद सोचती भी हैं कि सरकार को रास्ते से हटा कर गगनसिंह के साथ मिल कर स्वयं ही देश का शासन करें। तब उनसे पूछताछ करने वाला कोई न होगा। वह जैसे चाहें, रह सकेंगी।"

"और मैं बिल्कुल अँधेरे में रह रहा हूँ।" महाराज ने स्वयं को धिक्कारते हुए से कहा।

"सरकार स्वयं भले हैं, अतः समझते हैं कि सारी दुनियाँ भली है। सरकार को राजसिंहासन का लोभ या मोह नहीं है, तो सरकार समझते हैं कि और भी किसी को नहीं है।"

एकाएक महाराज के मन में कुछ संशय हुआ। वह बोले : "पर इन सब कल्पनाओं के लिए तुम्हारे पास प्रमाण क्या है ?"

"कल्पनाएँ ? सरकार गुप्त रूप से स्वयं ही कहीं से भी मालूम कर लें। सरकार को पता चलेगा कि अब तक सरकार ही कल्पना लोक में रह रहे थे। मुझमें कल्पना शक्ति है ही नहीं। मेरा तो सारा जीवन ही घोर यथार्थ में बीता है।"

महाराज कुछ सोच में पड़ गये। कुछ देर विचारमग्न रहने के बाद वह बोले : "तुम्हारी बात सही ही मालूम होती है। फिर भी मैं कहीं से इसे पुष्ट कर लेना चाहूँगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"अवश्य। पर सरकार, मेरा नाम सामने नहीं आना चाहिए।"

"वह मैं ध्यान रखूँगा।" फिर थोड़ा रुक कर बोले : "अच्छा, मान लो कि जो कुछ तुम कहते हो, वही सही निकलता है। तब हम क्या कर सकते हैं ?"

"यह तो सरकार मुझसे अधिक अच्छी तरह सोच सकते हैं। मैं तो सरकार का आज्ञाकारी हूँ। जो आदेश मिलेगा, उसे पूरा कर दूँगा।"

"वस्तुतः सारे उत्पात की जड़ गगनसिंह है··· ·····"

जंगबहादुर ने बीच में टोक कर कहा : "अपराध क्षमा हो, तो मैं कहूँगा कि उत्पात की जड़ महारानी हैं। आग जो लकड़ी को जलाती है, उसमें लकड़ी को दोष देना ठीक नहीं।"

"पर अग्निकांड से बचने के दो उपाय हैं—आग को बुझा दिया जाये, या ईंधन को हटा दिया जाये। गगनसिंह को हटाने का कोई उपाय है ?"

"यह तो सरकार मुझसे कहीं अधिक जानते हैं। यदि मुझे आदेश हो, तो मैं कोशिश कर सकता हूँ।"

"अच्छा। दो चार दिन में सोच कर बताऊँगा।" महाराज ने कहा। कुछ देर बाद वे दोनों शिकार-शिविर की ओर लौट पड़े।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

40

बाल्य बन्धु

जंगबहादुर ने अपने दबंग स्वभाव के कारण महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम के सामने गगनसिंह को ठिकाने लगाने का ज़िम्मा तो ले लिया, किन्तु उसे किसी तरह यह समझ नहीं आ रहा था कि इस काम को किया कैसे जा सकता है। गगनसिंह प्रधान सेनापति था और यदि कहीं उसके मन में आ जाता, तो जंगबहादुर को ठिकाने लगवा देना उसके लिए कहीं अधिक सरल था। परन्तु गगनसिंह इस प्रकार का आदमी नहीं था। यह ठीक है कि उसमें कमियाँ थीं, पर उन कमियों के लिए उसे दुःख था और वह धार्मिक अनुष्ठानों, पूजा, जप, तप आदि द्वारा उनका प्रायश्चित्त करने का यत्न करता था।

एक दिन जंगबहादुर अपनी इसी चिन्ता में मग्न भगवान पशुपतिनाथ के मन्दिर में गया। जब वह पूजा करके लौटने लगा, तब उसकी दृष्टि एक व्यक्ति पर पड़ी। एक क्षण तो उससे पहचानने में लगा, पर उसके बाद उसे याद हो आया कि वह उसका बाल्यबन्धु विजयराज है। उसने आगे बढ़ कर विजयराज को बुलाया और दोनों मित्र उत्साह से गले मिले। विजयराज ने कहा : "जंगे, तुम यहाँ कहाँ ? बड़े ठाठ हैं तुम्हारे !"

"अचरज है कि तुम्हें यही मालूम नहीं कि मैं यहाँ काठमांडौ में हूँ। मित्र, मैं यहाँ काज़ी हूँ। तुम बताओ कि तुम कहाँ हो ?"

"काज़ी ? काज़ी तो हमारे गगनसिंह जी भी हैं।"

"हाँ, वह भी काज़ी हैं। उन्हीं की तरह मैं भी काज़ी हूँ। तुम गगनसिंह को कैसे जानते हो ?"

"मैं उन्हीं के पास रहता हूँ। तब तो मित्र, तुम बड़े आदमी बन गये हो।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"बड़ा आदमी मैं हूँ कि तुम, जिसे यही पता नहीं है कि मैं भी एक काज़ी हूँ। सारे काठमांडो में कुल चार काज़ी हैं। तुम एक काज़ी के घर रहते हो और तुम्हें यही पता नहीं है कि तुम्हारा एक मित्र भी काज़ी है। तुम कब से काठमांडो में हो ?"

"बहुत दिन नहीं हुए। फिर भी दो बरस तो हो ही गये होंगे। पर मैं बाहर कम ही निकलता हूँ। बाहर की बातों में रुचि और भी कम है। कुछ बालक आ जाते हैं, उन्हें पढ़ा देता हूँ। बाकी समय पढ़ने में बीत जाता है। भई, कुछ कहो, जितना बड़ा दिमाग पाणिनि का था, उतना पतंजलि का नहीं था। ठीक है, पतंजलि ने महाभाष्य अद्भुत लिखा है और पाणिनि से भी अधिक बाल की खाल उतारी है, पर पाणिनि ने तो........."

"क्षमा करो, क्षमा करो पंडित जी महाराज। ये पाणिनि और पतंजलि तो अपने दिमाग में कभी घुसे ही नहीं। जिसे तुम बड़ा कहते हो, वह अवश्य बड़ा होगा। पर मैं कहता हूँ, मेरे यहाँ आ जाओ न। अच्छी बड़ी जगह है। ठाठ से रहना। तुम्हारे पास रहने से ज्ञान की दो-चार बूँदें हमारे कानों में भी टपकती रहेंगी। हम नहीं पढ़ पाये, तो हमारे बच्चे तो पढ़ जायेंगे।"

"कौन कहता है कि तुम पढ़ नहीं पाये ? अभी तो तुमने बताया कि तुम काज़ी हो।"

"काज़ी होने के लिए पुस्तकों से माथापच्ची करने की आवश्यकता नहीं होती; केवल आदमियों से माथापच्ची करनी होती है।"

"आदमियों से माथापच्ची करना क्या आसान है ? बहुत कठिन है, बहुत कठिन। अच्छा, तुम रहते कहाँ हो ? कभी कदास मिलने आया करूँगा।"

"मैं कह रहा हूँ कि मेरे यहीं आकर रहने लगो; तुम कहते हो कि कभी-कदास मिलने आया करूँगा।"

"यहाँ जो रह रहा हूँ, वह भी तुम्हारी ही जगह है। गगनसिंह जी बिल्कुल देवता पुरुष हैं। मेरा सब तरह से ध्यान रखते हैं। किसी तरह की असुविधा नहीं होने देते। सुनो, कहते क्या हैं ? कहते हैं कि आप जैसे विद्वानों की चरणधूलि का स्पर्श करना भी हमारे लिए पुण्य है। मैं कहीं और जाऊँ, तो उनका जी दुखेगा।"

"यह भी ठीक है। उपकारी व्यक्ति का जी अकारण दुखाना उचित नहीं। पर जब भी तुम्हारा मन चाहे, निःसंकोच मेरे यहाँ चले आना। तुम्हारा सदा स्वागत होगा। अच्छा, यह तो बताओ, इतने दिन कहाँ रहे ? क्या किया ? शादी की ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विजयराज ने कुछ सकुचाते हुए कहा : "शादी नहीं की।"

आश्चर्य प्रकट करते हुए जंगबहादुर ने पूछा : "क्यों ?"

"यों ही। सच पूछो, तो गृहस्थाश्रम धनी लोगों के लिए ही सुखकर होता है। मेरे जैसे व्यक्ति के लिए, जिसके पास धन है तो है ही नहीं, जिसे धन कमाने का उत्साह भी नहीं है, विवाह कष्टदायक ही अधिक होता।"

"यह सब तुम्हारी व्यर्थ की कल्पना है। क्या गरीब लोगों का विवाह नहीं होता ?"

"होता है। पर उससे वे कितना सुख पाते हैं और कितना दुःख, यह उन से पूछने से ही पता चल सकता है। पर छोड़ो इस पचड़े को। यह बताओ, तुम्हारे कितने बच्चे हैं।"

"चार। दो लड़के, दो लड़कियाँ। किसी दिन घर आकर उन्हें आशीर्वाद दे जाओ ?"

"आऊँगा। ज़रूर आऊँगा। पर आज तुम इधर कैसे भटक आये ? मैं घर से कम निकलता हूँ, पर भगवान पशुपतिनाथ के दर्शन करने प्रायः आता रहता हूँ।"

"मैं इस ओर कम आता हूँ। पर इतना कम नहीं कि नित्य आने वालों से भेंट ही न हो। यह संयोग की ही बात है कि हमारा आमना-सामना नहीं हुआ।"

"यहाँ भीड़ भी तो कम नहीं रहती। नियम से आने वालों का ही आमना-सामना कहाँ हो पाता है ? फिर तुम बदल भी कितने गये हो ! देख कर एकदम पहचान पाना भी कठिन है।"

"पर मैंने तो तुम्हें तुरन्त पहचान लिया।"

"काज़ियों में पहचानने की शक्ति अधिक होनी चाहिए।" कह कर विजयराज खिलखिला कर हँसा। जंगबहादुर भी हँस पड़ा।

जंगबहादुर विजयराज के साथ ही मन्दिर से बाहर निकल आया। मन्दिर के बाहर विस्तृत ढलवाँ मैदान में एक घनी छाँह वाले पेड़ की ओर इशारा करके जंगबहादुर ने कहा : "चलो, कुछ देर वहाँ छाया में बैठेंगे। तुम्हें कोई जल्दी तो नहीं है ?"

"नहीं, जल्दी किस बात की ? मुझे कोई कचहरी थोड़े ही लगानी है !"

दोनों मित्र जाकर एक वृक्ष की छाँह में बैठ गये और गपशप करने लगे। जंगबहादुर अपने बाल्य सखा से मिलकर फूला नहीं समा रहा था। वह विजयराज से उसकी एक-एक छोटी से छोटी बात खोद-खोद कर पूछ रहा था। स्वभावतः विजयराज के साथ-साथ उसकी उत्सुकता उसके आश्रयदाता

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गगनसिंह के बारे में भी थी। गगनसिंह कब जागता है, कब सोता है, कब खाता है, उसके साथ कौन-कौन रहते हैं, इत्यादि प्रश्न उसने इतने विस्तार से पूछे कि एक बार विजयराज जैसे सरल व्यक्ति को भी संदेह होने लगा कि कहीं इन प्रश्नों के पूछने का कोई विशेष कारण तो नहीं है। एक बार उसने कह भी दिया : "गगनसिंह के विषय में तुम्हें इतनी उत्सुकता क्यों है ?"

सुन कर जंगबहादुर चौंका, पर तनिक भी अप्रतिभ हुए बिना बोला : "वह भी काज़ी है न, इसीलिए।" पर विजयराज के इस प्रश्न के बाद गगनसिंह के विषय में उसकी उत्सुकता एकाएक समाप्त हो गई। उसके बाद जंगबहादुर ने सारी बातचीत अपने और विजयराज के बारे में ही की।

काफ़ी देर बाद जब दोनों मित्र उठ कर चलने लगे, तब जंगबहादुर ने पूछा : "तुम यहाँ किस समय आते हो ? मौका लगा, तो मैं भी उसी समय आ जाया करूँगा। एक पन्थ, दो काज। भगवान के दर्शन होंगे और तुमसे भी भेंट हो जाया करेगी।"

जंगबहादुर के इस प्रश्न से भी विजयराज को कुछ आश्चर्य हुआ। जंगबहादुर के मन में उसके प्रति इतना प्रबल स्नेह कैसे उमड़ आया, कि वह उससे मिलने के लिए शहर से ढाई मील दूर इस मन्दिर तक आने के लिए तैयार है ? फिर भी उसने इस भाव को प्रकट नहीं किया। हो सकता है कि बालकपन की मित्रता की स्मृतियों के कारण भावुकतावश जंगबहादुर ऐसा कह रहा हो। अतः उसने उत्तर दिया : "मैं प्रायः इसी समय, आठ बजे के आस-पास आता हूँ। पर यदि मिलने की ही इच्छा हो, तो मैं तुम्हारे यहाँ आ जाया करूँगा।"

"वैसे जब तुम्हारी इच्छा हो, आओ। घर तुम्हारा है। पर केवल मिलने के लिए आना हो, तो यही स्थान बढ़िया है। यहाँ आकर मन कितना शान्त और पवित्र हो जाता है !"

इसके बाद दोनों मित्रों ने एक दूसरे से विदा ली। विजयराज का मन निश्छल आनन्द से भरा था। वह सोच रहा था कि जंगबहादुर कितना भला है। इतने बरसों के बाद आज वह मिला और ऐसे मिला कि जैसे बिल्कुल आत्मीय ही हो। काज़ी बन गया है, पर अहंकार छू तक नहीं गया। बालकपन की मित्रता की अनेक स्मृतियाँ उसके मन में उभरीं और वह अधिकाधिक मुदित और पुलकित होता गया। जब वह घर पहुँचा, तब उसने गगनसिंह को अपने महल से निकलते देखा और तुरन्त उसके मन में एक बड़ा प्रश्न उठा : "जंगबहादुर गगनसिंह के विषय में इतनी बारीकी से पूछताछ क्यों कर रहा था ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रश्न का वह कोई उत्तर नहीं खोज सका। तब उसने जंगबहादुर द्वारा दिये गये उत्तर से ही संतोष कर लिया—वह भी काज़ी है न। शायद इसीलिए।

× × ×

सच्ची मित्रता इसको कहते हैं। उस दिन विजयराज से भेंट होने के बाद जंगबहादुर प्राय: नित्य ही पशुपतिनाथ के मन्दिर में आता और विजयराज से मिलता। दोनों मित्र कुछ देर कहीं एकान्त में बैठते और अतीत की, वर्तमान की, आप बीती और जग बीती घटनाओं की चर्चा करते। निश्चय ही इस प्रकार के गोष्ठी सुख से बढ़ कर सुख और कोई नहीं है। विजयराज को आश्चर्य होता और मन ही मन अपने लिए कुछ ग्लानि भी होती कि मित्रता के लिए जितना आग्रह और उत्साह जंगबहादुर में था, उसका शतांश भी विजयराज में नहीं था। इसे वह अपनी कमी समझता। यह जंगबहादुर की उदारता थी कि वह पद-प्रतिष्ठा में बहुत अधिक होते हुए भी अपने बाल्यबन्धु से मित्रता बनाये रखने के लिए लालायित था।

मित्रता समान रुचि वाले व्यक्तियों में होती है। पर विजयराज और जंगबहादुर की रुचियाँ बिल्कुल भिन्न थीं। विजयराज अनजाने ही व्याकरण, दर्शन, गीता और वेदान्त की चर्चा करने लगता था, जिसमें जंगबहादुर की गति बिल्कुल नहीं थी। जंगबहादुर राजदरबार के शक्ति-संघर्ष की चर्चा में विशेष आनन्द लेता था, जिसमें विजयराज की विशेष रुचि नहीं थी। पर एक विषय ऐसा था, जिस पर दोनों समान उत्साह से बात कर सकते थे और वह था—गगनसिंह।

गगनसिंह काठमांडौ की राजनीति के प्रमुख मोहरों में से एक था, इसलिए उसकी छोटी से छोटी गतिविधि का ज्ञान जंगबहादुर को रहता था। विभिन्न स्रोतों से सूचनाएँ उसके पास पहुँचती रहती थीं। विजयराज को भी गगनसिंह के बारे में बहुत कुछ पता था और जो कुछ पता नहीं था, उसे जानने में विशेष रुचि थी। गगनसिंह को वह जिस रूप में जानता था, वह उसके प्रति प्रेम और सौहार्द उपजाने वाला था। पर जो कुछ जंगबहादुर बताता था, वह चौंकाने वाला और गगनसिंह के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न करने वाला था।

विजयराज का अपना अनुभव यह था कि गगनसिंह सुन्दर, स्वस्थ, मित-भाषी, परोपकारी और धर्मपरायण पुरुष है। वह पर-निन्दा कभी नहीं करता और नियम से पूजा, उपवास आदि धार्मिक अनुष्ठान करता है; दीन दुखियों की सहायता भी करता है। भगवान में उसका अचल विश्वास है।

पर जंगबहादुर गगनसिंह की चर्चा कुछ उपहासपूर्वक किया करता था। उसने विजयराज को बताया था: "यह गगनसिंह कुछ ही वर्ष पहले यहीं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजमहल में मामूली नौकर था। पर उसकी शक्ल और उससे भी अधिक किस्मत अच्छी थी। औरत और बेल का हाल तुम जानते ही हो—जो कुछ पास हो, उससे लिपटने की चेष्टा करती हैं।"

विजयराज ने समर्थन करते हुए कहा : "हाँ हाँ, वह कहा है न—प्रायेण भूमिपतयो प्रमदा: लताश्च, यत्पार्श्वतो वसति तत्परिवेष्टयन्ति (प्राय: राजा, स्त्रियाँ और बेलें जो भी पास हो, उसे लपेट लेती हैं।)"

जंगबहादुर ने गुप्त रहस्य सा प्रकट करते हुए कहा : "गगनसिंह की किस्मत थी कि रानी राज्यलक्ष्मीदेवी उस पर रीझ गई।"

विजयराज ने अपने कानों पर हाथ रखते हुए कहा : "हरे शिव ! हरे शिव ! यह क्या कह रहे हो तुम ?" पर उसकी मुखमुद्रा से स्पष्ट था कि गगनसिंह-चरित्र के इस अंश की जानकारी उसे रोचक लग रही है।

"उन दिनों महाराज का अनुराग बड़ी रानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी पर था। हर मामले में उनकी ही बात चलती थी। रानी राज्यलक्ष्मीदेवी महल में रह कर भी वनवास सा भुगत रही थीं। उन्हीं दिनों उन्होंने गगनसिंह को अपना प्रेमपात्र बनाया। सुना है कि गगनसिंह रात में दासी का वेश बना कर रनिवास में चला जाता था और बहुत-सा समय रानी के पास बिता कर दिन का उजाला होने से पहले ही लौट आता था।"

"पर भई, ऐसी बात देर तक छिपी थोड़े ही रह सकती है !"

"यदि कोई भंडाफोड़ करने को बेचैन न हो, तो छिपी भी रह सकती है। पर छिपी कहाँ रही ? राजमहल के हर दास-दासी को यह भेद मालूम था। लेकिन रानी से वैर कौन पाले ? फिर बहुत सी दासियों की तो रानी से सहानुभूति भी थी। वे जानती थीं कि महाराज छोटी रानी की ओर ध्यान ही नहीं देते।"

"मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता। गगनसिंह जी बहुत ही धर्मनिष्ठ पुरुष हैं। वह ऐसा गर्हित आचरण कभी नहीं करेंगे।" विजयराज ने कुछ बनते हुए कहा। उसे पता था कि उसका यह उत्तर सुन कर जंगबहादुर कुछ और मज़ेदार, चटपटी बात कहेगा।

"उसे अधर्मनिष्ठ कौन कहता है ? किसी दुखिया का दुःख दूर करने से बड़ा पुण्य क्या होगा ? फिर ऐसे सत्कार्य के लिए इतना बड़ा जोखिम उठाना ? भेद खुल जाये, तो सिर ही गर्दन पर न रहे। ऐसा काम केवल गगनसिंह ही कर सकता है।" कह कर जंगबहादुर कुछ मुस्कराया।

विजयराज खिलखिला कर खूब हँसा। ऐसे परोपकारी के पकड़े जाने और उसका सिर उड़ाये जाने की कल्पना उसे बहुत ही मज़ेदार लगी। हँसी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का दौर समाप्त होने पर उसने पूछा : "पर महारानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी की मृत्यु हुए तो कई वरस बीत चुके। तव से तो महाराज का सारा प्रेम महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी को ही प्राप्त है। फिर गगनसिंह जी पर महारानी की कृपा क्यों होने लगी !"

"जिसने अंगूर चखा ही नहीं, वह बेर से संतुष्ट रह सकता है। पर अंगूर का स्वाद ले लेने के बाद बेर खाने से अतृप्ति बनी ही रहती है।"

विजयराज फिर 'हो हो' करके हँसने लगा। कुछ देर बाद बोला : "अच्छा, तो क्या महाराज को इसकी भनक बिल्कुल ही नहीं है ?"

"इसे महाराज के सिवाय कौन जान सकता है ? वह प्रकट तो ऐसा ही करते हैं कि उन्हें बिल्कुल पता नहीं है। पर ऐसी वात मालूम होने पर भी प्रकट थोड़े ही की जा सकती है।"

"हाँ हाँ। यह तो सीधा अपने ऊपर ही लांछन है। कहा है न "आत्म-छिद्रं मनस्तापं, गेहे दुश्चरितानि च। वंचनं चापमानं च मतिमान् न प्रकाशयेत्' (अपनी कमी, मन के कष्ट, घर के दुराचार, ठगे जाने और अपमानित होने की वात प्रकट नहीं करनी चाहिए)।"

"गगनसिंह महारानी के उपकारों से बुरी तरह दबा हुआ है। वह महा-रानी के अच्छे-बुरे किसी भी आदेश को टाल नहीं सकता।"

"प्रेम भरे आदेशों को न टालना ही अच्छा है।"

"कोई-कोई आदेश द्वेष भरे भी होते हैं।"

"वह कैसे ?"

"जैसे महारानी युवराज सुरेन्द्र और उनके छोटे भाई उपेन्द्र की हत्या करवाना चाहती हैं।"

विजयराज का चेहरा गम्भीर हो गया। प्रेमचर्चा के बीच यह हत्या का प्रसंग कहाँ से आ पड़ा ?

"हत्या करवाना चाहती हैं ? क्यों ?"

"महारानी की इच्छा है कि उनका अपना पुत्र रणेन्द्र राजसिंहासन पर बैठे। पर सुरेन्द्र और उपेन्द्र दोनों उससे बड़े हैं। उनके जीवित रहते, वह राजगद्दी पर नहीं बैठ सकता। स्वर्गीया साम्राज्यलक्ष्मीदेवी के पुत्रों को महारानी फूटी आँखों नहीं देख सकती।"

"यह नहीं हो सकता। महारानी ऐसा नहीं सोच सकतीं। बड़ा या छोटा होना तो भगवान् की इच्छा है। सुरेन्द्र का जन्म पहले हुआ, और रणेन्द्र का बाद में; इस पर सुरेन्द्र का कोई बस नहीं था। फिर महारानी बिना दोष उसके प्राण लेना क्यों चाहेंगी ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"हो सकता है कि रणेन्द्र से पहले जन्म लेना सुरेन्द्र का दोष न हो, पर रणेन्द्र की राज्य प्राप्ति में बाधक होना तो उसका दोष है। महारानी रास्ते से उसे हटा देना चाहती हैं। यह बिलकुल स्वाभाविक है। तुम्हें पता है कि मामा मातबरसिंह से भी महारानी ने दोनों राजकुमारों की हत्या करवानी चाही थी। पर मामा जी इसके लिए राज़ी नहीं हुए। इसीलिए उन्हें अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। सुना है कि अब यह काम गगनसिंह को सौंपा गया है।"

"गगनसिंह जी इस दुष्कर्म को कभी नहीं करेंगे। मैं उन्हें जानता हूँ।" विजयराज ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा।

"तुम्हें कुछ भी पता नहीं है" जंगबहादुर ने उससे दुगने विश्वास से कहा। "तुम्हें गगनसिंह और राज्यलक्ष्मी की प्रेम-लीलाओं का ही पता नहीं था। आदमी जो कुछ ऊपर से दीखता है, उसके अलावा भी बहुत कुछ होता है।"

"तो यह इतना जप-तप, पूजा-पाठ इत्यादि सब···"

"लोगों की आँखों में धूल झोंकने के लिए है।" जंगबहादुर ने विजयराज का वाक्य पूरा किया। "सचाई पर पर्दा डालने के लिए है।"

विजयराज आश्चर्य से अवाक् बैठा रहा। जंगबहादुर ने कहा : "अब जो कुछ मैं कहने लगा हूं, वह कहीं भी प्रकट करने का नहीं है। यह बात महाराज के कानों तक पहुँच चुकी है कि गगनसिंह युवराज सुरेन्द्र और उपेन्द्र की हत्या के षड्यन्त्र में सम्मिलित हो सकता है, या यों कहो कि षड्यन्त्र रचेगा ही वह। ऐसी दशा में उसके ऊपर सतर्क दृष्टि रखने का और उस षड्यन्त्र को विफल करने का भार मेरे सिर डाला गया है। पर मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि यह काम किस प्रकार पूरा होगा।"

विजयराज सुन कर बिल्कुल हक्का-बक्का रह गया। उसने कुछ सोचने की भी कोशिश नहीं की।

कुछ देर चुप रह कर जंगबहादुर बोला : "मैं चाहता हूँ कि अपना एक आदमी गगनसिंह के महल में गुप्त रूप से रख दूँ, जो उस पर दृष्टि रख सके और यदि कोई आशंका की बात हो, तो उसकी सूचना हमें दे सके।"

"यह तो तभी हो सकता है, जब वह गगनसिंह जी का निजी सेवक बन जाये। नहीं तो केवल महल में रहने से उसे कुछ भी पता नही चलेगा।"

"किसी नये आदमी के लिए उसका निजी सेवक बन पाना तो असम्भव है। वह नये आदमी को पास फटकने देगा ही नहीं। यदि किसी व्यक्ति का उसके महल में रहने का प्रवन्ध हो जाये, तो बाकी काम तो यह स्वयं देख लेगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विजयराज चुप रहा।

जंगबहादुर ने कहा : "मान लो कि कोई आदमी आकर तुम्हारे पास रहने लगता है। तुम यह प्रकट करते हो कि वह तुम्हारा सम्बन्धी है और बीमारी का इलाज कराने के लिए तुम्हारे पास आकर रह रहा है, तो क्या किसी को कोई ऐतराज़ होगा ?"

"मैं ?" विजयराज ने इतना ज़ोर दे कर यह एक शब्द कहा कि इसमें तनिक भी संदेह न रहा कि वह इस झंझट में बिल्कुल नहीं पड़ना चाहता।

अब जंगबहादुर ने अपने स्वर में बाल्य-बन्धुता का सारा ज़ोर भर कर कहा : "इसमें चिन्ता की बात ज़रा भी नहीं है। यह मेरे अलावा स्वयं महाराज का काम है। यदि तुम दो निरीह बालकों के प्राणों को बचाने में कछ सहायता दे सको, तो भला ही है। सहायता देने पर महाराज की कृपा सुनिश्चित है।"

"पर मैं सहायता कैसे दे सकता हूँ ?" पता नहीं, इस प्रश्न से विजयराज का क्या अभिप्राय था।

जंगबहादुर ने तुरन्त कहा : "तुम्हें कुछ नहीं करना है। मैं एक आदमी को तुम्हारे पास भेजूँगा। वह तुम्हारे घर रहेगा। यदि कोई भी तुमसे कुछ पूछे, तो तुम यह बताओगे कि वह तुम्हारा सम्बन्धी है और बहुत दिन से बीमार है; इलाज करवाने आया है। उस आदमी को भी और कुछ नहीं करना है। केवल इस बात पर ध्यान रखना है कि महल में किस-किस समय कौन-कौन लोग आते हैं ? कोई संदेहजनक बात तो नहीं है।"

विजयराज सोच में पड़ गया। 'हाँ' तो उसने कहा ही नही, 'ना' भी स्पष्ट नहीं कहा। जंगबहादुर ने उसे हौसला बँधाते हुए कहा : "अच्छे काम में संकट होता है। फिर भी उसे करना ही चाहिए, क्योंकि उसका फल अच्छा होता है। पर इस काम में तो कोई जोखिम है ही नहीं। मैं वचन देता हूँ कि यदि तुम्हें किसी तरह का कोई नुकसान हुआ, तो मैं उसकी भरपाई करूँगा।"

जब विजयराज अब भी चुप ही रहा, तब जंगबहादुर ने उसके मौन को स्वीकृति का लक्षण मान लिया और कहा : "तो यह तय रहा। मैं एक आदमी को तुम्हारे पास भेज दूँगा। उसका नाम लालझा है। उससे तुम्हें किसी तरह की कोई शिकायत नहीं होगी। यह भी निश्चित है कि बाद में तुम्हें इस बात पर बहुत सन्तोष होगा कि तुमने एक भले काम में हाथ बँटाया।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विजयराज समझ रहा था कि ये सब झांसा देने की बातें हैं और यह भी कि वह किसी बड़े जाल में उलझा जा रहा है, फिर भी वह अपने इस प्रभुताशाली बाल्यबन्धु द्वारा किये गये अनुरोध को किसी प्रकार टाल नहीं सका। इच्छा होते हुए भी वह मुँह से नहीं कह सका कि यह काम मुझसे नहीं होगा।

जो बात कही नहीं गई, उसे जंगबहादुर ने बिल्कुल जानना नहीं चाहा। चलने के लिए उठते हुए उसने कहा : ''यह बात बस हम दो तक ही रहे। किसी तीसरे के कानों में इसकी भनक न पड़े।''

विजयराज फिर चुप रहा। शायद इस चुप्पी का अर्थ भी स्वीकृति ही था। जब दोनों मित्र एक दूसरे से विदा हुए, तब जंगबहादुर के मन से एक भारी बोझ उतर गया था और वह कई गुना होकर विजयराज के मन पर आ पड़ा था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

41

काली रात

14 सितम्बर 1846।

भादों का महीना। कृष्ण पक्ष आधे से अधिक बीत चुका था। बरसाती सांझ धीरे-धीरे राजधानी काठमांडौ के ऊपर उतर रही थी। जब सूर्य का अरुण विम्ब पश्चिम की पर्वत मालाओं के पीछे की ओर ढल गया, तब विदा होती हुई रवि किरणों ने आकाश में और पृथ्वी पर रंग बखेरने शुरू कर दिये। हिमशिखर और मेघ पिघले सोने की तरह दमकने लगे। पर सांझ के ये रंग अत्यन्त चंचल और क्षणिक थे। वे पल पल में बदल रहे थे और देखते देखते उत्तर की ओर खड़े ऊँचे हिमशिखर ताज़े कटे हुए मांस की तरह लाल हो उठे, और उसके तुरंत बाद सिर के ऊपर आकाश में घिरे हुए मेघ भी खून से भरे समुद्र की भाँति गाढ़े लाल रंग में रँग गये। कुछ देर तक आकाश में पल पल बदलते रंगों का यह मेला बना रहा। नगर में जगह-जगह मन्दिरों में सान्ध्य पूजा के शंख और घड़ियाल बजने लगे। आरती के मधुर गान के धीर-गम्भीर स्वर वायु मंडल में गूंज उठे। धूप और अगुरु की सुगन्ध ने सब ओर शान्त और पवित्र वातावरण की सृष्टि कर दी।

सेनापति गगनसिंह अपने महल में बने छोटे से मंदिर में बैठा भक्तिभाव से पूजा में तल्लीन था। पिछले कुछ वर्षों में उसकी आश्चर्यजनक पदोन्नतियाँ हुई थीं और हर पदोन्नति के साथ भगवान के प्रति उसकी भक्ति बढ़ती ही गई थी।

गगनसिंह के सामने महादेव का चतुर्मुख लिंग था। उस पर फूल मालाएँ चढ़ी थीं। दोनों ओर दो दीप जल रहे थे। दो धूप बत्तियाँ सुगन्धित धूम छोड़ रही थीं। गगनसिंह के हाथ में छोटी सी घंटी मन्द मधुर स्वर में बज रही थी। भाव विभोर हो कर वह गा रहा था :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जय जगदीश हरे !

प्रलय पयोधि जले धृतवानसि वेदम् ।······

इस शान्ति और सुख के क्षण में उसका मन अतीत की स्मृतियों में उतरा रहा था। अपने भाग्योदय के सोपान एक-एक करके उसके मन:पटल पर चित्रित होने लगे।

उसे पुराने दिन याद आये। वह स्वस्थ था, बलिष्ठ था और कुछ सुन्दर भी था। महत्वाकांक्षा उसके मन में नाम को भी न थी। वह अपनी नौकरी से संतुष्ट था। राजमहल के भंडार में नौकरी भी बड़े भाग्य से मिलती है। उसे अपने अनेक सगे सम्बन्धियों का पता था, जिन्हें दो समय भरपेट खाने को मक्का भी नहीं जुटती थी। और यहां उसे किसी चीज़ की कमी न थी।

आरती की पंक्तियां यंत्रवत् उसके मुंह से निकल रही थीं :

वसति दशन शिखरे धरणी तव लग्ना,······

शशिनि कलंक कलेव निमग्ना······

उसे वह दिन भी याद आया, जब उसने रानी राज्यलक्ष्मी देवी की आँखों में पहली बार प्रणय का आह्वान संकेत देखा था। तब वह इस असंभव बात पर विश्वास भी नहीं कर सका था। कहाँ वह सारे राज्य की रानी और कहाँ वह उसका एक नगण्य सा सेवक। रानी उसकी ओर ललचाई, प्यार भरी दृष्टि से निहारेगी, यह सोचने की भी बात नहीं। उसकी आँखों को भारी भ्रम हुआ है। इस भ्रम को सच समझ लेने से शायद अपना सिर भी गँवा देना पड़ सकता है।

जय जगदीश हरे···स्वामी जय जगदीश हरे !······

भ्रम एक बार हो सकता है, दो बार हो सकता है; पर रानी की आँखें तो निरन्तर लालसा से भरी दिखाई पड़ती हैं। जैसे चटोरे बालक की दृष्टि बराबर उस लड्डू पर लगी रहती है, जिसे उसकी पहुँच से बाहर रख दिया गया है, उसी प्रकार रानी उसकी ओर देखा करती है। बड़ी प्रचंड रमणी है यह। धन, वैभव, पद, सत्ता, सभी कुछ तो उसे प्राप्त है। किन्तु पुरुष नारी को जो कुछ दे सकता है, वह उसे प्राप्त नहीं है। उसी की खोज में उसकी दृष्टि युवक गगनसिंह पर आ अटकी है। याद करके गगनसिंह का आमूल-चूल सर्वांग सिहर उठा।

संकेत क्रमश: स्पष्ट और स्पष्टतर होते गये। रानी ने धीरे-धीरे गगनसिंह के भय को दूर किया; उसमें आत्म विश्वास जगाया। उसके सम्मुख वह रानी पद से उतर कर नारी मात्र रह गई। उसने उसे सब प्रकार से अभयदान दिया। गगनसिंह के प्रेम से उसे जैसा सुख प्राप्त हुआ, उसकी तुलना में सारा संसार तुच्छ हो गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जो लोग केवल प्रेम-प्रेम जपते हैं, उन्हें समझना चाहिए कि शारीरिक इच्छा भी प्रेम का ही एक अंग है। यह प्रेम से उत्पन्न होती है और प्रेम को उत्पन्न भी करती है। इसके अभाव में प्रेम का पौधा देर तक टिकता भी नहीं। रानी के मन में शारीरिक इच्छा ही प्रधान थी। किन्तु इस इच्छा ने प्रेम को जन्म दिया। जिस सुन्दर और स्वस्थ पुरुष से उसे आनन्द प्राप्त होता था, उसे वह जी-जान से प्रेम करने लगी। उसकी कृपा के फलस्वरूप गगनसिंह की दिनोंदिन पदोन्नति होती गई।

इस समय आरती के पद गाते हुए वे कितने ही प्रेम-प्रसंग गगनसिंह के स्मृति पटल पर उभरे। उसे सदा ही लुक छिप कर रानी के पास पहुंचना होता था। रहस्य खुल जाने पर लोकापवाद का ही नहीं, मृत्यु का भी भय था। पर अधीरता से प्रतीक्षा करती हुई रानी जितने आवेशपूर्वक उसका स्वागत करती थी, उसके कारण वह सब आशंकाओं को बिसार देता था।

एक बार ऐसा संकट भी आ पड़ा था कि स्त्री वेश में रनिवास से लौटते हुए एक दासी ने उसे पहचान लिया था। उसने सोचा था कि अब उसे शीघ्र ही हाथी के पैरों तले पहुँचना होगा, पर जैसे तैसे वह विपत्ति टल गई थी। उसका रहस्य गुप्त ही रह गया था।

तरह-तरह के कितने ही प्रसंगों के स्मरण से उसका देह रोमांचित हो उठा। रानी का स्नेह-मधुर मुख मंडल भी उसकी आँखों में डोल गया। भगवान के प्रति गगनसिंह की भक्ति और भी प्रगाढ़ हो उठी। उसके हाथ में हिलती हुई घंटी के स्वर तनिक द्रुत से हो उठे ; कंठ स्वर ईषत्कम्पित हो गया :

जय जगदीश हरे ......

धांय ! धांय ! !

घंटी की 'टन टन' बन्द हो गई। गगनसिंह का देह क्षण भर को तड़पा; उसके मुँह से एक व्यथित कराह निकली ; फिर खून से लथपथ, निष्प्राण शरीर शिवलिंग के पास ही लुढ़क गया। एक के बाद एक चलाई गई दो गोलियों ने उसकी जीवन लीला समाप्त कर दी।

क्षण भर में सब ओर शोर मच गया। नौकर चाकर और सिपाही दौड़ दौड़ कर आने लगे। क्या हुआ ? गोली किसने चलाई ? हत्यारे की खोज होने लगी। पर जिसने गोली चलाई थी, उसने अपने भागने की योजना भी सावधानी से बना ली थी। उस बादलों भरी अँधेरी रात में वह प्रेत की तरह न जाने किधर विलीन हो गया। किसी को पता न चला कि वह कौन था ; किधर से आया और किधर चला गया।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

५८ वह चाहे जो भी कोई था, उसने हत्या की योजना बड़ी कुशलता से बनाई थी। गगनसिंह कभी अकेला नहीं रहता था। सेनापति होने के कारण प्रायः हर समय ही दो एक दो एक व्यक्ति उसके पास बने रहते थे। केवल पूजा का ही वह समय ऐसा होता था, जिसमें कोई व्यक्ति किसी काम से उसके पास नहीं आता था। उसी समय को हत्यारे ने अपने इस निष्ठुर कार्य के लिए चुना। ठीक समय पर वह वहाँ पहुँचा और ठीक समय पर भाग निकला। यह केवल तभी संभव था, जब गगनसिंह के महल का कोई कर्मचारी हत्यारे के साथ मिला हुआ हो। या क्या पता, गगनसिंह के अपने ही किसी कर्मचारी ने उसे ठिकाने लगा दिया हो।

× × ×

राजमहल में दीपक जल चुके थे। महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम भोजन करके अपने गोष्ठी कक्ष में जा चुके थे। महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी पूजा पाठ कर चुकी थीं और भोजन करने के लिए तैयार थीं। तभी उनकी दासी मन्दाकिनी आँधी की तरह उनके कमरे में आ घुसी और आर्त स्वर में बोली : "सरकार, गज़ब हो गया !"

उसके आकुल कंठ स्वर से चौंक कर महारानी ने उसकी ओर देखा और एकदम हक्का-बक्का रह गई। मन्दाकिनी का चेहरा प्रेत की तरह सफेद था ; आँखें फटी-फटी सी थीं। सिर का आँचल कन्धे पर गिर पड़ा था और उसके मुँह से बोल नहीं निकल रहा था। भीषण अनिष्ट की आशंका से महारानी का हृदय धक धक करने लगा। व्यग्र हो कर उसने पूछा : "क्या हुआ ?"

प्रश्न सुन कर भी मन्दाकिनी ज्यों की त्यों खड़ी रही। जैसे उसने कुछ सुना ही नहीं। कुछ क्षण बाद वह एकाएक चीख मार कर रो पड़ी : "यह क्या हो गया सरकार !"

राज्यलक्ष्मीदेवी की घबराहट चरम सीमा पर पहुंच गई; पर वह कुछ भी न समझ सकी कि हुआ क्या है, अतः उसने मन्दाकिनी के पास आकर उसे झकझोर कर पूछा : "बता तो क्या हुआ है ?"

"कैसे कहूं सरकार ?" रोते-रोते मन्दाकिनी बोली : "कत्ल हो गया ! हत्या ! खून !"

"महाराज का ?" उन्मत्त सी हो कर महारानी ने पूछा : "कब ? अभी तो वह यहाँ थे। कहाँ ? कैसे ?"

मन्दाकिनी ने ज़ोर से सिर हिलाते हुए कहा : "महाराज का नहीं सरकार, सेनापति का !" और वह बिलख-बिलख कर रोने लगी।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"सेनापति का ? गगनसिंह का ? खून हो गया ?" बोलते-बोलते राज्यलक्ष्मीदेवी अचेत हो कर फर्श पर गिर पड़ी। मन्दाकिनी रोना भूल कर उसके उपचार में लगी। वह दौड़ कर पानी लाई और महारानी के मुँह पर छींटे देनी लगी और आँचल से हवा करने लगी। इतनी विपत्ति होने पर भी उसने अन्य किसी सेवक या सेविका को नहीं बुलाया। वह नहीं चाहती थी कि कोई भी यह देखे कि इस दु:समाचार को सुन कर रानी को कितनी व्यथा हुई है।

जब छींटे देते और पंखा झलते पाँच छह मिनट हो गये और महारानी को होश नहीं आया, तब मन्दाकिनी चिन्तित हो उठी। उसने सोचा कि अब तो वैद्य को बुलाना ही पड़ेगा। भगवान न करे, पर यदि महारानी को कुछ हो गया, तो उसकी ज़िम्मेदारी उसके ही सिर पर होगी। पर यदि वैद्य को बुलाया, तो दस परिचारक और आयेंगे। होश आने पर महारानी न जाने क्या करेंगी, क्या कहेंगी। महारानी यह कदापि नहीं चाहेंगी कि मन्दाकिनी के सिवाय कोई भी यह जान पाये कि गगनसिंह के लिए उन्होंने कितना शोक किया है। पर औषध के अभाव में कहीं महारानी भी प्राणों से हाथ न धो बैठें।

मन्दाकिनी इस दुविधा में पड़ी बेचैन हो रही थी और अन्त में वैद्य को बुलाने के लिए चलने ही लगी थी कि महारानी ने आँखें खोल दीं और अपने ऊपर मन्दाकिनी को झुके देख कर थकी आवाज़ में पूछा : "मुझे क्या हो गया था ?"

मन्दाकिनी ने चुप रहना ही हितकर समझा। पर चुप रहने से भी कितनी देर बचाव हो सकता था ? चेतना लौटने के कुछ ही क्षण बाद महारानी की स्मृति भी लौट आई। वह उठ कर बैठ गई और व्यथा से तड़पती हुई सी विलाप करने लगी : "हाय गगनसिंह ! हाय मेरे प्रियतम ! यह क्या हुआ !"

मन्दाकिनी ने झपट कर दरवाज़ा बन्द कर दिया, जिससे आवाज़ बाहर न जाये। उसके बाद मुड़ कर वह भी महारानी के साथ रोने लगी।

शोक का प्रथम तीव्र आवेग कम होने पर महारानी ने पूछा : "हत्या किसने की ? कैसे की ?"

"गोली से। हत्यारा भाग गया। हे भगवान, तूने भी क्या दिन दिखाया !"

"मैं जानती हूं, हत्या किसने की है। मैंने भी यदि मज़ा न चखा दिया, तो मेरा नाम राज्यलक्ष्मी नहीं।" शोक के समुद्र में से रोष का हलाहल उभरना शुरू हुआ। वह क्रोध से उन्मत्त सी बोलने लगी : "वह जब से सेनापति बने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थे, तभी से बहुत से लोगों की आँखों में काँटे की तरह चुभने लगे थे। उन्हीं लोगों ने अपने जी की जलन मिटाई है। मैं एक एक को जानती हूँ। एक को भी नहीं छोड़ूँगी। वे मुझे नहीं जानते। अभी मेरा असली रूप किसी ने नहीं देखा है। अब दिखाऊँगी।"

मन्दाकिनी उसे शान्त करने का प्रयत्न करने लगी : "सरकार, जीवन और मृत्यु भगवान के हाथ में हैं। बाकी तो सब निमित्त बन जाते हैं। जो कुछ हो गया, उसे धीरज से सहना चाहिए।"

महारानी रोष के शिखर से एकाएक फिर विषाद के गर्त में गिर पड़ी। वह आँसू बहाती हुई विलाप करने लगी : "आह गगनसिंह, मैं ही तुम्हारी मृत्यु का निमित्त बनी। मैंने तुम्हें ऊँचे आसन पर ले जा बिठाया, जहाँ विषैली ईर्ष्या से भरी आँखें तुम पर पड़ने लगीं। हाय, मैंने तुम्हें अपने आँचल में छिपा कर क्यों न रखा ? मैं भी कितनी मूर्ख हूं। यह दुनियाँ बड़ी क्रूर और हृदयहीन है। यह किसी को सुखी नहीं देख सकती। मेरा सुख कोई नहीं देख सकता। मेरा तो जन्म ही दुःख पाने के लिए हुआ है। हे भगवान, तुमने यह मुझे किस पाप का दंड दिया है ?"

मन्दाकिनी को पता था कि गगनसिंह की मृत्यु से राज्यलक्ष्मीदेवी के हृदय में कितना गहरा घाव हुआ है। कुछ भी उपचार करने से, सान्त्वना देने से उसकी व्यथा बढ़ेगी ही। केवल समय ही उसकी वेदना को शान्त कर सकेगा। अतः वह मुँह से कुछ न कह कर कभी महारानी का हाथ पकड़ कर, कभी उसके कन्धे पर हाथ रख कर, उसके साथ आँसू बहा कर उसकी पीड़ा को बाँट लेने का यत्न करने लगी।

उसे रोते देख कर राज्यलक्ष्मीदेवी बोली : "रो मत मन्दाकिनी, रो मत। जो हो गया, सो हो गया। उसे तो बदला नहीं जा सकता। पर उसका बदला लिया जा सकता है। हम क्यों रोयें ? रोयें हमारे दुश्मन !" पर अगले ही क्षण फिर स्वयं रोते हुए कहने लगी : "हाय गगनसिंह, तुम कितने अच्छे थे ! शायद इसीलिए देवताओं ने तुम्हें स्वर्ग में बुला लिया। तुम्हारे बिना मेरे लिए तो यह दुनियाँ ही सूनी हो गई।..." वह बोलते-बोलते बीच में ही रुक गई, शायद अपनी स्मृतियों के लोक में खो गई और इस दुनियाँ को भूल ही बैठी।

कई मिनट तक वह इसी प्रकार चुप बैठी अपनी स्मृतियों में डूबी रही। गगनसिंह के साथ बिताये सुख के अनगिनत क्षण अकल्पनीय वेग से उसके स्मृतिपटल पर से दौड़ते जाने लगे और वह मुग्ध सी हुई उन्हें देखती रही। लम्बे-लम्बे बरस पलों में समा गये। जब यह ताँता टूटा, तब उसकी छाती से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक बहुत गहरा और लम्बा साँस निकला और वह बोल उठी : "उफ़, यह क्या हो गया !"

फिर एकाएक व्यस्त होकर वह बोली : "मन्दा, मैं उनके घर जाऊँगी ।"

"किसके ? सेनापति के ?"

"हाँ ।"

"पर वहाँ जाना क्या उचित होगा ?" मन्दाकिनी को भय था कि यदि राज्यलक्ष्मी वहां गई, तो वह आपे से बाहर होकर कुछ ऐसा कांड कर बैठेगी, जिससे उसका और गगनसिंह का गुप्त प्रेम किसी भी तरह छिपा नहीं रह सकेगा ।

"क्यों ? क्या हर्ज है ? न जाना ही अनुचित होगा । प्रधान सेनापति की मृत्यु पर शोक प्रकट करने के लिए रानी का जाना हर तरह से उचित है । मैं चल रही हूँ । तैयार हो जा ।"

आकाश में घिरे बादलों ने अँधेरी रात को और भी अँधेरा कर दिया था । लगता था कि सब ओर काजल बरस रहा है । उस अँधेरे में आदमी के लिए अपने हाथ को भी देख पाना कठिन था । पर इससे भी घना अन्धकार महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी के हृदय में छाया हुआ था । प्रकाश की क्षीण से क्षीण भी कोई किरण कहीं दिखाई नहीं पड़ती थी ।

महारानी ने बाहर निकलने योग्य वस्त्र पहने । रेशमी साड़ी के ऊपर उसने एक काला ऊनी शाल कन्धों पर डाल लिया । उसके बाद आज पहली बार उसने नेपाल की राजकीय तलवार अपने हाथ में ली । यह वही तलवार थी, जिसे किसी समय महाराज पृथ्वीनारायणशाह धारण किया करते थे । बाद में उनके वंशज इसे धारण करते रहे । यह युद्ध में काम आने वाली तलवार नहीं थी, अपितु सोने की मूठ वाली छोटी सी सुन्दर तलवार थी, जो मुकुट के समान ही राजा का शोभा-चिह्न समझी जाती थी । सभी सार्वजनिक समारोहों में महाराज इसे धारण करते थे । राजसत्ता की प्रतीक इस तलवार को आज महारानी ने अपने हाथ में ले लिया ।

महल से बाहर जाने के लिए महारानी ने महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम से अनुमति नहीं ली । इतना ही नहीं, उन्हें सूचना भी नहीं दी । यह जानना भी नहीं चाहा कि इस शोक के अवसर पर वह भी उसके साथ चलना पसन्द करेंगे या नहीं । उसने कुछ मशालची और सैनिक साथ लिये और पालकी में बैठ कर गगनसिंह के घर की ओर चली ।

गगनसिंह की हत्या की खबर शहर में फैल चुकी थी । सँकरी सड़कों पर जहाँ-तहाँ लोग इकट्ठे होकर इसी विषय में चर्चा कर रहे थे । घरों में जलते हुए दीपकों की किरणें झरोखों में से अवश्य बाहर आ रही थीं, किन्तु सड़कों

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर अन्धकार ही था। उस अन्धकार में खड़े लोग भूत-प्रेतों जैसे प्रतीत होते थे। मशालचियों और सैनिकों के साथ बढ़ती हुई रानी की पालकी को देख कर वे हड़बड़ा कर राह दे देते थे।

ज्योंही रानी की पालकी गगनसिंह के घर के सामने जाकर रुकी, त्योंही कानों कान यह खबर फैलनी शुरू हो गई कि रानी स्वयं गगनसिंह के घर गई हैं। खबर राजमहल तक भी पहुँच गई।

गगनसिंह के घर में इष्ट परिजनों और नौकर-चाकरों की भीड़ जमा थी। विलाप के आर्त स्वर कभी मन्द पड़ जाते और कभी फिर तीव्र हो उठते थे। रानी के पहुँचने की हड़बड़ाहट में ये स्वर एक बार फिर मन्द पड़ गये। अधिकांश लोगों ने मृतक को भूल कर रानी की ओर ध्यान दिया। पर एक व्यक्ति को रानी का वहाँ पहुँचना अच्छा नहीं लगा और वह थी गगनसिंह की पत्नी।

गगनसिंह के महल में रानी ने अत्यन्त संयत आचरण किया। उसने अपने परलोकगत प्रेमी के शव के अन्तिम दर्शन किये और दिल पर पत्थर रख कर अपने उमड़ते भावावेश को रोका। गगनसिंह की पत्नी को सान्त्वना देते हुए उसने कहा कि हत्यारा शीघ्र ही पकड़ा जायेगा।

जब रानी राज्यलक्ष्मीदेवी गगनसिंह के घर से लौट कर हनुमान ढोका दरबार पहुँची, तब रात के नौ बज चुके थे। उसने महल में पहुँचते ही आदेश दिया कि अभी, इसी समय सब भारदारों को राजसभा में बुलाया जाये। आकस्मिक संकट की सूचना देने के लिए उसने नगाड़े बजाने का आदेश दिया।

हनुमान ढोका दरबार के मुख्य द्वार के सामने थोड़ी दूर पर दो बहुत बड़े बड़े नगाड़े रखे रहते थे। अब वे ज़ोर ज़ोर से बजने लगे। उनकी गूँज न केवल सारे काठमांडौ शहर में, बल्कि दूर-दूर तक सारी काठमांडौ घाटी में सुनाई पड़ने लगी। उस बरसाती अँधेरी रात के सन्नाटे में नगाड़ों की यह भारी आवाज़ सुनने वालों के हृदय में भय उत्पन्न करने लगी। सारा नगर रह-रह कर सिहरने सा लगा।

इसके साथ ही हर भारदार को बुलाने के लिए हरकारे भी भेजे गये। किसी को यह कहने का अवसर न रहे कि उसे सूचना नहीं मिली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

42

गुरु मंत्र

मातबरसिंह की मृत्यु के बाद उनके भानजे जंगबहादुर का मान कर्नल लारैन्स के यहाँ कम नहीं हुआ, बल्कि कुछ बढ़ ही गया। यह ठीक है कि अब वह प्रधानमंत्री का भानजा नहीं था, किन्तु अब वह स्वयं चार काज़ियों में से एक था। ये चारों काज़ी मिल कर प्रधानमंत्री का काम संभालते थे, अतः समझा जा सकता है कि वह एक चौथाई प्रधानमन्त्री था। ऐसे व्यक्ति को कर्नल लारैन्स हाथ से क्यों निकलने देता? फिर, जिस प्रकार के असत् उद्देश्य के लिए कर्नल लारैन्स और जंगबहादुर में मित्रता हुई थी, उसके लिए होने वाली मित्रताओं का अन्त या तो कभी होता ही नहीं, या फिर घोर वैमनस्य और हत्या में हुआ करता है।

आज जब रात में नौ बजे के बाद जंगबहादुर कर्नल लारैन्स की कोठी पर पहुँचा, तब उसका चेहरा खुशी से चमक रहा था। कर्नल लारैन्स को उस समय उसे देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि सामान्यतया यह समय उसके आने का नहीं, बल्कि वापस लौटने का होता था। पर उसने आश्चर्य का भाव प्रकट न करके प्रसन्नता ही प्रकट करते हुए कहा : "अरे! जंगबहादुर? इतनी देर कैसे हो गई? बड़े खुश नज़र आते हो!"

जंगबहादुर ने अपनी खुशी को छिपाने की कोई कोशिश नहीं की। वह बोला : "आपके लिए एक समाचार लाया हूं। सेनापति गगनसिंह चल बसे।"

कर्नल लारैन्स आश्चर्य से मुँह बाये उसकी ओर देखने लगा। गगनसिंह की मृत्यु एकदम असंभावित थी। यह ठीक है कि कुछ समय पूर्व उसने जंगबहादुर से कहा था : "तुम्हारी उन्नति के मार्ग में एक बड़ी चट्टान अड़ी है, और वह है गगनसिंह। गगनसिंह की पीठ पर एक बहुत मज़बूत हाथ है। जब तक गगनसिंह है, तब तक तुम्हें अपनी वर्तमान स्थिति से ही सन्तोष

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करना होगा।" पर कर्नल लारेंस को यह आशा नहीं थी कि गगनसिंह इतनी जल्दी चल बसेगा। जंगबहादुर कर्नल लारेंस की उस बात को ही स्मरण करके खुशी से यह समाचार सुनाने के लिए आया प्रतीत होता था। अपनी उन्नति के मार्ग की एकमात्र बाधा के हट जाने से उसका प्रसन्न होना बिल्कुल स्वाभाविक था। कर्नल लारेंस को मन ही मन इस समाचार से कोई खुशी नहीं हुई। जंगबहादुर की तरह गगनसिंह भी उसका गुर्गा था। पर जंगबहादुर की प्रसन्नता में हिस्सा बँटाते हुए उसने उत्साहपूर्वक कहा : "बधाई हो! तुम्हारा भाग्य प्रबल है। पर गगनसिंह को हुआ क्या?"

"हत्या। किसी ने अँधेरे में गोली मार दी।" जंगबहादुर ने कहा। उसका उल्लास किसी तरह छिप नहीं पा रहा था।

कर्नल लारेंस ने कुछ देर तक अपनी आँखें जंगबहादुर के चेहरे पर गड़ाये रखीं, जैसे वह उसके सिर के अन्दर के भाग को देखने की कोशिश कर रहा हो। उसकी इस एकाग्र दृष्टि से जंगबहादुर को भी ऐसी बेचैनी हुई, जैसे वह पैनी दृष्टि उसे अपनी त्वचा और हड्डियों को भेदती अनुभव हो रही हो। कुछ क्षण बाद कर्नल लारेंस ने वह एकाग्र दृष्टि उसके चेहरे से हटा ली, जैसे उसने जो देखना था, वह देख लिया हो। कर्नल लारेंस ने गम्भीर होकर पूछा : "हत्या किसने की?"

जंगबहादुर ने कहा : "हत्या करने वाला भाग गया।" और यह कह कर वह खिलखिला कर हंसने लगा। कर्नल लारेंस सोचने लगा कि इसमें इतने ज़ोर से हँसने की क्या बात है?

"हत्यारे को किसी ने देखा भी नहीं?"

"बिल्कुल नहीं। घुप्प अँधेरा था।"

"तो अब क्या हो रहा है?"

"होना क्या है? सुना है कि महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी गगनसिंह के घर गई हैं।"

"रानी गगनसिंह के घर गई हैं?" कर्नल लारेंस ने बहुत आश्चर्य प्रकट किया।

"क्या आपको मालूम नहीं है कि वह महारानी का चहेता प्रियतम था।"

"यह मुझे मालूम है।"

"फिर आपको इतना आश्चर्य क्यों हुआ?"

"वह उन दोनों का गुप्त प्रेम था। उस प्रेम को इस तरह खुल कर स्वीकार करने की हिम्मत रानी में होगी, यह मैं नहीं सोचता था।"

"महारानी में बड़ी हिम्मत है। पर यह हिम्मत उन्हें महँगी पड़ेगी।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"रानी ने यह प्रेम करके ही अपनी स्थिति बिगाड़ ली थी। पर अब इसे प्रकटत: स्वीकार करके उसने उसे और बिगाड़ लिया है।"

अभी वे दोनों बातें कर ही रहे थे कि ज़ोर से बजते हुए नगाड़ों की आवाज़ सुनाई पड़ी। कर्नल लारेंस ने चौंक कर पूछा : "यह कैसी आवाज है ?"

"यह संकट की सूचना है। मुझे भी अब राजदरबार में पहुंचना चाहिए।"

"राजदरबार में पहुँच कर तुम क्या करोगे ?"

"मुझे पता नहीं कि वहां क्या करना होगा। हमें किसलिए बुलाया जा रहा है ?

"यह अनुमान करना बिल्कुल सरल है कि इस दरबार में गगनसिंह की हत्या और उससे उत्पन्न स्थिति पर विचार होगा। रानी इस हत्या से बहुत क्षुब्ध होगी।"

"आप बिल्कुल ठीक कहते हैं।"

"गगनसिंह की हत्या पर तुम जितनी खुशी प्रकट कर रहे थे, उतनी वहाँ प्रकट करने से शायद सिर ही गँवा देना पड़े।"

"ठीक है।"

"मेरी राय यह है कि राजदरबार में तुम अकेले मत जाना। चार छह इष्ट मित्रों को साथ ले कर जाना। निहत्थे मत जाना। हथियार ले कर जाना। आज की रात निर्णय की रात है। ये नगाड़े मौत के नगाड़े हैं। अब हिचकने का काम नहीं है। गगनसिंह की बाधा हट चुकी है। उन्नति का मार्ग खुला पड़ा है। यदि तुम साहस से काम लो, तो अपने मामा का स्थान ले सकते हो।"

जंगबहादुर में इतना सब सोच सकने की तो बुद्धि थी ही नहीं, इस बात के अर्थ को सही-सही समझ सकने के लिए भी कम ही बुद्धि थी। उसे केवल यह समझ आया कि वह अपने स्वर्गीय मामा की तरह नेपाल का प्रधानमन्त्री बन सकता है और कर्नल लारेंस की सलाह है कि इस समय हिम्मत से काम ले कर कुछ कर गुज़रा जाए तो ठीक है। उसने कहा : "जो आप कहते हैं, वह बिल्कुल सही है। मैं भरसक प्रयत्न करूँगा।"

"असली बाधा गगनसिंह था। जब उसे भगवान ने हटा ही दिया है, तब बाकी छोटी-मोटी रुकावटों को हटा लेना तुम्हारा अपना काम है। अच्छा, अब तुम्हें देर हो रही है। जाओ। मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ तुम्हारे साथ हैं।"

कर्नल लारेंस की इन शुभकामनाओं से जंगबहादुर बहुत ही द्रवित हो गया। वह एकाएक समझ ही न पाया कि किस प्रकार आभार प्रदर्शित करे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय परम्परा के अनुसार उसने भूमि पर सिर छुआ कर कर्नल लारेंस को प्रणाम किया और चलते हुए बोला : "आपका आशीर्वाद मुझे बल प्रदान करेगा।"

उस काली रात के अँधेरे में जंगबहादुर कुछ ही क्षणों में आँखों से ओझल हो गया। कर्नल लारेंस अपने कमरे में टहलते हुए सोचने लगा : "जंगबहादुर कुछ कर गुज़रे, तभी भला है। यदि वह सफल हो गया, तो वह सदा के लिए मेरा है। यदि सफल न हुआ, तो भी गृह-कलह से नेपाल को कमज़ोर करने में तो सहायक होगा ही।"

नगाड़े अब भी बज रहे थे, जो किसी आदिवासी रौद्र नृत्य के साथ चल रहे विकट संगीत जैसे प्रतीत होते थे। टहलते हुए कर्नल की अँगुलियाँ नगाड़ों की आवाज़ के साथ इस प्रकार लयबद्ध हो कर ताल देने लगीं कि कोई देखता तो समझता कि शायद इस भीषण नृत्य और संगीत-समारोह का तटस्थ सूत्रधार यही है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

43

और काली रात

गगनसिंह की हत्या के समाचार से ही शहर में काफ़ी बेचैनी फैली थी, अब इन नगाड़ों के बजने की आवाज़ से तो उसने आतंक का सा रूप धारण कर लिया। सैनिक आ-आ कर 'कोट' के बाहर इकट्ठे होने लगे। कोट हनुमान ढोका दरबार का वह भाग है, जिसमें राज दरबार लगता है।

राज दरबार का यह स्थान सब ओर से घिरे एक विशाल प्रांगण के रूप में है। इस प्रांगण के सब ओर बरामदे और गलियारे हैं, जो महल के अन्य भागों को जाते हैं। प्रांगण के एक ओर एक मंज़िल ऊँचाई पर राजा और रानी के बैठने का स्थान है। वे एक झरोखे के सामने बैठते हैं और बारह तेरह फुट नीचे बैठे सभासदों को दिखाई पड़ सकते हैं। पर राजा और रानी के बैठने के स्थान के दायें-बायें दोनों ओर दूर तक लकड़ी की जालियाँ इस प्रकार बनी हैं कि उनके पीछे खड़े व्यक्ति तो नीचे आंगन में बैठे लोगों को देख सकते हैं, किन्तु वे स्वयं नीचे बैठे लोगों को दिखाई नहीं पड़ते। इन जालियों के पीछे राजा के अंगरक्षक सैनिक तथा गुप्तचर खड़े होते हैं और वे नीचे बैठे प्रत्येक सभासद की एक-एक गतिविधि पर नज़र रखते हैं।

हरकारों द्वारा संदेश पा कर एक-एक दो-दो करके भारदार कोट में आने लगे। कोट में प्रवेश करते ही प्रत्येक व्यक्ति का आचरण बहुत संयत और सतर्क हो जाता था, क्योंकि सबको पता था कि उनकी एक-एक गति और चेष्टा पर छिपी हुई नज़रें पड़ रही हैं। लोग दबी आवाज़ में एक दूसरे से बात करते। गगनसिंह की हत्या के सिवाय और कोई चर्चा ही नहीं थी। सब लोग एक ही बात कह रहे थे : "गगनसिंह बहुत भला आदमी था। उसका इस प्रकार मारा जाना बहुत बुरा हुआ।" पर उनमें से ऐसा कोई विरला ही होगा, जो मन में यह न सोच रहा हो कि गगनसिंह जैसे पापी को तो कभी

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का नरक पहुँच जाना चाहिए था। वे मुँह से जो कुछ कह रहे थे, वह केवल शिष्टाचार था। जो कुछ उनके मन में था, उसका कारण वह ईर्ष्या थी, जो गगनसिंह की लगातार पदोन्नतियों से उन्हें होती थी। भारदारों में गगनसिंह एक निकम्मे, किन्तु किस्मत के सिकन्दर के रूप में विख्यात या कुख्यात था।

कुछ देर में लगभग सभी भारदार कोट में आ उपस्थित हुए। फतहजंग चौतरिया आये। वह इस हत्या से सचमुच चिन्तित थे, क्योंकि वह किसी तरह यह अनुमान नहीं कर पा रहे थे कि इस हत्या के पीछे किसका हाथ हो सकता हैं। राणा अभिमानसिंह आये। वह मन ही मन इस हत्या से सन्तुष्ट थे, क्योंकि वह समझते थे कि गगनसिंह के सेनापति बनने से उनका हक छिन गया था। मातबरसिंह की मृत्यु के बाद राणा अभिमानसिंह का सेनापति बनना लगभग निश्चित ही हो गया था, पर गगनसिंह ने ठीक अन्तिम समय में न जाने क्या चाल चली कि वह सेनापति बन गया और राणा अभिमानसिंह देखते रह गये। राणा अभिमानसिंह के मन में रह रह कर यह अस्पष्ट-सी आशंका होती थी कि कहीं गगनसिंह की हत्या के लिए उन पर झूठा संदेह न किया जाने लगे।

जंगबहादुर अभी तक नहीं आया था। काज़ी होने के कारण आशा की जाती थी कि वह वहाँ अवश्य पहुँचे। उसकी अनुपस्थिति की ओर सभी का ध्यान जा रहा था।

जब दरबार पूरा भर गया, तब राजा और रानी के आने की सूचना दी गई। सम्मान के लिए लोग उठ कर खड़े हो गये। राजा और रानी एक मंजिल ऊँचाई पर रखे अपने आसनों पर आ विराजे। लगभग उसी समय जंगबहादुर भी आ पहुँचा। उसके साथ उसके छह भाई और एक पुत्र भी था। उन सब की कमर में तलवारें और खुखरियाँ बँधी हुई थीं। उस अँधेरी रात में, जलती हुई मशालों के प्रकाश में, सेनापति की मृत्यु से शोकाकुल राज सभा में इन आठ शस्त्रधारी व्यक्तियों का सामूहिक प्रवेश कुछ बेतुका सा लगा। उनकी तलवारों और खुखरियों को देख कर बहुत से भारदारों को ध्यान आया कि वे स्वयं तो जल्दबाज़ी में बिल्कुल निहत्थे ही कोट में चले आये थे। वैसे भी शोक सभा में शस्त्र ले कर जाने की आवश्यकता क्या थी ?

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी ने बिना किसी भूमिका के फतहजंग चौतरिया को संबोधित करते हुए पूछा : "काज़ी चौतरिया जी, मैं यह जानना चाहती हूँ कि सेनापति गगनसिंह की हत्या किसने की है ?" उसके शब्दों में उसके हृदय की भभक स्पष्ट झलक रही थी।

फतहजंग चौतरिया उठ कर खड़े हुए और विनयपूर्वक बोले : "सरकार इस मामले को मेरे ऊपर छोड़ दें। हत्यारे को पकड़ना मेरा ज़िम्मा रहा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ ही दिन में मैं उसे पकड़ कर सरकार के सामने पेश कर दूँगा। बच वह हरगिज़ नहीं सकेगा।"

"यह तो आपकी टालमटोल की बात है। यह आपकी आदत है। मैं हत्यारे का पता आज ही लगाना चाहती हूँ—अभी। आखिर वह कोई आकाश से तो आया नहीं था। इस हत्या के पीछे पूरा षड्यंत्र है। यह संभव नहीं कि षड्यंत्रकारियों में से कोई यहां मौजूद न हो। सब भारदार यहाँ हैं। अभी बताइये कि हत्या में किन लोगों का हाथ है?"

फतहजंग चौतरिया कोई ज्योतिषी नहीं थे कि तुरन्त ग्रह-नक्षत्रों की गणना करके हत्यारे का नाम पता बता देते। उसके पास तो हत्यारे की खोज करने का लौकिक साधन था—वह यह है कि संदिग्ध व्यक्तियों को पकड़ कर उन्हें डरा सता कर पूछताछ की जाये और सत्य का पता चलाया जाये। पर यदि वह ज्योतिषी होते, और ज्योतिष से हत्या के षड्यन्त्रकारियों का सही-सही नाम पता जान सकते, तो भी इसमें बड़ा संदेह है कि वह उन नामों को इस प्रकार एकाएक भरे दरबार में बताना पसन्द करते।

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह रानी के दाईं ओर इस प्रकार शान्त और निर्विकार बैठे थे कि जैसे उनका इस राजसभा से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। वह सो नहीं रहे थे, पर इस बात का भी कोई प्रकट चिन्ह नहीं था कि वह जाग रहे हैं।

जंगबहादुर का चेहरा उतरा हुआ था और उस पर घबराहट के चिन्ह स्पष्ट थे। वह जानबूझ कर ऐसी जगह बैठा था, जहाँ उसके मुख पर मशाल का प्रकाश न पड़े। सच तो यह है कि उस आवेश भरे वातावरण में किसी को दूसरे के चेहरे की ओर देखने और उसके भावों का अध्ययन करने की फ़ुरसत नहीं थी। हर एक के मन में यही भय था कि कहीं उस पर झूठा संदेह न किया जाने लगे। झूठा संदेह हो जाने का परिणाम भी वही होना था, जो सच्चे का होता।

फतहजंग चौतरिया ने रानी को शान्त करने की चेष्टा करते हुए कहा: "सरकार ने बिल्कुल ठीक कहा है। हत्या के पीछे षड्यंत्र ज़रूर है। अब या तो षड्यंत्रकारी स्वयं अपने मुंह से अपराध स्वीकार कर ले, तब तो मामला आसान हो जाये। पर यदि अपराधी स्वयं अपना दोष कबूल न करे, तो बिना पूरी जाँच-पड़ताल किये किसी की ओर यों ही उँगली थोड़े ही उठायी जा सकती है? अपराध बहुत बड़ा है सरकार। इसका दंड मृत्यु है—केवल मृत्यु।"

पर रानी शान्त होने के बजाय और अधिक उत्तेजित हो गई; बोली: "इसमें क्या शक है। हत्यारे का पता चल जाये, तो उसकी बोटी-बोटी नुंचवा

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दी जायेगी। उस पापी ने भगवान की पूजा करते हुए सेनापति की हत्या की है।''

जंगबहादुर ने अपने माथे पर हाथ फेरा। हाथ पसीने से गीला हो गया। उसने शरीर को हिलाया-डुलाया, जिससे उसकी कँपकँपी प्रकट दिखाई न पड़े। राजेन्द्रवीरविक्रमशाह सिंहासन पर बैठे-बैठे ही राज सभा से और भी दूर पहुँच गये प्रतीत हुए।

फतहजंग चौतरिया ने कहा : '' इसीलिए यह और भी आवश्यक हो जाता है सरकार, कि किसी निर्दोष व्यक्ति पर गलत संदेह न हो जाये। पर असली अपराधी के पकड़े जाने में भी देर न लगेगी। यह मेरा जिम्मा रहा। मैं वचन देता हूँ......''

पीछे से किसी ने दबी-सी आवाज में कहा : ''हत्या ब्रजकिशोर पांडे ने की है।''

आवेश के मारे रानी उठ कर खड़ी हो गई; बोली : ''ब्रजकिशोर पांडे ने ? पांडे कहाँ है ?''

ब्रजकिशोर वहीं थे। वह प्रतिष्ठित भारदार थे। वह तुरन्त उठ कर खड़े हो गये और विनयपूर्वक बोले : ''सरकार, मैं यह खड़ा हूँ। पर यह बिल्कुल झूठ है कि मैंने हत्या की है।'' उनका स्वर आवेश से भरा था।

उनके स्वर की दृढ़ता से रानी क्षण भर हिचकी। उसने पूछा : ''ब्रजकिशोर पांडे का नाम किसने लिया था ?''

पूरी सभा में सन्नाटा छा गया। कोई उठ कर खड़ा नहीं हुआ; किसी ने नहीं बताया कि पांडे का नाम किसने लिया था। धुआं छोड़ती हुई मशालों की लपटें टेढ़ी-मेढ़ी नाचती रहीं। कुछ क्षण प्रतीक्षा करने के बाद रानी ने खीझ कर फतहजंग चौतरिया से कहा : ''कैसे लोग हैं! इतना बड़ा आरोप लगाते हैं, पर सामने नहीं आते। जो बोला था, उसके आसपास बैठे लोगों को तो पता होगा कि पांडे का नाम किसने लिया था। पर कोई नहीं बताता। सबकी मिली भगत है।''

चौतरिया ने कहा : ''सरकार, यह किसी ने यों ही शत्रुता के कारण पांडे का नाम ले दिया है। इसमें सचाई कुछ नहीं है। यदि सचाई होती, तो नाम लगाने वाला उठ कर सामने आता। उसे डर किस बात का है ? हत्यारे का नाम बता कर तो वह दरबार की सेवा ही कर रहा है।''

''आप ठीक कहते हैं'' रानी ने कहा : ''पर बिल्कुल बिना बात पांडे का नाम नहीं लग सकता। कुछ न कुछ बात है अवश्य। और किसी का नाम क्यों नहीं लगा ? आरोप लगाने वाला शायद इसलिए सामने आने से डरता है कि कहीं पांडे लोग उससे और उसके सम्बन्धियों से बदला न लें।''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बोलते-बोलते रानी का क्रोध प्रचंड हो उठा। वह आवेश से चीखती हुई-सी बोली : "अवश्य व्रजकिशोर पांडे ने ही सेनापति की हत्या की है। मुझे पूरा विश्वास हो गया है। काज़ी राणा जी, व्रजकिशोर पांडे को पकड़ लो।"

राणा अभिमानसिंह मन ही मन कुछ घबराये हुए थे। उन्हें शंका हो रही थी कि यदि किसी ने झूठमूठ ही उनका नाम ले दिया, तो उनके लिए सफ़ाई देना भारी हो जायेगा। अपनी बला व्रजकिशोर पांडे के सिर जाती देख उन्हें कुछ राहत मालूम हुई। पर एक निर्दोष व्यक्ति को पकड़ते हुए उन्हें झिझक हुई। मार्गदर्शन के लिए उन्होंने फतहजंग चौतरिया की ओर देखा। पर चौतरिया उस समय रानी को शान्त करने की चेष्टा में थे, अतः उनका ध्यान अभिमानसिंह की ओर नहीं था। जब राणा अभिमानसिंह को चौतरिया से कोई सलाह न मिली, तब उन्होंने रानी की आज्ञा का पालन करना ही श्रेयस्कर समझा। आज्ञा पालन में विलम्ब या टालमटोल करने से स्वयं उन पर भी विपत्ति आने की आशंका थी। उन्होंने आगे बढ़ कर व्रजकिशोर पांडे को हथकड़ियाँ लगा दीं और उनकी कमर में एक जंज़ीर डाल कर जंज़ीर का दूसरा सिरा एक दरवाज़े की चौखट से बांध दिया।

फतहजंग चौतरिया ने रानी को शान्त करने का भरसक प्रयत्न किया, पर उसका कोई फल न निकला। अपने प्रेमी की निर्मम हत्या को देख सुन कर उसके हृदय में जो अन्धा क्रोध घुमड़ रहा था, अब उसे निकलने के लिए एक दिशा मिल गई थी और अब वह उस क्रोध को उतारने में किसी प्रकार की विघ्न बाधा सहन नहीं कर सकती थी। बन्दूक की गोली खाई हुई बाघिन यदि किसी प्रकार शिकारी तक पहुँच सके, तो वह उसका भुर्ता बना देती है। पर यदि वह शिकारी तक नहीं पहुँच पाती, तो जो भी जड़ या जंगम वस्तु उसके सामने पड़ जाती है, उसी पर वह अपना सारा क्रोध उतारती है। बहुत बार घायल बाघिन ऐसे क्रोध में किसी पेड़ या झाड़ी को ही बुरी तरह नोंचती उखाड़ती देखी गई है। ऐसे ही अन्धे क्रोध के आवेश में रानी राज्यलक्ष्मी देवी ने कहा : "हत्या अवश्य व्रजकिशोर पांडे ने ही की है। अपने पाप का दंड उसे भुगतना पड़ेगा।" यह कहते हुए वह उठ कर चली और ऊपरी मंज़िल से नीचे उतर कर वहाँ पहुँची, जहाँ अन्य सब भारदार बैठे थे। महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह उसी तरह अर्धनिद्रित सी दशा में बैठे रहे।

रानी के नीचे पहुँचते ही सब भारदार आदर से उठ खड़े हुए। रानी सीधी व्रजकिशोर पांडे की ओर बढ़ी। अब सबने देखा कि रानी की कमर में तलवार बँधी थी। उसने खटाक से म्यान में से चमकीली तलवार निकाली और बोली : "इस पापी को मैं स्वयं दंड दूँगी।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऐसा कभी किसी ने देखा-सुना नहीं था कि राजा या रानी अपराधी को स्वयं प्राणदंड दे। पर रानी तो शोक और क्रोध से उन्मत्त सी हो रही थी और अपने प्रेमी की हत्या का बदला ले कर किसी तरह अपने जी की जलन मिटाना चाहती थी। उचित-अनुचित का विवेक उसके मन से निकल चुका था। उसका बस चलता, तो वह व्रजकिशोर पांडे के प्राण ले कर ही सन्तुष्ट न होती, बल्कि सचमुच ही उसके शरीर की बोटी-बोटी अलग काट फेंकती।

पर उसका बस चला नहीं। बहुत से भारदार बीच में पड़ गये। उन्होंने विनयपूर्वक, किन्तु दृढ़ता के साथ यह कहते हुए रानी की राह रोक ली कि आपका अपने हाथ से अपराधी को दंड देना शोभा नहीं देता। यह काम वधिक का है। वह करेगा।

अधिकांश भारदारों का यह विचार था कि व्रजकिशोर पांडे निर्दोष है; कम से कम उसके दोषी होने का कोई भी प्रमाण सामने नहीं आया है। ऐसी दशा में उसे तुरत फुरत प्राणदण्ड दे देना घोर अन्याय होगा। इसलिए इस समय रानी के हाथों से उसकी रक्षा करना उन्हें अपना कर्तव्य प्रतीत हुआ। रानी व्रजकिशोर पांडे तक पहुंच ही न सकी।

व्रजकिशोर पांडे ने महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह को सम्बोधित करके कहा : "महाराजाधिराज, मेरे साथ अन्याय हो रहा है। मैं भगवान पशुपतिनाथ को साक्षी करके शपथपूर्वक कहता हूँ कि सेनापति की हत्या से मेरा किसी प्रकार का कोई सम्वन्ध नहीं है। मैं विल्कुल निर्दोष हूँ। मुझे मुक्त किया जाये।"

अब महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह सचेत हुए। उन्हें यह पता था कि गगनसिंह की हत्या और चाहे जिसने की हो, किन्तु व्रजकिशोर पांडे ने नहीं की। अतः उन्होंने ऐसा उत्तर दिया, जिससे रानी की अवहेलना भी प्रतीत न हो और इस समय मामला टल भी जाये। उन्होंने कहा : "राणा जी, व्रजकिशोर पांडे के अपराध का निर्णय कल राजदरबार में होगा। इस समय इन्हें छोड़ दीजिये। कल यह स्वयं राजदरबार में उपस्थित होंगे। अब सब लोग अपने घर जायें।"

फतहजंग चौतरिया ऊपर छज्जे पर महाराज के पास पहुँचे। उन्होंने महाराज को भी झरोखे से हटा कर जाली के पीछे बुला लिया और धीरे से कहा : "सरकार, आज लक्षण कुछ बुरे दीख रहे हैं। इस समय कोट में सभी भारदार निहत्थे हैं, केवल जंगबहादुर और उसके भाई पूरी तरह शस्त्रसज्जित हैं। सेना ;र जो भी कुछ प्रभाव है, वह महारानी का है या जंगबहादुर का। स्थिति किसी भी क्षण बेकाबू हो सकती है।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज का ध्यान इस बात की ओर गया ही नहीं था। एकाएक उनके मन में यह विचार कौंध गया कि यदि अवसरवादी जंगबहादुर हत्या के षड्-यंत्र का भंडा फोड़ दे, तो ? तब उन्हें स्वयं भी तो कहीं शरण की आवश्यकता हो सकती है। इस समय सारी शक्ति रानी के ही हाथ में है। उन्होंने अशक्त रोगी की तरह पूछा : "तो अब क्या किया जाये ?"

"कहीं से सहायता प्राप्त हो सके, तो भला है" चौतरिया ने कहा।

"सहायता कहाँ से मिले, यही तो समस्या है।"

"अंग्रेज़ रैज़ीडैंट से मिल कर कोशिश की जाये ?"

"यह ठीक है। कर्नल लारैंस बहुत भला आदमी है। आशा है कि उससे काम बन जायेगा" महाराज ने कहा।

"न तो कर्नल लारैंस भला आदमी है, और न उससे काम बनने की ही कोई आशा है। फिर भी इस समय कोई अन्य उपाय है नहीं। आप अनुमति दें, तो मैं उसके पास जाऊँ।"

"मैं भी साथ ही चलता हूँ। यहां का वायुमण्डल बहुत घुटा-घुटा सा हो रहा है।" महाराज ने कहा। महाराज तथा फतहजंग चौतरिया एक गुप्त द्वार से चुपचाप राजमहल से बाहर निकल गये।

बाहर के शान्त स्वच्छ वायुमण्डल की तुलना में राजमहल का वातावरण सचमुच ही बहुत घुटा हुआ था, यह बाहर आकर मालूम हुआ। चाँदनी नहीं थी; तारे नहीं थे; अँधेरा था; फिर भी क्रोधोन्मत्त रानी और सशस्त्र जंग-बहादुर और उसके भाइयों की उपस्थिति के मुकाबले में यह अन्धेरा बहुत भला और शान्तिप्रद प्रतीत हो रहा था। रैज़ीडैंट के आवास तक जाने के लिए महाराज और चौतरिया दोनों घोड़ों पर सवार हो गये।

"दरबार में जंगबहादुर को बुलाया गया था, उसके भाइयों को नहीं। फिर भी वह अपने छहों भाइयों को लेकर आया। न केवल वह स्वयं सशस्त्र था, बल्कि उसके सब भाई भी तलवारें और खुखरियाँ बाँधे हुए थे। इससे आप क्या अनुभव करते हैं चौतरिया जी ?" महाराज ने पूछा।

"दाल में कुछ काला है।" चौतरिया ने कहा। "जंगबहादुर को अपने लिए संकट अनुभव हुआ होगा, तभी उसने इतनी व्यवस्था की। संकट का कारण तभी हो सकता है, जबकि उसी ने गगनसिंह की हत्या की हो। इसके सिवाय आज की सभा में उसके ही नहीं, किसी के लिए भी संकट का कोई कारण नहीं था।"

महाराज को बड़ा आश्चर्य हुआ कि चौतरिया किस तरह एकदम सीधा सत्य तक पहुंच गया। पर वह यह नहीं चाहते थे कि किसी को भी यह पता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चले कि गगनसिंह की हत्या के विषय में सचाई उन्हें मालूम है, अतः बोले : "मुझे भी यही लगता है कि गगनसिंह की हत्या में उसका हाथ अवश्य है।"

"जंगबहादुर अच्छा आदमी नहीं है। वह मातबरसिंह का भानजा अवश्य है, पर मातबरसिंह का एक भी गुण उसमें नहीं है। आपने उसे काज़ी बनाया तो है, पर यह काजी बनाना बहुत भारी पड़ेगा।"

"वह मातबरसिंह का भानजा है। मातबरसिंह का लिहाज करके उसे काज़ी बनाया था।"

"मैंने सुना है कि कहीं शराब के नशे में चूर हो कर वह शेखी बघार रहा था कि अपने मामा का खून मैंने खुद किया है। पता नहीं, नशे में कही गई इस बात में कितनी सचाई है।"

"मातबरसिंह का खून उसने किया था ?" महाराज ने चौंक कर पूछा।

"उसने खुद कहा है ? ज़रूर किया होगा !"

"आज गगनसिंह के हत्यारे का पता चलाने के लिए महारानी कितनी बेचैन हैं ? मातबरसिंह की हत्या का रहस्य खोलने के लिए उन्हें तनिक भी अधीरता नहीं थी। अब तक मैं समझता था कि उस गुणी पुरुष की हत्या अंग्रेज़ रैज़ीडैंट के इशारे पर हुई थी। पर आज मुझे संदेह हो रहा है कि उस हत्या में महारानी का भी हाथ रहा हो सकता है।"

"पर रानी को मातबरसिंह से क्या शिकायत हो सकती थी ?" महाराज ने पूछा। "मातबरसिंह को प्रधानमन्त्री बनाने के लिए तो आग्रह ही रानी ने किया था।"

"यह मैं नहीं जानता। पर इतना मुझे मालूम है कि अपने अन्तिम दिनों में वह महारानी से मिलने से कतराने लगे थे। कुछ बात थी, जिससे वह महारानी से डरते थे।"

महाराज क्षण भर सोचते रहे कि ऐसी कौन-सी बात हो सकती है, जिससे रानी मातबरसिंह से रुष्ट हो गई हो। फिर बोले : "कुछ समय पहले जंगबहादुर ने मुझे बताया था कि रानी सुरेन्द्र और उपेन्द्र से बहुत रुष्ट है। वह चाहती है कि रणेन्द्र राजसिंहासन पर बैठे। इसलिए वह उन्हें रास्ते से हटा देना चाहती है। इस काम में उसने जंगबहादुर से सहायता माँगी थी। क्या यह सम्भव नहीं कि पहले ऐसी सहायता मातबरसिंह से माँगी गई हो ?"

"मातबरसिंह जैसा आदमी ऐसा काम हरगिज़ नहीं कर सकता था। यदि महारानी ने यह बात उनसे कही होगी, तो इसे ले कर दोनों में अवश्य मन-मुटाव हुआ होगा। इसका मतलब, जंगबहादुर राजनीति में गहरा घुस गया है। वह बड़ा दाँव खेल रहा है।" चौतरिया ने चिन्तन सा करते हुए कहा। "यदि वह जीत गया, तो अन्य सब खिलाड़ी हार जायेंगे।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अब वे दोनों अंग्रेज़ रैज़ीडैंट कर्नल लारैंस की कोठी पर आ पहुंचे थे। वे घोड़ों से उतरे। फाटक पर सन्तरी खड़ा था। इतनी रात गये, इन दो व्यक्तियों को घोड़ों से उतरते देख कर वह कुछ चौंका और सतर्क होकर तन कर खड़ा हो गया। फतहजंग चौतरिया ने आगे बढ़ कर सन्तरी से कहा : "रैज़ीडैंट साहब से मिलना है।"

"क्या काम है ?"

"काम इस चिट्ठी में लिख दिया है। यह चिट्ठी ले जाकर साहब को दे दो।"

सन्तरी ने आवाज़ देकर एक और सन्तरी को बुलाया और साहब के पास चिट्ठी ले जाने को कहा। इस दूसरे सन्तरी ने सुनते ही कहा : "इस समय साहब आराम कर रहे हैं। अब चिट्ठी नहीं जायेगी।"

फतहजंग चौतरिया ने कहा : "मैं काज़ी फतहजंग चौतरिया हूं। काम बहुत ज़रूरी है। तुम चिट्ठी साहब के पास पहुंचा दो। वह नाराज़ नहीं होंगे।"

सन्तरी कुछ क्षण असमंजस में पड़ा रहा। उसके बाद वह चिट्ठी लेकर कोठी में चला गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

44

बेलिहाज़

कर्नल लारेंस अभी तक सोया नहीं था। साधारणतया वह इस समय तक सो जाता था, पर आज गगनसिंह की हत्या के समाचार से उसका चित्त कुछ अशान्त था। फिर, उसके बाद नगाड़ों की आवाज़ और राजसभा बुलाये जाने की खबर ने उसके मन में और भी उत्सुकता जगा दी थी। वह समझ रहा था कि नेपाल के शासन में कुछ भारी उथल-पुथल होने वाली है। राजसभा में क्या कुछ हुआ, यह जानने की उसे बेकली थी। उसने अपने दो गुप्तचर भी इसका पता चलाने के लिए भेज रखे थे। उसका अनुमान था कि स्वयं जंगबहादुर भी आकर उसे सब कुछ बता जायेगा। इस कारण उसे नींद नहीं आई थी। इस समय वह लेटा हुआ कोई पुस्तक पढ़ रहा था।

जब संतरी ने उसके दरवाजे को हल्के से थपथपाया, तब उसने पुस्तक एक ओर रख दी और प्रभुत्व भरे स्वर में कहा : "आओ !" उसका अनुमान था कि शायद उसका भेजा हुआ गुप्तचर कोई खबर लाया है।

सन्तरी ने विनयपूर्वक फतहजंग चौतरिया की दी हुई चिट्ठी पलंग के पास रखी छोटी-सी मेज़ पर रख दी। कर्नल लारेंस ने उठा कर उसे पढ़ा। दो पंक्तियों की उस छोटी-सी चिट्ठी को पढ़ते ही वह उठ कर बैठ गया। फिर पलंग से उतर कर खड़ा हो गया। पहले पहल तो लगा कि वह शायद तुरन्त चलता हुआ फाटक तक जायेगा, पर ज्यों-ज्यों क्षण बीतने लगे, त्यों-त्यों उसका भाव बदलने लगा। क्रमश: वह शान्त होता गया और एक मिनट बाद फिर पलंग पर बैठ गया। उस चिट्ठी को प्रदीप के प्रकाश में उसने फिर पढ़ा :

"स्वयं नेपाल नरेश और मैं आपसे आवश्यक कार्य से मिलना चाहते हैं।

—फतहजंग चौतरिया काज़ी"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पत्र को पहली बार पढ़ते ही कर्नल लारेंस में शिष्टाचार की सामान्य प्रवृत्ति जाग्रत हुई थी। नेपाल-नरेश और काज़ी फतहजंग उससे मिलने उसकी कोठी पर आये हैं; उसे तुरन्त स्वयं जाकर आदरपूर्वक उनका स्वागत करना चाहिए। वह उन दोनों से भलीभाँति परिचित था और दोनों को इस रूप में जानता था कि वे बहुत ही भले व्यक्ति हैं।

पर कर्नल लारेंस असली अंग्रेज़ बच्चा था। उसने अपनी भलमनसाहत की पशुवृत्ति पर बहुत जल्दी काबू पा लिया और मानव-सुलभ कुटिलता और हृदयहीनता के साथ सोचने लगा कि आखिर ये दो महापुरुष इस आधी अँधेरी रात में मुझसे मिलने क्यों आये हैं? मैं इतने बरसों से इसी नगरी में रह रहा हूँ। पर पहले तो कभी इन्होंने मेरी इस कुटिया को अपनी चरणधूलि से पवित्र नहीं किया। अवश्य ही ये मुझे कोई मुँहमाँगा वर देने नहीं आये हैं। आवश्यक कार्य का अर्थ है उनके लिए आवश्यक। शायद मेरे लिए उससे दूर रहना ही आवश्यक हो।···पर यह आवश्यक कार्य क्या हो सकता है? राज-सभा में कुछ उत्पात हो गया है क्या? पर उसमें मैं क्या करूँगा?

एक बार उसके मन में आया कि इन दोनों से मिल कर कुछ खबर पता की जाये। आखिर राजसभा में हुआ क्या है? पर उनसे मिलने पर उनकी बात सुननी पड़ेगी। मालूम नहीं वे क्या चाहते हैं? अधिक संभव यही है कि उनके अनुरोध को अस्वीकार करके बुरा बनना पड़ेगा। इससे अच्छा यह है कि उनसे मिला ही न जाये। पर इसे वे बहुत बुरा मानेंगे।···बुरा तो वे हर हालत में मानेंगे। मिलने के बाद यदि उनकी बात न मानी, तो क्या उन्हें कम बुरा लगेगा?···उनसे मिलने से खबर पता चल जाती! खबर जानने के लिए मैं इतनी कीमत नहीं दे सकता।

इतने ये सब विचार कर्नल लारेंस के मन में विद्युद्वेग से कुछ क्षण में ही गुज़र गये। यदि कोई देखने और समझने वाला होता, तो वह कर्नल के मुख को देख कर इन्हें जान भी सकता, पर वह संतरी बेचारा कुछ न जान सका। वह चुपचाप खड़ा कर्नल की ओर देखता रहा। उसे इतना लगा कि इस चिट्ठी को पाकर कर्नल साहब कुछ पसोपेश में पड़ गये हैं।

पर कर्नल लारेंस देर तक दुविधा में नहीं रहा। बन्दर की तरह अंग्रेज़ भी अवसर को पहचानने में बहुत निपुण होता है। जहाँ उसका हित हो, वहाँ वह चूकता नहीं; किसी तरह का कोई लिहाज़ नहीं करता। कोई दो मिनट तक विचारमग्न रहने के बाद कर्नल ने संतरी से कहा: "उनसे कहो कि विदेश में हम लोग सूर्यास्त के बाद बाहर के लोगों से नहीं मिलते। यह हमारा पक्का नियम है। आप लोग कल प्रातःकाल दर्शन दें। जो सेवा हो सकेगी, हम अवश्य करेंगे।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संतरी ने सलाम ठोका ग्रौर मुड़ कर चल दिया। कर्नल लारैंस ने उठ कर दरवाज़ा बन्द करते हुए कहा: "अब उनका ग्रौर कोई संदेश मत लाना।"

"जी, साहब" संतरी ने मुड़ कर कहा। कुछ क्षण वह रुक कर प्रतीक्षा करता रहा। जब कर्नल का दरवाज़ा बन्द हो गया, तब वह फिर फाटक की ग्रोर चला।

कर्नल लारैंस का मौखिक सन्देश पाकर फतहजंग चौतरिया को ग्रौर उससे भी ग्रधिक महाराज को बड़ी ग्लानि हुई। चौतरिया को यह ग्राशा तो बिल्कुल नहीं थी कि रैज़ीडैंट उन्हें सहायता देने को तैयार हो जायेगा, पर यह ग्राशंका उनके मन में बिल्कुल नहीं थी कि वह मिलने तक से इन्कार कर देगा। सैकड़ों ग्रवसरों पर वह चौतरिया से मिला था। वह सदा ही हँसमुख, मिलनसार ग्रौर भद्र व्यक्ति प्रतीत हुग्रा था। उसका यह व्यवहार देख कर उन्हें मन ही मन धक्का सा लगा।

महाराज कुछ कम दुनियाँदार थे। वह ग्रंग्रेज़ रैज़ीडैंट को कम पहचानते थे। उनके प्रति वह विनय भी बहुत ग्रधिक प्रदर्शित करता था। इसलिए वह उसे बहुत भला ग्रादमी समझते थे। ग्रब उसी ग्रनुपात में उनकी राय उसके विषय में ग्रौर खराब हो गई। संतरियों से कुछ कहना-सुनना व्यर्थ था। फतहजंग चौतरिया को इस बात के लिए कुछ लज्जा ग्रवश्य ग्रनुभव हो रही थी कि उन्होंने संतरी को ग्रपना परिचय दिया ग्रौर ग्रावश्यक कार्य होने का कारण भी बताया, फिर भी रैज़ीडैंट ने उन्हें मिलने योग्य नहीं समझा, इससे संतरी उनके बारे में क्या सोचेगा? वह कुछ भी सोचे, ग्रब इस विषय में कुछ किया नहीं जा सकता था। बड़े धीरज से फतहजंग चौतरिया ने संतरियों का धन्यवाद किया, उसके बाद वह ग्रौर महाराज घोड़ों पर सवार हो कर वापस लौट पड़े।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

45

रानी का क्रोधोन्माद

जब महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम शाह ने राणा अभिमानसिंह से कहा कि ब्रजकिशोर पांडे को छोड़ दीजिये; इनका विचार कल दरबार में होगा, तब उसने पांडे की जंज़ीर और हथकड़ियाँ खोल दीं। उस समय रानी राज्यलक्ष्मी देवी अत्यन्त क्रुद्ध होते हुए भी चुप रही। यद्यपि महाराज ने कह दिया था कि सब लोग अपने घर जायें, फिर भी वातावरण ऐसा बना हुआ था कि कोई गया ही नहीं। रानी आँगन में ही भारदारों के बीच में खड़ी थी। उसके रहते कोई जाता कैसे ? जब महाराज चौतरिया के साथ महल से बाहर चले गये, तब रानी को फिर हुक्म चलाने का मौका मिला। उसने राणा अभिमान-सिंह से जवाब तलब किया : "आपने पांडे को क्यों छोड़ा ?"

राणा ने विनयपूर्वक कहा : "सरकार, महाराजाधिराज का हुक्म था।"

"पांडे को पकड़ने का हुक्म मैंने दिया था।"

"जी सरकार।"

"फिर आपने उसे मेरे हुक्म के बिना क्यों छोड़ा ? मेरे भी मुँह में जीभ थी। आप मेरे हुक्म की प्रतीक्षा कर सकते थे। आपको इतनी जल्दी क्या पड़ी थी ? ज़रूर आपकी भी इसमें मिली भगत है !"

राणा अभिमानसिंह ने देखा कि रानी बिना बात का बतंगड़ बनाये दे रही हैं। क्रोध तो उन्हें बहुत आया, पर क्रोध प्रकट करने का वह मौका नहीं था। अतः धैर्य और विनय के साथ उन्होंने कहा : "सरकार, आपने मुझे हुक्म दिया कि ब्रजकिशोर पांडे को पकड़ लो; मैंने पकड़ लिया। उसके बाद आपके सामने महाराज ने मुझे हुक्म दिया कि पांडे को छोड़ दो; मैंने छोड़ दिया। आपने यदि उस समय कहा होता कि मत छोड़ो और मैं छोड़ देता, तो मैं दोषी होता। पर आपने तो कुछ कहा ही नहीं।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह सब बहानेबाज़ी है । मैंने आपको छोड़ने को कहा था ? कह दीजिये कि मैंने कहा था ?" रानी ने चारों ओर दृष्टि दौड़ा कर जंगबहादुर को ढूँढा, पर वह कहीं दिखाई न पड़ा ।

कई अन्य भारदार बीच में पड़ गये । उन्होंने भी रानी को शान्त होने के लिए कहा : "सरकार, इसमें राणा जी का दोष नहीं है । उनके लिए तो आपका और महाराज का, दोनों का ही आदेश समान रूप से मान्य है । यदि वह महाराज का आदेश न मानते, तो भी तो अपराध होता ।"

"महाराज का ही आदेश मान्य है, मेरा आदेश आदेश ही नहीं है । आप सब लोग भी राणा का ही पक्ष ले रहे हैं । लेंगे क्यों नहीं ? सबकी मिली भगत है । मुझे पता है कि सेनापति की उन्नति से सब मन ही मन उससे जलते थे । इसीलिए उसकी हत्या की गई है । यह एक आदमी का काम नहीं है । इसके पीछे बहुत लोगों का हाथ है । पर मैं सबका पता लगा लूँगी । एक को भी नहीं छोड़ूँगी ।" इस प्रकार क्रोध और शोक के प्रबल उन्माद में आ कर रानी अनर्गल-सा प्रलाप करने लगी । उसके उस विक्षिप्त रूप को देख कर और उसकी उस क्रुद्ध विकृत वाणी को सुनकर सब भारदार स्तम्भित से रह गये ।

रानी फिर कहने लगी : "मुझे पता है, मेरी पीठ पीछे क्या कहा जाता है । ईर्ष्यालु लोग जो झूठे आरोप लगाते फिरते हैं, उनका भी मुझे पता है । मैं सब कुछ धीरज से सुनती और सहती रही हूं । पर इस तरह हत्याएँ होने लगें, यह किसी तरह नहीं सहा जा सकता । मैं हत्यारे को पकड़ने के लिए कहती हूं, तो उसे छोड़ दिया जाता है । इस तरह शासन कैसे चल सकता है ?"

राणा अभिमानसिंह ने देखा कि रानी पर क्रोध और शोक का भूत सवार हो गया है । वह क्या कुछ कह और कर बैठेगी, कुछ कहा नहीं जा सकता । उन्होंने यह भी देखा कि उनकी तरह अन्य सभी भारदार निहत्थे हैं । अतः इस समय कल्याण इसी बात में है कि किसी तरह राजमहल से बाहर जा कर अपने हथियार और सैनिकों को यहाँ ले आया जाये । अतः दरबारोचित शिष्टाचार प्रदर्शित करते हुए उन्होंने रानी से जाने की अनुमति माँगी : "सरकार की अनुमति हो, तो मैं पाँच मिनट की मोहलत चाहता हूं । असली अपराधी को ले कर अभी हाज़िर होता हूं ।"

उन्हें पता था कि रानी इस समय उन्हें जाने की अनुमति नहीं देगी । उसकी उन्हें परवाह भी नहीं थी । उन्होंने शिष्टाचार की खानापूरी की और रानी के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना मुड़े और फाटक की ओर चल पड़े । रानी उन्हें इस तरह जाते देख कर क्रोध के मारे पागल हो गई, पर वह समझ नहीं पा रही थी कि क्या करे । तभी उसे जंगबहादुर दिखाई पड़ गया ।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वह फाटक की ओर से ही आ रहा था। उसे देखते ही रानी ने चिल्ला कर कहा : "काजी जंगबहादुर जी, ब्रजकिशोर पांडे ने सेनापति की हत्या की है। मैंने उसे पकड़ने को कहा, पर राणा अभिमानसिंह ने उसे छोड़ दिया है। इस हत्या में अवश्य ही अभिमानसिंह का भी हाथ है। इन दोनों को यहीं मार डालो। मैं कहती हूं कि अभी मार डालो।"

सब भारदार इस विचित्र रोमांचकारी दृश्य से सम्मोहित से खड़े रहे। उन्होंने अपने कानों से सुना कि रानी काज़ी जंगबहादुर को हुक्म दे रही है कि वह ब्रजकिशोर पांडे और राणा अभिमानसिंह को तुरन्त मार डाले। वे शायद इसका अर्थ पूरी तरह हृदयंगम ही न कर सके।

पर जंगबहादुर ने इसका अर्थ पूरी तरह समझा। जो रानी के मन में नहीं था, वह भी उसने समझ लिया। यदि उसकी जगह अन्य कोई सदाशयी व्यक्ति होता, तो वह रानी के इस आदेश को सुन कर भी सोचता कि क्रोध और शोक से विक्षिप्त रानी मन की अस्वस्थ दशा में एक ऐसी बात कह रही है, जो वस्तुः उसके मन की बात नहीं है। बाद में इसके लिए वह पश्चात्ताप करेगी। अतः इस आदेश को टाल जाना ही भला है। पर जगबाहदुर ने इससे ठीक उल्टी बात सोची। राणा अभिमानसिंह राज्य के प्रमुख स्तम्भों में से एक हैं। गगनसिंह उसकी उन्नति के मार्ग से हट ही चुका है। शायद विधाता ने आज का ही दिन उसके सब प्रतिद्वन्द्वियों को समाप्त कर देने के लिए चुना है। नहीं तो ऐसे प्रभावशाली भारदार को मार डालने के लिए राजा या रानी का आदेश कहाँ मिलता है ? दरबार के आदेश के बिना ऐसे आदमी पर हाथ उठाने के बाद अपना सिर सुरक्षित नहीं रहता। अतः जब सौभाग्य से रानी ने ऐसा आदेश दे ही दिया है, तब उसका लाभ उठाने से चूकना नहीं चाहिए। उसने दूर से ही अपने भाई रणोद्दीपसिंह को हाथ से इशारा किया कि राणा अभिमानसिंह का काम तमाम कर दो।

राणा अभिमान इतनी देर में तीस-पैंतीस क़दम दूर निकल गये थे और भारदारों के जमघट से दूर बिल्कुल अकेले थे। मशालों के मद्धिम प्रकाश में वह क्रमशः विलीन होते जाते प्रेत जैसे दिखाई पड़ रहे थे। रणोद्दीपसिंह ने अपने बड़े भाई जंगबहादुर के इशारे को देखा और सही सही समझ लिया। जैसे शिकारी कुत्ता गले की जंज़ीर खोल दिये जाने के बाद अधीरता और उत्साह के साथ हिरनों के पीछे दौड़ पड़ता है, उसी प्रकार ठिगना और बलिष्ठ रणोद्दीपसिंह अपनी खुखरी निकाल कर राणा अभिमानसिंह के पीछे दौड़ पड़ा। उसे इस प्रकार दौड़ते देख कर अनेक भारदार उसे रोकने के लिए चिल्ला उठे : "यह क्या करते हो ? पागल हुए हो ? खबरदार ! रुको ! रुको !"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रणोद्दीपसिंह ने इस कोलाहल की रत्ती भर परवाह नहीं की। वह अर्जुन के तीर की तरह सीधा अपने लक्ष्य की ओर दौड़ा चला गया। भारदारों का वह सम्मिलित कोलाहल राणा अभिमानसिंह ने भी सुना, पर उन्होंने मुड़ कर उस ओर देखना इसलिए उचित नहीं समझा, क्योंकि उस ओर रानी थी। मुड़ कर देखने पर वह न जाने और क्या आदेश दे बैठे ! उनके विचार से सुरक्षा का एक मात्र उपाय जैसे भी हो, जल्दी से जल्दी राजमहल से बाहर निकल जाना था। इसलिए वह बिना मुड़े, बिना इधर-उधर देखे, तेज़ किन्तु बँधी चाल से आगे बढ़े जा रहे थे। रानी ने जंगबहादुर को जो आदेश दिया था, वह उन्होंने सुना था, किन्तु जंगबहादुर ने अपने भाई को जो इशारा किया था, वह उन्होंने नहीं देखा था और उन्हें यह पता नहीं था कि रणोद्दीपसिंह काल बन कर उनके पीछे दौड़ा आ रहा है।

जब रणोद्दीपसिंह उनके पास पहुंच गया, तब उन्होंने उसके दौड़ते पैरों की आहट सुनी। तब भी मुड़ कर देखने के बजाय उन्होंने अपनी चाल और तेज़ करके आगे बढ़ जाना ही श्रेयस्कर समझा। यदि उन्हें पता होता कि उनके पीछे आने वाला पुरुष खुखरी लिये है, तो शायद वह मुड़ कर उससे लड़ना पसन्द करते। पर उन्होंने सोचा कि वह उन्हें वापस बुलाने के लिए आता होगा।

राणा अभिमान की इस ग़लतफहमी से रणोद्दीपसिंह को बहुत बढ़िया अवसर मिल गया। उसने पीछे से पहुँच कर भारी खुखरी का एक ज़ोरदार वार राणा अभिमान के दायें कन्धे पर किया। सभी नेपाली खुखरी चलाने का बढ़िया अभ्यास करते हैं। खुखरी की एक ही चोट में बड़े भैंसे की मोटी गर्दन को काट कर धड़ से बिल्कुल अलग कर देना खुखरी चलाने की कुशलता का प्रमाण समझा जाता है। रणोद्दीपसिंह इस विद्या में खूब प्रवीण था। भरपूर आवेश से चलाई गई उसकी खुखरी ने राणा अभिमानसिंह को एक पल में कन्धे से ले कर पेड़ तक चीर दिया और उनका देह लगभग बीच में से दो टुकड़े हो कर ज़मीन पर गिरा।

अपनी आँखों के सामने राणा अभिमान की इस बर्बरतापूर्ण हत्या को को देख कर सभी भारदार क्रुद्ध हो उठे। उनमें से कई रणोद्दीपसिंह को पकड़ने के लिए झपटे। किसी ने कहा : ''यह पागल हो गया है। इसे पागलखाने भेजो।'' एक ने चिल्ला कर कहा : ''यह जंगबहादुर की बदमाशी है।'' एक और ने कहा : ''ऐसी गुंडागर्दी की सज़ा हाथोंहाथ मिलनी चाहिए।'' इसी तरह के कितने ही क्रुद्ध उद्गारों से सारा कोट गूँज उठा।

किन्तु रणोद्दीपसिंह पर तो रक्त का उन्माद चढ़ गया था। इस क्रोध-भरे कोलाहल से उसे आशंका हुई कि ये लोग उसे मार डालेंगे। पर घबराने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के बजाय वह हताश व्यक्ति के से साहस से अपनी रक्षा के लिए तत्पर हो गया और जो भी कोई उसे पकड़ने के लिए उसके पास पहुँचा, उसी पर फुर्ती से खुखरी का वार करने लगा। जंगबहादुर ने भी तलवार निकाल ली और चिल्ला कर बोला : "खबरदार, जो किसी ने मुझे हाथ लगाया। मैंने और रणोद्दीपसिंह ने महारानी के हुक्म का पालन किया है। और भी जो हुक्म हमें मिलेगा, उसका हम पालन करेंगे।"

इसके बाद भी दो-चार भारदारों ने उन दोनों को पकड़ने और उनसे हथियार छीन लेने की चेष्टा की, पर जंगबहादुर और रणोद्दीपसिंह ने तलवार चला कर उन्हें घायल कर दिया और किसी को अपने पास न फटकने दिया।

रानी राज्यलक्ष्मी देवी ने अशान्ति बढ़ती देखी, तो वह फिर ऊपर छज्जे पर चली गई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

46

असमर्थ महाराज

जब फतहजंग चौतरिया और महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम रैज़ीडैंट की कोठी से कुछ दूर निकल आये, तब महाराज ने कहा : "मैं तो कर्नल लारैन्स को बहुत भला आदमी समझता था — भद्रता और विनय का अवतार। यदि मुझे पता होता कि उसका यह भी एक रूप है, तो मैं यहाँ न आता।"

"मुझे उसके इस रूप का अनुमान था। पर अन्य कोई उपाय था भी तो नहीं।"

"अब क्या किया जाये ?"

"पहले तो चल कर यह देखें कि कोट में क्या कुछ हो रहा है। जब हम वहाँ से चले थे, तब लक्षण कुछ अच्छे नहीं थे। पता नहीं, इतनी देर में वहाँ क्या हुआ हो ?"

"कहीं से कुछ सैनिक नहीं जुटाये जा सकते ?"

"इस काम के लिए राणा अभिमानसिंह को भेजना उचित होगा। उनके अधीन सेना की एक बड़ी टुकडी है। इस समय तो कोट मे हमारी उपस्थिति ही काफ़ी लाभकारी रहेगी।"

"यदि किसी तरह आज का काम शान्ति से निपट जाये, तो मेरा विचार हैं कि इस कर्नल लारैंस से पिंड छुड़ाया जाये।"

"इससे पिंड छुड़ाना ही तो आसान नहीं है। भीमसेन थापा अंग्रेज़ रैज़ीडैंट से पिंड छुड़ना चाहते थे; महारानी साम्राज्यलक्ष्मी देवी उससे पिंड छुड़ाना चाहती थीं; मातबरसिंह उससे पिंड छुड़ाना चाहते थे; पर उनमें कोई भी सफल नहीं हो सका। अंग्रेज़ों का भाग्य नक्षत्र प्रबल है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन तीनों नामों के उल्लेख से महाराज का मन कुछ उदास हो गया। भीमसेन थापा और मातबरसिंह पर जो बीती, उसका ज्ञान उन्हें था। यह ठीक है कि उनकी मृत्यु के षड्यंत्रों में उनका हाथ नहीं था, पर यदि वह चाहते, तो उन षड्यंत्रों को विफल कर सकते थे। पर उन्होंने नहीं चाहा। रानी साम्राज्यलक्ष्मी की हत्या के षड्यंत्र का उन्हें पता नहीं था। इसलिए उस विषय में वह चाह कर भी कुछ नहीं कर सकते थे। रानी की मृत्यु से उन्हें बहुत दुःख हुआ था। पर आज तक उन्हें इन तीनों हत्याओं में कोई एक सूत्र दिखाई नहीं पड़ा था। अब जब फतहजंग चौतरिया ने कहा कि ये तीनों ही अंग्रेज़ रैज़ीडैंट के विरोधी थे और उसे कांठमांडौ से हटाने के लिए प्रयत्नशील थे, तब महाराज को लगा कि जैसे वह अनजाने ही अंग्रेज़ रैज़ीडैंट के सहायक बनते रहे हैं ; उसकी कुटिल योजनाओं को सफल बनाते रहे हैं। यह सोच कर उनका मन ग्लानि और खीझ से भर उठा।

चौतरिया ने कहा : "मातबरसिंह कहा करते थे कि जब तक अंग्रेज़ भारत में जमे हैं, तब तक हम पल भर भी चैन से नहीं रह सकेंगे। बड़ी क्रूर और बेईमान जाति है यह।"

"पर मौका पड़ने पर भले और भोले कितने बन जाते हैं ?"

"इनकी गोरी चमड़ी और इनके दिखावटी शिष्टाचार ने ही तो इन्हें सफलता दिलाई है। नहीं तो हज़ारों मील दूर जा कर दूसरे देशों में विजय प्राप्त कर सकना क्या इनके लिए संभव हो सकता था ? बल इनमें नहीं ; बुद्धि इनमें नहीं; चरित्र इनमें नहीं। इनकी विजय के दो ही कारण हैं—गोरी चमड़ी और छल कपट।"

महाराज ने मन ही मन निश्चय किया कि अंग्रेज़ों के प्रभुत्व को समाप्त करने के लिए उनसे जो भी कुछ बन पड़ेगा, वह अवश्य करेंगे। पर उनके इस निश्चय का कुछ मूल्य नहीं था, क्योंकि वह नितान्त अकर्मण्य व्यक्ति थे। बचपन से ही उनके सब काम दूसरे लोग करते आये थे, इसलिए स्वतंत्र इच्छा और दृढ़ संकल्प नाम की वस्तु उनमें रह ही नहीं गई थी।

अब राजमहल पास आ चला था, इसलिए उनका ध्यान अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट से हट कर रानी राज्यलक्ष्मी देवी और जंगबहादुर की ओर गया। बोले : "यह जंगबहादुर भी अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट से कम नहीं है। वह साँप की तरह ज़मीन पर सिर रख कर चलता है। पर साँप की तरह उसमें कुछ ऐसी बात है कि उससे दूर ही रहने का मन होता है।"

"पर वह स्वयं दूर नहीं रहता। लुक-छिप कर किसी न किसी बहाने पास आता है। परिणाम भयावह है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जब ये दोनों कोट के फाटक पर पहुँचे, तब देखा कि वहाँ पचास साठ सैनिक तैनात हैं। चौतरिया के पूछने पर पता चला कि काज़ी जंगबहादुर इन्हें यहाँ खड़ा कर गये हैं। पर उन्हें यह पता नहीं चल सका कि काज़ी जी इन्हें यह आदेश भी दे गये हैं कि उनकी अपनी आज्ञा के बिना कोई भी आदमी कोट से बाहर न जाने पाये और यदि कोई जाने की कोशिश करे, तो उसे वहीं मार दिया जाये। यह सेना की वह टुकड़ी थी, जिसका सूबेदार जंगबहादुर स्वयं था। यह स्वाभाविक था कि ये सैनिक उसकी आज्ञा का पालन करते।

महाराज और चौतरिया ने एक-दूसरे की आँखों में देखा और बिना कुछ कहे हनुमान ढोका दरबार में प्रविष्ट हुए।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

47

भाग्य निर्णय

जब महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह और काज़ी फतहजंग चौतरिया कोट में पहुँचे, तब वहां अच्छा खासा उपद्रव हो रहा था। जो भारदार जंगबहादुर और रणोद्दीपसिंह को पकड़ने के लिए बढ़े थे, उन्हें इन दोनों ने घायल करके गिरा दिया था। बाकी भारदार कुछ सहमे से सोच रहे थे कि क्या करें। जंगबहादुर अपने भाइयों को उकसा रहा था : "घबराना मत। जो कोई तुम्हें हाथ लगाने की कोशिश करे, उसे काट फेंकना। दरबार का हुक्म हमारे पक्ष में है। हम महारानी की आज्ञा का पालन कर रहे हैं।"

जंगबहादुर के सभी भाइयों ने खुखरियां निकाल ली थीं। मशालों के प्रकाश में उन शस्त्रों की चमक यमराज की मुस्कान जैसी दिखाई पड़ती थी। जंगबहादुर के शब्दों से उसके भाई तो उत्साहित हुए ही, बाकी भारदार भी कम उत्साहित नहीं हुए। कोई उन्हें सामने खड़ा हो कर काटने की धमकी दे, इसे वे सहन नहीं कर सकते थे। अतः वे फिर सतर्क हो कर आगे बढ़ने लगें थे।

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम ने यह दृश्य देखा, तो वह सहम गये। वह बिना रुके, चुपचाप राजमहल के अन्दर चले गये। पर फतहजंग चौतरिया ने उपद्रव को शान्त करने की कोशिश की। उन्होंने धीर स्वर में कहा : "काज़ी जंगबहादुर, आप यह क्या कर रहे हैं ? राजदरबार में खड़े हो कर इस तरह हथियार उठाना किसी को शोभा नहीं देता। अपनी तलवार म्यान में डालिये।"

एक भारदार ने चिल्ला कर कहा : "पापी रणोद्दीप ने राए.ा अभिमान को काट डाला है।"

"अभिमानसिंह मारे गये ?" चौतरिया ने चकित और दुःखी हो कर पूछा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"और अब ये सब भाई हमें मारने की धमकी दे रहे हैं" एक और क्षुब्ध स्वर बोला।

चौतरिया ने इस विकट क्षण में भी धैर्य नहीं खोया। यथासंभव शान्त रह कर ही उन्होंने जंगबहादुर से कहा: "यहां सबसे प्रमुख अधिकारी आप ही हैं। शान्ति बनाये रखना तो आपका ही काम है। चलिये, जो हुआ सो हुआ। मामले को यहीं खत्म कीजिये।" यह कहते हुए वह जंगबहादुर को शान्त करने के उद्देश्य से उसकी ओर बढ़े।

पर उस क्षण में जंगबहादुर के मन में एक और ही विचार कौंध गया। गगनसिंह मर चुका; अभिमानसिंह मर चुका; फतहजंग बाकी बचा है; यदि यह भी समाप्त हो जाये, तो मैं ही एक काज़ी बचूंगा।" चौतरिया ने जो कुछ कहा, वह उसके कानों में पहुँचा ही नहीं। अपने आस-पास का और सारा दृश्य उसे दीखना बन्द हो गया। केवल चौतरिया की भव्य मूर्ति पर ही उसका सारा ध्यान केन्द्रित हो गया। जैसे घायल जंगली भैंसा शिकारी को सामने पा कर सब कुछ भूल कर उस पर टूट पड़ता है, उसी प्रकार जंगबहादुर तलवार हाथ में लिये फतहजंग चौतरिया पर झपटा। सभी भारदार उसे रोकने के लिए झपटे। चौतरिया समझ भी न पाये कि क्या हो रहा है कि इतने में जंगबहादुर की तलवार उनकी छाती के पार हो गई। वह शिथिल हो कर भूमि पर गिर पड़े और कराहते हुए बोले: "जंगबहादुर, यह तूने क्या किया। आज ही तूने गगनसिंह की हत्या की; अभी अभिमानसिंह की हत्या की और अब मेरे प्राण ले लिये!" फिर थोड़ा रुक कर उन्होंने कहा: "महारानी पूछती थी, गगनसिंह की हत्या किसने की? मैं बताता हूं— गगनसिंह की हत्या जंगबहादुर ने की।" इससे अधिक वह नहीं बोल पाये। उनका श्वास रुक गया और प्राण शरीर को छोड़ गये।

चौतरिया के ये शब्द छज्जे पर खड़ी रानी राज्यलक्ष्मी ने भी सुने और सुन कर उसका रोम-रोम सिहर उठा।

फतहजंग चौतरिया की इस अकारण निर्मम हत्या से कोट का वातावरण एक दम विक्षुब्ध हो उठा। मनुष्य के अन्दर ऐसा कुछ है, जो अन्याय या अत्याचार होते देख कर बेचैन हो उठता है। कितने ही भारदार मृत्यु के भय को एकदम भूल कर जंगबहादुर और उसके भाइयों पर झपट पड़े। उन भाइयों ने खुखरियां चलाते हुए भाग निकलने की कोशश की। जिसने भी उन्हें पकड़ना चाहा, उसी पर उन्होंने खुखरी से वार किया। सारा कोट झपटते हुए, बचते हुए, ललकारते हुए और कराहते हुए व्यक्तियों की आवाज़ों से गूंज उठा। ऐसा उपद्रव इससे पहले इस कोट के अन्दर कभी नहीं हुआ था। लोगों की भाग-दौड़, उठा-पटक और मार-धाड़ में कुछ मशालें गिर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पड़ीं और बुझ गईं। बाकी मशालों को, लगता है, किसी ने जान बूझ कर बुझा दिया। सब ओर घुप्प अँधेरा छा गया।

जब तक मशालें जल रही थीं, तब तक भारदार निहत्थे होते हुए भी जंगबहादुर और उसके भाइयों से हथियार छीनने की कोशिश कर रहे थे और स्वयं को बचाते हुए पैंतरे बदल-बदल कर उन्हें काबू करने का मौका देख रहे थे। भारदारों की संख्या चालीस के लगभग थी और यह दीख रहा था कि देर चाहे लगे, किन्तु वे एक एक करके सब भाइयों पर काबू पा जायेंगे। पर मशालें बुझने के बाद स्थिति एक दम बदल गई। शस्त्रधारी जंगबहादुर और उसके भाई अन्धाधुन्ध हथियार चलाते हुए अँधेरे में आगे बढ़ने लगे। निहत्थे भारदारों को कुछ भी दिखाई पड़ना बंद हो गया। अतः खुखरियों की चोट से बचने के लिए वे बरामदों और गलियारों की ओर भागे। जंगबहादुर और उसके भाई दुगुने जोश में आ कर ललकारते हुए उनका पीछा करने लगे। उस अँधेरे में जो भी उनके हाथ लगा, उसे उन्होंने मार डाला।

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी छज्जे पर खड़ी यह सब देख रही थी। जब मशालें बुझ गईं और अँधेरा छा गया, तब उस पर एक विचित्र उन्माद सवार हो गया। उसे दीख कुछ नहीं रहा था। पर भागते हुओं की पदचाप, आक्रमण करने वालों का हुंकार और आहतों का मरणान्तक चीत्कार उसे सुनाई पड़ रहा था और वह अपनी कल्पना के नेत्रों से खुखरियों को मांस में गड़ते, खून की धार बहते, और घायलों को तड़पते देख पा रही थी। गगनसिंह की हत्या से संतप्त उसके चित्त को इस हत्या और रक्तपात से, हाहाकार और क्रन्दन से बड़ा सन्तोष मिल रहा था। वह खिलखिला कर हँसने लगी और आक्रमणकारियों को प्रोत्साहित करते हुए चिल्लाने लगी : "मारो! मारो! किसी को मत छोड़ो, सब को मार दो!" उस अँधेरी रात में उसका वह उन्मत्त हास्य ऐसा भयावना लग रहा था कि यदि कोई भूत-पिशाच भी उसे सुनता, तो तुरन्त भयभीत हो कर भाग खड़ा होता।

बादल गरजने लगे और रह-रह कर बिजली चमकने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में जंगबहादुर और उसके भाई बरामदों और गलियारों में छिपे निहत्थे भारदारों को ढूँढ कर मारने लगे। जंगबहादुर चिल्ला कर उन्हें उत्साहित कर रहा था : "ये नमकहराम महारानी के हुक्म के विरुद्ध हथियार उठाते हैं। इनमें से एक को जीता नही छोड़ूँगा। हमें मारना चाहते थे। सबको ढूँढो। कोई बचने न पाये।"

एक अँधेरे कोने में छिपे एक भारदार ने बिजली की चमक में जंगबहादुर को अपनी ओर बढ़ते देखा। बिजली की चमक अगले ही क्षण बुझ गई। ज्यों ही जंगबहादुर पास से गुज़रा, त्योंही वह भारदार उस पर टूट पड़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसने कमर से पकड़ कर जंगबहादुर को पक्के फर्श पर दे पटका । तलवार जंगबहादुर के हाथ से छूट गई और झनझनाती हुई दूर जा पड़ी । भयभीत हो कर वह चिल्लाया : "बचाओ ! बचाओ । मार डाला ।"

उसकी आवाज़ को उसके भाइयों ने पहचान लिया । वे उस अँधेरे में दूर-दूर बिखरे हुए थे, पर उस आर्त पुकार को सुनते ही उस ओर दौड़े । किन्तु उस अंधकार में बिना देखे पहचाने मार डालना जितना आसान था, मरते हुए को बचाना उतना ही कठिन था । जंगबहादुर को भूमि पर गिरा कर वह भारदार उसकी छाती पर चढ़ बैठा था । उसके पास कोई हथियार नहीं था; हथियार ढूंढने और टटोलने के लिए समय भी नहीं था । इसलिए वह जंगबहादुर के सिर को उठा-उठा कर ज़ोर से ज़मीन पर पटकने लगा । पीड़ा से व्याकुल जंगबहादुर चीखने लगा ।

यह क्रम एक मिनट भी और चल जाता, तो निश्चय ही जंगबहादुर की जीवनलीला वहीं समाप्त हो जाती । उस भारदार में न जाने कहाँ से ऐसा दैत्य का सा बल आ गया था कि उसके नीचे पड़ा जंगबहादुर स्वयं को एकदम अशक्त अनुभव कर रहा था । वह न तो उसे अपनी छाती पर से धकेल पा रहा था और न उसके लोहे के शिकंजे जैसे मजबूत हाथों से अपने सिर को ही छुड़ा पा रहा था । हर नई पटक के बाद उसकी चेतना और क्षीण होती जा रही थी । तभी फिर बिजली चमकी । जंगबहादुर का एक भाई दौड़ता हुआ पास आ पहुँचा था । बिजली की उस क्षणिक कौंध में उसने परिस्थिति को सही-सही भाँप लिया और अगले ही क्षण खुखरी का ऐसा वार किया कि वह बलिष्ठ भारदार कराहता हुआ भूमि पर लुढ़क गया । जंगबहादुर की चेतना और शक्ति अभी समाप्त नहीं हुई थी । वह तुरन्त उसे ठेल कर उठ खड़ा हुआ । अपनी गिरी हुई तलवार को ढूंढने के बजाय उसने अपनी कमर में बँधी खुखरी निकाली । वह भारदार अभी मरा नहीं था । गहरे घाव की यंत्रणा से कराह रहा था । जंगजहादुर और उसका भाई दोनों एक ही साथ उस अँधेरे में उस पर गुँथ पड़े । वह बेचारा तो मर ही गया, पर गुस्से में अंधाधुन्ध चलाई गई जंगबहादुर की खुखरी से उसके अपने भाई की बांह में भी खासा घाव हो गया । उसकी चीख सुन कर जंगबहादुर ने अपना हाथ रोका ।

जब अधिकांश भारदार मारे जा चुके, तब प्रकाश करने के लिए फिर मशालें जलाई गईं उस प्रकाश में कोट का जो दृश्य दिखाई पड़ा, उसका अँधेरे में छिपा रहना ही भला था । आंगन में भारदारों के क्षत-विक्षत शव अलग-अलग ढंग से मुड़े-तुड़े पड़े थे । सारा आंगन खून से लाल हो रहा था । हर शव के पास से खून की धार ढलान की ओर बही थी । जहाँ खून की दो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

या अधिक धाराएं आपस में मिल गई थीं, वहां से वे और मोटी हो कर दूर तक वही थीं। दौड़ते हुए लोगों के पांव इन धाराओं पर पड़े थे और गीले खून से बने पदचिन्ह सब ओर अंकित थे।

कुछ मशालों को ले कर जंगबहादुर और उसके भाई राजमहल के बरामदों, गलियारों और कमरों में खोजबीन करते फिरने लगे। इस खोज में भी उन्हें कई भारदार प्राण रक्षा के लिए छिपे मिले। उनमें से कई ने विनयपूर्वक प्राणों की भीख माँगी। पर किसी पर भी दया नहीं की गई। दया जंगबहादुर में थी ही नहीं। सबको बेरहमी से मार डाला गया।

जब यह पूरा भरोसा हो गया कि अब राजमहल के किसी भाग में कोई भारदार छिपा नहीं रह गया है, तब जंगबहादुर अपने भाइयों को पीछे छोड़ कर अकेला रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के पास छज्जे पर पहुँचा और विनयपूर्वक बोला : "सरकार, विद्रोहियों को कुचल दिया गया है।"

रानी को फतहजंग चौतरिया के अन्तिम शब्द याद आये : "गगनसिंह को जंगबहादुर ने मारा है।" उसने रूखे और कठोर स्वर में कहा : "जाओ। सुरेन्द्र और उपेन्द्र को यहां ला कर यह सारा दृश्य दिखा दो।" इतना कह कर वह मुँह फेर कर खड़ी हो गई।

जंगबहादुर ने समझ लिया कि रानी उससे रुष्ट है। इस समय कुछ कहना-सुनना उचित न होता, अतः वह चुपचाप मुह लटकाये वहां से लौट पड़ा।

रानी काफ़ी देर तक छज्जे पर अकेली खड़ी उस रक्तरंजित आंगन को देखती रही। ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, त्यों-त्यों उसका क्रोध और शोक का आवेग कम होता गया और उसका स्थान पहले अवसाद ने और उसके बाद भय ने ले लिया। कुछ समय बाद ऐसा क्षण आया, जब उन बिखरे पड़े शवों को देख कर उसे इतना डर लगने लगा कि उस छज्जे पर खड़े रहना उसके लिए असंभव हो गया। तब वह डरती काँपती महल में अपने कक्ष में लौट गई।

पूरे हनुमान ढोका दरबार में सन्नाटा छा गया।

× × ×

जिस समय कोट में एक शताब्दी से भी अधिक समय के लिए नेपाल के भाग्य का निर्णय हो रहा था, उस समय महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह तलवार ले कर रणभूमि में नहीं उतरे। उन्होंने रानीराज्यलक्ष्मी की तरह उस ऐतिहासिक हत्याकांड को महल के छज्जे पर खड़े हो कर भी नहीं देखा। वह महल के भीतर अपने कक्ष में बैठे आज की घटनाओं पर विचार कर रहे थे। उनके मुख पर चिन्ता के घने बादल छाये हुए थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कोट में हुए हत्याकांड की खबर अभी उन तक नहीं पहुँची थी। गगनसिंह की हत्या, रानी का भीषण कोप, कर्नल लारेंस का रूखा उत्तर, राणा अभिमानसिंह की हत्या—बस इतनी घटनाएं उनके मन में घूम रही थीं। कोट में मारकाट का आरंभ वह अपनी आंखों से देख आये थे, पर उसका अंत कहाँ हुआ, यह उन्हें पता नहीं था।

गगनसिंह की हत्या से उन्हें सन्तोष था। पर उसके बाद घटनाएं जिस तरह घटीं, उसकी उन्होंने पहले कल्पना भी न की थी। उन्होंने रानी के पक्ष को दुर्बल करना चाहा था, और इसके लिए जंगबहादुर का सहारा लिया था। पर अब वह समझ नहीं पा रहे थे कि कौन पक्ष कितना दुर्बल हुआ है और कौन कितना सबल हो गया है।

आधी रात के लगभग उनका विश्वस्त सेवक जयसिंह उनके कक्ष में घुसा। महाराज ने सिर उठा कर समाचार जानने की उत्सुकता से उसकी ओर देखा। क्षण भर चुप रह कर जयसिंह ने कहा: "सरकार, सर्वनाश हो गया!"

महाराज कुछ भयंकर समाचार सुनने के लिए तैयार थे। कोट का जो रूप वह देख आये थे, जिस तरह जंगबहादुर और उसके भाइयों का भारदारों से संघर्ष शुरू हुआ था, उसका परिणाम अप्रिय ही होना था। पर जयसिंह के इस संक्षिप्त वाक्य का वह कुछ भी स्पष्ट अर्थ नहीं निकाल सके; अतः तीव्र जिज्ञासाभरी दृष्टि से उसके मुँह की ओर देखते रह गये। उनका आशय समझ कर जयसिंह ने कहा: "सब भारदार मारे गये।"

"कौन-कौन मारे गये?" आकुल हो कर महाराज ने पूछा।

"सब मारे गये। काजी फतहजंग चौतरिया मारे गये; राणा अभिमानसिंह मारे गये; व्रजकिशोर पांडे मारे गये; और भी सब मारे गये। कोई बाकी नहीं बचा। सब की लाशें अभी कोट में पड़ी हैं।"

"चौतरिया मारे गये? अभिमानसिंह मारे गये?" महाराज ने इस प्रकार पूछा, मानों वह इस समाचार पर विश्वास करना नहीं चाहते। इन दो भारदारों पर उन्हें सबसे अधिक भरोसा था।

"जंगबहादुर और उसके भाइयों ने सबको काट डाला। जो लोग भाग कर गलियारों और कमरों में जा छिपे थे, उनको भी ढूंढ-ढूंढ कर मारा। कहा, कि हमें महारानी का हुकुम है। महारानी सारे समय छज्जे पर खड़ी देखती रहीं।"

महाराज की आँखों के आगे अँधेरा सा छा गया। उन्हें लगा कि अपने पुत्र सुरेन्द्र और उपेन्द्र के साथ वह एकदम असहाय रह गये हैं। जंगबहादुर ने उन्हें भय दिखाया था कि गगनसिंह की सहायता से रानी राज्य पर स्वयं अधिकार कर सकती हैं; इसलिए उन्होंने गगनसिंह को समाप्त करवाने का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आदेश दिया था। पर जिस जंगबहादुर को यह काम सौंपा गया था, उसी ने उनके परम हितैषी फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह को भी मार डाला है। अब वह किस पर भरोसा कर सकते हैं ?

"और कौन-कौन मारे गये ?" व्यथित स्वर में उन्होंने पूछा।

"सब मारे गये सरकार। एक भी बाकी नहीं बचा।"

अब इस समाचार की विकटता का भान महाराज को हुआ। जब जयसिंह ने पहली बार कहा था कि सब मारे गये, तब 'सब' शब्द पर उनका पूरा ध्यान नहीं गया था। पर अब यह सोच कर कि सब भारदार मारे गये, उनका हृदय कांप उठा। "सब भारदार मारे गये—अर्थात् नेपाल का सारा शासक वर्ग ही समाप्त हो गया। प्रधानमंत्री, सेनापति, कोषाध्यक्ष, खेती, सिंचाई, शस्त्र-निर्माण, व्यापार आदि का प्रबंध देखने वाले सब पदाधिकारी समाप्त हो गये। मानो राष्ट्र का सिर कट गया, धड़ ही धड़ शेष रह गया।" महाराज ने मन ही मन सोचा।

"अब क्या होगा ?" महाराज के मुँह से निकला।

"कुछ समझ नहीं पड़ता सरकार।"

"जंगबहादुर कहां है ?"

"वह अपने भाइयों के साथ कोट से बाहर चले गये हैं।"

"पहरेदारों से कह दो कि अब जंगबहादुर या उसका कोई भाई कोट में घुसने न पाये।"

"जी सरकार। अभी कहे देता हूँ" कह कर जयसिंह कमरे से बाहर निकल गया।

उसके जाते ही महाराज का चेहरा चिन्ता और भय के मारे एकदम सफ़ेद हो गया। "सब भारदार मारे गये। अब राज्य का शासन कैसे चलेगा ? कल नये भारदार कहाँ से खड़े किये जायेंगे ?" सोच-सोच कर उनका सिर चकरा रहा था।

उनके मन में एक डरावना विचार आया, जिससे उनका सिर से पैर तक सारा शरीर सिहर उठा। "गगनसिंह की हत्या से रानी राज्यलक्ष्मी पागल सी हो रही है। यदि स्वार्थी जंगबहादुर उसे गगनसिंह की हत्या का रहस्य बता दे, तो क्या होगा ? रानी उन्हें और उनके पुत्रों—सुरेन्द्र और उपेन्द्र को पल भर के लिए भी नहीं बख्शेगी।" उन्हें लगा कि जंगबहादुर यह भेद रानी को बता अवश्य देगा। कोई आश्चर्य नहीं कि वह अब तक बता भी चुका हो।

वह उठे और राजकुमारों के शयन कक्ष की ओर चले। यह शयन कक्ष पास ही था। उसमें प्रकाश था। दोनों राजकुमार अपने बिस्तरों पर लेटे हुए

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थे। कमरे में महाराज के घुसते ही दोनों उठ कर बैठ गये। "क्या बात है, तुम दोनों सोये नहीं ?" महाराज ने पूछा।

"नींद नहीं आ रही सरकार।" सुरेन्द्र ने कहा।

"क्यों ?" महाराज ने जानना चाहा कि इन दोनों को महल में घटी भीषण दुर्घटना का ज्ञान है या नहीं।

"आज कोट में बड़ी मारकाट मची है। अभी थोड़ी देर पहले तक तो घायलों की चीखें यहाँ तक सुनाई पड़ रही थीं। कहते हैं, जंगबहादुर जीत गया है।" सुरेन्द्र ने कहा।

"जंगबहादुर खराब आदमी है" उपेन्द्र बोला। उसे जंगबहादुर से चिढ़ थी।

महाराज ने उनका ध्यान बटाने के लिए कहा : "अब तो आधी रात हो चुकी है। अब सो जाओ।"

"इतनी मारकाट हो रही हो, तब कहीं नींद आती है ?" उपेन्द्र बोला।

बात सही थी। उस समय तक सारे राजमहल में एक भी व्यक्ति नहीं सोया था। महाराज उपेन्द्र के पलंग पर ही बैठ गये; बोले : "तुम्हारी बात सही है। पर जो होना था, वह तो हो चुका। अब इसमें क्या रखा है! अब तुम दोनों सोने की कोशिश करो।"

"यह लड़ाई किसलिए हुई सरकार ?" उपेन्द्र ने फिर पूछा।

"मैं खुद नहीं जानता। बस, होनी थी, इसलिए हुई। अच्छा, अब तुम लोग सो जाओ।"

दोनों लड़के फिर लेट गये। महाराज बैठे रहे। सुरेन्द्र ने कहा : "आप भी सोइये सरकार !"

"हां हां। मैं भी सोऊंगा। ज़रूर सोऊंगा। तुम सो जाओ।"

धीरे-धीरे दोनों राजकुमार सो गये। महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम ने वह रात राजकुमारों के शयन कक्ष में एक चौकी पर बैठ कर जागते हुए बिताई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

48

यह क्या हो गया !

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी जब कोट से लौट कर महल में अपने कक्ष में पहुँची, तब उसकी दशा विक्षिप्तों की सी थी। दासी मन्दाकिनी को देखते ही वह रो पड़ी; बोली : "मन्दा, सर्वनाश हो गया। कुछ नहीं बचा। क्या करने चली थी, क्या हो गया !"

मन्दाकिनी ने पास आ कर एक हाथ रानी के कन्धे पर और एक पीठ पर रख कर सान्त्वना देते हुए कहा : "चिन्ता मत कीजिये। परेशान मत होइये। सब ठीक हो जायेगा।"

रानी का शरीर थरथर काँप रहा था। मन्दा इसका कारण कुछ समझ नहीं पा रही थी। कुछ देर रुक कर रानी फिर बोली : "आज नेपाल समाप्त हो गया। अब क्या होगा ?"

मन्दा ने समझा कि गगनसिंह की मृत्यु को ही रानी नेपाल का समाप्त होना कह रही है। अतः वह कुछ बोली नहीं; धीरे-धीरे रानी के कन्धे और पीठ को सहलाती रही।

कुछ देर बाद रानी बोली : "चौतरिया और राणा अभिमान की हत्या को महाराज कभी क्षमा न करेंगे। जंगबहादुर ने भी क्या पागलपन किया कि सभी भारदारों को मार डाला। इसका पाप किसको लगेगा ?"

मन्दा ने कहा : "जिसने किया है, उसे लगेगा। और किसी को क्यों लगने लगा ?"

"नहीं मन्दा, करता है कोई और भरना किसी और को पड़ता है। भगवान जानता है कि मैं नहीं चाहती थी कि फतहजंग चौतरिया मारे जायें, या राणा अभिमानसिंह मारे जायें या अन्य सब भारदार इस तरह मार डाले जायें। पर अब मेरी बात का विश्वास कौन करेगा ? कौन मानेगा कि

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैं उस समय आपे में नहीं थी। जो कुछ मेरे मुँह से निकला, वह मैं नहीं बोल रही थी, कोई और बोल रहा था। कौन मानेगा इसे? कोई मानेगा? जंगबहादुर बार-बार यही चिल्ला रहा था कि महारानी का हुक्म है—सब को मार दो; किसी को मत छोड़ो। वह स्वयं यह पाप कर्म करना चाहता था और उसने नाम मेरा लगा दिया।"

"जो हो गया, उसे भूल जाइये। उसका कुछ नहीं किया जा सकता। जंगबहादुर कुछ भी कहता रहे, उससे सचाई थोड़े ही छिप जायेगी।"

"पर सचाई को देखेगा कौन?"

"आप देखेंगी। महाराज देखेंगे। और देखने वाला है कौन? जंगबहादुर की क्या हस्ती है!"

"तो फिर महाराज को जा कर समझाऊँ? उनसे जा कर क्षमा माँगूँ? मेरा विश्वास है कि वह अवश्य क्षमा कर देंगे।"

"आप कुछ मत कीजिये। शान्त रहिये। क्या किया है आपने, जो आप सब जा कर क्षमा माँगेंगी। यों ही क्षमा माँगने लगना तो जबरदस्ती अपराध को अपने सिर लादना है। फिर, भय महाराज से नहीं, जंगबहादुर से है।"

"यह तू ठीक कहती है, भय जंगबहादुर से है। जंगबहादुर ही सारे अनर्थ की जड़ है। पता है, फतहजंग चौतरिया ने मरते समय अन्तिम बात क्या कही थी?"

मन्दाकिनी प्रश्नभरी मुद्रा से रानी की ओर देखती रही।

"उसने कहा था कि गगनसिंह की हत्या जंगबहादुर ने की है। उसने ऐसा क्यों कहा?"

"उन्होंने ऐसा कहा था?" मन्दाकिनी ने चौंक कर पूछा।

"हाँ एक बार नहीं, दो बार! गगनसिंह की हत्या में जंगबहादुर का क्या स्वार्थ हो सकता है?"

"जंगबहादुर का तो एक ही स्वार्थ है—धन की प्राप्ति, पद की उन्नति। पर मुझे एक गहरा सन्देह होता है।"

"क्या?" रानी ने अधीरता से पूछा। मन्दाकिनी की सूझ-बूझ पर उसे बहुत विश्वास था।

"गगनसिंह का रहस्य खुल गया हो और उसकी हत्या में महाराज का इशारा रहा हो।"

रानी राज्यलक्ष्मी का चेहरा एकदम उतर गया। गगनसिंह की हत्या में महाराज का हाथ! फिर वह उनसे क्षमा की क्या आशा कर सकती है?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसे पता था कि गगनसिंह के साथ उसके प्रेम का रहस्य सदा छिपा नहीं रह सकता, फिर भी वह अविवेकपूर्वक उस मार्ग पर बढ़ती ही जा रही थी। उसे पता था कि परिणाम अच्छा नहीं होगा, पर शराबी और जुआरी की तरह वह परिणाम को सोचना ही नहीं चाहती थी। आज जब वह भीषण परिणाम सामने आ खड़ा हुआ, तब वह आपा खो बैठी। पर उसके आपा खो बैठने से दुनियाँ तो नहीं बदल जायेगी। महाराज नहीं बदलेंगे; जंगबहादुर नहीं बदलेगा।

गगनसिंह की हत्या में यदि महाराज का इशारा रहा भी हो, तो भी वह हत्या की तो जंगबहादुर ने ही है। उसे भी सब कुछ पता होगा। उससे वह क्या आशा कर सकती है? आज पहली बार रानी राज्यलक्ष्मी ने स्वयं को एकदम निराधार और निस्सहाय अनुभव किया। आज शाम तक गगनसिंह था, महाराज थे। दोनों का उसे पक्का सहारा था। गगनसिंह के बलपर वह महाराज को दबाये रखती थी और एक प्रकार ज़बरदस्ती ही उनका सहारा प्राप्त किये हुए थी। गगनसिंह के न रहने पर अब उसे महाराज के इशारों पर नाचना पड़ेगा। यह कोई बुरी बात न थी। पर पिछले कई बरसों से रानी राज्यलक्ष्मी को इसकी आदत नहीं रही थी। जिन महाराज को वह इतने बरसों से दबा कर रखती रही, उनसे दब कर रहना उसे कठिन प्रतीत हो रहा था। विशेष रूप से इसलिए कि महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम में उसे दबा कर रखने की क्षमता और सूझ बूझ नहीं थी।

गगनसिंह की हत्या का समाचार सुन कर जिस प्रकार वह उसके घर गई; उसने रात में राजदरबार लगवाया; जिस तरह वह गलत सन्देह पर ही ब्रजकिशोर पांडे का वध करने के लिए तलवार ले कर स्वयं जा पहुँची और उसके बाद अभिमानसिंह तथा अन्य भारदारों को मारने के लिए आदेश देती रही, उससे गगनसिंह के प्रति उसके उत्कट प्रेम का रहस्य किसी से भी छिपा नहीं रहा था। कुशल यह थी कि वह रहस्य जिनके सामने उद्घाटित हुआ था, उनमें से अधिकांश अब भौंहें चढ़ाने और होठ बिचकाने के लिए इस दुनियाँ में ही नहीं रहे थे। पर दो व्यक्ति अभी शेष थे—महाराज और जंगबहादुर। इन दोनों के सामने अब उसे नितान्त निर्लज्ज बन कर रहना होगा। उससे रहा जायेगा?

मन्दाकिनी ने रानी को ले जा कर पलंग पर बिठाया। उसे पीने के लिए पानी ला कर दिया और कहा: "झपकी आती हो, तो दो-एक घंटा सो लीजिये। उससे चित्त कुछ शान्त होगा।"

रानी ने कहा: "अच्छा! अब तू भी आराम कर!" वह पलंग पर लेट गई। पर मन्दाकिनी कमरे से गई नहीं। ज़मीन पर बिछे कालीन पर ही बैठ गई और बैठी-बैठी ऊँघने लगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर रानी की आँखों में नींद कहाँ ? उसका न केवल राज्य उजड़ गया था, बल्कि उसका घर भी उजड़ गया था । कल तक उसके पास क्या नहीं था ? पर आज कुछ भी नहीं रहा । उसका प्रेमी मारा गया; पति सदा के लिए रुष्ट हो गया; राज्य का प्रभुत्व छिन गया । तो क्या वह सब स्वप्न था ? मिथ्या था ?

फिर, यह जंगबहादुर ! उसकी इतनी हिम्मत कैसे हुई कि उसने सभी भारदारों को मार डाला ? पर उसे यह रास्ता तो मैंने ही दिखाया । यदि उससे मातबरसिंह की हत्या न करवाई होती, तो उसे कोट के भीतर हथियार चलाने की हिम्मत कभी न होती । मातबरसिंह की हत्या करके उसके मन का डर निकल गया ।

वह सोचती रही—अब क्या किया जाये ? आत्म-रक्षा का उपाय क्या है ? महाराज उसे क्षमा नहीं करेंगे । वह कितने रुष्ट हैं, यह गगनसिंह की हत्या से ही स्पष्ट है । फिर ? जंगबहादुर का सहारा लिया जाये ? जब उसने महाराज के कहने से गगनसिंह की हत्या की है, तो स्पष्ट है कि वह पहले ही महाराज के साथ मिला हुआ है । वह मेरा साथ क्यों देने लगा ? फिर गगनसिंह के हत्यारे को मैं ही क्यों क्षमा करने लगी ? मेरा बस चलेगा तो मैं उसकी बोटी-बोटी नुँचवा दूंगी ।

पर इस समय तो अपना बस चलने की कोई संभावना नहीं दीख रही । रानी को कोई न कोई सहारा ढूंढना पड़ेगा । सहारे दो ही हैं—महाराज या जंगबहादुर । महाराज का सहारा लेना शायद कहीं अधिक भला होता, पर रानी को किसी तरह यह विश्वास नहीं होता था कि वह उसे क्षमा कर सकेंगे । सारी रात वह इसी सोच-विचार में पड़ी करवटें बदलती रही । नींद उसको एक पल को नहीं आई । कभी वह सोचती कि जंगबहादुर ठीक आदमी नहीं है । उसे जितना बढ़ावा दिया गया, वही गलती हुई । अब उसे ज़रा भी बढ़ावा नहीं देना है । महाराज में हज़ार दोष हों, फिर भी वह जंगबहादुर से हज़ार गुना अच्छे हैं । वह उन्हीं से जा कर क्षमा माँगेगी । वह उसे अवश्य क्षमा कर देंगे ।

पर कुछ ही देर बाद विचार की दिशा पलट जाती—इतनी कलंक गाथा प्रकट होने के बाद वह किस मुँह से महाराज के सामने जायेगी ? यह किसी तरह संभव नहीं कि वह उसे क्षमा कर दें । फिर उनके पास जाने का क्या लाभ है ? इससे भला तो यही है कि जंगबहादुर को साथ मिलाने की कोशिश की जाये । उसे जो कुछ महाराज दे सकते हैं, वह मैं भी दे सकती हूं । यदि किसी तरह मैं उसे अपने साथ मिला सकूं, तो महाराज चाह कर भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन दोनों दिशाओं में उसने बीसियों बार विचार किया। जब वह एक दिशा में सोच रही होती, तब उसे दूसरी कल्पना एकदम असंभव प्रतीत होती। थोड़ी ही देर बाद पहली कल्पना असंभव और दूसरी ग्राह्य लगने लगती। सारी रात वह बहुत चिन्तित हो कर इन दो परस्पर विपरीत योजनाओं के झूले में झूलती रही। अन्त में, जब पौ फटने को हुई, तब उसने मन ही मन कुछ निश्चय कर लिया। उसने कालीन पर सोई हुई मन्दा को जगाया और उससे कहा : "बाहर जा और जंगबहादुर को बुलाने के लिए कोई प्यादा भेज दे।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

49

कायर

यह मानना पड़ेगा कि उस रात की लड़ाई में जंगबहादुर और उसके भाइयों ने बड़ी बहादुरी दिखाई। यह ठीक है कि इनके प्रतिद्वन्द्वी बिल्कुल निहत्थे थे, जबकि ये लोग सशस्त्र थे, फिर भी इनके विरोधियों की संख्या चालीस से अधिक थी। यदि वे लोग एक साथ इन पर टूट पड़ते, तो निश्चय ही वे इनकी खुखरियां और तलवारें छीन लेते और इन्हीं को ठिकाने लगा देते। एक बार तो ठीक यही होता दिखाई भी पड़ने लगा था, पर तब भाग्य ने इन लोगों का साथ दिया। मशालें बुझ गईं और अँधेरे में सशस्त्र लोग निःशस्त्रों पर भारी पड़ गये। फिर भी इतने अधिक विरोधियों से जूझ पड़ना और प्राणभय उपस्थित होने पर भी भाग न पड़ना वीरता ही कही जानी चाहिए। यह बात अलग है कि इन्होंने निहत्थे लोगों की जिस तरह बिना सोचे-विचारे हत्या की, वह निरी क्रूरता थी। किन्तु वीरता और क्रूरता साथ-साथ रह सकती हैं और बहुत बार रहती भी हैं।

उस सारे हत्याकांड की समाप्ति के बाद जंगबहादुर शाबासी और वाहवाही प्राप्त करने के लिए छज्जे पर खड़ी रानी के पास गया था। परन्तु रानी ने उसे ज़रा भी शाबासी नहीं दी। उल्टे वह रुखाई दिखा कर मुँह फेर कर खड़ी हो गई। रानी का वह भाव देख कर जंगबहादुर का वीरता का सारा उत्साह हवा हो गया। वह बहुत ही थका हुआ और परेशान सा अपने भाइयों के पास लौट आया।

कोट से निकल कर अपने घर लौटते समय जंगबहादुर के भाई तो उत्साह और विजय के उल्लास से फूले नहीं समा रहे थे; वे बढ़ बढ़ कर अपने करतब एक दूसरे को सुनाते रहे थे, किन्तु जंगबहादुर बिल्कुल चुपचाप और गुम-सुम सा रहा। घर पहुँच कर वह पलंग पर लेट गया। उसके भाइयों ने उसकी दशा देखी और स्वभावतः अनुमान किया कि उसे अधिक चोट आ गई है।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उस भारदार ने जंगबहादुर का सिर कई बार ज़ोर ज़ोर से ज़मीन पर पटका था। उन्होंने दो एक बार पूछा भी : "आपकी तबियत ठीक नहीं है ? क्या बहुत चोट आ गई है ?" पर जब उसने उत्तर दिया : "नहीं, कोई खास बात नहीं है", तब उन्होंने बार-बार पूछताछ करना उचित नहीं समझा।

वस्तुतः जंगबहादुर को शारीरिक चोट बहुत नहीं लगी थी, किन्तु रानी के रूखे वर्ताव को देख कर उसे भारी धक्का लगा था। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों त्यों उस धक्के का प्रभाव बढ़ता गया और निःशस्त्र भारदारों को गाजर-मूली की तरह काट फेंकने वाला जंगबहादुर बहुत ही भयभीत और आतंकित हो उठा।

जब तक वह कोट में प्रतिद्वन्द्वियों से लड़ रहा था, तब तक उसकी विचारशक्ति लुप्त थी। वह जो कुछ कर रहा था, उसके कुपरिणाम या सुपरिणाम के विषय में सोचने की फ़ुरसत उसे नहीं थी। पर अब, जब जो होना था, वह हो चुका था, उसकी सोचने की शक्ति धीरे-धीरे वापस लौट रही थी और वह चाह रहा था कि यह सोचने की शक्ति वापस न ही आये।

पर उसका मस्तिष्क सचेत हो रहा था। उसे स्पष्ट दीख रहा था कि वह जो कुछ कर गुज़रा है, उसे महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम कभी पसन्द नहीं कर सकते। उसने फतहजंग चौतरिया और राणा अभिमानसिंह को तलवार के घाट उतार दिया था, जो दोनों ही महाराज के मित्र और विशेष कृपा-पात्र थे। यह ठीक है कि उसने महाराज के कहने पर गगनसिंह को गोली का निशाना बनाया था। उसके बदले वह अच्छा पुरस्कार पाने की भी आशा कर सकता था। किन्तु उसके बदले महाराज इतनी हत्याओं को क्यों सहन करने लगे ?

रानी के कहने से उसने राणा अभिमानसिंह को मारा था। सारे हत्या-कांड में रानी उन्मत्त-सी खड़ी उसे और उसके भाइयों को प्रोत्साहित करती रही थी। अतः उसने आशा बाँधी थी कि कम से कम रानी उसका पक्ष लेगी और महाराज के कोप से उसकी रक्षा करेगी। परन्तु छज्जे पर मिलते समय उसने रानी का जो रुख देखा, उससे वह समझ गया कि फतहजंग चौतरिया ने मरते-मरते जो बात कह दी थी, वह रानी के मन में गहरी पैठ गई है। उसे विश्वास हो गया है कि गगनसिंह को मैंने ही मारा है। एक बार घायल नागिन से आशा की जा सकती है कि वह मौका पाने पर भी बिना डँसे छोड़ दे, पर इस रानी से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह मुझे क्षमा कर देगी।

महाराज और रानी, दोनों के प्रति ही उससे इतना भारी अपराध हुआ था कि वह जितना ही इस विषय में सोचने लगा, उतना ही उसकी घबराहट

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बढ़ने लगी। इन दोनों के कोप से बचने का क्या उपाय है ? सवेरा होने पर यदि वे जीते-जी उसकी खाल उतरवा कर उसमें भुस भरवा देना चाहें, तो कौन उसकी रक्षा कर सकेगा ?

एक बार उसे अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट का ध्यान आया। पर अब तक वह जब-जब भी उसके यहाँ गया था, सदा सिर ऊंचा करके गया था। आज इस दीन अवस्था में याचक बन कर उसके पास जाना उसे उचित न लगा। कर्नल लारैन्स की युवती कन्या का ध्यान करके तो वह इस विपद्ग्रस्त दशा में उसकी कोठी की ओर कदम बढ़ाने को किसी तरह तैयार ही नहीं था।

भय के मारे उसके पेट में गुड़गुड़ होने लगी। उसे दो एक बार लोटा ले कर भी जाना पड़ा। अन्त में उसका साहस छूट गया। सवेरा होते ही उसके सिर पर भीषण विपत्ति आयेगी, इसका उसे इतना निश्चय हो गया कि दरबार के भेजे हुए सिपाहियों के आने से पहले ही उसने भाग निकलने का निश्चय कर लिया। अपने भाई रणोद्दीपसिंह से उसने कहा : "मैं आज जरूरी काम से वसन्तपुर जाऊंगा और दो दिन बाद लौटूंगा।" रणोद्दीपसिंह ने समझा कि वह सवेरे के समय जायेगा इसलिए उसने इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया। जब उसके सब भाई सो गये, तब जंगबहादुर रात के अँधेरे में ही उठा और चुपचाप अकेला पैदल घर से निकल पड़ा। इस समय घोड़े पर चढ़ कर जाने में देखने वालों को सन्देह होता और वे तरह-तरह की अटकल लगाते।

× × ×

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के आदेश से जो प्यादा काज़ी जंगबहादुर को बुलाने के लिए भेजा गया था, उसने लौट कर खबर दी कि काज़ी जी घर पर नहीं हैं और किसी को यह भी मालूम नहीं है कि वह कहाँ गये हैं और कब लौटेंगे। सब ओर से निराश रानी की आशा अन्त में जंगबहादुर पर आ अटकी थी। अब यह अन्तिम सहारा भी उसके हाथ से छूटता प्रतीत हुआ और उसे लगा कि वह विपत्ति के महागर्त में गिरी जा रही है।

"क्यों मन्दा, वह कहाँ गया हो सकता है ?" रानी ने पूछा।

"दो ही बातें हो सकती हैं। या तो कहीं से सैनिक इकट्ठे करने गया हो, या डर कर कहीं जा छिपा हो।" मन्दाकिनी ने कहा।

"पर उसका आना तो बहुत ज़रूरी है। यदि वह न आया, तो बाज़ी एकदम हाथ से निकल जायेगी। इस समय एक एक पल कीमती है। नायक भीमबहादुर को बुलवा।"

मन्दाकिनी तेज़ी से चली गई और कुछ देर बाद भीमबहादुर को साथ ले कर लौटी। रानी ने कहा "भीमबहादुर, काज़ी जंगबहादुर को ढूँढ कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाना है। आधी रात तक तो वह कोट में ही थे, उसके बाद न जाने कहाँ चले गये हैं। सब ओर अपने सिपाही दौड़ा दो। उन्हें कह दो कि वे जल्दी से जल्दी जंगबहादुर को यहाँ दरबार में ले आयें।''

भीमबहादुर के चेहरे पर प्रसन्नता की रेखाएं झलक उठीं। वह समझ गया कि काज़ी जंगबहादुर का बुरा समय आ गया है। रात में हत्याएँ करके वह भाग खड़ा हुआ है और अब रानी उसे पकड़ लाने का आदेश दे रही है, जिससे उसे उसके किये का दंड दिया जा सके। उसने तपाक से अभिवादन करके कहा : ''जी सरकार। मैं अभी सिपाही भेजता हूं और ज्यों ही वह मिले त्यों ही उन्हें यहाँ ला पेश करता हूं।''

उसके उत्साह को देख कर रानी को कुछ शंका हुई; बोली : "देखो, उनके साथ सख्ती मत बरतना। आदर से ही लाना। पर अगर वह आने में आनाकानी करें, तो छोड़ना मत। उन्हें यहाँ लाना जरूर है। जल्दी !''

''जी सरकार। ऐसा ही होगा।'' विनयपूर्वक सिर झुका कर भीमबहादुर लौट पड़ा। उसका उत्साह आधा रह गया था।

× × ×

भीमबहादुर और उसके सिपाहियों ने दो ही घंटे में जंगबहादुर को जा पकड़ा। वह सामान्य वस्त्र पहने पैदल वसन्तपुर की ओर जा रहा था और काठमांडौ से दस मील दूर निकल आया था। उसने अपने सिर पर एक ऊनी शाल इस तरह डाला हुआ था कि उसका चेहरा आधा छिप जाता था। यह प्रतीत नहीं होता था कि वह जान-बूझ कर चेहरा छिपाये हुए है, फिर भी जब तक बहुत ध्यान से न देखा जाये, उसका चेहरा दिखाई नहीं पड़ता था।

भीमबहादुर पहले जंगबहादुर के घर गया था। कई सिपाही उसके साथ थे। उसके पूछताछ करने पर रणोद्दीपसिंह ने उसे बता दिया था कि काज़ी जी वसन्तपुर जाने की बात कह रहे थे। भीमबहादुर ने अपने सिपाही उन सभी स्थानों की की ओर दौड़ाये, जहाँ जंगबहादुर के मिलने की संभावना हो सकती थी। पर वसन्तपुर की ओर वह स्वयं चार सिपाही ले कर आया था। वे सब घोड़ों पर सवार थे। उन्होंने बड़ा रास्ता न पकड़ कर पगडंडी पकड़ी थी।

जंगबहादुर ने पीछे से आने वाले इन घोड़ों की आहट दूर से सुन ली थी। उन्हें देख कर उसे शंका हुई थी कि वे उसे पकड़ने आ रहे हैं। उसने ऐसा दिखलाया कि उस जैसे मामूली नेपाली से इन घुड़सवारों का क्या वास्ता हो सकता है। उसने एक ओर हट कर घोड़ों को आगे निकल जाने के लिए

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राह दे दी। पर लगा कि घुड़सवारों को उससे आगे जाने की कोई जल्दी नहीं थी। उनमें से एक ने पूछा : "क्यों भाई, कहाँ जाते हो ?"

जंगबहादुर उनसे बात नहीं करना चाहता था। बात करने से उसका पहचाना जाना सुनिश्चित था। पर प्रश्न का उत्तर न देना भी संदेह उत्पन्न करता। अतः उसने हाथ उठा कर सामने की ओर इशारा कर दिया। मतलब था वसन्तपुर।

पर घुड़सवार की जिज्ञासा इतने से शान्त न हुई। उसने अगला प्रश्न पूछा: "कहाँ से आते हो ?"

इस बार जंगबहादुर ने फिर मुड़कर हाथ से पीछे की ओर इशारा कर दिया, पर उससे कुछ स्पष्ट नहीं हुआ कि वह कहाँ से आ रहा है। घुड़सवार ने पूछा : "मुँह में कुछ तकलीफ़ है ?"

जंगबहादुर ने सिर हिला कर इशारा किया—हाँ।

भीमबहादुर और उसके सिपाहियों ने अपने घोड़े आगे बढ़ाये। ऐसा बहुत बार होता है कि जिस चीज़ को ढूंढने की बहुत अधीरता होती है, वह ठीक आँखों के सामने पड़ी होने पर भी दिखाई नहीं पड़ती। सिपाहियों की यह टोली काज़ी जंगबहादुर को ढूँढने के लिए इतनी बेचैन थी कि जब वह उसे सामान्य वेश में मिला, तब वह उसे पहचान ही न पाई। वे सिपाही उसे उसी वेश में देखने की आशा लगाये थे, जिसमें वह उन्हें काठमांडौ में प्राय: दिखाई पड़ता था। जब वे घुड़सवार थोड़ा आगे निकल गये, तब जंगबहादुर ने चैन की साँस ली और अपनी चाल कुछ धीमी कर दी।

अभी वे मुश्किल से दो सौ कदम बढ़े होंगे कि एकाएक भीमबहादुर को कुछ स्फुरणा सी हुई। उसने चौंक कर पूछा : "अभी जो आदमी मिला था, वह कौन था ?"

तुरन्त सबके मन में यह प्रश्न उठा—कहीं वह जंगबहादुर तो नहीं था ? उन्होंने घोड़ों की लगामें खींचीं और उन्हें वापस मोड़ा। इस समय जंगबहादुर पेड़-पौधों की ओट में हो गया था, और तुरन्त दिखाई नहीं पड़ा। इससे उनका संदेह और पक्का हो गया और वे दुलकी चाल से वापस लौटे। कुछ ही दूर लौटने पर जंगबहादुर उन्हें फिर दिखाई पड़ गया और अब उसे पहचानने की ज़रूरत न रही।

जब जंगबहादुर ने इन सवारों को लौटते देखा, तब उसका दिल बैठ गया। वह समझ गया कि अब पकड़े गये। एक बार उसने सोचा कि भाग खड़ा हो, पर यह सोच कर नहीं भागा कि इन पाँच घुड़सवारों से बच कर भाग पाना उसके लिए असंभव होगा। उसकी कमर में खुखरी बँधी थी। पर वे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घुड़सवार भी सशस्त्र थे । लड़ कर उनमें से किसी एक से भी जीत पाने की आशा नहीं थी । फिर वे तो पाँच थे । सब कुछ सोच-विचार कर उसने अपने आपको पूरी तरह भाग्य-भरोसे छोड़ दिया ।

इस बार वे घुड़सवार उसके पास-पास पहुँचते ही घोड़ों से उतर पड़े । भीमबहादुर ने आगे बढ़ कर कहा : "काज़ी जी, आपको महारानी जीने याद किया है ।"

अब जंगबहादुर का कुछ भी अभिनय करना व्यर्थ था । वह समझ गया कि मौत का शिकंजा कसना शुरू हो गया है । बचना कठिन है । फिर भी अपनी ओर से प्रयत्न तो करना ही चाहिए । भीमबहादुर ने बात विनयपूर्वक की थी; इसका लाभ उठाते हुए उसने रौब के साथ कहा : "इस समय तो मैं वसन्तपुर जा रहा हूं । तीन दिन बाद लौटूंगा । तब महारानी जी की सेवा में उपस्थित होऊँगा ।"

"महारानी जी ने तुरन्त बुलाया है ।"

"अभी तो मैं देवी भवानी के दर्शन के लिए जा रहा हूं । इस समय किसी तरह नहीं लौट सकता । यह हो सकता है कि परसों ही लौट आऊँ ।"

"कल-परसों की बात नहीं । दरबार का हुक्म है कि आपको तुरन्त हाज़िर किया जाये ।" भीमबहादुर की वाणी में कठोरता आ गई ।

जिस अनुपात में भीमबहादुर की वाणी कठोर हुई, उसी अनुपात में जंग-बहादुर का रौब कम हो गया । उसने चिरौरी सी करते हुए कहा : "क्या तुम एक दिन की मुहलत भी नहीं दे सकते ?"

"एक मिनट की भी नहीं ।"

जंगबहादुर ने एक बार फिर अकड़ दिखाने की कोशिश की । थोड़ा तन कर उसने कहा : "और अगर मैं न चलूँ, तो ?"

"मुझे हुक्म है कि आपको कैद करके घोड़े की काठी पर बाँध कर ले आऊं ।"

घोड़े की क़ाठी पर बाँध कर ले जाये जाने की अपेक्षा जंगबहादुर ने घोड़े पर बैठ कर जाना पसन्द किया । पर उसे अलग घोड़ा नहीं दिया गया । उसे एक सवार के पीछे बैठने को कहा गया । दो सवार आगे और दो सवार पीछे चले । पीछे वाले सवारों में एक भीमबहादुर स्वयं था और वह इस बात के लिए सतर्क था कि जंगबहादुर भागने की चेष्टा न करे ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

50

तख्ते से तख्त पर

जंगबहादुर को रानी राज्यलक्ष्मी के सामने पेश करके भीमबहादुर विनय-पूर्वक एक ओर खड़ा हो गया। रानी ने उसे आँख के संकेत से कमरे से चले जाने को कहा। उसके चले जाने पर रानी ने जंगबहादुर से कहा : "क्या बात है ? आप घर से भाग क्यों गये थे ?"

रानी का मनोभाव जंगबहादुर कुछ समझ न सका। वह उसे दंड देना चाहती है या क्षमा कर देने को तैयार है। अतः उसने भी अपना भाव प्रकट न करते हुए कहा : "भागा नहीं था सरकार। देवी भवानी के दर्शन के लिए जा रहा था।"

"झूठ !" रानी ने हल्की-सी झिड़की देते हुए कहा। "कल रात लड़ाई में आपने इतनी वीरता दिखाई और उसके बाद इस प्रकार कायर बन कर भाग खड़े हुए। छिः !"

जंगबहादुर सिर झुकाये चुपचाप खड़ा रहा। कुछ देर चुप रहने के बाद रानी फिर बोली : "कल रात की मारकाट के बाद अब बचा कौन है ? यदि आप भी भाग जायेंगे, तो देश का शासन क्या भूत-प्रेत आकर चलायेंगे ?"

अब जंगबहादुर को रानी का रुख स्पष्ट पता चल गया। उसने अत्यधिक विनय जताते हुए कहा : "मैं क्यों भागूँगा सरकार? मैं तो आपके आदेश का दास हूं। जो कहेंगी, वह करूँगा।"

"हाँ, यह है वीरों की सी बात ! आप भाग जायें, मैं भाग जाऊँ, तो राज्य कौन करेगा ? दृढ़ होकर रहिये। इस समय नेपाल का शासन तंत्र सूना हो गया है। कोई पदाधिकारी ही नहीं रहा। मुझे इसे नये सिरे से गढ़ना है। चार काजियों में से आप ही एक बचे हैं और आप ही एक ऐसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्यक्ति हैं, जिसे नेपाल की शासन व्यवस्था का ज्ञान और अनुभव है। ऐसे व्यक्ति की मुझे इस समय बड़ी आवश्यकता है।"

जंगबहादुर का मन हुआ कि वह रानी के पैरों पर गिर पड़े और गगनसिंह की हत्या का जो अपराध उससे हो गया था, उसके लिए क्षमा माँग ले। कहाँ तो वह अपने प्राणों के लिए चिन्तित और भयभीत था, और कहाँ रानी उसे शासन सँभालने के लिए एकमात्र गुणी और अनुभवी पुरुष बता रही थी। पर उसने स्वयं को वश में रखा और विनयपूर्वक बोला : "मैं हर तरह से सेवा के लिए उद्यत हूँ।"

"आपको यह वचन देना होगा कि आप सदा मेरे प्रति निष्ठावान रहेंगे।"

"मैं शपथपूर्वक वचन देता हूं कि आजीवन आपके प्रति निष्ठावान रहूँगा। आप को ही नेपाल की शासिका स्वीकार करूंगा।"

रानी ने बीच में ही टोक कर कहा : "नहीं नहीं ; नेपाल के शासक तो महाराज ही है। आपको केवल इतनी शपथ लेनी है कि आप कभी मेरा विरोध न करेंगे और मेरी आज्ञा का पालन करेंगे।"

"मैं भगवान पशुपतिनाथ को साक्षी करके शपथ लेता हूं कि मैं आपका कभी भी, किसी भी दशा में विरोध न करूंगा और आप मुझे जो भी आज्ञा देंगी, उसका सदा तत्परतापूर्वक पालन करूंगा।"

"ठीक है। मैं आपके वचन पर पूरा विश्वास करती हूं। मैं अभी से आपको नेपाल का सेनापति नियुक्त करती हूं। यह पद देर तक रिक्त नहीं रहना चाहिए।"

जंगबहादुर को अपने कानों पर विश्वास ही न हो रहा था। रानी राज्यलक्ष्मीदेवी, जिसे यह पता चल चुका था कि उसी ने गगनसिंह की हत्या की है और जो कल शाम स्वयं तलवार लेकर गगनसिंह के हत्यारे की बोटी-बोटी काट फेंकने के लिए पागल थी, स्वयं अपनी इच्छा से उसे नेपाल राज्य का सेनापति नियुक्त कर रही है। उसने खूब नीचा सिर झुकाकर रानी को प्रणाम किया और गद्गद स्वर में कहा : "मैं आपकी इस कृपा को कभी नहीं भूलूंगा। सदा याद रखूंगा।"

"अब महाराज के पास जाइये। उन्हें भी यह सूचना दे दीजिये। बाकायदा नियुक्ति उन्हीं के आदेश से होगी।"

उसके बाद रानी ने भीमबहादुर को बुलाया और कहा : "भीमबहादुर, काज़ी जंगबहादुर आज से नेपाल के सेनापति हैं। आपको महाराज के पास ले जाओ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भीमबहादुर मानो आकाश से भूमि पर गिर पड़ा। क्षण भर तो वह मुंह बाये जंगबहादुर के चेहरे की ओर देखता रहा, उसके बाद विनयपूर्वक पीछे हटते हुए हाथ से दरवाज़े की ओर संकेत करते हुए बोला : "आइये।"

रानी को एक बार फिर प्रणाम करके जंगबहादुर दरवाज़े की ओर बढ़ा और उसके पीछे-पीछे भीमबहादुर भी कमरे से बाहर निकल गया।

मन्दाकिनी शायद उन दोनों के जाने की प्रतीक्षा ही कर रही थी। वह तुरन्त कमरे में आ पहुंची। रानी ने प्रसन्न चेहरे से कहा : "मैंने जंगबहादुर को सेनापति बना दिया है। कैसा रहा ?"

मन्दाकिनी ने उसकी प्रसन्नता में हिस्सा न बँटाते हुए कहा : "साँप गले में डाल लिया है। बहुत जल्दी की।"

"देर करने की गुंजाइश कहाँ थी ? मैं तो समझती हूं कि जंगबहादुर को साथ मिला कर मैंने अपना पक्ष मज़बूत कर लिया है। अब मुझे महाराज से भय नहीं है।"

"महाराज वैसे ही कौन सी फांसी दिये दे रहे थे ? मैंने पहले भी आपसे कहा था कि असली भय जंगबहादुर से है। अब भी कुछ हो सकता हो, तो कीजिये। इस आदमी को तो कालकोठरी में होना चाहिए।"

रानी राज्यलक्ष्मी ने क्षण भर सोचा। उसे लगा कि मन्दाकिनी की बात बिल्कुल सही है, फिर भी उसने एक अलस निष्क्रियता की सी भावना से कहा : "चल, जो हो गया, सो ठीक है। शायद भगवान की यही इच्छा है !"

मन्दाकिनी ने भी कहा : "तो ठीक है। शायद भगवान की यही इच्छा है !" और वह कुछ बेचैन सी कमरे से निकल गई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

51

अकर्मण्य राजा

महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम की वह सारी रात भारी चिन्ता और भय में बीती। रह रह कर उन्हें शंका होती कि उनकी और उनके पुत्रों की हत्या करने के लिए मुँह पर कपड़ा लपेटे हत्यारे आ रहे हैं। वह उनकी आहट सुनने की कोशिश करते। दरवाज़ा उन्होंने मज़बूती से बन्द किया हुआ था। वह खिड़की में से और दरवाज़े की संधों में से बाहर देखने का यत्न करते। पर कुछ दिखाई न पड़ता। इस तरह जब सवेरा हो गया और कोई हत्यारा नहीं आया, तब उनका हौसला बँधा। वह सोचने लगे कि अब क्या करना होगा। राज्य उनका है। इसका संचालन उन्हें करना है। पर अब तक सदा ही उनकी ओर से सारा काम दूसरे लोग करते रहे थे। उन्हें स्वयं सोचने और कुछ करने की आवश्यकता कम ही होती थी। रानी, प्रधान मंत्री, सेनापति, काज़ी, ये ही सब मिल-जुल कर काम चला लेते थे और महाराज को तो केवल खानापूरी के लिए कहीं-कहीं पंजा छाप ही लगानी होती थी।

आज उन विश्वस्त सहायकों में से कोई नहीं रह गया है। रानी है, पर वह खून की प्यासी दुश्मन बन गई है। जंगबहादुर ने कल जो कुछ किया है, उसे देखते हुए स्पष्ट है कि वह नेपाल के राज्य पर स्वयं अधिकार कर लेना चाहता है। तभी तो उसने चुन चुन कर एक एक भारदार को मार डाला है। सेना इस समय बेलगाम घोड़े की तरह है। कहना कठिन है कि वह किसका आदेश मानेगी—महाराज का, रानी का या जंगबहादुर का? सेना पर रानी का प्रभुत्व सेनापति गगनसिंह के द्वारा था। जंगबहादुर सेना की एक टुकड़ी का स्वयं अध्यक्ष है। कम से कम वह टुकड़ी तो उसका आदेश आँख मींच कर मानेगी ही। कल रात कोट के बाहर वही टुकड़ी तो उसने ला खड़ी की थी। महाराज का सेना से सीधा सम्पर्क नहीं रहा था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्होंने जयसिंह को भेजा कि वह देख कर ग्राये कि रात कोट के फाटक पर जो जंगबहादुर के सैनिक तैनात थे, वे ग्रभी हैं या चले गये। जयसिंह ने लौट कर बताया कि वे सैनिक तो रात में ही जंगबहादुर के साथ चले गये थे। यह सुन कर महाराज की हिम्मत ग्रौर बढ़ी। उन्हें लगा कि ग्रभी मामला एकदम वेकाबू नहीं हुग्रा है। स्थिति को सँभाला जा सकता है। उन्होंने जयसिंह को भेज कर सेना के कुछ ग्रफ़सरों को बुलवाया।

ठीक उसी समय जंगबहादुर ग्रौर उसके पीछे-पीछे चलता हुग्रा भीमबहादुर महाराज के कक्ष के सामने ग्रा उपस्थित हुए। जयसिंह बाहर ही था। जंगबहादुर को देख कर उसने ग्रवज्ञा से मुँह दूसरी ग्रोर फेर लिया। भीमबहादुर ने ग्रागे बढ़ कर उससे पूछा : "महाराज हैं ?"

जयसिंह ने सिर हिलाते हुए कहा : "हाँ, क्या बात है ?"

"काज़ी जी को महारानी जी ने सेनापति नियुक्त किया है। ग्राप इस समय महाराज के दर्शन करना चाहते हैं।"

जयसिंह ने ग्राश्चर्य ग्रौर ग्रविश्वास से भरी ग्राँखों से एक बार भीमबहादुर ग्रौर एक बार जंगबहादुर की ग्रोर देखा ग्रौर कहा : "मैं ग्रभी महाराज को सूचना देता हूं।" यह कह कर वह भीतर चला गया।

सुन कर महाराज हक्का-बक्का रह गये। विस्मित हो कर पूछने लगे : "जंगबहादुर ग्राया है ? रानी ने उसे सेनापति बना दिया है ? तो वह यहाँ क्यों ग्राया है ?" एक बार तो उनका मन हुग्रा कि इस नीच को ग्रभी यहीं कत्ल करवा दिया जाये। रात जो इसने बिना बात इतना खून बहाया है, उसका फल उसे हाथोंहाथ मिल जाये। पर तभी ध्यान ग्राया कि रानी ने उसे सेनापति बना दिया है। रानी कौन होती है उसे या किसी को भी सेनापति बनाने वाली ? पर यह तो स्पष्ट है कि उन दोनों में कोई समझौता हो गया है। रानी ने जंगबहादुर को सेनापति बना दिया है ? गगनसिंह के हत्यारे को ? शायद ग्रभी उसे पता नहीं है कि गगनसिंह की हत्या इसी ने की है ?

ये ग्रौर ऐसी कितनी ही बातें महाराज के मन में एक क्षण में बिजली की तरह कौंध गईं। पर वह देर तक विचारमग्न नहीं रह सकते थे। सामने खड़ा जयसिंह उनके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था।

एक बार उन्होंने सोचा कि वह जंगबहादुर से मिलने से इन्कार कर दें ग्रौर जयसिंह को ही ग्रादेश दें कि वह उसे बन्दी बना ले। पर ग्रकेला जयसिंह क्या उसे कैद कर सकेगा ? फिर उन्होंने सोचा कि एक बार उससे मिलने में क्या हर्ज है ? देखें तो, वह क्या कहता है। ग्रपनी इस करतूत की वह क्या सफ़ाई देता है ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ देर तक इन विचारों में उलझे रहने के बाद महाराज ने जयसिंह की ओर देखा और कहा : "अच्छा बुला लाओ। तुम साथ आना और यहीं रहना। वह कोई हथियार न लाये।"

हथियार जंगबहादुर के पास था ही नहीं। पर जितनी देर जयसिंह भीतर महाराज के पास रहा, उतनी देर में जंगबहादुर ने सोच लिया कि उसे क्या करना है। उसने भीमबहादुर से बाहर ही रहने को कहा। पर जयसिंह ने कहा : "महाराज ने सबको बुलाया है। भीमबहादुर, तुम भी चलो।"

जंगबहादुर ने दूर से ही खूब सिर झुका कर महाराज को प्रणाम किया। विनय प्रदर्शित करते हुए भी उसके चेहरे पर दृढ़ता का भाव था। उसने महाराज के निकट पहुँच कर कहा : "सरकार से अकेले में कुछ निवेदन करना था।"

जंगबहादुर को देख कर महाराज को कुछ विचित्र-सी घबराहट होने लगी। उनके मन में क्रोध, खीझ और बेबसी का एक मिश्रित सा भाव प्रबल हो उठा। मुँह से कुछ न कह कर उन्होंने हाथ के इशारे से सूचित किया कि जो कुछ कहना हो, यहीं कहो।

क्षण भर को जंगबहादुर को कुछ संकोच हुआ; पर अगले क्षण उसने उस संकोच को त्याग दिया और कहा : "सरकार, कल जो कुछ हुआ है, वह आपको मालूम है। सेनापति कोई नहीं रहा, इसलिए महारानी जी ने कृपा करके मुझे सेनापति बना दिया है। पर इस समय राज्य का प्रधानमंत्री भी कोई नहीं है। मेरी प्रार्थना है कि मुझे प्रधानमंत्री बना दिया जाये।"

जंगबहादुर के इस दबंगपन से महाराज अवाक् रह गये। उन्होंने यह कल्पना भी न की थी कि वह ऐसी बात कहेगा। एकाएक उन्हें कोई उत्तर न सूझा। अतः उन्होंने मुँह से कुछ बिना बोले हाथ से इशारा करके जयसिंह से पूछा कि यह क्या कहता है?

जंगबहादुर ने महाराज के उस इशारे को देखा और समझ लिया कि महाराज उसका उपहास करना चाहते हैं। फिर भी उसने क्रुद्ध होने के बजाय और भी विनयपूर्ण स्वर में कहा : "सरकार, जो कुछ मैंने किया है, उसके कारण यदि आप मुझे अपराधी समझते हैं, तो मुझे दंड दीजिये। मैं ज़रा भी उज्र न करूँगा। मैंने आप की भी सेवा की है। पर यदि आप मुझे अपराधी नहीं समझते, तो मुझे प्रधान मंत्री बना दीजिये। अन्य कोई व्यक्ति प्रधानमंत्री बनने के लिए मुझसे अधिक योग्य नहीं है।"

महाराज ने अब भी मुँह से कुछ नहीं कहा। उन्होंने ऐसा जताया कि उनके मुँह में वाणी ही नहीं रही है। हाथ के इशारे से उन्होंने बताया कि जंगबहादुर जो कुछ कह रहा है, उसका कुछ अर्थ वह समझ नहीं पा रहे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जंगबहादुर कोई अस्पष्ट या जटिल बात नहीं कह रहा था। प्रकट था कि महाराज का मन स्वस्थ दशा में नहीं था। वह उसे प्रधानमंत्री बनाने को तैयार नहीं थे। पर वह उसका दमन करने में भी घबराहट अनुभव करते थे।

जब एक बार और कह कर भी जंगबहादुर महाराज को अपनी बात न समझा सका और वह उसी तरह उसकी बात न समझ पाने का इशारा करते रहे, तब जयसिंह ने धीरे से कहा : "काज़ी जी, इस समय महाराज का चित्त ठिकाने नहीं है। आप इस समय पधारिये। कुछ समय बाद फिर आइयेगा।"

उसकी इस सलाह को मानने के सिवाय अन्य कोई उपाय नहीं था। लांछित और तिरस्कृत सा जंगबहादुर उन दोनों के साथ उस कमरे से बाहर निकल आया। महाराज ने बहुत चाहा कि वह जयसिंह और भीमबहादुर को आदेश दें कि वे जंगबहादुर को वहीं बन्दी बना लें, किन्तु पक्का निश्चय करके वह मुँह खोल कर ऐसा आदेश दे नहीं सके। इसका फल यह हुआ कि जंगबहादुर रानी के पास लौट गया और महाराज के हाथ से एक सुनहला अवसर सदा के लिए निकल गया।

जंगबहादुर के चले जाने पर महाराज की घबराहट कम नहीं हुई, बल्कि और बढ़ गई। रानी और जंगबहादुर में समझौता हो गया है, यह सोच कर उनकी ग्लानि की सीमा न रही। रानी के प्रति तो उनका मन पहले ही कड़वा हो चुका था। वह अपना विवेक खो चुकी थी। अब जंगबहादुर जैसे दुष्ट व्यक्ति के साथ मिल कर वह जो कुछ न कर डाले, वही कम है।

महाराज शासन अपने हाथ में लेने का जो यत्न करने लगे थे, उसका उत्साह भी अब समाप्त हो गया। वह यह सोच कर ही हिम्मत हार गये कि रानी और जंगबहादुर इस काम में उनसे कहीं अधिक निपुण हैं और अब तक वे दोनों सेना के अधिकारियों को अपनी ओर मिला चुके होंगे। ऐसी दशा में ऐसा कोई भी प्रयत्न, जो बाद में असफल रहे, उनकी क्रोधाग्नि को भड़कायेगा ही। दुःसाहस और दबंगपन राजेन्द्रवीरविक्रम के स्वभाव में ही नहीं था। जब तक गाड़ी शान्तिपूर्वक चल रही थी, तब तक चल रही थी। अब जब वह अटकती प्रतीत हुई, तब उन्होंने रास्ता दूसरों के लिए छोड़ देने का निश्चय किया। जयसिंह को बुला कर उन्होंने कहा : "जयसिंह, मैं पाटन जाऊँगा। वहीं रहूंगा। प्रबन्ध करो।"

जयसिंह सुन कर दंग रह गया : "पर सरकार, सैनिक अफ़सरों से जो बात हो चुकी है, उसका क्या होगा ?"

"मैंने सोच कर देखा है। उसमें सफलता की आशा नहीं है। रानी और जंगबहादुर पहले ही जोड़-तोड़ कर चुके होंगे। अब हाथ-पांव मारने से केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कटुता और कलह ही बढ़ेगी। मैं अशान्ति और उपद्रव नहीं चाहता। देखो न, कल रात ही क्या हो गया!"

जयसिंह को मन ही मन महाराज पर बड़ी दया आई। इन्हें राजसिंहासन पर किसने बिठा दिया? इस सिंहासन पर तो उसे बैठना चाहिए, जिसे अशान्ति और उपद्रव की तरंग पर तैरने में आनन्द आता हो। राज्य उन्हीं के हाथ में रहता है, जो आगे बढ़ कर दूसरे से उसका स्वत्व और अधिकार छीन लेते हैं। न्याय और धर्म तो शक्ति का अनुसरण करते हैं। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' राजनीति का ही नहीं, जीवन का भी एकमात्र सत्य सिद्धान्त है। इससे विपरीत या भिन्न सब सिद्धान्त केवल लीपापोती मात्र हैं; वे मिथ्या हैं। कहाँ तो उचित यह था कि हारने की पूरी संभावना होने पर भी महाराज शासन सत्ता हथियाने—या सच कहा जाये तो उसे अपने हाथ में बनाये रखने—के लिए जान की बाज़ी लगा देते, और कहाँ यह संघर्ष शुरू होने से पहले ही मैदान छोड़ कर भाग रहे हैं। वह भी तब, जब कि जीत की भी उतनी ही संभावना है, जितनी हार की। जयसिंह ने सोचा और चाहा कि वह महाराज को धीरज बँधाये और उनका उत्साह बढ़ाये, पर तभी उसे ध्यान आया कि इन मामलों में गाँठ की पूँजी ही काम आती है; उधार ली हुई हिम्मत और सूझ बूझ से राज्य नहीं चला करते। यदि इस समय महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम किसी तरह संघर्ष करने को राज़ी हो गये और आगे चल कर बीच में हिम्मत हार बैठे, तो उसका परिणाम उनके अपने लिए तो बुरा होगा ही, उनका साथ देने वालों के लिए भी बुरा होगा। यह सोच कर वह चुप रहा।

महाराज ने फिर कहा: "अब इस महल में मैं क्षण भर भी नहीं रहना चाहता। यहाँ की वायु विषैली हो गई लगती है। जल्दी पाटन चलने का प्रबन्ध करो।"

प्रबन्ध शीघ्र ही हो गया और महाराज हनुमान ढोका दरबार के उस दम घोंटने वाले वातावरण से निकल कर काठमांडौ से तीन मील दूर बसे छोटे से उपनगर ललितपुर पाटन चले गये। उनके मस्तिष्क का संतुलन सचमुच ही कुछ बिगड़ गया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

52

कुल्हाड़ी अपने पैरों पर

जंगबहादुर ने लौट कर रानी राज्यलक्ष्मीदेवी को सही-सही बता दिया कि महाराज ने उससे कोई बात ही नहीं की; उल्टे ऐसा अभिनय किया कि जैसे उनका दिमाग खराब हो गया है। इस बात को छिपाने का कोई लाभ नहीं था, क्योंकि देर सवेर में यह बात भीमबहादुर से रानी को पता चल ही जाती। परन्तु उस समय जंगबहादुर रानी से इस बात को छिपा गया कि उसने महाराज से सेनापति का नहीं, वल्कि प्रधान मंत्री का पद माँगा था। सेनापति का पद तो उसे रानी से मिल ही चुका था। सुन कर रानी कुछ सोच में पड़ गई। उसका विचार था कि अन्य कोई उपाय न होने के कारण महाराज आसानी से जंगबहादुर को सेनापति बनाने को राज़ी हो जायेंगे। जंगबहादुर से द्वेष या रोष मुझे हो, तो हो, पर महाराज को क्या हो सकता है? पर वह जल्दी धीरज नहीं छोड़ती थी। बोली : "काज़ी जी, आप चिन्ता मत कीजिये। कल जो कुछ हो गया है, उससे आदमी का दिमाग खराब हो जाना ही स्वाभाविक है। पर ऐसा देर तक नहीं रहेगा। जल्दी ही सब कुछ फिर ठीक हो जायेगा। सेनापति के रूप में आज से ही काम शुरू कर दीजिये, जिससे सेना का अनुशासन सही बना रहे। सेना पर अधिकार हमारा रहना चाहिए।"

जंगबहादुर ने मन में सोचा—हाँ, सेना पर तो मेरा अधिकार रहना चाहिए। पर प्रकटतः बोला : "सरकार का कहना बिल्कुल ठीक है। सेना पर कब्ज़ा होना पहली चीज है। मैं अभी अफ़सरों को बुला कर उनसे बात करता हूँ।"

"मुझे डर है कि महाराज भी अफ़सरों को बुला कर बात कर सकते हैं। हो सकता है कि कुछ से उन्होंने बात कर भी ली हो। यदि उन्होंने पहले बात कर ली, तो बहुत से अफ़सर दुविधा में पड़ जायेंगे। आप अपना दफ्तर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान ढोका दरबार में ही बना लीजिये" रानी ने कहा। रानी का खयाल था कि जंगबहादुर हनुमान ढोका दरबार में रहा, तो आवश्यकता पड़ने पर उससे सहायता मिल सकेगी। उधर हनुमान ढोका दरबार में रहने की सुविधा को जंगबहादुर ने बहुत बड़ा वरदान समझा। उसे भय था कि अपने घर में रहना या नगर की सड़कों पर निकलना उसके लिए खतरे से खाली नहीं है। इतने अधिक लोग उसके शत्रु बन गये हैं कि कहा नहीं जा सकता कि कब कौन उसकी जान का ग्राहक बन जाये। इस समय उसकी दशा शिकारी कुत्तों के बीच में फँसे सियार की सी थी।

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी और जंगबहादुर कुछ देर तक महत्वपूर्ण तात्कालिक समस्याओं पर विचार विमर्श करते रहे। एकाएक मन्दाकिनी कमरे में घुस आई और व्यग्र स्वर में बोली : "सरकार, महाराज पाटन चले गये।"

सुन कर रानी और उसका ताज़ा बनाया हुआ सेनापति, दोनों चौंक उठे। पर वे यह न समझ पाये कि यह सुसमाचार है या कुसमाचार। मन्दाकिनी ने जिस स्वर में यह बात कही थी, उससे स्पष्ट था कि वह इसे भारी कुसमाचार समझ रही थी। महाराज अपनी एकमात्र रानी को छोड़ कर चले गये, यह विपत्ति की सूचना नहीं तो क्या है?

कुछ क्षण बाद जब समाचार की आकस्मिकता समाप्त हो गई, तब जंगबहादुर के शान्त मस्तिष्क ने समझ लिया कि उसके लिए तो यह निश्चित रूप से सुसमाचार है। रानी उस पर कृपालु है। महाराज ही उससे रुष्ट थे; वह राजमहल छोड़ कर चले गये हैं, इससे उसके लिए मैदान साफ़ हो गया है। अब दरबार की ओर से भय नहीं है। राजा और रानी एकमत रहते, तो उसके लिए अनिष्ट की आशंका थी।

रानी के मन में शासन पर अधिकार करने की बात घूम रही थी। अपनी अदूरदर्शिता के कारण उसने भी यही समझा कि इस समय महाराज का पाटन चला जाना अच्छा हुआ। पर यह बात उससे छिपी न रही कि उसे बिना बताये, उससे बिना सलाह किये महाराज पाटन चले गये, तो उनके मन में उसके प्रति कितनी विरक्ति और कितनी घृणा भरी होगी। उसकी कल्पना से ही वह सिहर उठी। महाराज के पास जाने और उन्हें मनाने समझाने की उसे न हिम्मत हुई और न इच्छा ही। उसने मरे से स्वर में कहा : "यहाँ उनका जी घबड़ा रहा होगा। कुछ दिन पाटन रहने से बहल जायेगा।"

जंगबहादुर ने उत्साहपूर्वक समर्थन किया : "पाटन का जलवायु काठमांडौ से बहुत अच्छा है।"

उसके स्वर में महाराज की जो अवज्ञा थी, वह रानी को अच्छी नहीं लगी। उसने कहा : "अच्छा, अब आप जाइये और जल्दी से जल्दी सेना

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के अफ़सरों से मिल लीजिये। उसके बाद मुझे बताइये कि क्या परिणाम रहा।"

जंगबहादुर ने कहा : "बहुत अच्छा सरकार।" और वह फिर खूब झुक कर विनयपूर्वक प्रणाम करके बाहर चला गया।

उसके जाते ही मन्दाकिनी ने कहा : "महाराज के बिना आप अकेली यह सारा बखेड़ा सँभाल नहीं सकेंगी।"

"क्यों ?" रानी ने भौंहें चढ़ा कर विस्मय प्रकट करते हुए कहा। "इतने बरसों से राजकाज मैं ही तो चला रही हूँ। महाराज तो कुछ भी नहीं करते थे।"

"वह बात और थी। सब काम जमा जमाया था। सब भारदार एक दूसरे की काट करते रहते थे और आपका काम उनमें केवल संतुलन बनाये रखना होता था। उस पर भी महाराज का सहारा रहता था। सहारे के लिए तो निर्जीव लाठी भी बहुत होती है। महाराज लाठी से तो कम नहीं हैं।"

"कम नहीं हैं, तो अधिक भी नहीं हैं। राजकाज में उनकी रुचि ही नहीं है। पहले बड़ी रानी राज करती थी। उनके बाद से मैं कर रही हूँ।"

"इस तरह सोचना ठीक नहीं सरकार। महाराज को प्रसन्न रखना आपके लिए बहुत आवश्यक है। यदि आप उनसे बना कर नहीं रखेंगी, तो कोई और बना लेगा।"

रानी के मुख पर एक क्रूर हँसी झलक उठी। वह बोली : "बना ले। तुष्ट हो कर पुरस्कार और रुष्ट हो कर तिरस्कार प्रदान करने की शक्ति ही मैं उनके हाथ में नहीं रहने दूँगी। वह शक्ति अभी से मैंने अपने हाथ में ले ली है।"

सुन कर मन्दाकिनी सन्न रह गई। कुछ क्षण चुप रह कर धीरे से बोली : "यह विनाश का मार्ग है। यह राज-शक्ति आप महाराज से छीन नहीं पायेंगी। यदि किसी तरह आपने छीन ली, तो आप उसे एक दिन भी अपने हाथ में नहीं रख पायेंगी। वह तुरन्त ही किसी और के हाथ में चली जायेगी।"

रानी ने इस अप्रिय भविष्यवाणी से कुछ खीझ कर कहा : "क्यों ? ऐसा सोचने के लिए क्या कारण है ? मुझमें ऐसी क्या दुर्बलता है ?"

"दुर्बलता कुछ नहीं है। हमारी समाज व्यवस्था पुरुष-प्रधान है। सारी शक्ति पुरुषों में निहित है। स्त्रियों का बल केवल यही है कि वे अपने बुद्धि-कौशल से अपनी बात पुरुषों से मनवा सकें। यह काम विशेष कठिन नहीं है। आप, आपसे पहले रानी साम्राज्यलक्ष्मीदेवी और उनसे भी पहले राजदादी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्रिपुरसुन्दरीदेवी यह करती ही रही हैं। परन्तु उसका उपाय यही है कि पुरुषों को अपने वश में रखा जाये। पुरुषों से विरोध करके राजसत्ता पर अधिकार करना टेढ़ी खीर है।"

"मैं भी पुरुषों को वश में रखूँगी। उन्हीं से शासन करवाऊँगी।"

"तो उसके लिए महाराज से अच्छा आदमी सारे नेपाल में मिलना कठिन है।"

"अच्छा, सोचूँगी" कह कर रानी ने इस प्रसंग को यहीं समाप्त कर दिया।

× × ×

18 सितम्बर, 1846 को काठमांडौ में एक विशाल सैनिक परेड का आयोजन किया गया। इस परेड का महत्व इसलिए और अधिक था कि सैनिकों को बताया गया था कि महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी परेड की सलामी लेंगी।

परेड का मैदान सैनिकों से भरा था। घुड़सवार और पैदल टुकड़ियाँ अलग-अलग खड़ी थीं। सभी सैनिक लोहे की जंज़ीरों के बने कवच धारण किये थे। उनकी कमर में खुखरियाँ और तलवारें बँधी थी। बन्दूकें बहुत कम सिपाहियों के पास थीं।

यह परेड कोई बहुत सुव्यवस्थित कवायद नहीं थी। उस समय तक यूरोपीय ढंग की कवायद का प्रचलन नेपाल में नहीं हुआ था। घुड़सवार और पैदल सैनिक एक जगह एकत्र हो गये थे। वे टेढ़ी-सीधी पंक्तियों में खड़े थे और महारानी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे।

नियत समय पर महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी एक पालकी में वहाँ पहुँची। घोड़े पर सवार जंगबहादुर पालकी के पीछे था। पालकी रुकी। जंगबहादुर घोड़े से उतरा। राज्यलक्ष्मीदेवी पालकी से बाहर निकलीं। सैनिक अफसरों ने आगे बढ़ कर रानी का अभिवादन किया। भगवान पशुपतिनाथ, महाराज राजेन्द्रवीरविक्रमशाह और महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी की जय के नारों से आकाश गूँज उठा।

महारानी के लिए एक ऊँचा मंच बनाया गया था। उस पर खड़ी हो कर वह सब सैनिकों को देख सकती थीं और सब सैनिक उन्हें देख सकते थे। जब महारानी उस मंच पर खड़ी हुईं, तब सब सैनिकों के मुख उनकी ओर हो गये। सबको मालूम था कि नेपाल राज्य का संचालन कई बरसों से यही महारानी कर रही हैं।

राज्यलक्ष्मीदेवी ने अपने संक्षिप्त से भाषण में कहा : "नेपाल की सबसे बड़ी निधि उसकी सेना है। हमें अपनी सेना पर गर्व है। पिछले चार-पाँच

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दिनों में बड़ी भयंकर दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएँ हुई हैं। अनेक योग्य और गुणी भारदार हमारे बीच से उठ गये हैं। सारा शासन अस्त-व्यस्त हो गया है। यह बड़े संकट का समय है। ऐसे समय शासन की बागडोर अनुभवी और सशक्त हाथों में रहनी चाहिए। सारी परिस्थितियों पर विचार करके मैंने कँवर जंगबहादुर को नेपाल राज्य का प्रधान मंत्री और सेनापति नियुक्त किया है। आप सबको मेरा आदेश है कि आप लोग आज से उनकी आज्ञाओं का पालन उसी प्रकार करें, जिस प्रकार अब तक प्रधानमंत्री और सेनापति की आज्ञाओं का करते रहे हैं।"

इतना कह कर महारानी ने जंगबहादुर को मंच पर आने का संकेत किया। जंगबहादुर अत्यन्त कृतज्ञ और विनीत भाव से मंच पर चढ़ा और सैनिकों की ओर हाथ जोड़ कर सिर झुका कर खड़ा हो गया। किसी एक सैनिक ने नारा लगाया : "महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी की जय ! कंवर जंग-बहादर की जय !"

सभी सैनिकों ने खूब उत्साह से इस जयघोष में अपना स्वर मिलाया। उस जन समुदाय में ऐसे लोगों की कमी नहीं थी, जिन्हें महारानी की यह घोषणा पसन्द नहीं आई। पर उनमें से किसी ने भी उस समय अपने मनोभाव को प्रकट नहीं किया। समारोह निर्विघ्न समाप्त हुआ।

जंगबहादुर जिस प्रकार महारानी के साथ गया था, उसी प्रकार उसके साथ ही राजमहल में वापस लौटा। थोड़ा एकान्त पा कर उसने अत्यन्त विनय प्रदर्शित करते हुए कहा : "आज आपने मुझ पर महान अनुग्रह किया है। आजीवन मैं उसे कभी भूलूँगा नहीं। मुझसे जब भी जो भी सेवा संभव होगी, उसे करने में कभी त्रुटि न करूँगा। आप मुझ पर पूरा विश्वास रखें।"

राज्यलक्ष्मीदेवी ने उसकी ओर प्रसन्नता भरी दृष्टि से देखा और बोली : "भगवान पशुपतिनाथ आपकी भावना सदा ऐसी ही बनाये रखें।" उसके मन में कुछ योजनाएं थीं, जिनके कारण उसे आशंका थी कि शायद जंगबहादुर की यह सुबुद्धि देर तक ऐसी नहीं रहेगी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

53

रैज़ीडेंट का कठपुतला

14 सितम्बर की काल रात्रि से ही अंग्रेज़ रैज़ीडेंट कर्नल लारैन्स जंगबहादुर की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे अपने आदमियों से राजधानी के सब समाचार प्राप्त होते रहे थे और उसे आशा थी कि उसकी सलाह के अनुसार संघर्ष में सफलता प्राप्त करने के बाद जंगबहादुर न केवल आभार प्रदर्शित करने उसके पास आयेगा, बल्कि भविष्य के मार्ग दर्शन के लिए भी। पर वह आया नहीं, इससे उसे बेचैनी हो रही थी।

कर्नल लारैन्स को सब घटनाओं का तो पता चलता रहा था, और वह स्पष्ट देख रहा था कि बाज़ी जंगबहादुर ने जीत ली है, किन्तु उसे जंगबहादुर के मन में हुई उथल-पुथल का कुछ भी ज्ञान या अनुमान नहीं था। उसे यह भी पता नहीं था कि जंगबहादुर भय के प्रबल आवेश में जीती हुई बाज़ी को छोड़ कर काठमांडौ से ही भाग खड़ा हुआ है। इसीलिए उसे यह आश्चर्य हो रहा था कि जंगबहादुर अभी तक उसके पास आया क्यों नहीं।

जंगबहादुर अपने जीवन-मरण के संघर्ष में ऐसा उलझा था कि उसे क्षण भर के लिए भी इधर-उधर देखने की फ़ुरसत नहीं मिली। उसने अपने प्रतिद्वन्द्वियों—महाराज और महारानी—की दुर्बलता को सही नहीं आँका और इसीलिए अनावश्यक रूप से भयभीत होता रहा। वस्तुतः वह एक ही छलांग में जितनी ऊँचाई पर पहुँच रहा था, वह इतनी अधिक थी, कि उसे किसी तरह यह विश्वास नहीं हो रहा था कि वह इतनी जल्दी इतना ऊँचा उठ सकता है। जब तक छलांग पूरी न हो और वह दूसरे किनारे पाँव जमा कर खड़ा न हो जाये, तब तक आकाश में उसे अपनी स्थिति इतनी डाँवाडोल लगती थी कि वह किसी भी क्षण कहीं भी गिर सकता था। अतः किसी से मिलने-जुलने या इधर-उधर देखने की उसे फ़ुरसत नहीं थी। वह जिस भँवर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में फँसा था, उससे जूझने में ही उसकी सारी शक्ति लगी थी। आज परेड मैदान में महारानी की घोषणा के बाद जंगबहादुर का संघर्ष सफलतापूर्वक समाप्त हुआ और वह आज शाम को अंग्रेज़ रैज़ीडैंट की कोठी पर जाने का निश्चय कर चुका था।

पर जब अंग्रेज़ रैज़ीडैंट ने यह समाचार सुना कि महारानी ने परेड में स्वयं जंगबहादुर को प्रधान मंत्री बनाने की घोषणा कर दी है, तब उसने जंगबहादुर के आने की प्रतीक्षा नहीं की, अपितु वह स्वयं ही जंगबहादुर से मिलने जा पहुँचा। मिलने जाने के लिए यथेष्ट कारण था—नये प्रधान मंत्री को बधाई देना।

अंग्रेज़ रैज़ीडैंट को उसके यहाँ आना पड़ा, इसके लिए जंगबहादुर ने मन ही मन बहुत संकोच अनुभव किया। उसने बड़े आदर और उत्साह के साथ उसका स्वागत किया। बहुत से लोग जंगबहादुर को बधाई देने और उसकी नज़रों में चढ़ने के लिए वहाँ आये हुए थे। उन सब को तनिक प्रतीक्षा करने के लिए कह कर जंगबहादुर अंग्रेज़ रैज़ीडैंट के साथ एकान्त में बातचीत करने चला गया।

कर्नल लारैन्स ने परम आत्मीयता दिखाते हुए कहा : "विजय के लिए बधाई जंगबहादुर साहब!"

कर्नल लारैन्स उसे सदा जंगबहादुर कह कर ही संबोधन किया करता था, पर आज प्रधान मंत्री बन जाने के कारण नाम के साथ 'साहब' जोड़ देना उसे आवश्यक प्रतीत हुआ।

जंगबहादुर ने हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा : "यह सब आपकी ही कृपा है। यदि आपने मार्ग न दिखाया होता, तो मैं यहाँ तक कभी पहुंच नहीं सकता था। इस बात को मैं अच्छी तरह समझता हूँ और कभी भूलूंगा भी नहीं। राजकाज को मैं समझता नहीं हूँ। आगे भी आपको ही रास्ता दिखाते रहना होगा।"

रैज़ीडैंट मन ही मन बहुत खुश हुआ। वह तो प्रधानमंत्री का मार्गदर्शन करने के लिए स्वयं ही अत्यधिक लालायित था। पर अपने उस भाव को प्रकट न करके उसने थोड़ा हँसते हुए कहा : "नहीं नहीं। यह आपकी अत्यधिक विनम्रता है। आप राजकाज खूब समझते हैं। यदि कहीं थोड़ी बहुत कसर होगी, तो उतना गद्दी स्वयं सिखा देती है। फिर भी, जब भी आप चाहेंगे, मैं सहायता के लिए सदा उद्यत हूँ। पर आशा करता हूँ कि उसकी आवश्यकता पड़ेगी नहीं।"

"पड़ेगी, बहुत पड़ेगी, बहुत बार पड़ेगी। आप इस तरह बच कर पीछे नहीं हट सकेंगे।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अवसरविज्ञ रैज़ीडैंट इस समय प्रधान मंत्री का अधिक समय नहीं लेना चाहता था। बहुत से लोग प्रधानमंत्री की प्रतीक्षा कर रहे थे। अतः वह उठ खड़ा हुआ और बोला : "समय हो, तो शाम को रैज़ीडैंसी में आइये।"

"आप अभी से चलने लगे ? कुछ देर बैठिये।"

"इस समय नहीं। उधर बहुत से लोग आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

"करने दीजिये उन्हें प्रतीक्षा। यह सिलसिला तो अब सदा लगा ही रहना है। आप बैठिये।"

"नहीं। इस समय नहीं। फिर आऊंगा। शाम को आप उधर आइये।"

जंगबहादुर ने क्षण भर सोच कर कहा : "अच्छा, आज नहीं, कल शाम को आऊँगा।" वह रैज़ीडैंट को छोड़ने के लिए दरवाज़े तक आया और बोला: "अच्छा, नमस्कार !"

"नमस्कार !" अंग्रेज़ रैज़ीडैंट ने मुस्कराते हुए कहा और वह अपनी पालकी में बैठ कर चल दिया। जंगबहादुर लौट कर उन नेपाली प्रतिष्ठित पुरुषों के पास आ गया, जो उससे आत्मीयता बढ़ाने के लिए एकत्रित थे।

× × ×

अंग्रेज़ रैज़ीडैंट कर्नल लारैन्स परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढालने में खूब कुशल था। इस बात का भी वह सदा ध्यान रखता था कि उसका अपना आचरण सदा परिस्थतियों के अनुकूल ही रहे। यद्यपि जंगबहादुर उसका पुराना परिचित था (तब से परिचित था, जब जंगबहादुर अपने मामा के यहाँ एक आश्रित सम्बन्धी के रूप में रहता था) और धीरे-धीरे उससे घनिष्ठता भी हो गई थी; दोनों में थोड़ा सा गुरु-शिष्य भाव भी था, फिर भी आज कर्नल लारैन्स ने जंगबहादुर के स्वागत के लिए जो तैयारी की, वह उसके प्रधान मंत्री पद के अनुरूप ही थी। परिस्थितियों ने जंगबहादुर को जो गौरव प्रदान किया था, उसके महत्व को कर्नल लारैन्स तनिक भी कम नहीं करना चाहता था।

निमंत्रित व्यक्ति और कोई नहीं था, किन्तु नौकर चाकर आज अधिक थे, अच्छी पोशाक में थे और सेवा के लिए हर समय उद्यत थे। यहाँ पहुँचते ही जंगबहादुर को लगा कि सब कुछ बदला सा हुआ है। पहले वह इस घर में बिल्कुल आत्मीयता से घुमा करता था और उसी तरह आत्मीयता से उसका स्वागत भी होता था। पर आज औपचारिकता का प्रदर्शन स्पष्ट था। यह समझने लायक बुद्धि अभी उसमें नहीं थी कि रैज़ीडैंट परिवार की वह आत्मीयता भी दिखावा मात्र थी और यह औपचारिकता भी। पहले जो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

काम ग्रात्मीयता दिखाने से ग्रच्छी तरह सिद्ध होता था, ग्रब वह ग्रौपचारिकता दिखाने से सिद्ध होना था।

श्रीमती लारैन्स ग्रौर कुमारी लारैन्स ने मुस्कराते हुए उत्साह के साथ जंगबहादुर का स्वागत किया ग्रौर कहा : "प्रधानमंत्री बनने की हार्दिक बधाई।" कुमारी लारैन्स ने इतना ग्रौर जोड़ दिया : "हम भी मिठाई की ग्राशा लगाये बैठे हैं।"

जंगबहादुर ने हँसते हुए कहा : "ज़रूर, ज़रूर। निराश नहीं होना पड़ेगा। मिठाई ग्रवश्य मिलेगी।"

एक बड़े प्रशाल (हाल) में उपाहार का प्रबन्ध था। एक बड़ी संगमर्मर की मेज़ पर चमचमाते हुए बर्तन रखे थे। चाय के लिए तश्तरियां ग्रौर प्याले सजा कर रखे गये थे। इन चारों के बैठ जाने पर वर्दीधारी सेवकों ने मिठाई ग्रौर नमकीन ला कर रख दिया। चाय की केतलियां भी ग्रा गईं। श्रीमती लारैन्स ने ग्रपने हाथ से चाय सबके प्यालों में भर दी। सेवक पीछे हट कर कुछ दूर खड़े हो गये।

खाते-खाते बीच में ही कुमारी लारैन्स ने पूछा : "ग्राप इतने दिन रहे कहाँ?" जैसे वह जंगबहादुर के ग्राने की प्रतीक्षा ही करती रही हो।

पिछला एक सप्ताह जंगबहादुर की ग्राँखों के ग्रागे घूम गया। पर विस्तार से कुछ न कह कर उसने केवल इतना कहा : "काम में बहुत व्यस्त रहा।"

कर्नल लारैन्स ने कहा : "उस रात ग्रापके जाने के बाद मैं यह ग्राशा करता रहा कि लौट कर ग्राप कुछ खबर सुनायेंगे। मैं रात के दो बजे तक सोया नहीं। ग्राप के न ग्राने से चिन्ता भी बहुत हुई। यह सुन कर चिन्ता ग्रौर बढ़ी कि महल में काफ़ी मारकाट हुई। ग्राप तो ग्राये नहीं, पर ग्रगले दिन ग्रौर लोगों से पता चला कि जीत का सेहरा ग्रापके ही सिर बँधा है।"

कुमारी लारैन्स ने किशोरोचित कुतूहल से पूछा : "वहाँ हुग्रा क्या था?"

जंगबहादुर ने कहा : "सेनापति गगनसिंह की हत्या से महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी बहुत क्रुद्ध थीं। उन्होंने सब भारदारों को इसलिए बुलाया था कि जिससे हत्यारे का पता चल सके ग्रौर उसे दंड दिया जा सके। वहाँ काफ़ी देर बातचीत के बाद महारानी इस परिणाम पर पहुँची कि गगनसिंह की हत्या व्रजकिशोर पांडे ने की है। उन्होंने व्रजकिशोर पांडे को पकड़ने का हुक्म दिया। राणा ग्रभिमान ने व्रजकिशोर पांडे को पकड़ कर हथकड़ियां लगा दीं। पर थोड़ी देर बाद महारानी के ग्रादेश के बिना ही उन्होंने व्रजकिशोर पांडे को छोड़ दिया। राणा ग्रभिमान महारानी से ग्रनुमति लिये बिना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दरबार से बाहर जाने लगे। महारानी ने मुझसे कहा कि गगनसिंह की हत्या में ब्रजकिशोर पांडे और राणा अभिमान दोनों का हाथ है। इन्हें यहीं मार डालो।

"मैं बड़े धर्म संकट में फँसा। महारानी के आदेश का पालन न करने पर महारानी मुझसे भी नाराज़ हो जातीं। जैसे ब्रजकिशोर पांडे को छोड़ने पर उन्होंने राणा अभिमान को भी हत्या में उनका साथी मान लिया था, वैसे ही उन दोनों को न मारने पर वह मुझे भी उनका साथी मान लेतीं। फिर काज़ी होने के कारण महारानी के आदेश का पालन करना मेरा परम कर्तव्य था। अतः मैंने अपने भाई रणोद्दीपसिंह को इशारा किया और उसने राणा अभिमान को मार डाला। राणा अभिमान ने रणोद्दीप को मारने की कोशिश की, पर कहाँ रणोद्दीप और कहाँ बेचारा राणा! रणोद्दीप की चुस्ती और फुर्ती देखने लायक थी।

"राणा अभिमान के मरते ही भारदार लोग रणोद्दीप के विरुद्ध शोर मचाने लगे और उसे पकड़ने को बढ़े। मैंने उन्हें समझाने की बहुत चेष्टा की कि रणोद्दीप का कोई दोष नहीं; उसने तो केवल महारानी की आज्ञा का पालन किया है। पर भारदार तो जोश में अन्धे हो रहे थे। वे किसी की कुछ भी सुनने वाले कहाँ थे! उन्हें अपने हथियारों पर भरोसा था। जब मैंने देखा कि वे किसी तरह मान नहीं रहे और रणोद्दीप के ही नहीं, मेरे प्राणों को भी संकट है, तब मैंने भी तलवार निकाल ली। मेरे और भाई भी वहाँ थे। मैंने उनसे कहा कि यदि कोई उन्हें हाथ लगाना चाहे, तो वे वीरतापूर्वक आत्मरक्षा करें। यह ठीक है कि कानून हमारे पक्ष में है, हम महारानी के आदेश का पालन कर रहे हैं, पर कानून भी तभी काम आता है, जब अपनी भुजा शक्तिशाली हो।

"मेरे ऐसा कहने से भारदार और भी चिढ़ गये। उन्हें अपनी शक्ति का घमंड था। वे पचास साठ थे। हम केवल सात भाई थे। पर कर्नल साहब, उस दिन मैंने देख लिया कि लड़ाई-भिड़ाई में संख्या काम नहीं आती; काम आती है हिम्मत। एक साहसी वीर दस कायरों को हरा सकता है। मेरे भाइयों को आपने शायद नहीं देखा? अहा, देखने लायक हैं! सब एक से एक बढ़ कर हैं। बिल्कुल शेर हैं, शेर! मेरा इतना कहना था कि उन्होंने अपनी खुखरियां निकाल लीं और आत्म-रक्षा के लिए तैयार हो गये।

"उसी समय न जाने कहाँ से फतहजंग चौतरिया आ पहुँचा। वह भारदारों को हमारे विरुद्ध भड़काने लगा। राणा अभिमान से उसकी मित्रता थी। इसलिए वह भारदारों से हमें पकड़ने और मार देने के लिए कहने लगा। मैंने देखा कि विपत्ति की जड़ यही है। इसे न काटा, तो हमारे प्राण न

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बचेंगे। इसके भड़काने से सब भारदार इकट्ठे हम पर टूट पड़ेंगे। सात आदमी साठ का मुकाबले कैसे करेंगे ? इसलिए मैं स्वयं लपक कर फतहजंग पर झपटा। फतहजंग ने भी तलवार निकाल ली और मुझ पर वार किया। मैं उसका वार बचा गया। पर मेरे वार को फतहजंग नहीं बचा सका। मेरी तलवार उसकी छाती के पार हो गई और वह जमीन पर गिर पड़ा। पर उसकी बदमाशी देखिये। मृत्यु के दरवाज़े पर खड़ा हुआ भी वह दुष्टता करने से नहीं चूका। ज़मीन पर पड़े-पड़े उसने चिल्ला कर कहा : 'गगनसिंह की हत्या जंगबहादुर ने की है।' पर और कुछ बकवास करने के लिए भगवान ने उसे देर तक जीने नहीं दिया। कुछ ही क्षण में उसका दम निकल गया।

"फतहजंग के मरने के बाद जो घमासान मचा, उसे मैं कभी भूल नहीं सकता। सभी भारदारों पर न जाने क्या भूत सवार हुआ, वे हम सातों भाइयों पर एक साथ टूट पड़े। आपसे क्या छिपाना; एक बार तो मुझे निश्चय हो गया था कि हम सातों में से कोई भी बच कर राजमहल से बाहर नहीं पहुँच सकेगा। सब भारदारों के पास खुखरियां और तलवारें थीं। वे सभी अच्छे लड़ाके थे। यदि वे हम से एक-एक करके लड़ते, तब भी हमें जीत पाने की आशा नहीं थी। पर वे तो सबके सब एक साथ हम पर टूट पड़े।"

"फिर आप कैसे बचे ?" अधीरता से कुमारी लारैन्स ने पूछा। इस विवरण को सुन कर उसके रोंगटे खड़े हो रहे थे।

"बस, भगवान ने ही रक्षा की। हमें सत्य का बल था; न्याय का बल था। हुआ यह कि उस मारधाड़ और धर पटक में मशालें बुझ गईं। अँधेरा हो गया। उस अँधेरे में उन भारदारों को हम दिखाई पड़ने बन्द हो गये। हमने उन्हें खूब मारा।"

यह बात कर्नल लारैन्स, श्रीमती लारैन्स और कुमारी लारैन्स किसी को भी समझ नहीं आई कि अँधेरा होने से इन लोगों को लाभ कैसे हुआ ? यदि ये दिखाई पड़ने बन्द हो गये थे, तो दूसरे भारदार भी तो दीखने बन्द हो गये होंगे। फिर इन्होंने उन्हें खूब कैसे मारा ? पर इस विषय में कुछ भी प्रश्न पूछना रसभंग करना होता। अतः वैसा कुछ न पूछ कर कुमारी लारैन्स ने भय और आश्चर्य प्रकट करते हुए केवल इतना कहा : "बाप रे !"

श्रीमती लारैन्स ने पूछा : "फिर क्या हुआ ?"

"कोई आधा घंटे तक इसी तरह अँधेरे में लड़ाई होती रही। हमें पता चलने लगा कि जीत हमारी हो रही है। धीरे-धीरे हमारे प्रतिद्वन्द्वियों की संख्या कम होती गई। जब हमें ललकारने वाला कोई न रहा, तब हमने स्वयं मशालें जलाईं। इधर-उधर ढूँढा कि अँधेरे में कोई छिपा तो नहीं खड़ा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जब कोई नहीं मिला, तब आधी रात के लगभग हम राजमहल से अपने घर लौटे।"

कुमारी लारैन्स ने जंगबहादुर के शरीर पर नीचे से ऊपर तक दृष्टि डालते हुए पूछा : "आपको कहीं कोई चोट तो नहीं आई ?"

इस प्रश्न में जंगबहादुर की कुशलता के लिए अधीर कामना निहित थी। फिर भी यह उसे व्यंग जैसा सुनाई पड़ा। इतने सशस्त्र लोगों से उसे एक घंटे तक जूझना पड़ा, फिर भी उसे एक खरौंच तक नहीं आई। क्या उसके प्रतिद्वन्द्वी मोम के सिपाही थे ? पर नहीं, कुमारी लारैन्स जैसी भली लड़की इस प्रकार का ताना नहीं दे सकती। जंगबहादुर ने बिल्कुल अविचलित भाव से कहा : "मुझ पर हुए सब वार भगवान ने स्वयं झेल लिये। शत्रुओं का कोई शस्त्र मेरे शरीर तक पहुँच ही नहीं पाता था। जो शरीर तक पहुँच भी जाता था, वह भी चोट नहीं कर पाता था। ऐसा न होता, तो क्या मैं उस दिन बच सकता था ?"

भगवान पर इतनी प्रबल आस्था जंगबहादुर ने पहले कभी प्रकट नहीं की थी। आज उसकी आस्तिकता ने रैज़ीडैंट परिवार को बिल्कुल अभिभूत कर लिया। सच ही तो है। भगवान ऐसे श्रद्धालु व्यक्ति पर कृपा न करेंगे, तो किस पर करेंगे ?

कुछ देर बाद कर्नल लारैन्स ने हल्का उलाहना सा देते हुए पूछा : "पर उसके बाद आप गायब कहाँ हो गये ? खोजने पर भी आपका कहीं पता नहीं चला।"

जंगबहादुर समझ गया कि रैंज़ीडैंट ने उसकी खोज-खबर लेने की कोशिश की होगी। पर इस विषय में सत्य बोलना बिल्कुल अनावश्यक था। अतः उसने गंभीर भाव से कहा : "राजमहल में था। इतनी भारी उथल-पुथल से सारा शासन तंत्र गड़बड़ा गया था। आपको पता है कि साठ भारदारों में से पैंतालीस उस रात मारे गये ? सरकार के विभिन्न विभागों को वे ही लोग सँभालते थे। इस दुर्घटना के बाद महाराज और महारानी भी स्वयं को असुरक्षित अनुभव करते थे। उनके आग्रह पर मुझे राजमहल में ही रहना पड़ा। जब शासन की नई व्यवस्था भली-भाँति निश्चित हो गई, तभी मुझे महल से निकलने की फुरसत मिली।"

अब उपाहार पूरा हो चुका था। सब लोग उठ कर दूसरे कमरे में आ गये। श्रीमती लारैन्स को कुछ काम था। वह कुमारी लारैन्स को साथ लेकर चली गई। जब कर्नल लारैन्स और जंगबहादुर अकेले रह गये, तब कर्नल का व्यवहार बदल गया। वह फिर पहले की सी आत्मीयता प्रकट करते हुए

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बोला : "आखिर आपने बाज़ी मार ही ली। बहुत बड़ा मोर्चा जीता है। मुझे आशा नहीं थी।"

जंगबहादुर इस वाहवाही से प्रसन्न हो कर कर्नल लारैन्स के मुँह की ओर देखता रहा। कर्नल ने कहा : "पर अब प्रश्न अपनी जड़ें पक्की करने का है। ऐसा सुयोग कम ही लोगों को मिलता है, जैसा आपको मिला है। मैदान खाली है। कोई प्रतिद्वन्द्वी है ही नहीं। अब आप जो चाहें, कर सकते हैं।"

"पर करना क्या है ?"

"सबसे पहले तो पैसे का जुगाड़ कीजिये। राजनीति पैसे के बिना नहीं चलती। मौका है। सम्पत्ति बना लीजिये, जिससे सदा पैसा आता रहेगा।"

"कौन सा मौका है। ?" जंगबहादुर ने कुछ भी न समझते हुए पूछा।

कर्नल लारैन्स ने धीमी आवाज में कहा : "जो भारदार मारे गये हैं, उनके पास बड़ी जमीनें हैं। इस समय उन्हें अपने करवा लीजिये। कुछ अपने भाइयों के नाम करवा दीजिये। प्रधानमंत्री के भाइयों को भी तो कुछ लाभ मिलना चाहिए। वे खुश भी रहेंगे।" यह कह कर वह मैली सी हँसी हँसने लगा।

सुन कर जंगबहादुर की आँखें चमकने लगीं। उसे अब तक एक बार भी यह न सूझा था कि जो भारदार उसकी अपनी या उसके भाइयों की खुखरियों से मरे हैं, उनकी सम्पत्ति भी अनायास हथियाई जा सकती है। अब पूछने वाला कौन है ?

थोड़ा रुक कर कर्नल लारैन्स ने कहा : "राजनीति में भाई ही सबसे बड़े शत्रु भी होते हैं। या तो उन्हें खुश रखा जाये, या फिर खत्म कर दिया जाये।"

जंगबहादुर ने कहा : मेरे भाई बहुत भले हैं। आसानी से खुश हो जाते हैं। मुझे उनका सहारा भी बहुत है।"

"ठीक है; तो उन्हें खुश रखिये। सब महत्वपूर्ण पदों पर चुन-चुन कर अपने आदमियों की नियुक्ति कर दीजिये। मैं बरसों से यहाँ के लोगों पर निगाह रखे हुए हूँ। मुझे पता है कि कौन लोग आपके लिए हितकारी हो सकते हैं और कौन अहितकारी। मैं उन सबके नाम समय समय पर बताता रहूँगा। जो लोग आपका विरोध कर सकते हैं, उन्हें पहले ही जड़ मूल से समाप्त कर दीजिये।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"आप बिल्कुल ठीक कहते हैं। जैसा आप कहते हैं, मैं वैसा ही करूंगा। आपका परामर्श सफल हुआ है और मुझे विश्वास है कि आगे भी सफल रहेगा। मैं समय-समय पर स्वयं आपसे सलाह लेता रहूंगा, पर यदि कभी मुझे ध्यान न रहे, तो आप स्वयं भी मुझे राय दे सकते हैं। मैं आपको यह शिकायत न होने दूंगा कि आपकी राय व्यर्थ गई।"

सुन कर कर्नल लारैन्स को बेहद प्रसन्नता हुई। रैज़ीडैन्ट की इससे बढ़ कर सफलता और क्या हो सकती थी कि राज्य का प्रधानमंत्री स्वेच्छा से उसके इशारों पर नाचने को तैयार हो। जिन भी व्यक्तियों को वह अंग्रेज़ी हितों के लिए हानिकर समझेगा, उन्हीं को वह प्रधानमंत्री के द्वारा निर्मूल करवा सकेगा। जंगबहादुर के लिए राष्ट्रहित या राष्ट्राभिमान नाम की वस्तु एकदम अपरिचित थी। उसके लिए तो अपना हित ही नेपाल का हित था। स्वार्थ से परे देखने वाली शिक्षा उसे मिली ही नहीं थी। अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट उसे प्रिय था, क्योंकि वह उसके स्वार्थों की पूर्ति का मार्ग उसे दिखा रहा था।

कर्नल लारैन्स ने कहा : "यदि आप मेरी राय से चलेंगे, तो आप इतनी उन्नति करेंगे, जितनी आज तक नेपाल में किसी ने की न होगी। आपको महिमाशाली ब्रिटिश साम्राज्य की अपार शक्ति का पूरा सहारा मिलेगा। आपके मार्ग की सब बाधाएँ दूर होती जायेंगी। ब्रिटिश साम्राज्य से मित्रता कीजिये और फिर देखिये कि उसका क्या सुखदायक परिणाम होता है।"

जंगबहादुर की आँखों के आगे एक नया ही संसार खुलता दिखाई पड़ा। ब्रिटिश साम्राज्य की मित्रता! इतनी उन्नति जितनी नेपाल में किसी ने की न होगी! इन बातों को वह पूरी तरह हृदयंगम नहीं कर सकता था, फिर भी ये सुनने में कुछ नशीली सी थीं। उसने कर्नल लारैन्स को फिर विश्वास दिलाया कि उसे कुछ मालूम नहीं है कि उसे क्या करना है। कर्नल लारैन्स पर उसे पूरा भरोसा है। जैसा कर्नल लारैन्स कहता जायेगा, वैसा ही वह करता जायेगा।

उस रात जब जंगगहादुर अंग्रेज़ रैज़ीडैन्ट की कोठी से लौटा, तब उसका शरीर तो पालकी में था, पर उसका मन हवा में उड़ रहा था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

54

महाराज से समझौता

जंगबहादुर को महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम के पास जाने की हिम्मत नहीं हुई। यह नहीं कि उसे उनसे कोई भय था, परन्तु उसे यह निश्चय था कि उनके पास जाने से उसे अपमानित होना पड़ेगा। जो आदमी पागलपन का अभिनय करके बातचीत करने से ही इन्कार कर दे, उसके मन का भाव छिपा नहीं रहता। जंगबहादुर जानता था कि महाराज उससे घृणा करते हैं और वह जो उसे दंड नहीं दे पा रहे, उसका कारण केवल यह है कि दंड देने की शक्ति उनके हाथ में नहीं रही है। किसी समय अपना काम साधने के लिए उन्होंने उसे अपना गुर्गा बनाया था। पर जब जंगबहादुर गुर्गा बनना सीख गया, तब वह उन लोगों का भी गुर्गा बन गया, जिनके हाथ में महाराज से भी अधिक शक्ति थी। महारानी और अंग्रेज़ रैज़ीडैंट का गुर्गा बन कर उसने अपनी उन्नति का रास्ता साफ़ किया। महाराज ने उसे पसन्द नहीं किया। जंगबहादुर ने उनकी परवाह नहीं की। रानी का साथ दे कर उसने प्रधान मंत्री पद प्राप्त कर लिया। पर अब उसे अनुभव होता है कि उसे महाराज की आवश्यकता है। महारानी के साथ देर तक निर्वाह नहीं हो पायेगा। महारानी की माँगें ही ऐसी हैं कि उन्हें वह पूरा नहीं कर सकता। फिर, महारानी से जो कुछ मिल सकता था, वह मिल चुका है। यदि किसी तरह उसे महाराज का सहारा मिल जाये, तो वह आसानी से महारानी को धता बता सकता है। पर महाराज के पास जाने और उनसे कुछ भी बात करने की हिम्मत जंगबहादुर कहाँ से लाये?

अन्त में सोच-विचार कर उसने अपने भाई रणोद्दीपसिंह को महाराज के पास ललितपुर भेजा। महाराज से क्या कहना है और किस प्रकार कहना है, यह सब जंगबहादुर ने भली भाँति समझा दिया था। जब महाराज को पता चला कि जंगबहादुर का भाई रणोद्दीपसिंह काठमांडौ से महत्वपूर्ण समाचार ले कर आया है, तब उन्होंने उसे मिलने के लिए बुलवा लिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विनयपूर्वक प्रणाम करके रणोद्दीपसिंह चुपचाप खड़ा हो गया। महाराज ने उसे बैठने को कहा और काठमांडो के समाचार पूछे।

"समाचार कुछ भले नहीं हैं सरकार" रणोद्दीपसिंह ने कहा। "राज्य सरकार का है और सरकार राज्य से उदासीन होकर यहाँ बैठे हैं। स्वामी की अनुपस्थिति में राज्य का हाल अच्छा कहाँ हो सकता है?"

"मेरी वहाँ क्या आवश्यकता है? रानी वहाँ है। तुम्हारा भाई प्रधान मंत्री है। और क्या चाहिए?"

"सिंहासन पर तो आप को ही बैठना है सरकार। भाई साहब सदा यही बात कहते हैं। अन्य सब लोग तो सलाह ही दे सकते हैं। राज्य तो राजा के किये ही होता है।"

"मुझे तो शुरू से ही राज्य करने का उत्साह नहीं है" महाराज ने स्पष्ट-वादिता प्रकट की। "मेरे नाम पर दूसरे ही लोग राज्य करते रहे हैं। अब इस प्रकार कठपुतला बन कर रहने की मेरी इच्छा नहीं है। जिन्होंने शासन करना है, उसका सुयश, अपयश भी वे ही पायें। मैं तो सिंहासन से दूर यहाँ ललितपुर में ही भला हूँ।"

"प्रश्न सुयश, अपयश का नहीं है सरकार।" रणोद्दीपसिंह ने अपनी आवाज को धीमा करके कहा, मानों कोई रहस्य की बात कह रहा हो। "प्रश्न ज़िम्मेदारी का है। हर कोई अपनी ज़िम्मेदारी को ठीक-ठीक निभाता रहे, तभी गाड़ी ठीक चलती है। भाई साहब अपनी ओर से भरसक प्रयत्न करते हैं कि सब काम नियमों और परम्पराओं के अनुसार हों। पर उनकी चलती तो नहीं। महारानी जी को कायदे कानूनों में बँध कर चलना पसन्द नहीं है।"

इतना कह कर रणोद्दीपसिंह चुप हो गया और यह भाँपने लगा कि महा-रानी के सम्बन्ध में कहे गये इस वाक्य की महाराज पर क्या प्रतिक्रिया होती है। पर महाराज ने अच्छा, बुरा कुछ भी मनोभाव प्रकट नहीं किया। वह रणोद्दीपसिंह की ओर इस आशा से देखते रहे कि वह और कुछ कहे।

"भाई साहब का कहना है कि यदि सरकार राजकाज की ओर ज़रा सा भी ध्यान दें, तो राज्य की सारी व्यवस्था ठीक हो जाये।"

"ना बाबा, मुझे राज्य की व्यवस्था से कुछ लेना-देना नहीं है। जिन लोगों को उसे हथियाने का इतना आग्रह था, वे ही अब उसे सँभालें। मैं तो जिस दिन ललितपुर आया, उसी दिन राज्य की चिन्ता काठमांडौ में ही छोड़ आया।"

"पर सरकार, सब चीज़ें छोड़ देने से छूटती कहाँ हैं? राज्य की चिन्ता सरकार छोड़ भी दें, तो भी राजकुमारों की चिन्ता तो सरकार को रहेगी ही।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सच यह है कि ललितपुर आ कर महाराज राजकुमारों को भी भूल बैठे थे। उनका खयाल था कि शासन पर अधिकार करने के लिए काठमांडौ में हुई उथल-पुथल शान्त हो गई है। रानी, राजकुमार, प्रधान मंत्री सब सुख शान्ति से रहें; महाराज को अब कोई दखल नहीं देना है। उनके दखल देने से फिर नई अशान्ति खड़ी हो सकती है। पर अब रणोद्दीपसिंह के कहने से उन्हें राजकुमारों का ध्यान हो आया। चौंक कर उन्होंने पूछा : "क्यों, राजकुमारों को क्या हुआ ?"

"हुआ तो कुछ नहीं है," रणोद्दीपसिंह ने एक-एक शब्द को तोलते हुए से कहा : "पर कभी भी कुछ भी हो सकता है।"

सुन कर महाराज के चेहरे का रंग उड़ गया। रणोद्दीपसिंह ने भी इसे देखा। राजकुमारों की चिन्ता से महाराज सचमुच ही मुक्त नहीं हो सके हैं और न हो ही सकते हैं।

रणोद्दीपसिंह बोला : "भाई साहब प्रायः रोज़ ही कहते हैं कि सरकार तो ललितपुर जा कर निश्चिन्त हो गये और यहाँ महारानी जी एक ही रट लगाये हुए हैं—सिंहासन रणेन्द्र को मिले। युवराज सुरेन्द्र और राजकुमार उपेन्द्र के रहते रणेन्द्र को सिंहासन मिलेगा नहीं। इसलिए ये दोनों राजकुमार महारानी की आँखों का काँटा बने हुए हैं। भाई साहब का युवराज सुरेन्द्र पर बहुत प्रेम है। वह मानते हैं कि सिंहासन पर सुरेन्द्र का ही हक है। पर वह अकेले महारानी के आगे देर तक टिक नहीं पायेंगे। वह रोज़ कहते हैं कि अगर सरकार काठमाँडौ आ कर रहने लगें, तो युवराज सुरेन्द्र को सिंहासन दिलाना मेरा ज़िम्मा रहा। पर अगर वह नहीं आये, तो भगवान ही जानता है कि क्या होगा।"

सुन कर महाराज का चेहरा चिन्ता से मलिन हो गया। यों रणेन्द्र भी उनका पुत्र था, पर मातृहीन सुरेन्द्र और उपेन्द्र के प्रति उनके हृदय में अधिक ममता थी। उन्हें पहले से पता था कि रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के हृदय में इन दोनों लड़कों के प्रति दुर्भावना है। पर यह बात उनके ध्यान से उतर गई थी। अब उन्हें आश्चर्य होने लगा कि इतनी बड़ी बात को वह भूल कैसे गये थे।

रणोद्दीपसिंह ने देखा कि लोहा गर्म है ; उसने और चोट की; बोला : "महारानी जी इन दोनों राजकुमारों का अनिष्ट कराने के लिए भाई साहब पर बेहद दबाव डाल रही हैं। वह इस बात से नाराज़ भी हैं कि भाई साहब इसमें टालमटोल कर रहे हैं। जब भाई साहब प्रधानमंत्री नहीं बने थे, तब भी महारानी जी ने एक बार उनसे दोनों राजकुमारों को चुपचाप ठिकाने लगाने की बात कही थी। तब भाई साहब ने स्पष्ट इन्कार कर दिया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्होंने शायद आपसे भी चर्चा की थी। पर अब महारानी समझती हैं कि मैंने भाई साहब को प्रधान मंत्री पद दिया है, तो उन्हें मेरा हर एक गलत या सही आदेश मानना ही चाहिए। भाई साहब का कहना है कि पद जाये या रहे, मैं इस पाप का बोझ अपने सिर पर कभी न लूँगा। पर एक बात कहूँ सरकार। मैं भाई साहब को खूब अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे डर है कि यदि मामला बिल्कुल टूटने की सीमा तक ही पहुँच गया, तो भाई साहब प्रधान मंत्री पद छोड़ने के बजाय पापकर्म में साझीदार बनने को तैयार हो जायेंगे।" यह कह कर उसने महाराज के चेहरे की ओर देखा।

उस चेहरे पर महाराज की सारी दुश्चिन्ता घनीभूत हो उठी थी। महाराज अपने मनोभावों को ज़रा भी नहीं छिपा सकते थे। रणोद्दीपसिंह को चुप देख कर वह बोले : "तब क्या करना चाहिए?"

"यह तो सरकार ही अधिक अच्छी तरह सोच सकते हैं। पर मेरी बुद्धि यही कहती है कि सरकार का काठमांडौ में रहना और राजकाज में दखल देना अच्छा रहेगा। सरकार अधिक बोझ अपने सिर पर न लें। जितना मन हो, उतना काम देखें। पर इतने से ही राजकुमारों का पक्ष प्रबल हो जायेगा और महारानी जी को मनमानी करने का मौका न मिलेगा।"

"पर जंगबहादुर तो रानी के साथ है। वहाँ मेरी बात कौन सुनेगा?"

"सरकार का यह अनुमान सही नहीं है। भाई साहब सदा से सरकार के भक्त सेवक रहे हैं। सरकार ही उनसे अप्रसन्न हो गये थे। पर भाई साहब ने अपनी भक्ति में कभी कमी नहीं आने दी। काठमांडौ पहुँचने पर सरकार उन्हें अपना पहले जैसा ही विश्वस्त भक्त पायेंगे।"

कुछ देर महाराज राजेन्द्रवीरविक्रम विचार-मग्न रहे। उसके बाद एक लम्बी साँस छोड़ते हुए बोले : "ठीक है। फिर मैं काठमांडौ आऊँगा। और कोई उपाय ही नहीं है।"

"यह सभी के लिए प्रसन्नता की बात होगी। दोनों राजकुमार सरकार को काठमांडौ में देखेंगे, तो उनके उदास चेहरे फिर प्रसन्नता से खिल जायेंगे। सारी प्रजा प्रसन्न होगी। भाई साहब तो बहुत ही खुश होंगे। शुभ कार्य में जितना कम विलम्ब हो, उतना ही भला।"

महाराज ने कहा : "ठीक है। दो एक दिन में ही वहाँ आऊँगा। सुरेन्द्र को राजसिंहासन पर बिठाना भी तो मेरा कर्तव्य है।" यह कहते हुए महाराज उठ खड़े हुए। रणोद्दीपसिंह भी उठ खड़ा हुआ और विनयपूर्वक प्रणाम करके वापस लौट पड़ा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

55

रानी से टक्कर

महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी बहुत बेचैन और परेशान थीं। अनुभव से उन्होंने जान लिया था कि इस तरह की बेचैनी को जितना कम प्रकट किया जाये, उतना ही भला है। अभ्यास के कारण वह अपने मन की दशा को सफलतापूर्वक छिपा भी लेती थीं। पर सदा साथ रहने वाली मन्दाकिनी से कुछ भी छिपा पाना असम्भव था। उसकी दृष्टि ऐसी सूक्ष्म थी कि वह सीधा महारानी के मन के भीतर तक देख लेती थी।

मन्दाकिनी सवेरे से ही समझ रही थी कि कुछ गड़बड़ है, पर वह जान-बूझ कर चुप रही। दोपहर को महारानी ने भोजन भी रुचिपूर्वक नहीं किया। तीसरे पहर मन्दाकिनी ने अकेले में पूछा : "क्या हुआ है? आपका जी ठीक नहीं है?"

"कोई खास बात नहीं है। पर अब मैं दुनियाँ से निराश हो चली हूँ।"

मन्दाकिनी चुप रही। वह प्रतीक्षा करती रही कि महारानी कुछ और कहें। जब कुछ देर तक महारानी भी चुप ही रहीं, तब मन्दाकिनी ने पूछा : "निराशा का क्या कारण आ पड़ा?"

"मन्दा, यही तो हम सुनते आये हैं कि अच्छे काम का अच्छा फल मिलता है और बुरे का बुरा। पर कोई व्यक्ति जी-जान से अच्छे काम करने में जुटा रहे और हर बार उसे उसका फल बुरा मिले, तो क्या उसे निराशा न होगी?"

मन्दाकिनी समझ गई कि 'जी-जान से अच्छे काम करने में जुटी रहने वाली व्यक्ति' महारानी स्वयं ही है। पर उसके किस अच्छे काम का कौन-सा बुरा फल मिला है, जिससे उसके मन में यह वैराग्य जागा है, यह वह नहीं समझ सकी। यों उसे महारानी के सत् और असत् कर्मों का और उनके

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रिय और अप्रिय फलों का लम्बा चिट्ठा मालूम था, किन्तु उनका सम्बन्ध आज की बेचैनी से नहीं हो सकता। इसके लिए तो कोई नया ही कारण होना चाहिए। उसने रानी को बोलने के लिए प्रोत्साहित करने की दृष्टि से कहा : "हाँ, इससे दिल तो टूट ही जाता है।"

अपने मानसिक आवेग को संयत रखने में असमर्थ हो कर महारानी बोली : "मैंने बहुत बार सोचा है कि मेरे ही साथ ऐसा क्यों होता है? मैंने कभी किसी का अहित नहीं चाहा। सदा यत्न करके दूसरों का भला किया। पर मैंने जिसका भला किया, वही मेरा दुश्मन बन गया। वही मेरा विनाश करने पर उतारू हो गया।"

मन्दाकिनी को कारण का कुछ-कुछ आभास तो होने लगा, पर वह बिल्कुल अस्पष्ट-सा था। अतः पूछा : "जंगबहादुर ने कुछ किया क्या?"

"तुझे तो पता है कि इस जंगबहादुर के लिए मैंने क्या-क्या किया। कोट हत्याकांड के बाद महाराज तो इससे इतने रुष्ट थे कि इसकी जीते-जी खाल उतरवा लेते। उनके डर से यह काठमांडौ ही छोड़ भागा था। मैंने सिपाही भेजे और इसे ढुँढवाया। महाराज इसकी शक्ल नहीं देखना चाहते थे, फिर भी मैंने इसे सेनापति और प्रधान मंत्री बनाया। जो भारदार मारे गये थे, उन सबकी सम्पत्ति इसने हड़प ली; कुछ अपने भाइयों में बाँट दी। मैंने देखा अनदेखा कर दिया। उसके बाद इसने प्रार्थना की कि इसके भाइयों को नौकरी दी जाये। इसके कहने से मैंने उनमें से एक को खज़ांची, एक को न्यायाधीश, एक को कोतवाल और एक को सेनापति बना दिया। मुझे याद नहीं आता कि मैंने उसकी कोई बात टाली हो। पर मज़े की बात यह है कि वही जंगबहादुर अब मुझे ही आँखें दिखा रहा है।"

मन्दाकिनी ने यह तो अनुमान कर लिया था कि जंगबहादुर ने महारानी की इच्छा के विरुद्ध कोई काम किया होगा, पर वह काम क्या था, यह अब भी स्पष्ट नहीं हुआ। वह बोली : "जंगबहादुर से इसके सिवाय आशा ही क्या की जा सकती है? कृतघ्नता तो उसके चेहरे पर लिखी है।"

महारानी अपने आवेश में बोलती रही : "यह कौन-सी नीति है कि मैं तो उसकी सब बातें मानती जाऊँ और वह मेरी एक भी बात न माने? अच्छा मन्दा, तू ही बता रणेन्द्र सुरेन्द्र और उपेन्द्र से अच्छा है या नहीं?"

अब मन्दाकिनी सारा रहस्य समझ गई। कलह उसी पुरानी समस्या को ले कर है। रणेन्द्र सुरेन्द्र और उपेन्द्र से अच्छा है या नहीं, इस प्रश्न का उत्तर उसे अपनी स्वतंत्र बुद्धि से नहीं देना। महारानी इसका एक ही उत्तर चाहती हैं और वही उसे देना है। उसे सदा महारानी के साथ रहना भी तो है। उसने तुलना को स्पष्ट करते हुए कहा : "कहाँ कौआ, कहाँ हंस! रणेन्द्र

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से उनका मुकाबला ही क्या! जब से माँ नहीं रही, तब से अनाथ से फिरते हैं।''

''यह तो मत कह मन्दा। मैं उनका रणेन्द्र से भी अधिक ध्यान रखती हूँ। भरसक यत्न करती हूँ कि उन्हें किसी तरह की कोई कमी अनुभव न हो, पर उनकी आकृति प्रकृति तो मैं नहीं बदल सकती। तूने ठीक ही कहा; कौआ कौआ ही रहेगा और हंस हंस ही। पर अधिकतर लोगों की सहानुभूति उन दोनों के साथ इसलिए हो जाती है कि उनकी माँ नहीं है। पर यह तो रणेन्द्र का कोई दोष नहीं कि उसकी माँ है।''

मन्दाकिनी ने देखा कि यह तो युक्ति परम्परा ऐसी जगह पहुँच गई है, जहाँ उसका मुंह सी कर चुप बैठे रहना ही श्रेयस्कर है। न जाने उसकी किस बात को पकड़ कर तुनुकमिजाज़ महारानी किस ओर उड़ चलें। पर उसे चुप देख कर महारानी बोली : ''चुप क्यों है ? बोलती क्यों नहीं ? मैं कुछ गलत कह रही हूँ ?''

सामान्यतया राज्यलक्ष्मीदेवी खूब धीर गम्भीर स्वभाव की थीं। कठिन परिस्थितियों का सामना वह दृढ़तापूर्वक करती थीं। हल्की बात उनके मुँह से नहीं निकलती थी। पर अपने पुत्र के मामले में वह एकदम भावुक हो उठती थीं। वह बड़ी बेबसी सी अनुभव करती थीं कि वह अपने दो सौतेले भाइयों से छोटा है और इसलिए राजसिंहासन के उत्तराधिकार से वंचित है। इस बेबसी के कारण उनकी भावुकता मर्यादा की सीमाओं का उल्लंघन कर जाती थी। मन्दाकिनी देख रही थी कि आज भी ऐसी ही स्थिति है। सँभल कर उसने कहा : ''चुप कहाँ हूँ। आप बिल्कुल ठीक तो कह रही हैं।''

''पर जंगबहादुर सुरेन्द्र का ही पक्ष लिये जाता है। वह उसकी प्रशंसा करते नहीं अघाता। आजकल तो वही उसका धर्म-पिता बना हुआ है। महाराज से भी अधिक उसे सुरेन्द्र की चिन्ता है। और मुझे लगता है कि वह यह सब केवल मुझे चिढ़ाने के लिए कर रहा है।''

''आपको चिढ़ाने से उसे क्या मिलेगा ?''

''यही तो मैं पूछती हूँ। मुझसे बिगाड़ कर उसे क्या मिलने वाला है ? पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि अब वह मुझसे झगड़ना चाहता है। अब वह महाराज का सहारा ले कर मुझे नीचा दिखाना चाहता है। मुझे पक्का पता है कि ललितपुर से महाराज को उसी ने काठमांडौ बुलवाया है। महाराज को उसने यह भय दिखाया है कि यदि वह राजमहल में न रहेंगे, तो सुरेन्द्र और उपेन्द्र के प्राणों को खतरा हो सकता है। खतरा ? किससे खतरा ? यह मुझे बदनाम करने की चाल नहीं तो और क्या है ?''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मुझे तो जंगबहादुर शुरू से ही भला आदमी नहीं लगा। मैंने आपको बहुत बार सावधान भी किया, पर उस समय आपको मेरी बात रुची नहीं। मुझे वह सदा ही घोर स्वार्थी और सदसद्विवेकशून्य लगा है। मातबरसिंह उसके मामा थे। उन्होंने उसके लिए कितना कुछ किया! पर वह उन्हीं का अपना न हो सका। उससे और क्या आशा की जा सकती है!"

मातबरसिंह का उल्लेख राज्यलक्ष्मीदेवी को पसन्द नहीं आया। जंगबहादुर की कृतघ्नता को प्रमाणित करने वाले इस प्रसंग ने राज्यलक्ष्मीदेवी के मन में कड़वी स्मृतियों की एक पूरी शृंखला जगा दी। मातबरसिंह ने उसकी एक योजना में सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया था। मातबरसिंह की हत्या में जितना दोष जंगबहादुर का था, उससे अधिक महारानी का था। यद्यपि महारानी अपने मन में भी अपने दोष को स्वीकार नहीं करती थीं, फिर भी उसके अन्तस्तल के किसी गुप्त कोने में इस अपराध की कालिमा घनीभूत थी। वह इस प्रसंग को सुनना नहीं चाहती थी। वह बोली : "मुझे तभी समझना चाहिए था। पर तब मेरी बुद्धि पर पर्दा पड़ गया। अब मुझे लगता है कि मनुष्य को कृतघ्न होना चाहिए। किसी भी आदमी से अपना काम निकालने के बाद उसे तुरन्त भूल जाना चाहिए। उसे कभी बढ़ावा नहीं देना चाहिए। बल्कि अच्छा तो यह है कि मौका पा कर उसे खत्म ही कर दिया जाये।"

"जंगबहादुर को खत्म करने के तो कई मौके आपके हाथ आये।"

"पर मैंने सदा यही सोचा कि मैंने इससे कुछ काम करवाया है, तो इसे आश्रय देना मेरा कर्तव्य है। इसे काज़ी मैंने बनवाया। उसका बदला इसने कैसे चुकाया? तुझे मालूम है कि फतहजंग चौतरिया ने मरते समय क्या कहा था?"

"क्या कहा था?" मन्दाकिनी ने उत्सुकता से पूछा।

"उन्होंने कहा था कि गगनसिंह की हत्या जंगबहादुर ने की है।"

"सचमुच? उन्होंने ऐसा कहा था?" मन्दाकिनी ने आश्चर्य प्रकट किया।

'हाँ। मैंने अपने कानों से सुना। मुझे सुनते ही इस कथन की सत्यता पर विश्वास हो गया था।"

"फिर आपने जंगबहादुर को क्षमा कैसे कर दिया?"

"जब फतहजंग चौतरिया ने ये शब्द कहे, उसके बाद तो घटना चक्र इतनी तेज़ी से घूमा कि कुछ सोचने या करने का मौका ही न मिला। जब वह कालरात्रि बीती, तब नेपाल दरबार समाप्त हो चुका था। चार में से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीन काज़ी मारे जा चुके थे। अधिकांश भारदार भी तलवार के घाट उतर गये थे। उस समय जंगबहादुर को क्षमा न करने का अर्थ होता चौथे काज़ी को भी समाप्त कर देना। अब सोचती हूँ कि शायद वैसा कर देना ही हितकर होता। उस समय जंगबहादुर के मन में भी चोर था, इसीलिए वह प्राण बचा कर भाग खड़ा हुआ था।''

''तब तो आपने ही आग्रहपूर्वक उसे ढुँढवा मँगवाया था। आप चुपचाप रहतीं, तो उसे अपने किये का फल उसी समय मिल जाता। पर अब वह क्या कहता है ?''

''अब महाराज को आड़ बना कर शासन का अधिकार मुझसे छीन कर अपने हाथ में ले लेना चाहता है। महाराज न पहले कभी शासन करना चाहते थे और न अब चाहते हैं। पर वह उन्हें विवश कर रहा है कि वह राजकाज में दखल दें, जिससे उनके नाम पर उसे मनमानी करने का मौका मिले। अब किसी भी काम के लिए वह मुझसे आदेश न माँग कर महाराज से आदेश लेता है।''

''यह तो चिन्ता की बात है। मुझे डर था कि किसी दिन वह यही करेगा। शायद कुछ समय बाद महाराज से भी आदेश लेना बन्द कर दे।''

''करेगा, करेगा। पर महाराज तो इस बात को समझते नहीं। वह अपनी जड़ अपने हाथ से काट रहे हैं।''

''जानते बूझते अपनी जड़ कोई कभी नहीं काटता। यदि उन्हें समझा दिया जाये, तो वह सँभल जायेंगे।''

''पर समझाये कौन ?''

''जंगबहादुर तो समझायेगा नहीं। आप ही समझा सकती हैं।''

''महाराज मेरी बात सुनेंगे नहीं। मेरे विरुद्ध उनके कान बहुत अधिक भर दिये गये हैं।''

''तब आप क्या सोचती हैं ?''

''जंगबहादुर से ही मोर्चा लेना होगा।''

''महाराज की सहायता के बिना आप जंगबहादुर से जीत नहीं पायेंगी। जंगबहादुर मातबरसिंह नहीं है। वह पूरा गुंडा है, गुंडा।''

''फिर भी यत्न तो करना ही होगा। और कोई रास्ता भी तो नहीं है।''

''रास्ता वही है महाराज की शरण लेने का। यदि अभी महाराज से आपका समझौता न हो सका, तो तब होगा, जब शासन का अधिकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाराज के हाथ से भी जाता रहेगा। तब समझौते का कोई लाभ भी न होगा। अभी उन्हें साथ लीजिये।"

"अब किस मुँह से उनके पास जाऊँ ?"

"बहुत सोचने की आवश्यकता नहीं। पुरुषों की स्मृति-शक्ति दुर्बल होती है। वे जल्दी ही सब कुछ भूल जाते हैं।"

"पर मेरी स्मृति-शक्ति तो दुर्बल नहीं है।"

"तब सचमुच ही कोई रास्ता नहीं है।"

"देखो, कोई तो रास्ता निकलेगा ही।"

मन्दाकिनी के साथ बातचीत से महारानी का जी कुछ हल्का हो गया। समस्या का रूप स्पष्ट हो गया। उसने मन्दाकिनी से कहा: "जा कर ज़रा भीमबहादुर को तो ढूंढ। कहना आज शाम को आ कर मिलेगा।"

मन्दाकिनी भीमबहादुर को ढूंढने चली। उसके मन में रह रह कर एक ही बात आ रही थी—महारानी सदा उल्टी ही राह पर क्यों चलती हैं ?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

56

मित्र का लाभ

विजयराज ने जंगबहादुर का मनचाहा काम कर दिया और जंगबहादुर ने मौका मिलते ही उसे न्यायाधीश पद पर नियुक्त कर दिया। इससे उन दोनों की बाल्य-मैत्री और भी प्रगाढ़ तथा घनिष्ठ हो गई। परन्तु जंगबहादुर में गगनसिंह की हत्या से पहले के कुछ दिनों में विजयराज के प्रति जैसा प्रचंड स्नेह उमड़ा था, वैसा अब दिखाई नहीं पड़ता। तब अकिंचन विजयराज से मिलने के लिए वह लगभग रोज़ ही पशुपतिनाथ के मन्दिर तक जा पहुँचता था, पर अब वह सप्ताह में भी एक बार उससे मिलने के लिए समय नहीं निकाल पाता। अब विजयराज को ही मिलने के लिए उसके पास जाना पड़ता है। इतना अवश्य है कि विजयराज के आने पर जंगबहादुर उससे खूब प्रेम तथा उत्साह से मिलता है। वह भूला नहीं है कि विजयराज ने बड़े विकट कार्य में उसकी सहायता की थी।

आज भी जब सायंकाल विजयराज जंगबहादुर के महल में पहुँचा, तब जंगबहादुर कहीं जाने की तैयारी में था। पर विजयराज को देख कर उसने इरादा बदल दिया और शाम का समय अपने मित्र के साथ गपशप में बिताने का निश्चय कर लिया। हवा में थोड़ी ठंड थी, फिर भी दोनों हरी घास के मैदान में कुर्सियां डलवा कर बैठे।

जंगबहादुर ने पूछा : ''अब कैसा लग रहा है यह काम ? तब तुम व्यर्थ ही इतना डर रहे थे।''

''ठीक है। अब उतना भयावह नहीं लगता। कार्यालय के लोग सारी बात समझ कर केवल उतना सार बता देते हैं, जिस पर 'हाँ' या 'ना' का निर्णय देना होता है। उसमें विशेष कठिनाई नहीं होती। पहले मैं सोचता था कि मुकदमों की उलझनों को मैं कैसे समझ पाऊँगा। इसीलिए डरता था।''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मैं जानता था कि इसमें तुम्हें कोई कठिनाई न होगी। अधिकारी को तो केवल नज़र रखनी होती है; काम तो जो करते हैं, वे करते हैं।"

"यह समझो कि बैठे-बैठे पेंशन पा रहा हूँ।"

"राजकृपा है राजकृपा। राजा के अनुग्रह का फल ऐसा ही होता है।"

"राजा की कृपा की बात बिल्कुल ठीक है।" फिर एकाएक ठिठक कर विजयराज ने स्वर को कुछ धीमा करके कहा : "आजकल क्या महारानी तुमसे कुछ रुष्ट हैं ?"

"मुझे पता नहीं। पर रुष्ट हो सकती हैं। कोई आश्चर्य नहीं।" जंगबहादुर ने रानी के रोष के समाचार से अविचलित रहते हुए कहा।

विजयराज ने आशा की थी कि इस समाचार से जंगबहादुर काफ़ी चौंकेगा। उसे लगा कि वह शायद इस महत्वपूर्ण बात को सही रूप में प्रकट नहीं कर पाया है, अतः उसने ज़ोर देते हुए कहा : "कुछ अधिक ही नाराज़ हैं। संभल कर रहने की आवश्यकता है।"

"क्या मतलब ?" जंगबहादुर ने कुछ चकित हो कर पूछा।

"वह तुम्हें अपनी राह से हटा देने तक की बात सोच सकती हैं।"

जंगबहादुर के माथे पर चिन्ता की रेखाएं चमक उठीं। वह कुछ समय से ऐसे कार्य कर रहा था, जिनसे महारानी का रुष्ट होना सुनिश्चित था। उसे यह भी पता था कि रुष्ट होने पर महारानी किसी भी सीमा तक जा सकती है। पर वह सब अस्पष्ट और अनिश्चित बात थी। अब विजयराज के मुँह से यह सुन कर कि महारानी उसे अपने रास्ते से हटा देने तक की बात सोच रही है, वह थोड़ा-सा भयभीत भी हो उठा। मनुष्य शरीर बहुत ही भंगुर है। इसे नष्ट करने के लिए बहुत ही थोड़ा प्रयत्न अपेक्षित है। बन्दूक की एक गोली, खुखरी की दो चोटें। बस ! थोड़ी सी शराब पी कर ऐसा प्रयत्न कोई भी बलिष्ठ व्यक्ति कर सकता है। जब तक यह पता न हो कि ऐसा प्रयत्न कौन करेगा, और कब करेगा, तब तक आत्मरक्षा की समस्या विकट रहती है। प्रतिक्षण सशंक रहना कष्टदायक स्थिति है।

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?" जंगबहादुर का स्वर मामूली सा कम्पित था।

विजयराज कुछ चक्कर में पड़ गया। उसने यह नहीं सोचा था कि इतनी काम की खबर बताने पर उसे उस खबर का स्रोत भी बताना पड़ेगा। बोला : "मतलब की बात तुम्हें बता दी। खबर कैसे मिली, यह जान कर क्या करोगे ?"

"उससे मुझे यह पता चल जायेगा कि यह खबर कितनी विश्वास योग्य है। यह भी हो सकता है कि इसका आधार बिल्कुल कच्चा हो।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह मैं बताये देता हूँ कि खबर बिल्कुल पक्की है। कच्ची होने पर मैं ऐसी बात स्वयं ही तुम्हारे कानों में न डालता। मुझे पता है कि ऐसी सूचना कितनी चिन्ता का कारण बन जाती है। जब से मुझे यह पता चला, तब से मुझे ही चैन नहीं है।"

"पर तुम्हें यह बताने में आपत्ति क्या है कि खबर तुम्हें कैसे पता चली?" जंगबहादुर ने कुछ रुखाई के साथ कहा।

"आपत्ति? आपत्ति कोई खास नहीं है। पर विश्वास करके गुप्त सूचना देने वाले व्यक्ति का नाम प्रकट करना उचित नहीं न?"

"तो फिर तुमने मुझे यह खबर दी ही क्यों?" जंगबहादुर ने कुछ खीझ कर कहा। "तुमने मुझे चिन्ता में तो डाल दिया, पर अब उसमें से उबरने की राह नहीं बताते।"

विजयराज को लगा कि यह तो हवन करते हाथ जलने वाली बात हुई। उसने सोचा था कि जंगबहादुर यह सूचना देने के लिए उसकी प्रशंसा करेगा और उसका कृतज्ञ होगा, पर यह तो बिना बात ही रुष्ट हो रहा है। इससे तो अच्छा था कि मैं चुप ही रहता; इसे कुछ बताता ही नहीं। जो कुछ होना होता, होता। मैं तो व्यर्थ ही बुरा न बनता। फिर इसे खबर का स्रोत जानने का इतना आग्रह क्यों है? यह उस खबर देने वाले को बुला कर उससे पूछ-ताछ, सवाल-जवाब करेगा। पर खबर का स्रोत न बताने पर यह मुझसे ही अप्रसन्न हो जायेगा। सचमुच किसी का भला करना निरी मूर्खता है। पर अब इस धर्मसंकट में से निकलने के लिए कुछ न कुछ तो कहना ही पड़ेगा। कुछ सकुचाते हुए उसने कहा: "असल में मामला कुछ नाजुक सा है। इसलिए मैं बताना नहीं चाहता था। पर तुम्हें ज़िद है, तो बताये देता हूँ। महारानी के महल में एक लड़की काम करती है। वह कभी-कभी भागवत पढ़ने मेरे पास आती है।" कहते-कहते विजयराज का मुँह संकोच के मारे लाल हो उठा।

जंगबहादुर का रुखाई और खीझ का भाव पल-भर में गायब हो गया और वह परिहास करते हुए बोला: "अच्छा, तब तो गुप्त भीम हो तुम। मैं समझता था कि तुम पाणिनि और कणाद के ही सत्संग में रहते हो।"

"तुम फिर गलत समझ रहे हो।" विजयराज ने प्रतिवाद करते हुए कहा: "वह लड़की परम धार्मिक है। पुराणों और शास्त्रों को पढ़ने में उसकी बहुत रुचि है, इसीलिए···।"

"वह तो धार्मिक है, पर तुम धार्मिक हो, यह किसने कहा?" जंगबहादुर ने हँसते हुए कहा। "खैर, मुझे कोई ईर्ष्या नहीं है। तुम दोनों का भागवत-पारायण सफल हो। पर यह तो बताओ कि वह है कौन?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"यह मत पूछो" विजयराज ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"ठीक है। नहीं पूछता। अब यह बताओ कि उसने क्या कुछ बताया है।"

"उसने महारानी को अपनी दासी मन्दाकिनी से यह कहते सुना है कि प्रधानमन्त्री अब बेकाबू हो गया है। वह मेरा कहना नहीं मानता। किसी भी मामले में मुझसे आदेश न ले कर महाराज से ही आदेश लेता है। अब इसे रास्ते से हटा देने के सिवाय और कोई उपाय नहीं है।"

"और कुछ?"

"एक बार उसने काज़ी वीरध्वज बस्नेत को महारानी से अकेले में बात करते सुना। उसमें भी 'जंगबहादुर' और 'मारना' ये शब्द बार-बार सुनाई पड़े। पर सारी बातचीत बहुत धीमी आवाज़ में होने के कारण साफ़ सुनाई नहीं पड़ी। उस लड़की का अनुमान है कि महारानी तुम्हारी हत्या का षड्-यन्त्र कर रही हैं। उसे पता है कि मैं तुम्हारा मित्र हूँ। इसीलिए उसने यह बात मुझे बता दी। पर यह बात बस हम दो तक ही रहे।"

"मेरी ओर से अपनी उस शिष्या को धन्यवाद देना। कहना कि मैं उसके इस उपकार को याद रखूँगा।"

"मैं इस विषय में उससे कुछ भी नहीं कहूँगा। सुन कर वह प्रसन्न होने के बजाय डरेगी। उसकी सूचना से जो हित हो सकता है, वह हो जाये, यही सबसे बड़े सन्तोष की बात है। पर महारानी, तुमसे इतनी रुष्ट क्यों हैं?"

"कारण वही है, जो महारानी ने अपने मुँह से कहा है। रोष और तोष तो स्वार्थवश होते हैं। जो हमारे मन की करता जाये, उससे हम तुष्ट रहते हैं; जो हमारी मनचाही न करे, उससे हम रुष्ट हो जाते हैं। यही महारानी बहुत समय तक मुझसे बहुत प्रसन्न रही हैं। पर मैं कहाँ तक उनकी मनचाही कर सकता हूँ, इसकी भी एक सीमा है। मुझ में भी विवेक है; मुझ में भी अन्तरात्मा है। जहाँ मैं अपने विवेक के विरुद्ध, अपनी अन्तरात्मा की हत्या करके महारानी की मनचाही नहीं कर सकता, वहीं उनका रोष शुरू हो जाता है। फिर राजा और मन्त्री के बीच रोष और असन्तोष कुछ नई बात नहीं है। मैंने सुना है कि किसी समय महाराज रणबहादुरशाह ने अपने चाचा बहादुरशाह को, जो उस समय प्रधानमन्त्री थे, इसलिए कैद करवा लिया था कि बहादुरशाह महाराज की मनमानी नहीं चलने देते थे। उसके बाद स्वयं रणबहादुरशाह ने जिस दामोदर पांडेय को प्रधान मन्त्री नियुक्त किया, उसी को कुछ वर्ष बाद उन्होंने प्राणदण्ड दिया, क्योंकि वह उनकी स्वेच्छारिता को एक सीमा से आगे नहीं जाने देना चाहता था। भीमसेन थापा, मातबरसिंह, सबका यही हाल हुआ। अब मेरी बारी है।"

जंगबहादुर ने यह सब इतने शान्त भाव से कहा कि विजयराज उद्विग्न हो उठा; बोला: "क्या मतलब? जो हाल इन प्रधान मन्त्रियों का हुआ,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वही तुम्हारा भी होने वाला है ? पहले से सूचना मिल जाने पर तुम बचाव का कुछ उपाय नहीं कर सकते ?''

''अपनी ओर से तो करूँगा ही। पर पानी में रह कर मगर से वैर देर तक चलेगा नहीं।''

''तो वैर मत करो। समझौता कर लो।''

''अन्याय से समझौता कहाँ तक करूँ ? महारानी कहती हैं कि युवराज सुरेन्द्र और राजकुमार उपेन्द्र को खत्म करवा दो, जिससे राजगद्दी पर रणेन्द्र का अधिकार बन जाये। यदि मैं इसके लिए राज़ी हो जाऊँ, तो महारानी का रोष अभी समाप्त हो जाये और मुझ पर उनकी कृपा होने लगे। पर तुम्हीं कहो, क्या मुझे ऐसा पाप कर्म करना चाहिए ?''

''शिव, शिव ! मैं तो ऐसा करने की राय कभी न दूँगा।'' विजयराज ने कहा।

''तब फिर एक ही मार्ग बचता है—महारानी को रुष्ट होने दूँ और उसका जो भी परिणाम होता है, उसे भुगतूँ। इसीलिए मुझे महाराज का सहारा ढूँढना पड़ता है। महारानी चाहती हैं कि मैं महाराज का आश्रय त्याग दूँ और पूरी तरह उन्हीं की दया पर निर्भर हो जाऊँ, जबकि मुझे मालूम है कि उनमें दया नाम को भी नहीं है।''

''तो फिर अब तुम करोगे क्या ?''

''बिना हारे तो मैं हार मानूँगा नहीं। महारानी के विरुद्ध मैं महाराज को खड़ा करूँगा। तुमने सावधान कर दिया है, इससे अपनी सुरक्षा के लिए कुछ और सतर्क रहूँगा। ठीक है, तो महारानी ने वीरध्वज बस्नेत को अपने साथ मिलाया है ?''

''ऐसा ही मालूम होता है।''

''बस्नेत आदमी बुरा नहीं है। पर इस समय जाल में फँस गया दीखता है। जब बुरे दिन आते हैं, तब बुद्धि उल्टी हो जाती है।''

''कहा तो है—विनाशकाले विपरीत बुद्धिः।''

''विजयराज,'' एकाएक जंगबहादुर ने उत्तेजित होते हुए कहा : ''अब या तो महारानी ही रहेंगी या फिर जंगबहादुर ही।''

''मतलब ?''

''अब हम दोनों का निर्वाह नहीं है। यदि महारानी का बस चला, तो वह मुझे जीता न छोड़ेंगी, पर यदि मेरा बस चला, तो महारानी इस राज-महल में नहीं रह सकेंगी।'' उसके शब्दों में ऐसा दृढ़ निश्चय और प्रभुत्व था कि सुन कर विजयराज दंग रह गया।

देर काफ़ी हो गई थी। अँधेरा हो गया था और कमरों में हंडे जला दिये गये थे। जंगबहादुर ने उठते हुए कहा : ''चलो, कमरे में चलो। आज भोजन यहीं करके जाना।''

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

57

दो टूक फैसला

जब काज़ी वीरध्वज बस्नेत प्रधानमंत्री जंगबहादुर के महल में पहुँचा, तब जंगबहादुर राजकुमार उपेन्द्र के साथ बातचीत कर रहा था। जंगबहादुर को वीरध्वज के आने की सूचना दी गई, तो उसने वीरध्वज को वहीं बुलवा लिया। वीरध्वज ने आ कर विनयपूर्वक नमस्कार किया। जंगबहादुर ने एक कुर्सी की ओर इशारा करते हुए उसे बैठने को कहा। वीरध्वज बैठ गया। जंगबहादुर ने पूछा : "कहिये काज़ी जी, कैसे आना हुआ ?"

यद्यपि यह प्रश्न बिल्कुल साधारण था, पर न जाने क्यों वीरध्वज को ऐसा लगा कि जंगबहादुर का लहज़ा कुछ असाधारण है; जैसे उसके स्वर में कुछ व्यंग का पुट है। काज़ी वीरध्वज ने क्षण भर राजकुमार उपेन्द्र की ओर देखा, जैसे यह विचार कर रहा हो कि राजकुमार के सामने ही बात करना उचित होगा, या उसके चले जाने की प्रतीक्षा करना ठीक होगा। उसकी इस दुविधा को समझते हुए जंगबहादुर ने कहा : "कुंवर जी तो अभी देर तक बैठेंगे। आपको जो कहना हो, कहिये।"

"नहीं। ऐसी कोई गोपनीय बात नहीं थी। महारानी जी ने आपको स्मरण किया है।" यह कह कर काज़ी वीरध्वज ने बड़े ध्यान से जंगबहादुर के चेहरे की ओर देखा।

जंगबहादुर ने सीधा उसकी आंखों में देखते हुए शान्त स्वर में पूछा : "कोई खास काम है ?"

"मुझे पता नहीं। पर जब उन्होंने याद किया है, तब खास काम होगा ही। विशेष कार्य के बिना आपको इतना कष्ट देने का प्रश्न नहीं उठता।"

"कब आने को कहा है ?"

"बुलाया तो अभी है। पर आप अपनी सुविधा भी देखिये।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जंगबहादुर और काज़ी वीरध्वज, दोनों चतुर पहलवानों की भांति एक दूसरे की एक-एक गतिविधि को देख रहे थे और मनोभावों को भांपने का यत्न कर रहे थे। परिस्थिति जंगबहादुर के अधिक अनुकूल थी, क्योंकि उसे षड्यंत्र की सूचना मिल चुकी थी। पर उसके लिए अपने चेहरे पर इस भाव को न आने देना कठिन हो रहा था कि उसे सारे रहस्य का पता है। काज़ी वीरध्वज को यह मालूम नहीं था कि उसका रहस्य खुल चुका है, फिर भी वह जंगबहादुर की मुख-मुद्रा में होने वाले एक-एक परिवर्तन को देख रहा था, जिससे इस बुलावे के फलस्वरूप जंगबहादुर पर हुई प्रतिक्रिया को भांप सके। जंगबहादुर ने अपने मनोभाव को छिपाने की बड़ी कोशिश की, पर वीरध्वज पर यह असर पड़ा कि जंगबहादुर का व्यवहार स्वाभाविक नहीं है। कहीं न कहीं कुछ गड़बड़ है। पर क्या गड़बड़ है और कितनी गड़बड़ है, इसका वह कुछ अनुमान न कर सका।

जंगबहादुर ने कहा : "मेरी सुविधा असुविधा क्या है ! मेरे लिए तो महारानी का आदेश सबसे पहले है। आप दस मिनट बैठिये। मैं आपके साथ ही चलता हूँ। मुझे तैयार होने में देर नहीं लगेगी।"

यह कह कर जंगबहादुर ने राजकुमार उपेन्द्र को आंख से इशारा किया और उसे अपने साथ ले कर वह महल में अन्दर की ओर चला।

काज़ी वीरध्वज ने कहा : "इतनी जल्दी की क्या आवश्यकता है ? आप सुविधा से आइये। मुझे जाने की अनुमति दीजिये।"

"नहीं नहीं। आप जाइये नहीं। दस मिनट से अधिक प्रतीक्षा आपको नहीं करनी पड़ेगी। मैं बस आ ही रहा हूँ" कहते हुए जंगबहादुर महल में चला गया। उसने वीरध्वज को उत्तर देने का मौका ही नहीं दिया। वीरध्वज ने भी यह सोच कर आग्रह नहीं किया कि उससे जंगबहादुर को अकारण ही सन्देह करने का अवसर मिलेगा।

पर इस तरह जंगबहादुर को साथ लाना काज़ी वीरध्वज की योजना में नहीं था। उसकी योजना यह थी कि वह प्रधानमंत्री को महारानी का आदेश दे कर लौट आयेगा और हनुमान ढोका दरबार में पहुँच कर उसके स्वागत के लिए तैयार रहेगा। अब प्रधान मंत्री का अनुरोध टाल कर अकेले वापस लौटना संभव नहीं था। पर इस तरह प्रधानमंत्री के साथ जाने से वह अपने उन सैनिकों का नेतृत्व नहीं कर सकेगा, जो इस विशेष प्रयोजन के लिए ही हनुमान ढोका दरबार में छिपे हुए थे। उसके नेतृत्व के अभाव में वे सैनिक अपने कार्य को कहां तक पूरा कर सकेंगे, यह कह पाना कठिन था। फिर भी यह आशा थी कि यदि जंगबहादुर एक बार हनुमान ढोका दरबार के रनिवास वाले भाग तक पहुँच गया, तो वहाँ से उसका वापस लौट पाना संभव न

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होगा। हो सकता है कि दो-चार सैनिक हताहत हो जायें, किन्तु पच्चीस निपुण योद्धाओं से बच कर वह कदापि नहीं आ सकता।

इधर काज़ी वीरध्वज वस्नेत अपनी इन्ही चिन्ताओं में डूबा बैठा रहा और तरह-तरह की संभव असंभव योजनाएं बनाता रहा, उधर जंगबहादुर ने राजकुमार उपेन्द्र को भीतर ले जा कर कहा : "मैं आप दोनों भाइयों को सदा महारानी जी के षड्यंत्र से सावधान करता और बचाता रहा हूँ। आपके बड़े भाई मेरी बात पर विश्वास करते हैं और मेरे प्रयत्नों की सराहना भी करते हैं। पर आप सदा ही समझते रहे हैं कि मैं झूठमूठ ही आप दोनों भाइयों को महारानी का हौआ दिखाता रहता हूं। यह बड़ा अच्छा सुयोग है कि आप इस समय मेरे पास ही थे, जब काज़ी वीरध्वज मेरे पास आये। आपको पता है, यह किसलिए मुझे बुलाने आये हैं ?"

राजकुमार उपेन्द्र ने बीच में कहना चाहा कि यह बात गलत है कि मैं आपकी बातों पर अविश्वास करता रहा हूँ (हालांकि सच यही था कि वह जंग-बहादुर की बातों को अपना उल्लू सीधा करने के लिए खड़ा किया गया बतंगड़ ही समझते थे, पर शिष्टाचार का इतना ज्ञान उन्हें था कि यदि ऐसा आरोप लगाया जाये, तो उसका तुरन्त प्रतिवाद करना आवश्यक है), परन्तु जंगबहादुर ने उन्हें इसका अवसर ही नहीं दिया और उनके सामने यह रहस्य-पूर्ण प्रश्न रख दिया कि काज़ी वीरध्वज उसे किसलिए बुलाने आया है। वह इस विषय में कुछ नहीं जानते थे, अतः जिज्ञासा से जंगबहादुर के मुँह की ओर देखने लगे।

जंगबहादुर ने कहा : "आप भी मेरे साथ चलिये और स्वयं अपनी आंखों से देख लीजिये कि मेरा कहना सच था या झूठ।"

राजकुमार उपेन्द्र कुछ समझा नहीं। अतः उसने पूछा : "माता जी ने आपको किसलिए बुलाया है ?"

"मैं यहां आपको कुछ न बताऊं, यही अच्छा है। आप अपनी आंखों से जो कुछ देखेंगे, वह पक्का प्रमाण होगा। चलने के लिए तैयार हो जाइये।"

"तैयारी क्या करनी है ?"

"कम से कम एक तलवार तो कमर में बांध लीजिये। मैं अभी आता हूँ" कहते हुए जंगबहादुर एक और दरवाज़े से महल में और भीतर की ओर चला गया। राजकुमार उपेन्द्र ने देखा कि जंगबहादुर में प्रबल कार्य शक्ति जाग उठी है।

महल के भीतरी भाग में जा कर जंगबहादुर ने अपने भाइयों को पुकारा। रणोद्दीपसिंह, बमबहादुर और धीरशमशेर तुरन्त आ उपस्थित हुए। जंगबहादुर ने उन्हें संक्षेप में स्थिति समझा दी : "महारानी ने मुझे अभी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हनुमान ढोका दरबार में बुलाया है। महल में मेरी हत्या करने के लिए सशस्त्र सिपाही छिपे हैं। मैंने आज दो टूक फैसला करने का निश्चय किया है। सब लोग तैयार हो जाओ। बमबहादुर, तुम सौ सशस्त्र सिपाहियों को ले कर हनुमान ढोका दरबार पहुँचो। रणोद्दीप और धीर, तुम दोनों मेरे साथ चलना। और बमबहादुर, देखो, हम लोग यहां से दस मिनट बाद चलेंगे और धीमी चाल से ही जायेंगे। तुम और तुम्हारे सिपाही हमसे पहले हनुमान ढोका दरबार पहुँचेंगे और फाटक पर हमें खड़े मिलेंगे। हर एक के पास तलवार और खुखरी दोनों होंगी। जल्दी करो।"

बमबहादुर ने कहा : "ठीक है। ऐसा ही होगा।" और यह कह कर वह तेज़ कदमों से बाहर निकल गया। रणोद्दीपसिंह और धीर शमशेर भी हथियार बांधने लगे।

× × ×

जंगबहादुर ने काज़ी वीरध्वज को केवल दस मिनट बैठने के लिए कहा था। वीरध्वज के ये दस मिनट बड़ी दुश्चिन्ता में कटे थे। वह वहां से निकल भागने का कोई बहाना ढूँढ रहा था, पर कोई बहाना उसे सूझता ही न था। बिना कुछ कहे सुने चल पड़ने में शिष्टाचार का उल्लंघन और प्रधानमंत्री की अवहेलना करने के अलावा बड़ा खतरा यह था कि इससे जंगबहादुर को संदेह हो जायेगा और फिर वह हनुमान ढोका दरबार में जायेगा ही नहीं। इससे सारी योजना विफल हो जायेगी और महारानी बहुत रुष्ट होंगी।

लगभग दस मिनट बाद जंगबहादुर बाहर आ गया और काज़ी वीरध्वज से बोला : "मैं तैयार हूं। बस अब चलते हैं। राजकुमार उपेन्द्र भी चल रहे हैं। वह अभी आते हैं।"

राजकुमार उपेन्द्र को आने में पाँच-सात मिनट और लग गये। उसे देख कर काज़ी वीरध्वज के चेहरे का रंग उड़ गया। जंगबहादुर ने तंग पायजामा और कोट पहना था। सिर पर काली तिरछी टोपी थी। कमर में तलवार लटक रही थी और कमरबन्द में खुखरी खुँसी थी। यह उसका सामान्य वेश था। वह महल से बाहर जा रहा था, अतः इसमें अस्वाभाविकता कुछ नहीं थी। परन्तु राजकुमार उपेन्द्र की भी कमर में तलवार लटक रही थी। अभी कुछ देर पहले जब वह महल में अन्दर गया था, तब उसके पास तलवार नहीं थी। तो क्या जंगबहादुर ने उसे तलवार लटका कर चलने को कहा है? यदि कहा है, तो क्यों?

राजकुमार उपेन्द्र के पीछे-पीछे रणोद्दीपसिंह और धीर शमशेर भी आ पहुंचे। वे भी शस्त्र सज्जित थे। उन्हें देखते ही काज़ी वीरध्वज समझ गया कि किसी न किसी कारण जंगबहादुर को कुछ शंका हो गई

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है और इसीलिए वह इतनी सावधानी बरत रहा है। उस बेचारे को यह पता नहीं था कि किस कारण जंगबहादुर को कितनी बड़ी शंका है। यदि उसे पता होता, तो वह कुछ न कुछ बहाना निकाल कर अवश्य ही जंगबहादुर से अलग हो जाता और जैसे भी हो, सारी योजना को भविष्य में किसी अन्य समय के लिए स्थगित करने का प्रयत्न करता। पर वह अब भी यही समझता रहा कि जंगबहादुर और उसके दो भाई ही तो हैं। महल में छिपे पच्चीस सैनिक तीनों को आसानी से ठिकाने लगा देंगे।

जंगबहादुर ने काज़ी वीरध्वज से पूछा : "आप पालकी से आये हैं ?"

"जी हां।"

"मैं सोचता हूँ कि हम इतने लोग हैं। पैदल ही चले चलें। हनुमान ढोका दरबार पास ही तो है।" जंगबहादुर ने कहा।

"यदि आप मुझे जाने की अनुमति दें, तो बड़ी कृपा हो। महारानी जी मेरी प्रतीक्षा कर रही होंगी।"

जंगबहादुर मन ही मन हँसा और सोचने लगा कि महारानी तुम्हारी नहीं, मेरी प्रतीक्षा अधीरता से कर रही हैं। पर आज उनकी तृप्ति हो जायेगी। प्रकटतः उसने अत्यन्त मृदुता और सौहार्द जताते हुए कहा : "अब तो हम सब भी चल ही रहे हैं। आप हमसे कितना पहले पहुँच जायेंगे ? अधिक से अधिक एक मिनट पहले। यदि आपको पैदल चलने में असुविधा हो, तो मैं सभी के लिए पालकियां मँगवाये लेता हूँ।"

"क्यों मुझे लज्जित करते हैं आप ? मुझे पैदल चलने में असुविधा क्यों होने लगी ? मैं तो केवल महारानी जी के पास जल्दी पहुँचने के विचार से ऐसा कह रहा था। पर आपकी बात ठीक है। कितना जल्दी पहुँच जाऊँगा ? मैं चाहता था कि पहले पहुँच कर सूचना दे देता कि आप आ रहे हैं।"

"आप अब जा कर सूचना दे दीजियेगा। उतनी देर हम लोग ड्योढ़ी में बैठ कर प्रतीक्षा कर लेंगे।"

"ठीक है। तब मैं अपनी पालकी वापस भेज देता हूं। आपके साथ पैदल ही चलूंगा।" यह कह कर काज़ी वीरध्वज अपनी पालकी के पास गया।

उसने एक कहार से धीमे से कहा : "जब हम लोग यहां से चल पड़ें और तुम्हारी आंखों से ओझल हो जायें, तब तुम तेज़ी से दौड़ कर हनुमान ढोका दरबार में सीधे महारानी के पास जाना और उन्हें मेरी ओर से इतना सन्देश देना कि 'खेल बिगड़ गया है। फिर किसी दिन यत्न करना ठीक होगा।' जल्दी करना। क्या कहोगे ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहार समझदार था। उसने तुरन्त दुहरा दिया : "महारानी जी से जा कर कहूँगा कि खेल बिगड़ गया है। फिर किसी दिन यत्न करना ठीक रहेगा।"

काज़ी वीरध्वज ने कहा : "मुख्य फाटक से मत जाना। चोरखिड़की से जाना। कोई टोके, तो मेरा नाम लेना। जल्दी करना। देर न हो।"

जब जंगबहादुर ने देखा कि काज़ी वीरध्वज को अपनी पालकी को वापस भेजने में इतनी देर लग रही है, तब वह स्वयं भी उसी ओर बढ़ा। काज़ी वीरध्वज ने उसे आते देख लिया और ऊंची आवाज़ में कहा : "तुम लोग हनुमान ढोका दरबार पहुँचो। मैं प्रधानमंत्री जी के साथ अभी वहां पहुँच रहा हूँ।" जंगबहादुर पालकी के पास पहुँचे, इससे पहले ही वह जंगबहादुर की ओर चल पड़ा। जंगबहादुर ने समझ लिया कि काज़ी वीरध्वज ने पालकी वालों से कुछ बातचीत की है, पर क्या बात की है, यह जानने का कोई शिष्टजनोचित उपाय नहीं था। फिर उसने चाहे कुछ भी बात क्यों न की हो, उससे क्या बनता बिगड़ता है? वह जो प्रबन्ध करके चल रहा है, वह सब बाधाओं को रौंद डालने के लिए पर्याप्त है।

हनुमान ढोका दरबार की ओर बढ़ते हुए इन पांच व्यक्तियों की टोली की चाल बहुत धीमी रही। जंगबहादुर इसलिए धीरे चल रहा था, जिससे बमबहादुर और उसके सौ सैनिकों को हनुमान ढोका दरबार तक पहुँचने के लिए यथेष्ट समय मिल जाये। काज़ी वीरध्वज इसलिए धीरे चल रहा था, जिससे उसका आदमी महारानी के पास पहुँच कर समय रहते उसका सन्देश दे सके। पर क्योंकि दूरी ही बहुत कम थी, इसलिए बहुत धीरे चलते हुए भी वे आठ दस मिनट में हनुमान ढोका दरबार के फाटक पर पहुँच गये।

बमबहादुर अपने सौ सैनिकों के साथ वहाँ उपस्थित था और जंगबहादुर की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे देख कर जंगबहादुर का चेहरा खिल गया, पर काज़ी वीरध्वज को तो मानों काठ मार गया। अब उसे पक्का निश्चय हो गया कि जंगबहादुर को कहीं से उनकी योजना की भनक मिल गई है और इसीलिए वह इतना बड़ा प्रबन्ध करके आया है। इन सौ सैनिकों को देख कर उसे अपनी सारी योजना उलट-पुलट होती प्रतीत हुई। उसके पच्चीस सिपाही इतने लोगों का बाल भी बांका नहीं कर सकते। अब उसकी आशा एक ही कच्चे से सूत्र पर टँगी थी। यदि उसके भेजे हुए कहार ने समय पर पहुँच कर महारानी को उसका सन्देश दे दिया होगा, और महारानी ने उसके अनुसार प्रबन्ध करके सिपाहियों को कुछ न करने के लिए आदेश दे दिया होगा, तो अप्रिय घटना होने से रुक जायेगी। पर यदि किसी कारण वह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहार न पहुँच पाया, या महारानी ने उस सन्देश के अनुसार प्रबन्ध न किया, तो ? काज़ी वीरध्वज की आंखों के आगे अँधेरा सा छा गया।

जंगबहादुर ने बमबहादुर को आंख से संकेत किया कि वह और उसके सैनिक जंगबहादुर के पीछे-पीछे महल में आयें और काज़ी वीरध्वज से कहा : "आइये। चलें।"

काज़ी वीरध्वज का गला सूख रहा था। सबसे बुरी बात यह थी कि उसके लिए अपने भावों को छिपाना कठिन हो रहा था। उसका चेहरा उदास और चिन्तित था। इसे जंगबहादुर ने भली भांति देख लिया था और काज़ी वीरध्वज की मनोदशा का अनुमान करके वह मन ही मन प्रसन्न हो रहा था।

काज़ी वीरध्वज डरपोक नहीं था। परन्तु अपनी योजना को विफल होते देख कर वह उसकी निराशा को सह नहीं पा रहा था। पहले वह चाहता था कि किसी तरह जंगबहादुर से पहले राजमहल में पहुँच कर बिगड़ी को बनाने का यत्न करे, परन्तु अब उसके लिए भी समय नहीं रहा था ! अपने प्राण बचाने के लिए वह विशेष चिन्तित नहीं था। अतः उसने आगे बढ़ते हुए कहा : "आइये।"

थोड़ा चल कर काज़ी वीरध्वज मुड़ा। पीछे आते हुए बमबहादुर और उसके सैनिकों की ओर संकेत करते हुए उसने कहा : "ये सैनिक राजमहल क्यों आ रहे हैं ? इन्हें रोकिये।"

जंगबहादुर ने लापरवाही के साथ कहा : "आने दीजिये। उन्हें अपने साथ मैं लाया हूं ?"

काज़ी वीरध्वज ने आक्षेप सा करते हुए कहा : "राजमहल में आप इतनी सेना ले कर घुस रहे हैं ?"

अब जंगबहादुर ने भद्रता और शिष्टता का आवरण उतार दिया और कठोर स्वर में कहा : "क्या करूँ ? मुझे यहां अपने प्राणों के लिए संकट अनुभव होता है।"

"संकट अनुभव होता है ? यह आप क्या कह रहे हैं ?" काज़ी वीरध्वज ने फिर आक्षेप सा किया।

"संकट है या नहीं, यह आप अभी स्वयं देख लेंगे। फिर ये सब राजभक्त सैनिक हैं ! राजमहल में इनके आने में क्या दोष है ?"

"महाराज या महारानी के आदेश के बिना इस तरह इनके राजमहल में घुस आने से राजमर्यादा भंग होती है।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"राजकुमार स्वयं इन्हें ला रहे हैं। मर्यादा भंग होने का प्रश्न ही कहां है? चलिये, महारानी के पास चलें। राजमर्यादा का मुझे आप से अधिक ध्यान है।" जंगबहादुर की आवाज़ में प्रभुत्व था।

सच बात यह है कि आज जंगबहादुर को यह हनुमान ढोका दरबार राजमहल ही नहीं लग रहा था। वह दो बार इसी राजमहल में घुस कर रक्तपात कर चुका था। प्रधानमंत्री मातबरसिंह को उसने यहीं गोली मारी थी और उसके बाद वह काज़ी बन गया था। कुछ महीने पहले उसने इसी राजमहल में कितने ही भारदारों को गाजर-मूली की तरह काट फेंका था। उसके बाद वह प्रधानमंत्री बन गया था। इस राजमहल की मर्यादा उसकी दृष्टि में कितनी सी थी? महाराज महारानी के विरोधी थे। महारानी युवराज की हत्या के लिए प्रयत्नशील थी। राजकुमार प्रधानमंत्री के सहारे जीवित थे। ऐसे राजपरिवार और राजमहल का जंगबहादुर पर क्या रौब पड़ सकता था? विशेष रूप से आज, जब उसे पता था कि महारानी ने उसकी हत्या के लिए षड्यंत्र रचा है। यदि इस राजमहल की कोई मर्यादा रही भी हो, तो आज वह उसे जड़मूल से समाप्त कर देने के लिए कटिबद्ध था।

काज़ी वीरध्वज ने एक बार तो सोचा कि जब मरना ही है, तो यहीं इसी बात पर लड़ मरा जाये कि वह राजमहल में इस तरह सैनिकों को प्रविष्ट नहीं होने देगा, पर शीघ्र ही वह यह सोच कर शान्त हो गया कि सम्भव है, महारानी को उसका संदेश मिल गया हो और उन्होंने सिपाहियों को तितर बितर कर दिया हो। उस दशा में जंगबहादुर को झूठा प्रमाणित किया जा सकेगा। शायद स्थिति अपने पक्ष में ही हो जाये। अब अच्छा यह है कि जो कुछ होना है, वह महारानी के सम्मुख ही हो।

× × ×

काज़ी वीरध्वज ने जिस कहार को महारानी तक सन्देश पहुँचाने के लिए कहा था, उसने अपना काम तत्परतापूर्वक किया। इतना तो वह समझ ही गया था कि यह गोपनीय और महत्वपूर्ण सन्देश है। यदि वह तुरन्त चल पड़ता, तो जंगबहादुर और उसके भाइयों को शंका हो सकती थी। अतः उसने उनके चले जाने और आंखों से ओझल हो जाने की प्रतीक्षा की। जिस क्षण वे दीखने बन्द हुए, उसी क्षण वह रवाना हो गया। चालीस पचास कदम तो वह तेज़ चाल से चला, पर जब प्रधानमंत्री का महल पीछे छूट गया, तब उसने दौड़ लगाई।

पर शुभ कार्य में अनेक विघ्न होते हैं। जल्दी में अन्धाधुन्ध दौड़ते हुए वह सामने से आते एक बूढ़े आदमी से टकरा गया। बूढ़े के सिर पर दूध का

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बर्तन था। वह गिर गया और दूध सड़क पर बिखर गया। उस कहार ने यह देखा; उसे इसके लिए दुःख भी हुआ; पर उसे जल्दी थी, अतः वह रुका नहीं; दौड़ता चला गया। बूढ़े को धक्का लगने पर खीझ हुई थी, पर दूध को सड़क पर बहते देख कर वह प्रबल रोष में बदल गई और अपराधी को भागने देख कर तो उसके क्रोध की सीमा ही न रही। उसने ज़ोर से चिल्लाना शुरू कर दिया: "मार डाला रे! चोर, चोर! पकड़ो, पकड़ो।"

सड़क पर बहुत से लोग आ जा रहे थे। उन्होंने उस कहार को भागते देख कर समझ लिया कि यही चोर है; कुछ हाथ मार कर भागा जाता है। उन्होंने रास्ता रोक कर उसे पकड़ लिया। "क्या बात है? कहाँ भागा जाता है?" एक ने डपट कर कहा।

कहार ने छूटने की कोशिश करते हुए कहा: "छोड़ो भी! मुझे बहुत ज़रूरी काम है।"

"क्यों नहीं? चोरी करने के बाद भागना ही सबसे ज़रूरी काम होता है।" एक ने उसे धकियाते हुए कहा। "चल, उधर वह तेरा बाप तुझ पर इल्ज़ाम लगा रहा है।"

"चोर होगा तू और तेरा बाप।" कहार ने तैश में आ कर कहा। "मैं काज़ी वीरध्वज बस्नेत का कहार हूँ। बहुत ज़रूरी काम से जा रहा हूँ। मुझे जाने दो।"

जिस व्यक्ति को लक्ष्य करके उसने यह कहा, वह कुछ अप्रतिभ सा हो गया। पर तभी एक और युवक तमक कर बोला: "हमें क्या पता, तू किसका कहार है या किसका चमार। पहले उस बूढ़े के पास चल। सुन, वह क्या कह रहा है?"

सपेरे के हाथ में पकड़े हुए नाग की तरह वह कहार छूटने के लिए ऐंठता और फुफकारता रहा, आँखें लाल पीली करता रहा। पर वह बूढ़ा अभी तक शोर मचा रहा था, अतः उन लोगों ने उस कहार को छोड़ा नहीं। वे उसे पकड़ कर उस बूढ़े के पास लाये। बूढ़ा उसे सामने पाते ही आग-बबूला हो उठा: "अन्धा हो कर पागल भैंसे की तरह दौड़ता है? इस दूध का दाम कौन देगा, बता। दूध गिरा कर रुका तक नहीं। ऐसा आदमी तो आज तक नही देखा।"

ज़रा देर में तमाशबीनों की भीड़ जमा हो गई। तमाशा भी कुछ बुरा नहीं था। कुछ ही देर में यह बात स्पष्ट हो गई कि दोष कहार का है, पर उतना नहीं, जितना कि बूढ़ा बता रहा है। पर कहार का रौब, जिसे कोई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मान नहीं रहा था और बूढ़े का क्रोध, जिसमें दम नहीं था, उन दोनों को दर्शकों की हँसी का पात्र बना रहा था।

कहार ने झुँझला कर कहा : "ज़्यादा बकबक मत कर। नहीं तो अभी तो दूध ही गिरा है, अब दांत भी तोड़ दूँगा।"

एक हट्टे-कट्टे आदमी ने बीच में पड़ते हुए कहा : "ऐसा पहलवान तो तू दिखाई नहीं पड़ता। बूढ़े को कमज़ोर देख कर हेकड़ी जता रहा है ?"

कहार को लगा कि मामला बढ़ता जा रहा है और उसे देर हो रही है। पर इस भीड़ में से निकल पाने का उपाय क्या है ? उसने कुछ शान्त पड़ते हुए कहा : "मैं काज़ी जी के काम से जल्दी में भागा जा रहा था। इससे…"

उसकी बात पूरी होने से पहले ही एक और युवक ने कहा : "इसने अच्छी 'काज़ी जी' की रट लगाई है। काज़ी जी ने क्या यह कहा है कि तू सड़क पर लोगों को धक्के मारता फिर ? बिना बात काज़ी जी को बदनाम कर रहा है।"

"अच्छा भाइयो, मुझसे गलती हुई। माफ़ करो। अब मुझे जाने भी दोगे या नहीं ? मुझे बहुत ज़रूरी काम है।"

"गलती मान कर हम पर अहसान कर रहा है ?"

एक और ने कहा : "बूढ़े के दूध के पैसे दे दे, और जा।"

कहार ने पैसे की चोट होती देखी, तो तमक कर कहा : "पैसे किस बात के दे दूँ ?"

"क्यों, उसका दूध नहीं गिराया है ? गरीब आदमी नुकसान कैसे सहेगा ?"

"तो क्या मैं अमीर आदमी हूँ ?"

"अरे भई, तुम काज़ी जी के आदमी हो। तुम्हें पैसे की क्या परवाह !" एक ने ताना दिया।

कहार को क्रोध तो बहुत आया, पर करता क्या ? काज़ी जी के आदमी को पैसे की कितनी परवाह होती है, यह वही जानता था। पैसे की सूरत देखने को कम ही मिलती थी। इस समय तर्क में जीतने के बजाय किसी तरह इन लोगों से पिण्ड छुड़ा कर महारानी के पास पहुँचना ज़रूरी था। काज़ी जी ने तुरन्त दौड़ते हुए जाने को कहा था और यहाँ वह किस विचित्र चक्कर में फँस गया है ? यदि उसके पास पैसे होते, तो शायद इस विवशता में वह देने को तैयार हो जाता, पर इससे भी बड़ी विवशता यह थी कि उसके पास पैसे थे ही नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बूढ़ा कह रहा था : "आज न जाने किसका मुँह देख कर चला था ! यह दूध बेच कर चावल ले जाता, तब घर में भात बनता । अब क्या होगा ?"

कहार ने उसकी दुर्दशा को अनुभव किया और बोला : "पर क्या करूँ ? पैसे मेरे पास हैं ही नहीं ।"

"मित्र, तुम भी कैसे काज़ी जी के आदमी हो कि तुम्हारे पास पैसे ही नहीं रहते !" एक लड़के ने कहा ।

एक ने यों ही पूछा : "ऐसा भी क्या ज़रूरी काम था कि तुम आँखें गिरवी रख कर भागे जा रहे थे ?"

"बाप रे, मुझे तो ऐसा लगा, जैसे किसी सांड ने धक्का मारा है !" बूढ़े ने खीझ उतारते हुए कहा ।

कहार ने इन बातों का कोई उत्तर नहीं दिया । इतनी देर बाद उसे यह बात समझ आ गई थी, अधिक अकड़ने और अधिक बोलने से अधिक देर लगेगी । अतः उसने लगभग गिड़गिड़ाते हुए कहा : "भाइयो, मुझे जाने दो । पैसे होते, तो मैं ज़रूर दे देता । मुझे देर हो रही है । काज़ी जी मेरी खाल उतरवा लेंगे ।"

बूढ़े ने कहा : "मेरे दूध के पैसे दे दे और जा ।"

कहार के विनयपूर्ण स्वर से लोगों की सहानुभूति उसके साथ हो गई । एक आदमी ने कहा : "उसने जानबूझ कर दूध थोड़े ही गिराया है ?"

एक ने बूढ़े का पक्ष लिया; कहा : "फिर भी गलती तो उसी की है । दूध अपने आप थोड़े ही गिर गया ?"

खैर, अन्त में फैसला यह हुआ कि भीड़ के लोगों में से ही कुछ ने एक-एक दो दो पैसे बूढ़े को दिये और तब कहार को भीड़ से छुटकारा मिला । छूटते ही वह फिर दौड़ा और बिना रुके महल की चोर खिड़की तक दौड़ता चला गया । खिड़की पर पहुँच कर उसे पहरेदारों से सवाल जवाब के लिए रुकना पड़ा । पहरेदार उसे पहचानते नहीं थे । उसने जब बताया कि उसे काज़ी वीरध्वज ने महारानी के पास भेजा है, तब उन्होंने एक दरबान के द्वारा महारानी को यह सूचना भिजवाई । जब महारानी ने कहलवाया कि उसे भीतर आने दो, तब उसे महल में घुसने दिया गया । पर अब उसके आने का कोई लाभ नहीं था । जिस समय वह महारानी से काजी वीरध्वज का सन्देश कह रहा था, उसी समय काज़ी वीरध्वज, जंगबहादुर और उसके सब सैनिक हनुमान ढोका दरबार में प्रविष्ट हो रहे थे ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

58

बाज़ी गई

काज़ी वीरध्वज तो यह सोच कर शान्त हुआ था कि महारानी के पास पहुँचने से पहले कोई उत्तेजक कार्य न किया जाये, किन्तु जंगबहादुर का माथा ठंडा होने के बजाय गर्म होता गया। उसने देख लिया कि अब राजमहल में उसका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। उसके साथ केवल सौ सैनिक थे। परन्तु उन सौ सैनिकों से टक्कर लेने लायक सिपाही भी महारानी या महाराज नहीं जुटा सकते थे। प्रधान मंत्री बनने के बाद जंगबहादुर ने इस बात पर पूरा ध्यान दिया था कि सेना पर उसका अपना नियंत्रण रहे। इतना ही नहीं, राजमहल के अन्दर या बाहर जो भी सैनिक तैनात हों, वे उसके ही प्रति वफ़ादार हों। इसीलिए महारानी राजमहल के नियमित सैनिकों से अपना षड्यंत्र पूरा नहीं करवा सकती थी और उसे काज़ी वीरध्वज के सैनिक मँगवाने पड़े थे। इतना ही नहीं, इस समय जंगबहादुर की इच्छा के बिना कोई व्यक्ति राजमहल से निकल कर बाहर भी नहीं जा सकता था। चोर खिड़की अभी तक अवश्य खुली थी, पर जंगबहादुर को ध्यान था कि उसे भी अब पहुँचते ही बन्द करवा देना है।

जंगबहादुर ने गर्म होते हुए कहा : "काज़ी जी, तुम राजमहल में आकर हत्याओं के षड्यंत्र करते हो ? इससे अपना या दूसरे का क्या भला सोचते हो ?"

काज़ी वीरध्वज सावधान था। वह समझ गया था कि परिस्थिति एकदम उसके प्रतिकूल जा पड़ी है। इस समय उत्तेजित होना जंगबहादुर की चाल में आना है। अतः उसने बिल्कुल शान्त रह कर विनयपूर्वक कहा : "आपको कुछ भ्रम हुआ है। मुझे किसी षड्यंत्र का कुछ ज्ञान नहीं है। न मैं किसी षड्यंत्र में शामिल होता हूँ।"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"मुझे भ्रम हुआ है या तुम मुझे भ्रम में डाल रहे हो ? जिन लोगों को मैंने बढ़ावा दिया, वे ही मेरे प्राण लेने का षड्यंत्र करें ? संसार का भी क्या विचित्र नियम है !" जंगबहादुर का संकेत इस बात की ओर था कि उसके प्रधानमंत्री बनने के बाद जो नई नियुक्तियाँ हुई थीं, वे सब उसकी ही इच्छा से हुई थीं। जंगबहादुर के न चाहते वीरध्वज काज़ी नहीं बन सकता था।

काज़ी वीरध्वज ने कहा : "आपको किसी ने गलत सूचना दी है। मैं कभी आपके विरुद्ध षड्यंत्र में सम्मिलित हो सकता हूं ?"

"सूचना गलत है या सही, यह अभी पता चल जायेगा। मुझे मालूम है कि मेरी हत्या के लिए सशस्त्र सिपाही राजमहल में छिपे हुए हैं। यह हो सकता है कि अब हम इतने लोगों को देख कर वे हमला करने की हिम्मत न करें, पर यदि मुझे राजमहल में कोई भी ऐसा सैनिक दिखाई पड़ गया, जिसे वहाँ तैनात नहीं किया गया है, तो मैं समझ लूंगा कि षड्यंत्र बिल्कुल पक्का है और वह तुम्हारा रचा हुआ है।"

काज़ी वीरध्वज को लगा कि उसकी दशा चूहेदान में फँसे चूहे जैसी हो गई है। यह निश्चित है कि जंगबहादुर राजमहल में सिपाहियों की खोज करेगा। उनमें से चार छह भले ही छिप जायें, किन्तु पन्द्रह बीस तो ढूँढने पर मिल ही जायेंगे। पूछताछ पर वे क्या कहेंगे, यह अलग बात है, पर जंगबहादुर तो पहले ही फ़ैसला किये बैठा है। षड्यंत्र का भेद खुल चुका है। काज़ी वीरध्वज ने पल भर में निश्चय कर लिया कि वह चूहे की मौत नहीं मरेगा। वह एकाएक तलवार निकाल कर यह कहते हुए जंगबहादुर पर झपटा : "फिर षड्यंत्र ! षड्यंत्र ? तो ले यह है षड्यंत्र !"

शान्त और विनयपूर्ण रूप से उग्र रूप में उसका यह परिवर्तन इतना आकस्मिक और अप्रत्याशित था कि जंगबहादुर हक्का-बक्का रह गया। शत्रु के आक्रमण से बचने के लिए पीछे हटना चाहिए, यह भी उसे ध्यान न रहा। वह पत्थर की अचल प्रतिमा की तरह काज़ी वीरध्वज की तलवार के लिए बढ़िया लक्ष्य बन कर जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया। रणोद्दीपसिंह जंगबहादुर के ठीक पीछे चल रहा था। उसने काज़ी वीरध्वज को मुड़ते, तलवार निकालते और जंगबहादुर पर झपटते देखा। और कुछ करने का तो उसे अवसर नहीं मिला, पर उसने तुरन्त आगे बढ़ कर काज़ी वीरध्वज को एक ज़ोर का धक्का दिया। उस धक्के से काज़ी वीरध्वज का संतुलन बिगड़ गया। उसकी तलवार का जो वार जंगबहादुर की गर्दन पर बैठता, वह चूक गया। तलवार माथे पर हल्की-सी खरोंच करती निकल गई। वीरध्वज ने फिर सँभल कर दूसरा वार करना चाहा, पर तब तक धीरशमशेर और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बमबहादुर ने तलवारें निकाल ली थीं और वे बीच में आ अड़े थे। जंगबहादुर भी सचेत हो कर चार छह कदम पीछे हट गया था और क्रुद्ध हो कर चिल्ला रहा था : "इस विश्वासघाती को छोड़ो मत। यहीं मार डालो।" यह कहते हुए उसे भी जोश आ गया और वह तलवार निकाल कर काज़ी वीरध्वज की ओर बढ़ा।

इतनी देर में सभी सैनिक सावधान हो गये थे। बमबहादुर दौड़ कर इस भिड़न्त में शामिल हो गया था। काज़ी वीरध्वज ने चिल्ला कर कहा : "मेरा झगड़ा जंगबहादुर से है। उसे मुझसे दो दो हाथ करने दो। तुम लोग क्यों अपने प्राण देते हो?"

पर जंगबहादुर के भाइयों ने उसकी बात पर ज़रा भी ध्यान न दिया और वे मिलकर उस पर टूट पड़े। कुछ देर तक काज़ी वीरध्वज वीरतापूर्वक लड़ा। पर अकेला आदमी चार आदमियों का कब तक मुकाबला करता ? कुछ ही देर में वह घायल हो कर गिर पड़ा। क्रोध के आवेश में जंगबहादुर ने उसे तुरन्त मार डाला। इतना धैर्य और सूझबूझ उसमें नहीं थी कि वह काज़ी वीरध्वज को जीवित पकड़ लेता और उससे षड्यंत्र का सारा भेद जानने का यत्न करता।

काज़ी वीरध्वज की मृत्यु के बाद जंगबहादुर पर खून का नशा चढ़ गया। उसने अपने भाइयों और सैनिकों को आदेश दिया: "सारे राजमहल की तलाशी लो। राजमहल के कर्मचारियों के अलावा बाहर का जो भी कोई सिपाही मिले, उसे यहीं मार डालो।"

उसके बाद उसने राजकुमार उपेन्द्र से कहा : "देख लिया आपने महारानी का षड्यंत्र ? अभी आप और बहुत कुछ देखेंगे।"

लड़ाई देख कर राजकुमार उपेन्द्र चकित अवश्य हुआ था, किन्तु वह घबराया बिल्कुल नहीं था। उसने उस लड़ाई में भाग नहीं लिया था, किन्तु आवश्यकता पड़ती, तो वह भाग भी ले सकता था।

जंगबहादुर और उसके सैनिक राजमहल के उस भाग की ओर बढ़े, जिस में महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी रहती थीं। वहाँ गलियारों में अँधेरे कोनों में छिप कर खड़े सिपाही जंगबहादुर के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। पर उन्हें निश्चय था कि जंगबहादुर अकेला आयेगा, या उसके साथ अधिक से अधिक एक दो आदमी होंगे। पर जब उन्होंने सैनिकों की भीड़ की भीड़ अन्दर आती देखी, तब वे समझ न सके कि उन्हें क्या करना चाहिए। अपने पक्ष को प्रबल देख कर, विजय की आशा होने पर योद्धाओं का साहस चौगुना हो जाता है, पर अपने पक्ष को दुर्बल देख कर और पराजय का निश्चय हो जाने पर उनका साहस लुप्त हो जाता है। वे ही चुने हुए वीर, जो जंग-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहादुर के अकेले और असावधान आने की कल्पना करके उस पर बाघ की तरह टूट पड़ने को तैयार थे, अब सामने आने में झिझक रहे थे। यह संभव था कि यदि वे सब एक साथ आगे आ कर जंगबहादुर को घेर लेते और उस पर टूट पड़ते, तो शायद अन्य सब लोगों के होते हुए भी वे उस एक व्यक्ति को मारने में सफल हो जाते। कारण, कि जंगबहादुर अब भी अपने भाइयों के साथ सबसे आगे चल रहा था। परन्तु उन सिपाहियों को यह आशा नहीं थी कि जंगबहादुर को मारने के बाद वे स्वयं जीवित बच पायेंगे। हत्या में उत्साह तभी तक रहता है, जब तक कि हत्यारों को स्वयं बच निकलने की आशा हो। इसीलिए उन छिप कर खड़े सिपाहियों में से एक ने भी सामने आने की चेष्टा नहीं की। उल्टे, उनमें से एक तो अपनी जान बचाने के लिए भाग खड़ा हुआ।

यदि वह सिपाही भागता नहीं, तो जंगबहादुर के सैनिकों को यह ढूंढने में काफ़ी देर लगती कि षड्यंत्रकारी सिपाही किस जगह छिपे हैं। पर उस सिपाही को भागते सभी ने देख लिया। "पकड़ो, पकड़ो। जाने न पाये।" बमबहादुर चिल्लाया। कई सैनिक उसकी ओर दौड़े। बाकी लोगों ने आस पास खोज शुरू की। उन्हें छिपे हुए सिपाही दिखाई पड़ने लगे।

यदि इन सिपाहियों का भी कोई एक नेता होता, तो वे जंगबहादुर के सैनिकों का डट कर मुकाबला करते और उनमें से कुछ को मार कर ही मरते। पर उनका नेतृत्व जिस काज़ी वीरध्वज को करना था, वह तो इस भिड़न्त से पहले ही मर चुका था। इसका फल यह हुआ कि वे बेचारे डट कर मुकाबला भी नहीं कर सके और अलग अलग एक एक दो दो करके लड़ते हुए या भागते हुए मारे गये। जंगबहादुर, उसके भाइयों और सैनिकों ने बड़े उत्साह से ढूंढ-ढूंढ कर उनको मारा। उनमें से कुछ ने आत्मसमर्पण करके प्राणों की भीख भी माँगी, परन्तु उनमें से किसी को भी क्षमा नहीं किया गया।

राजकुमार उपेन्द्र ने इस सारे दृश्य को देखा। उसे जंगबहादुर की इस बात पर विश्वास हो गया कि महारानी ने जंगबहादुर की हत्या के लिए षड्यंत्र किया था। उसे जंगबहादुर के इस कथन पर भी विश्वास हो गया कि महारानी उससे केवल इस कारण रुष्ट हैं कि वह युवराज सुरेन्द्र और राजकुमार उपेन्द्र की हत्या करवाने में सहायक नहीं बनना चाहता। परन्तु जिस कठोरता और क्रूरता से जंगबहादुर ने महारानी द्वारा छिपाये गये सिपाहियों की हत्या करवाई, उससे राजकुमार उपेन्द्र के मन में जंगबहादुर के प्रति सहानुभूति के बजाय आतंक ही अधिक उत्पन्न हुआ। अपने ही महल में इस प्रकार सैनिकों को लड़ते, घायल होते, कराहते, मरते और उनका खून बहते देख कर राजकुमार उपेन्द्र का मन जंगबहादुर के प्रति विरक्ति से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भर गया । उसके मन में बार-बार यह बात उठने लगी कि यह आदमी बहुत खतरनाक है । स्वार्थ का विरोध होने पर यह सब कुछ कर सकता है । इससे जितना दूर रहा जाये, उतना ही भला है ।

यह सारी मार-काट आधे घंटे में समाप्त हो गई । उसके बाद जंग-बहादुर ने राजकुमार उपेन्द्र को तो अपने भाई धीरशमशेर के साथ उनके अपने निवास कक्ष की ओर भेज दिया और स्वयं बमबहादुर तथा रणोद्दीप-सिंह को साथ ले कर महारानी से मिलने चला ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

59

निर्वासन

महारानी राज्यलक्ष्मीदेवी को जब काज़ी वीरध्वज द्वारा भेजे गये कहार ने आकर उसका सन्देश सुनाया, तब वह सोच में पड़ गई। 'खेल बिगड़ गया है। फिर किसी दिन यत्न करना ठीक रहेगा' का क्या मतलब है? क्या जंग-बहादुर को इस योजना का पता चल गया है? आज इस योजना को स्थगित कर देना है? उसने उस कहार से पूछताछ करके स्थिति स्पष्ट करवानी चाही। जब उसे पता चला कि जंगबहादुर अकेला नहीं आ रहा, बल्कि उस के साथ दो भाई और राजकुमार उपेन्द्र भी हैं, तब उसे योजना को स्थगित करने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई। यदि साँप के साथ-साथ बिच्छू भी मरता हो, तो और भी भला! पर कठिनाई यह थी कि नियत योजना के अनुसार काज़ी वीरध्वज को पहले लौट आना था और उसी को महल में छिपे सिपाहियों का नेतृत्व करना था। अब वह जंगबहादुर के साथ ही आ रहा है। वही आज योजना को स्थगित करने के लिए संदेश भी भेज रहा है।

यदि वह कहार विघ्न बाधा के बिना सीधा महारानी तक पहुँच पाता, तो महारानी को सोचने और निश्चय करने के लिए समय मिल जाता। पर अब, जब महारानी ने निश्चय किया कि योजना को स्थगित किया जाये और छिपे हुए सिपाहियों को हटा दिया जाये, तब इस निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए समय नहीं बचा था। उसने आदेश देने के लिए एक सिपाही को बुलवाना चाहा, पर तभी राजमहल के एक अन्य भाग से भारी कोलाहल सुनाई पड़ा। उसके कुछ ही क्षण बाद जंगबहादुर और उसके सैनिक महल के इसी भाग में आ पहुँचे। सारा महल उत्तेजित सैनिकों के शोर से गूंज उठा। महारानी ने अपने कमरे के दरवाज़े तक आ कर एक बार उन्हें देखा और फिर भीतर लौट गई। विकट स्थिति उसके सामने थी, पर वह समझ नहीं पा रही थी कि अब क्या करे।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ देर बाद मन्दाकिनी ने आ कर बताया कि जंगबहादुर और उसके सैनिकों ने महल में छिपे सैनिकों को ढूंढ ढूंढ कर मार डाला है। सुना है कि काज़ी वीरध्वज भी मारे गये हैं।

महारानी ने समझ लिया कि वह बाज़ी हार गई है। उसके मुँह से केवल इतना निकला : "अब क्या होगा ?"

मन्दाकिनी कुछ क्षण चुप रही; फिर बोली : "राजा और रानी में कलह का यह परिणाम होना ही था। नहीं तो इस जंगबहादुर की यह हिम्मत कि अपने सैनिक ले कर राजमहल में आ घुसे! आपने अपना ही नहीं, महाराज का भी राज्य गँवा दिया।"

महारानी बोली : "मैं भी यही सोच रही हूँ कि इसे इतनी हिम्मत कैसे हुई!"

"उसे अपनी और आपकी शक्ति का पता चल गया। इन पिछले दिनों में धीरे-धीरे उसने आपका सम्बन्ध सेना से बिल्कुल काट दिया है।"

"ठीक है। फिर भी उसे यह कैसे अनुमान हुआ कि आज उसके लिए यहाँ खतरा है और उसे सैनिक साथ ले कर आना चाहिए ?"

"राजमहल में से ही किसी ने खबर दी होगी। यहाँ इतने दास दासियां हैं। क्या पता चलता है ? केवल अनुमान नहीं, उसे पक्की खबर मिली होगी।"

"पक्की खबर का मतलब, उसे हत्या की पूरी योजना का पता होगा। तो अब क्या होगा ?"

"मेरा खयाल यह है कि जंगबहादुर बदला लेगा। पिछले कुछ दिनों से वह आपसे यों ही खिचा खिचा सा है।"

"अब करना क्या चाहिए ?"

"अब आपको क्या करना है! जो कुछ करना है, वही करेगा। प्रतीक्षा कीजिये।"

"क्या मतलब ? बिना प्रयत्न किये अपनी गर्दन उसके हाथ सौंप दूँ।"

"अब प्रयत्न करने का समय ही कहाँ है ? आप इस कमरे से बाहर भी तो नहीं निकल सकतीं।"

"महाराज से कुछ सहायता नहीं मिल सकती ?"

"महाराज से सहायता मिल सकती थी और युवराज सुरेन्द्र से भी। पर आपने तो उनके बजाय इस जंगबहादुर पर भरोसा करना भला समझा। अब प्रतीक्षा करने के सिबाय कोई उपाय नहीं दीखता।"

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महारानी को अधिक देर प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। पाँच-छह मिनट बाद ही किसी ने द्वार खटखटाया। मन्दाकिनी ने उठ कर दरवाज़ा खोला। एक सैनिक ने कहा : "प्रधान मंत्री श्री राणाजी महारानी जी से मिलने पधारे हैं।"

मन्दाकिनी ने महारानी की ओर देखा।

महारानी का मन इस समय जंगबहादुर से मिलने का नहीं था। यह ठीक है कि उसने काज़ी वीरध्वज वस्नेत को भेज कर स्वयं ही जंगबहादुर को मिलने के लिए बुलवाया था; पर अब तो वह किसी बीते युग की बात प्रतीत हो रही थी। इस बीच कितना पानी पुल के नीचे से बह गया था। वह चाहती थी कि किसी तरह इस समय जंगबहादुर से भेंट करने के अप्रिय कार्य से वह बच जाये, किन्तु बचने का उपाय क्या था? उसके मना कर देने से क्या जंगबहादुर वापस लौट जायेगा? मिले बिना किसी तरह मुक्ति नहीं है। निर्जीव से स्वर में उसने कहा : "आने दो।"

जंगबहादुर ने अब भी महारानी के कक्ष में अकेले घुसने की हिम्मत नहीं की। बमबहादुर और रणोद्दीपसिंह को साथ ले कर ही उसने प्रवेश किया। उसे भय था कि कहीं महारानी के अपने कक्ष में भी कुछ सैनिक न छिपे हों।

जंगबहादुर ने शिष्टाचार का दिखावा करते हुए महारानी को प्रणाम किया। महारानी ने उस प्रणाम का उत्तर न दे कर खिन्न और रुष्ट स्वर में में कहा : "प्रधान जी, आपने राजमहल में आ कर यह क्या उत्पात मचाया है?" उसे रौब से बोलने का अभ्यास था। उसने सोचा कि शायद यह रौब ही कुछ काम कर जाये।

शास्त्र में लिखा है कि निर्विष साँप को भी अपना फन तो उठाना ही चाहिए, क्योंकि बहुत बार प्रतिद्वन्द्वी उठे हुए फन को देख कर ही भयभीत हो जाता है। परन्तु सपेरा सांप को पहचानता है और यह पता चल जाने पर कि साँप निर्विष है, वह उसके उठे हुए फन की रत्ती भर भी परवाह नहीं करता। यही दशा इस समय जंगबहादुर की थी। उसे पता था कि राजमहल के बाहर और भीतर इस समय उसके अपने सैनिकों का प्रभुत्व है। रानी राज्यलक्ष्मीदेवी उसका बाल भी बांका नहीं कर सकती। अतः उसने लेशमात्र भी न दबते हुए कठोर स्वर में कहा : "जहाँ स्वामी लोग अपने सेवकों की हत्या का षड्यन्त्र रचते हों, वहाँ ऐसा उत्पात करना ही पड़ता है। मुझे सन्देह था कि यहाँ मेरी हत्या का आयोजन किया गया है, इसलिए मैं सैनिक साथ ले कर आया। यहाँ आ कर मैंने देखा कि वह सन्देह सही था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यहाँ महल में सशस्त्र सैनिक छिपे थे। उन्होंने मेरी हत्या की चेष्टा की। यदि मैं अपने सैनिक साथ न लाया होता, तो इस समय आपके सम्मुख खड़ा हो कर बात न कर रहा होता। ·······''

''आपको भ्रम हुआ है प्रधान जी'' रानी ने बीच में टोकते हुए कहा। ''आपके अनिष्ट का षड्यन्त्र यहाँ कौन करेगा ?''

''मैं भी यही सोचता था कि मैं राजपरिवार का इतना विश्वस्त सेवक रहा हूँ—महाराज और महारानी के किन-किन आदेशों का पालन मैंने नहीं किया ? फिर राजमहल में मेरा अनिष्ट-चिन्तन कोई क्यों करेगा ? पर मैंने देख लिया कि संसार बड़ा कठोर है। राजनीति अत्यन्त निष्ठुर है। यहाँ किये गये उपकार का कोई मूल्य नहीं है। क्षुद्रतम असन्तोष घोरतम कृतघ्नता का जनक बन जाता है। इसीलिए आज मेरी हत्या का प्रयत्न किया गया।·········''

''फिर वही बात ! आपकी हत्या का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। आपको भ्रम हुआ है।'' महारानी ने ज़ोर देते हुए कहा।

''अगर षड्यन्त्र सफल हो गया होता और मैं मर जाता, तो शायद वह भी मेरा भ्रम ही होता। जब से यह षड्यन्त्र रचा जाने लगा था, तभी से मुझे इसका पता था। जब आज सवेरे महल में सशस्त्र सिपाही बुला कर छिपाये गये, तब भी मुझे पता चल गया। जब वीरध्वज मुझे यमराज के घर चलने का बुलावा देने आया, तब भी मुझे सब कुछ पता था। इसीलिए मैं तैयार हो कर आया। और अब भी आप कहती हैं कि मुझे भ्रम हुआ है ?''

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी ने उत्तेजित होकर निषेधसूचक सिर हिलाते हुए कहा : ''यह सब गलत है। मुझे पता नहीं, आपको किसने क्या खबर दी और आपको क्या पता चला। पर आपके विरुद्ध यहाँ कोई षड्यन्त्र नहीं था। काज़ी वीरध्वज को मैंने आपके पास भेजा था। पता नहीं, उसमें आपको सन्देह क्यों हुआ। इतने सारे सैनिक लेकर आप राजमहल पर चढ़ आये और इतना रक्तपात किया !''

''इस राजमहल में यह रक्तपात पहली बार नहीं हुआ। पर मैं चाहता हूं कि यही रक्तपात अन्तिम हो। अपने भक्त और विश्वस्त सेवकों के विरुद्ध कुटिल षड्यंत्र करके इस राजमहल ने अपनी मर्यादा खो दी है और आपने राज्य पर शासन करने का अधिकार गँवा दिया है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप राजसिंहासन युवराज सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह को सौंप दें और स्वयं किसी तीर्थ स्थान में जाकर शान्तिपूर्वक निवास करें।''

''यह कैसे हो सकता है ?'' रानी ने क्षुब्ध होकर कहा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"जैसे भी हो, होगा यही। शान्ति और शोभा के साथ न हो, तो अशान्ति और अशोभा के साथ होगा। यह मेरा निश्चय है। आप मेरे प्राण इसीलिए लेना चाहती थीं कि जिससे युवराज सुरेन्द्रवीरविक्रम राजसिंहासन पर न बैठें। आपकी चाल विफल हो गई। अब वह अवश्य राजसिंहासन पर बैठेंगे। कोई शक्ति इसे रोक नहीं सकती।"

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी के लिए यह आघात बहुत बड़ा था। वह चुप बैठी रह गई। कुछ क्षण रुक कर जंगबहादुर ने कहा: "मेरा अनुरोध है कि अब आप स्थिति को और बिगाड़ने के लिए कुछ न करें। युवराज के राज्याभिषेक में बाधा डालने के लिए की गई किसी भी चेष्टा का परिणाम भयानक होगा।"

इतना कह कर जंगबहादुर ने बनावटी विनय के साथ रानी राज्यलक्ष्मीदेवी को प्रणाम किया और चलने को तैयार हुआ।

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी ने हाथ से उसे रुकने का इशारा किया और क्षण भर बाद कम्पित कंठ से पूछा: "प्रधान जी, यह आपका अन्तिम निश्चय है? इसमें परिवर्तन की कोई गुंजाइश नहीं?"

"यह अधिकतम उदारतापूर्ण निश्चय है। इसमें कोई भी परिवर्तन आपके लिए हानिकारक ही हो सकता है।" इतना कह कर जंगबहादुर रुका नहीं। वह अपने भाइयों के साथ कक्ष से बाहर निकल आया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

60

उपसंहार

इससे आगे की कथा संक्षेप में कही जा सकती है ।

रानी राज्यलक्ष्मीदेवी और राजा राजेन्द्रवीरविक्रमशाह को बन्दी बना कर उन्हें देशनिकाला दे दिया गया । भरणपोषण के लिए उन्हें 52 लाख रुपये दिये गये । वे दोनों अपने अनुचरों समेत काशी में आ कर रहने लगे ।

राजसिंहासन पर रहते हुए राजेन्द्रवीरविक्रमशाह को उसका उतना लोभ नहीं था, जितना अब हो गया । राज्य-लोभ के अतिरिक्त उन्हें जंगबहादुर के हाथों अपनी पराजय बहुत अखर रही थी । जंगबहादुर युवराज सुरेन्द्रवीर-विक्रमशाह के नाम की आड़ में नेपाल पर स्वयं शासन कर रहा था । राजेन्द्र-वीरविक्रमशाह को यह स्थिति असह्य थी ।

उन्होंने अपने दो विश्वस्त अनुचरों को विलायती पिस्तौलें और काफ़ी पैसा दे कर काठमांडौ भेजा । उन्हें यह काम सौंपा गया कि वे मौका पा कर जंगबहादुर की हत्या कर दें । परन्तु उनका भेद खुल गया और वे दोनों पकड़े गये ।

जंगबहादुर ने देखा कि ये राजा और रानी देश से बाहर रह कर भी शान्त नहीं रहेंगे और कुछ न कुछ उपद्रव करते रहेंगे । अतः उसने एक ओर तो राजेन्द्रवीरविक्रमशाह को इस आशय का पत्र भेजा कि राज्य के सब भार-दारों ने मिल कर निश्चय किया है कि युवराज सुरेन्द्र को महाराजाधिराज घोषित कर दिया जाये । दूसरी ओर उसने अपने एक आदमी के द्वारा राजेन्द्र-वीरविक्रमशाह को यह सलाह दिलवाई कि वह तुरन्त नेपाल पर चढ़ाई कर दें । प्रजा उनका साथ देगी और जंगबहादुर को हरा दिया जायेगा ।

राजेन्द्रवीरविक्रमशाह इस झाँसे में आ गये । उन्होंने बहुत थोड़ी सी सेना ले कर ठीक उस जगह हमला किया, जहाँ उनके ही पुत्र राजकुमार उपेन्द्र के

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अधीन काफ़ी बड़ी सेना जंगबहादुर ने उनके मुकाबले के लिए तैयार रखी थी। जंगबहादुर युवराज सुरेन्द्र और राजकुमार उपेन्द्र का इतना सगा बन गया था कि उसका पक्ष लेकर उन्हें अपने पिता के विरुद्ध लड़ते हुए भी संकोच न हुआ। संकोच होता भी क्यों ? चंचल और दुर्बल-चित्त पिता और प्राण लेने के लिए आतुर सौतेली माता के कारण इन दोनों बालकों की निष्ठा को कहीं टिकने के लिए आधार ही नहीं मिलता था। इसका लाभ जंगबहादुर ने उठाया। उसने बार-बार हर उपाय से उन बालकों पर प्रभाव डाला कि उनकी सौतेली माता तो उन्हें मार डालने के लिए कमर कसे थी और केवल जंगबहादुर के कारण ही उनके प्राणों की रक्षा हो सकी है। यह बात गलत थी भी नहीं।

इसका परिणाम यह हुआ कि जब राजेन्द्रवीरविक्रमशाह की छोटी-सी टुकड़ी ने नेपाल पर चढ़ाई का अभिनय किया, तब राजकुमार उपेन्द्र ने अनायास ही उसे हरा दिया। सब लोगों को बन्दी बना कर काठमांडौ भेज दिया गया।

जंगबहादुर ने भारदारों की सभा में निश्चय करवा कर राजा और रानी को मृत्युपर्यन्त भादगाँव के दुर्ग में कैद रखने का आदेश दिया।

अब निष्कंटक होकर सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह का राज्याभिषेक किया गया। उन्हें 'महाराज' के बजाय 'महाराजाधिराज' की उपाधि दी गई। 'महाराज' उपाधि जंगबहादुर ने स्वयं अपने लिए ले ली। किसी दिन का 'जंगे' 'महाराज श्री ३ जंगबहादुर राणा' बन गया।

सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह हृदय से जंगबहादुर के प्रति कृतज्ञ थे। अतः जब जंगबहादुर ने एक विशेष आदेश पत्र पर सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह से अपने पंजे की छाप लगाने का अनुरोध किया, तब उन्होंने बिना सोचे-विचारे वह छाप लगा दी। यह पंजा छाप आजकल के हस्ताक्षरों के समान थी। इस आदेश पत्र के अनुसार शासन के सभी महत्वपूर्ण अधिकार जंगबहादुर ने अपने हाथ में ले लिये थे। उसे न केवल सब महत्वपूर्ण पदों पर लोगों को नियुक्त करने या उन्हें उन पदों से हटाने का अधिकार मिल गया था, बल्कि लोगों को मृत्यु दण्ड देने या मृत्यु दण्ड पाये व्यक्तियों को क्षमा करने का भी अधिकार मिल गया था। इतना ही नहीं, उसे विदेशों से सन्धि या युद्ध करने का अधिकार भी प्राप्त हो गया था।

या तो सुरेन्द्रवीरविक्रमशाह में इतनी समझ नहीं थी कि वह इस आदेश पत्र के फलितार्थों को समझ सकते, या फिर इस आदेश-पत्र पर पंजा छाप लगाने से इन्कार करना उनके बस का नहीं था। जिस जंगबहादुर ने उनके माता-पिता को कैद कर दिया था, वह उन्हें भी कैद कर सकता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर इस आदेश पत्र पर छाप लगाते ही नेपाल नरेश की स्थिति बहुत ही दयनीय हो गई। वह केवल नाम को ही राजा रह गये। धूर्त जंगबहादुर ने शीघ्र ही ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि राजा केवल महल में भोग-विलास में मस्त रहने लगे। राजकाज की बात मन में लाना ही उन्होंने छोड़ दिया। वह केवल समारोहों के अवसर पर सजे हुए गुड्डे-गुड़ियों की तरह बाहर लाये जाते और उसके बाद फिर महल में बन्द कर दिये जाते। कोई भी विदेशी व्यक्ति राणा प्रधानमन्त्री की अनुपस्थिति में उनसे मिल नहीं सकता था। यह ठीक है कि उनके लिए जीवन की सभी सुविधाएं भली-भाँति जुटाई जाती थीं, किन्तु उनकी स्थिति भादगाँव के किले में कैद अपने पिता से कुछ भली नहीं थी।

वे शानदार कैदी थे।

यह स्थिति पीढ़ी दर पीढ़ी 125 बरस तक बनी रही। नेपाल के असली राजा कैदी बने रहे और प्रधानमन्त्री राणा देश पर निष्कंटक शासन करते रहे।

भीमसेन थापा का शाप शायद फल रहा था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारे कुछ अन्य रोचक प्रकाशन

वनराज के राज में : लेखक—विराज । जंगल और जंगल के जीवों के विषय में अत्यंत रोचक रीति से उपयोगी जानकारी देने वाली पुस्तक । उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत । दूसरा संस्करण । मूल्य 5.00 ।

मचान पर उनंचास दिन : लेखक—श्रीनिधि सिद्धान्तालंकार । श्रीनिधि सिद्धान्तालंकार जंगल साहित्य के जाने माने लेखक हैं । 'मचान पर उनंचास दिन' जंगल की पृष्ठभूमि पर लिखा गया उनका रोमांचकारी और मर्मस्पर्शी उपन्यास है । इसका गुजराती भाषा में भी अनुवाद हो चुका है । मूल्य 10.00 ।

सूखे सुनसान नालों में : लेखक—श्रीनिधि सिद्धान्तालंकार । जंगल साहित्य में श्रीनिधि जी की यह सबसे नवीन पुस्तक है और सबसे रोचक भी है । किशोरों में साहस की भावना को जगाने की दृष्टि से यह बेजोड़ है । मूल्य 10·00 ।

काँटा और कली : लेखक—पूर्णरामचन्द्रन उमाचन्द्रन । मूलतः यह उपन्यास तमिल भाषा में लिखा गया था और इसे तमिल भाषा का सबसे बड़ा दस हज़ार रुपये का 'कल्कि' पुरस्कार प्रदान किया गया । उसी उपन्यास को लेखक ने स्वयं को हिन्दी में प्रस्तुत किया है । सामान्य पात्रों की सामान्य-सी कथा को लेखक ने इतने सुन्दर रूप में संवारा है कि बस पढ़ते ही बनता है । कथा की रोचकता उपन्यास की अन्तिम पंक्ति तक बनी रहती है । मूल्य 15·00 ।

खजुराहो की नगरवधू : लेखक—शालिग्राम मिश्र । खजुराहो के प्रसिद्ध मंदिर भारतीय मूर्तिकला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं । जिन चन्देल राजाओं के शासनकाल में ये मन्दिर बने, उसी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर इस उपन्यास की रचना हुई है, जो खजुराहो की कला की ही भाँति ललित और रुचिकर है । पाठक एक बार फिर उसी काल में विचरण करने लगता है । मूल्य 12·50 ।

जुआरी : लेखक—श्री सत्यपाल विद्यालंकार । शरीफ खानदान के और खाते-पीते घर के नंदनबाबू की सम्पूर्ण तेजस्विता और विद्या-बुद्धि पर किस तरह एकबारगी जुआ छा जाता है—प्रस्तुत उपन्यास उसकी एक मार्मिक कहानी है । नायक के मित्र शर्मा ने बार-बार कहा—"नन्दन बाबू, जुआ शरीफों के लिए नहीं है । या शराफत छोड़ दो या जुआ छोड़ दो ।" पर नन्दनबाबू का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नपा-तुला एक ही जवाब होता—"क्या करूँ, कम्बख्त दोनों ही नहीं छूटते।" मूल्य 12·50।

ग्रामलक्ष्मी : लेखक—पीताम्बर पटेल। ग्रम्बा नाम की एक नारी के सरल स्वभाव एवं सुघड़-दर्प की चेतना का सहज दर्पण। मूल्य 7.00।

सफर : लेखक—सत्यप्रसाद पांडेय। उमंग, विश्वासघात ग्रौर कुंठाग्रों में सिमटे शहरी जीवन की रोचक झाँकी। मूल्य 6·00।

समुद्र ग्रौर लहरें : लेखक—शिवनारायण श्रीवास्तव। लहरी नामक एक ग्रामीण युवक के शहरी संघर्ष का हृदयविदारक दस्तावेज। मूल्य 8·00।

कलकत्ता के नजदीक ही : लेखक—गजेन्द्रकुमार मित्र। साहित्य ग्रकादमी द्वारा 5,000 रु० से पुरस्कृत यह उपन्यास कलकत्ता महानगर के कोलाहल से जितनी दूर, उतने ही पास बसे, एक गाँव के ग्रधपेट ग्रधनंगे ग्रौर बीमारी की हालत में भी जीवन के लिए मृत्यु से बराबर मोर्चा लेते रहने वाले बेबस लोगों की करुण कहानी। मूल्य 10·00।

लोक-परलोक : लेखक—उदयशंकर भट्ट। धर्म के रंगीन परदे की ग्राड़ में ढोंगी पंडे व पुजारी ग्रपने बलि-यज्ञ के लिए, भोले-भाले एवं निष्कपट ग्रामीण तीर्थ-यात्रियों की ग्राहुति किस प्रकार से लेते हैं, इस तथ्य का सफल चित्रण इस उपन्यास में बेहद रोचक ढंग से हुग्रा है। मूल्य 5·00।

सागर, लहरें ग्रौर मनुष्य : लेखक—उदयशंकर भट्ट। तूफानों में संघर्ष करते हुए ग्रौर सागर की लहरों में साँस लेते, जीवन के धनी मछुग्रारों की मर्मस्पर्शी कहानी ही इस उपन्यास का मूल ग्राधार है···ग्रौर, विशेष रूप से उल्लेखनीय बात यह कि हिन्दी के ग्रांचलिक उपन्यासों में यह कृति ग्रपना महत्वपूर्ण स्थान बना चुकी है। मूल्य 7·00।

मृगजल : लेखक—ग्रनन्तगोपाल शेवड़े। एक चित्रकार के जीवन पर ग्राधारित ऐसा रोचक उपन्यास, जिसका ग्रनुवाद तथा रेडियो-रूपान्तर विभिन्न भाषाग्रों में हो चुका है। मूल्य 6·50।

बोरीवली से बोरीबन्दर तक : लेखक—शैलेश मटियानी। प्रस्तुत उपन्यास के लेखक शैलेश का पूरा एक वर्ष बोरीवली से बोरीबन्दर के मध्य गुज़रा। इस बीच उन्हें जो तीखे-मीठे ग्रनुभव हुए हैं, उन्हीं का प्रभावपूर्ण प्रस्तुतीकरण है, उनकी यह कृति। मूल्य 5·00।

ग्रात्माराम एण्ड संस,
कश्मीरीगेट, दिल्ली-110006

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh